भारतीय सांस्कृतिक एकता के स्तम्भ

सम्पादक : रूपनारायण

गांधी शांति प्रतिष्ठान
नई दिल्ली

प्रकाशक
गांधी शांति प्रतिष्ठान
221/223 दीनदयाल उपाध्याय मार्ग
नई दिल्ली—110002

प्रथम संस्करण 1999

मूल्य · तीन सौ रुपये

ISBN 81-85411-18-2

कवर साभार · असलम बेग, ऋतु भार्गव, शैल सिन्हा

लैजर टाइपसैटिंग इन्नोवेटिव प्रोसेसर्स, 4819/24, अंसारी रोड,
नई दिल्ली—110002

समर्पण

उन सभी स्वतंत्रता सेनानियो के प्रति, जिनमें मेरी माता स्व श्रीमती शर्बती देवी, मेरी बडी बहन स्व श्रीमती गुणवती देवी एवं छोटी बहन श्रीमती शाति देवी वैश्य भी सम्मिलित हैं, जिनके साथ अनेक अवसरो पर मुझे विभिन्न जेलो मे रहने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है।

रूपनारायण

दो शब्द

हमारा देश एक विशाल देश है। इसमे विश्व के सर्वाधिक धर्मो का समावेश है। हिन्दू धर्म के साथ–साथ बौद्ध, जैन और सिख धर्मो का प्रादुर्भाव इसी देश मे हुआ। पारसी, ईसाई, बहाई और इस्लाम धर्म भी इस देश की मिट्टी मे रचे–बसे हुए है। सूफी और भक्ति आदोलन से कई सम्प्रदायो का भी जन्म इसी भारत मे हुआ है। पिछले कुछ वर्षो से विभिन्न धर्मो और सम्प्रदायो के बीच आपस मे ऐसा लगता है कि असहिष्णुता की तनावपूर्ण स्थिति बनी हुई है। यहा तक कि कभी–कभी इसका हिसक परिणाम भी आम लोगो को सहना पडता है। धर्म और जाति के नाम पर समाज को बाटने और वोट बंटोरने की राजनीति करके सत्ता को हथियाने की कोशिश जो अलग–अलग राजकीय पक्ष से हो रही है वह भी चिता का विषय है। इसके अतिरिक्त हमारे दिलो मे एक–दूसरे के धर्मो के प्रति सहनशीलता और शालीनता की कमी दिखाई देती है। इसका मूल कारण शायद अज्ञानता है। धर्म–निरपेक्ष समाज के नागरिक होने के नाते भी विद्यालय से लेकर विद्यापीठ तक कहीं भी अलग–अलग धर्मो के बारे मे शिक्षण का अभाव दिखाई देता है।

इस पुस्तक मे सभी धर्मो और सम्प्रदायो के लगभग 150 आस्था स्थलो के बारे मे आवश्यक सामग्री एकत्रित की गई है जो हमारे सास्कृतिक और आध्यात्मिक दृष्टि से बहुत ही समयोचित और महत्त्वपूर्ण है। इनमे से बहुत से पूजा स्थल और आस्था स्थल ऐसे है जहा हर वर्ष सभी धर्मो के लोग पवित्र त्यौहार समवेत होकर मनाते है। भारत के बाहर से भी लोग ऐसे अवसर पर आते रहते है। हमारे सत, साधु और सूफी मार्ग दर्शको का भी वर्षो का ध्यान, तप और जप के द्वारा ही तीर्थ भूमि भारत को समन्वय सस्कृति का एक ज्वलत और सजीव उदाहरण के रूप मे विश्व मे आज भी मान्यता है।

सरल भाषा और सुदर शैली का पुस्तक मे दर्शन होता है। आज के समय मे यह पुस्तक सभी के लिए, विशेषकर युवा मित्रो के लिए, एक सही दिशा दिखाने वाला विनम्र प्रयत्न है। इस पुस्तक को प्रकाशित करने का मुख्य उद्देश्य है कि देश के सभी निवासी अपने धर्म के साथ–साथ दूसरे के धर्मो

का भी समुचित आदर करें। आशा है कि यह पुस्तक सर्वधर्म सम्भाव के उद्देश्य को सफल करने में सहायक सिद्ध होगी और आगे चलकर हम सब सर्वधर्म सम्भाव पर अमल करेंगे।

महात्मा गांधी और आचार्य विनोबा भावे के पथ पर चलने वाला महान कर्मयोगी और युवा जगत के हृदय–सम्राट पाण्डुरंग सदाशिव साने, जिनको हम साने गुरूजी के नाम से जानते हैं, उनकी जन्म शताब्दी पर हमारे गांधी और समाजवादी विचारक और 85 साल की उम्र में भी कार्यरत कर्मयोगी श्री रूपनारायणजी के हम आभारी हैं, जिन्होंने इस पुस्तक के प्रकाशन के लिए गांधी शांति प्रतिष्ठान को यह अवसर दिया।

आशा है कि इस पुस्तक का दूसरी भाषाओ मे भी अनुवाद करके प्रचार और प्रसार किया जायेगा। फिलहाल आर्थिक परिस्थितियों की वजह से यह पुस्तक सिर्फ हिन्दी मे ही प्रकाशित की जा रही है।

सत्येन्द्र कुमार दे
मंत्री, गांधी शांति प्रतिष्ठान
नई दिल्ली

कुछ अपनी ओर से भी

भारत, जो किसी समय आर्यावर्त भी कहलाता था, एक अत्यंत ही प्राचीन देश है और इसकी संस्कृति भी इतनी ही प्राचीन है जितना यह देश। इस देश का इतिहास कहा से प्रारम्भ होता है यह कहना बहुत कठिन है। पुराणो के अनुसार यह लाखो वर्ष प्राचीन है। सतयुग से प्रारम्भ होकर कलयुग तक हजारो लाखो वर्ष का इतिहास है भारत का। यदि हम इतना पीछे भी न जाये तब भी इसका इतिहास रामायण काल से माना जाना चाहिए। भगवान राम ने जब अवतार लिया तो भी मौटे तौर पर इसका इतिहास दस हजार वर्ष पीछे से प्रारम्भ होता है। भगवान राम, जिन्हें मर्यादा पुरुषोत्तम माना जाता है, उन्होने तत्कालीन समाज मे ऐसे मूल्य स्थापित किए जो आज भी हमारे जीवन के आदर्श हैं। उन्होने पिता की आज्ञा शिरोधार्य कर 14 वर्ष वन मे व्यतीत करना स्वीकार किया, भाई भाई का प्रेम जो राम और लक्ष्मण तथा राम और भरत के बीच था, उसे आज भी उदाहरण स्वरूप प्रस्तुत किया जाता है। राम की अनुपस्थिति में भरत ने राजगद्दी पर बैठना स्वीकार नहीं किया, अपितु वे केवल राम के एक सेवक के रूप मे ही अयोध्या का राजकाज चलाते रहे।

राम का जन्म त्रेतायुग मे हुआ था। उनके पश्चात भगवान श्रीकृष्ण ने द्वापर मे अवतार लिया। द्वापर युग भी आज से पाच हजार वर्ष पूर्व से अधिक का समय था। भगवान श्रीकृष्ण को चौबीस कलाओ से पूर्ण अवतार माना जाता है। महान ग्रन्थ गीता का उपदेश श्रीकृष्ण के द्वारा ही दिया गया तथा कौरव पाण्डवो का युद्ध भी इसी युग मे हुआ जिसे 'महाभारत' का युद्ध कहा जाता है, क्योकि यह युद्ध देशव्यापी था। यह युद्ध इतना विकराल था कि जिसके परिणामस्वरूप केवल कुछ पुरुष ही जीवित बचे और लाखो स्त्रिया विधवा हो गयी थीं। इस युद्ध के कारण इतनी बर्बादी हुई कि मानो पूरी सभ्यता ही नष्ट हो गई हो। महाभारत युद्ध के पश्चात द्वापर समाप्त होकर कलयुग प्रारम्भ हुआ जो अभी भी चल रहा है। कलयुग के प्रारम्भिक काल

का कोई विधिवत् इतिहास उपलब्ध नही है। इसी कारण इस काल को 'अन्धा युग' भी कहा जाता है। केवल पौराणिक कथाओ से ही इस काल का कुछ इतिहास जाना जा सकता है। यह अन्धा युग ढाई हजार वर्ष रहा है। इसके पश्चात भगवान बुद्ध ने अवतार लिया। जैन धर्म के आखिरी तीर्थकर भगवान महावीर ने भी लगभग उसी समय जन्म लिया था। यहा से नये युग का प्रारम्भ हुआ जिसका विधिवत् इतिहास उपलब्ध है। भगवान बुद्ध और महावीर ने अहिसा का प्रचार किया और सारे भारत मे सामाजिक दायित्व के प्रति पुन जागृति उत्पन्न हुई। इस प्रकार से भगवान बुद्ध और भगवान महावीर के काल को 'स्वर्णयुग' भी कहा जाता है। भगवान बुद्ध के लगभग दो सौ वर्ष पश्चात सम्राट अशोक महान ने जन्म लिया और उसने बौद्ध धर्म को 'राजधर्म' घोषित किया।

बौद्ध धर्म का प्रचार और प्रसार भारत की सीमाओ को लाघकर चीन, तिब्बत, अफगानिस्तान, जो उस समय भारत का ही एक भाग था, श्रीलंका तथा दक्षिण पूर्व एशिया के अनेक देशो मे पहुचा। विशेष रूप से बर्मा, इण्डोनेशिया, थाईलैण्ड इत्यादि मे। भारत से तो बौद्ध धर्म एक प्रकार से लुप्त ही हो गया, किन्तु अन्य अनेक देशो मे यह अभी भी उन देशो के निवासियो की आस्था और दिनचर्या का प्रमुख अग माना जाता है। बौद्ध धर्म के ह्रास और वैदिक धर्म की पुन स्थापना का श्रेय आदिशकराचार्य महाराज को जाता है।

वेदो की उत्पत्ति कब और कहा हुई, निश्चित रूप से कुछ कहना कठिन है। अपितु इतना तो कहा ही जा सकता है कि वेदो के ज्ञान से भारत को अमूल्य आध्यात्मिक सम्पदा प्राप्त हुई और यह सम्पदा अभी भी वैदिक धर्म के रूप मे यहा के जन जीवन की आस्था का स्रोत बनी हुई है।

इस देश की परपरा रही है कि यहा जो भी भारत के बाहर से लोग आये, उन सभी का स्वागत हुआ है। चाहे वे किसी भी धर्म के अनुयायी रहे हों। ईसा मसीह का जन्म दो हजार वर्ष पूर्व येरूसलम मे हुआ था। ऐसा भी माना जाता है कि जब उनको सूली पर चढाकर उतारा गया तो उनकी मृत्यु नही हुई थी और उनका शरीर देवयोग से गायब हो गया था। ऐसी भी धारणा है कि वे कश्मीर मे आये थे और उनकी कब्र कश्मीर मे ही कही बनी हुई है। हजारो ईसाई धर्मावलम्बी भारत मे आये और वे भी यहां के स्थायी निवासी बन गये। इसी प्रकार यहूदी, पारसी इत्यादि भी भारत मे आये और वे यहा के स्थायी निवासी बन गये। हजरत मोहम्मद, जिनका जन्म चौदह

सौ वर्ष पूर्व अरब मे हुआ था, उनके अनुयायी भी लगभग बारह सौ वर्ष पूर्व समुद्र के मार्ग से दक्षिण भारत के अनेक स्थानो मे आये और यही के स्थायी निवासी हो गये। इन सभी समुदायो ने अपने अपने पूजा स्थलो, इबादतगाहो, मस्जिदो व गिरजाघरो इत्यादि का निर्माण किया। जिनके लिए तत्कालीन शासको ने भूमि व आर्थिक सहायता इत्यादि सहर्ष प्रदान की। धार्मिक आधार पर किसी प्रकार का कोई भेदभाव नही किया गया। नौ सौ वर्ष पूर्व महमूद गजनवी ने अनेको बार भारत पर हमला किया और यहा के अनेक मदिरो इत्यादि को ध्वस कर अथाह सम्पत्ति लूटकर गजनी वापस चला गया। उसके पश्चात अफगानिस्तान के रास्ते से अनेक अन्य मुस्लिम बादशाहो ने भारत पर हमले किए और उनमे से अधिकाश इस देश के स्थायी निवासी बन गये। आखिरी हमला बाबर का हुआ और वह भी अतत यहा का ही निवासी हो गया और उसके पश्चात उसके वश का मुगल साम्राज्य इस देश मे तीन सौ साल तक रहा। मुगल साम्राज्य के पतन के पश्चात अग्रेजी शासन का दौर प्रारम्भ हुआ जिसका अत 15 अगस्त, 1947 के दिन हुआ। लेकिन अग्रेजो की 'बाटो और राज करो' की नीति के कारण यह देश भारत और पाकिस्तान, दो भागो मे विभाजित हो गया।

उपरोक्त ऐतिहासिक तथ्यो को इसलिए उद्धृत किया है जिससे हम यह समझ सके कि इस देश मे सैकडो हजारो वर्षो से भिन्न भिन्न सम्प्रदायो व धर्मो के लोग आते रहे और यहा के स्थायी निवासी बनते रहे। जितने भी सप्रदाय भारत के बाहर से यहा आये वे सब अपनी भाषा, अपनी सभ्यता, अपनी धार्मिक परपराओ इत्यादि को अपने साथ लेकर आये जो प्राय भारत के मूल निवासियो से सर्वथा भिन्न थी। इस भिन्नता के होते हुए भी भारत के मूल निवासियो और जो लोग भारत के बाहर से आकर यहा बसे, कालातर मे उनके मध्य सामजस्य पैदा हुआ और यह भिन्नता शनै शनै दूर होती गयी और सब एक दूसरे की परपराओ से प्रभावित हुए। सभी धर्मो व सप्रदायो के आराधना स्थल हजारो की सख्या मे इस देश मे विद्यमान है जिनके माध्यम से अपनी अपनी आस्थानुसार इस विश्व के निर्माता (ईश्वर) को याद किया जाता है। भिन्नता के कारण कोई विरोध नहीं है बल्कि सहिष्णुता के ही दर्शन होते है। यही इस देश की परपरा रही है और इसी कारण भारत अन्य देशो से सर्वथा भिन्न है जहा बिना किसी धार्मिक भेदभाव के समरसता का प्रवाह निरतर जारी है।

यह देश, भारत और पाकिस्तान मे विभाजित होने के उपरांत भी यहां भारत मे सैकडो की संख्या मे मुसलमानो के ऐसे आस्थास्थल मौजूद हैं जिनकी यात्रा (जियारत) के लिए पाकिस्तान और दूसरे मुस्लिम देशो के लाखो मुस्लिम निवासी प्रतिवर्ष यहां आते हैं। विश्वविख्यात दरगाह गरीबनवाज हजरत मोइनुद्दीन चिश्ती, जिसे अजमेर शरीफ भी कहा जाता है, दरगाह हजरत निजामुद्दीन औलिया और दरगाह बन्दा नवाज इत्यादि ऐसे स्थल हैं भारत मे जहा ससार भर के लाखों लोग यात्रा कर हाजिरी देना अपना परम कर्तव्य मानते हैं। ऐसे ही पाकिस्तान मे विशेष रूप से सिख धर्मावलम्बियों के ऐसे गुरुद्वारे है जिनके दर्शनो के लिए प्रतिवर्ष हजारों सिख पाकिस्तान जाते है। इस देश के प्रमुख संप्रदाय हिन्दू, मुस्लिम, सिख और ईसाई एक दूसरे के पूजनीय व वन्दनीय आस्था स्थलो इत्यादि को इस देश की मिली जुली सांस्कृतिक धरोहर के रूप में स्वीकार करते हैं।

यह एक चिन्ता का विषय अवश्य है कि इस देश के बंटवारे के पश्चात यहां के निवासियो मे जिस एकरसता की आशा की जाती थी, वह अभी भी कुछ दूर ही है। विभिन्न धर्मो के पूजनीय वन्दनीय आस्था केद्रों के प्रति जो आदर, सम्मान की भावना होनी चाहिए, उसका अभाव बना हुआ है। इसका कारण शायद यही है कि इस देश के निवासियो ने इन स्थानो के महत्व को पूरी तरह से आत्मसात नहीं किया है। पडोसी धर्म का तकाजा है कि हमारे पडोस मे यदि कोई भिन्न धर्मावलम्बी निवास करता है तो हम उसकी आस्था व भावना का आदर करना सीखे। हमे अपने पड़ोसी धर्म को निभाना सीखना होगा और जिस काम से पडोसी की आस्था और भावना को ठेस लगे, ऐसा काम नहीं करना है। तभी इस देश मे समरसता का संचार होना संभव हो पायेगा।

सिख धर्म के सस्थापक गुरु नानकदेव का जन्म अब से लगभग पांच सौ वर्ष पूर्व हुआ था। यद्यपि उनका जन्म हिन्दू परिवार मे हुआ किंतु उनकी यह सीख थी "न कोई हिन्दू न कोई मुसलमान" इस देश के रहने वाले सभी एक है। इसी तथ्य को दृष्टि मे रखते हुए अमृतसर मे जो ऐतिहासिक गुरुद्वारा 'स्वर्ण मदिर' बना हुआ है, उसकी आधारशिला सांई मियां मीर द्वारा रखी गई थी। आपसी भेदभाव व ऊंचनीच की भावना को समाप्त करने की दृष्टि से 'लगर' प्रथा चालू की गयी, जहां बगैर किसी भेदभाव के सब लोग एक साथ बैठकर भोजन कर सके। सिख धर्म के अन्य गुरुओ ने भी इस

सीख का अक्षरश. पालन किया है और इस प्रथा के दर्शन आज भी समस्त गुरुद्वारो मे किये जा सकते है, जहां हजारो की सख्या मे लोग बगैर किसी भेदभाव के एक साथ बैठकर भोजन करते है।

रामकृष्ण परमहस और उनके विश्वविख्यात शिष्य विवेकानन्द ने भी भारतीय समरसता का ही प्रतिपादन कर इस देश के निवासियो पर अपनी अमिट छाप छोडी है। अनेक मुस्लिम सूफियो ने भी, जिनकी मजारे दरगाहो के रूप मे यहा मौजूद है, उन्होने भी सब धर्मो की एकता का प्रचार किया और यही कारण है कि इन दरगाहों पर मुसलमानों के अतिरिक्त अन्य धर्मो के लोग भी जाकर मन्नते मागते है और अपनी श्रद्धा व सम्मान प्रकट करते है। इस देश मे ऐसे अनेक गिरजाघर है जहां सभी धर्मो के लोग जाकर मा मरियम और ईसा के प्रति श्रद्धा व आदर प्रदर्शित करते है।

राष्ट्रपिता महात्मा गाधी ने अपना सारा जीवन सांप्रदायिक सद्‌भावना की स्थापना हेतु व्यतीत किया और इसी उद्देश्य की प्राप्ति के लिए उनका बलिदान भी हुआ। महात्मा गाधी ने अपनी प्रात कालीन व सायकालीन प्रार्थना मे सभी धर्मो के प्रवचनो को शामिल किया ताकि सब धर्मो के प्रति सम्भाव की भावना बनी रहे।

यह पुस्तक क्यों?

यह पुस्तक इसी दृष्टि से प्रकाशित की जा रही है कि हमे विभिन्न धर्मो से सबंधित उनके पूजनीय व वन्दनीय स्थानो की जानकारी मिल सके और संभव हो तो उन स्थलो की यात्रा भी करें जिसके द्वारा हमे एक दूसरे की भावनाओ का आदर करने का अवसर मिल सके। इस पुस्तक मे डेढ सौ के लगभग ऐसे स्थानो का विवरण उनके चित्रो सहित दिया गया है जो सभी प्रमुख धर्मो से सबधित है। हिन्दू, मुस्लिम, सिख, ईसाई, जैन, बौद्ध, पारसी, यहूदी और बहायी सम्प्रदायो से सबधित स्थलो की जानकारी दी गई है। हमारा मानना है कि इस पुस्तक के अध्ययन से हमारे अदर साम्प्रदायिक सौहार्द की भावना पैदा होगी और हम विशाल भारत की एकता के दर्शन निकट से कर सकेगे। हजारो वर्ष पुरानी हमारी सभ्यता, जिसमे समय समय पर अनेक प्रवाह सम्मिलित हुए है, भारत की सास्कृतिक एकता के आधार हैं जिनको न केवल समझना और जीवित रखना है बल्कि उन्हे सशक्त बनाना है। इस देश के इतिहास को समझने के लिए हमे इन स्थानो से सहायता

मिलेगी। इसलिए यह अत्यत आवश्यक है कि इन स्थानो को हम अपनी हजारो वर्षो पुरानी सभ्यता के प्रतीक के रूप मे जीवित व सुरक्षित रखे।

साम्प्रदायिक सौहार्द का वातावरण निर्माण करने की दृष्टि से यह हमारी तीसरी पुस्तक है। पूर्व दो पुस्तके सर्व सेवा सघ प्रकाशन, वाराणसी द्वारा प्रकाशित की जा चुकी है। प्रथम पुस्तक राष्ट्रीय एकता के प्रतीक हमारे पर्व (जिसे हाल ही मे 'स्वामी प्रणवानन्द साहित्य पुरस्कार वर्ष 1995' से सम्मानित किया गया है) तथा दूसरी 'भारतीय सह अस्तित्व के प्रतीक विभिन्न धर्म' है जिनका व्यापक स्वागत किया गया है। ऐसी पुस्तको के प्रकाशन की जरूरत उस समय बहुत तीव्रता से महसूस की गई जब दिसम्बर सन् 1992 मे अयोध्या मे बाबरी मस्जिद को नष्ट कर दिया गया और जिसके परिणामस्वरूप देश के विभिन्न भागो मे बडे पैमाने पर साम्प्रदायिक दगे भडके और सैकडो बेगुनाह लोग स्त्रिया व बच्चो सहित मारे गए और करोडो अरबो रुपये की सम्पत्ति नष्ट कर दी गई।

इस पुस्तक मे कुछ ऐसे स्थानो का विवरण भी शामिल किया गया है जो सकीर्ण अर्थ मे धार्मिक स्थल तो नही है अपितु इस देश के जन जीवन मे उनकी अपार महत्ता है और जो लाखो देश विदेश के लोगो के लिए श्रद्धा व आदर के केद्र बने हुए है। उदाहरणस्वरूप सेवाग्राम आश्रम, राजघाट समाधि, जलियावाला बाग, महर्षिरमण आश्रम, स्वामी विवेकानन्द स्मृति केद्र, इत्यादि। ये ऐसे स्थल है जिनके दर्शन कर लोगो मे आध्यात्मिक आस्था व देश के प्रति सेवाभाव का संचार होता है। इस पुस्तक मे भारत के अतिरिक्त नेपाल, पाकिस्तान, श्रीलका व तिब्बत मे स्थित कुछ स्थानो का विवरण भी शामिल किया गया है।

जब वर्तमान पुस्तक के प्रकाशन का सकल्प मन मे उठा तो हमने यह नही समझा था कि यह कितना कठिन काम है। इस विशाल देश मे उत्तर से दक्षिण और पूरब से पश्चिम, चारो दिशाओ मे ये सभी स्थल फैले हुए है। इनके लिए उचित सामग्री इकट्ठा करना एक दुष्कर कार्य था और खासकर मेरे जैसे व्यक्ति के लिए, जिसकी आयु 84 वर्ष हो चुकी है। इस पुस्तक के लिए सामग्री व चित्र जमा करने का कार्य हमारे अनेको सहयोगियो और मित्रो द्वारा ही पूरा किया गया है। मै तो केवल एक निमित्त मात्र ही रहा हू। इस पुस्तक के प्रकाशन का श्रेय किसी एक व्यक्ति को नही दिया जाना चाहिए वल्कि यह एक सामूहिक प्रयास है जो इस पुस्तक के रूप मे

फलीभूत हुआ है। मै अपने उन सहयोगियो व मित्रो के प्रति नतमस्तक हू जिनका सहयोग मुझे प्राप्त हुआ है और उनमे से कुछ की चर्चा करना मै अपना कर्तव्य मानता हू।

श्री नन्द किशोर· श्री नन्द किशोरजी ओसियो (बीघापुर) जिला उन्नाव, उत्तर प्रदेश के निवासी है और भारत मे जो समाजवादी आदोलन रहा है उससे निकट से सवधित रहे है। जिन महानुभावो ने आजादी के पश्चात समाजवादी आदोलन की नीव इस देश मे रखी है, उनसे नन्द किशोरजी का निकट का सबध रहा है। वे एक यशस्वी पत्रकार व लेखक भी है। अनेक पत्रिकाओ का उन्होने सम्पादन किया है। इन्होने कठिन परिश्रम कर इस पुस्तक के लिए लगभग चार सौ पृष्ठ लिपिबद्ध कर हमे भेजे है। अधिकतर स्थानो का विवरण जो इस पुस्तक मे दिया गया है उनके द्वारा ही तैयार किया गया है। निसन्देह यदि वे यह विवरण उपलब्ध नही कराते तो इस पुस्तक का प्रकाशन लगभग असभव ही था। मै श्री नन्द किशोरजी के प्रति आभार व्यक्त करना अपना परम कर्तव्य मानता हू।

श्री वावूलाल शर्मा: श्री बाबूलाल शर्मा हमारे अनन्य मित्रो मे से है जो चिरकाल से गाधी शाति प्रतिष्ठान से सबधित है। इस पुस्तक के प्रकाशन मे मुझे उनका अभूतपूर्व सहयोग मिला है। श्री बाबूलाल शर्मा जी ने इस पुस्तक के लिए मुझे हर प्रकार से उत्साहित किया और यदि उनका सहयोग मुझे प्राप्त नहीं होता तो इस पुस्तक के प्रकाशन मे सन्देह ही था। प्रकाशन सबधी अनेक कठिनाइया जो प्राय उत्पन्न होती है, उन्होने सुगमता से हल किया है। मै उनके प्रति भी अपना आभार व्यक्त करता हू।

गांधी शांति प्रतिष्ठान

गाधी शाति प्रतिष्ठान ने इस पुस्तक के प्रकाशन का दायित्व स्वीकार किया है, उसके लिए मै प्रतिष्ठान के अधिकारियो का आभारी हू। इस पुस्तक के लिए उपयुक्त सामग्री व चित्र इत्यादि प्राप्त करने मे जो प्रारम्भिक व्यय हुआ है उसकी व्यवस्था गाधी शाति प्रतिष्ठान द्वारा की गयी है। प्रतिष्ठान की विभिन्न प्रदेशो मे जो शाखाये है उनसे सलग्न श्री रमेश शर्मा (दिल्ली), श्री

हवलदार सिंह हलधर (बिहार), श्री चन्दनपाल (कलकत्ता), श्री अजीत बैन्यूर (केरल), श्री कृष्णचन्द सहाय (आगरा) का सहयोग भी मुझे प्राप्त हुआ है। इसके लिए भी मैं उनका आभारी हू। हमारे मित्र श्री रमेश गुप्ता (जिनका अभी हाल ही मे निधन हुआ है) ने हिमाचल के मंदिरो का चित्रो सहित विवरण भिजवाया है, उनके प्रति भी मै अपना सम्मान प्रकट करता हूं। हरियाणा के श्री भोलाराम आर्य, उज्जैन के श्री अमृतलाल अमृत, इन दोनो महानुभावों का भी मैं आभारी हू, जिन्होने अनेक स्थानो के विवरण और चित्र भिजवाये है। मिर्जापुर निवासी भाई शमशाद खां ने अनेक दरगाहो का सरल हिन्दी भाषा मे अनुवाद कर विवरण भेजकर जो अपना अमूल्य सहयोग प्रदान किया है, उनके लिए भी मैं उनका आभारी हूं। राष्ट्रीय गांधी सग्रहालय, पटना के सचालक डॉ रजी अहमद ने इस दिशा मे अपना सहयोग प्रदान किया है, उनके प्रति भी मै नतमस्तक हूं।

बम्बई के विख्यात समाजकर्मी डॉ असगर अली इजीनियर व उनके सहयोगी श्री असद बिन सैफ ने महाराष्ट्र मे स्थित अनेक स्थानो की जानकारी चित्रों सहित भिजवाकर अपना सहयोग प्रदान किया है, उसके लिए भी मै उनका ऋणी हू और आभार प्रकट करता हूं। पंजाब सिन्ध बैंक से सबंधित सरदार दयासिह ने अनेक गुरुद्वारो के चित्र उपलब्ध कराये हैं, इसलिए वे भी हमारे धन्यवाद के पात्र है। ऐसे ही ईसाईयो की प्रमुख शिक्षा सस्था विद्या ज्योति से संबंधित फादर टी. के जॉन (दिल्ली), श्री महताब चन्द जैन (दिल्ली), श्री रामबल्लभ अग्रवाल (जयपुर) ने भी अपना बहुमूल्य सहयोग प्रदान किया है इसके लिए भी मैं उनका आभारी हूं। श्री ई आई मालेकर ने भी सभी यहूदी स्थानो के विवरण व चित्र उपलब्ध कराये हैं, उनका भी मैं आभारी हूं। न्यू दिल्ली स्थित महाबोद्धी सोसायटी ऑफ इंडिया के सचालक भिक्षु डब्लू मेघानन्द ने अनेक बुद्ध स्थलो की जानकारी उपलब्ध कराई है उनके प्रति भी मैं नतमस्तक हू। श्रीलंका मे स्थित बौद्ध मंदिरो व स्तूपो की जानकारी चित्रो सहित डॉ. ए टी आर्यारत्ने ने उपलब्ध करायी है, इसलिए मै उनके प्रति अपना आभार व आदर सम्मान व्यक्त करता हू। मै दिल्ली निवासी जनाब नुसरत अली नासरी का भी आभारी हूं जिनकी सहायता से अनेक महत्वपूर्ण दरगाहो की जानकारी प्राप्त हुई है। हमारे मित्र व पडोसी श्री अनवर अली देहलवी का भी मैं आभारी हू जिन्होने अनेक दरगाहो से संबधित विवरण व चित्र उपलब्ध कराये हैं। बहाई सप्रदाय के नई

दिल्ली स्थित मुख्य कार्यालय के प्रमुख डॉ ए के मर्चेन्ट का भी आभारी हू जिन्होने कमल मदिर के चित्र व उसका विवरण भिजवाया है।

'पहाड' नामक ग्रन्थ के यशस्वी प्रकाशक व सम्पादक डॉ शेखर पाठक (नैनीताल) ने कैलाश और मानसरोवर के चित्र उपलब्ध कराकर अपना योगदान प्रदान किया है, उसके लिए भी मै उनका ऋणी हूं। भारत के अनेक क्षेत्रो मे स्थित विभिन्न दरगाहो के प्रबधको का भी मैं आभारी हूं जिनके माध्यम से इन दरगाहो के विवरण व चित्र प्राप्त हुए है। मैं अनेक गिरजाघरों और मंदिरों के प्रबंधकर्ताओ का भी आभारी हूं जिन्होने विभिन्न गिरजाघरो व मंदिरो की जानकारी चित्रो सहित उपलब्ध करायी है। श्री गगा सभा हरिद्वार का भी मै ऋणी हू जिन्होने विश्व विख्यात व हिन्दुओ के प्रमुख आस्था स्थल हरिद्वार का विवरण चित्रो सहित भिजवाया है। भारत सरकार के पुरातत्व विभाग ने भी अनेक मदिरो के विवरण व चित्र भिजवाकर अपना योगदान प्रदान किया है। इन सबके अतिरिक्त और भी अनेक महानुभाव है जिनका योगदान मुझे प्राप्त हुआ है और मैं उन सबके प्रति आभार व्यक्त करता हूं।

इस पुस्तक के लिए उपयुक्त सामग्री जुटाने मे डेढ वर्ष से अधिक का समय लगा है और इस कठिन परिश्रम के उपरात भी कुछ स्थानो के चित्र प्राप्त नहीं हुए है, जिसका हमे खेद है।

गांधी शांति प्रतिष्ठान के पुस्तकालय के सेवानिवृत्त ग्रन्थपाल श्री हरीशचन्द्र पंत के प्रति भी मैं अपना आभार व्यक्त करता हूं जिन्होने इस पुस्तक मे छपी सामग्री का बहुत तन्मयता से प्रूफ रीडिंग किया है तथा भाषा संबधी अनेक त्रुटिया दूर की है। ऐसे ही कुमारी सावित्री नेगी ने पाच सौ पृष्ठो से अधिक की सामग्री बहुत सुदर और साफ हिन्दी मे टाइप की है जिस कारण पुस्तक की छपाई का कार्य सहज हुआ है। संजीव कुमार जिन्होने इस पुस्तक की कम्प्यूटर डिजाइनिग की है, उनके प्रति भी मैं आभार व्यक्त करता हू।

प्रारंभ मे इस पुस्तक की पृष्ठ संख्या अनुमान से अधिक हो गई थी तथा ऐसे ही जिन स्थानो का विवरण व चित्रो का समावेश पुस्तक मे होना था, उनकी सख्या भी अपेक्षा से अधिक हो गई थी। समस्या यह थी कि पृष्ठो व स्थानो का विवरण किस प्रकार मर्यादित सख्या तक सीमित किया जाये जिससे पुस्तक की मूल भावना को कोई ठेस नहीं पहुंचे। इस जटिल गुत्थी का समाधान गाधी शांति प्रतिष्ठान द्वारा प्रकाशित 'गांधी मार्ग' पत्रिका के

विषय सूची

अध्याय एक

अध्याय दो

अध्याय तीन

अध्याय चार

अध्याय पांच

अध्याय छह

अध्याय सात

अध्याय आठ

अध्याय नौ

अध्याय दस

अध्याय ग्यारह

अध्याय बारह

अध्याय तेरह

अध्याय चौदह

अध्याय एक

1. सेवाग्राम आश्रम, वर्धा

महाराष्ट्र

सेवाग्राम की अपनी एक शोभा एव कीर्ति रही है। आज भी सेवाग्राम आश्रम मे पहुचते ही एक विशेष प्रकार का सुकून मिलता है। इस शताब्दी का एक अनोखा व्यक्तित्व यहा रहा है। इतिहास के सबसे बडे साम्राज्य के खिलाफ सत्य, अहिसा, सत्याग्रह के दम पर जेहाद छेडने वाले महान व्यक्ति ने यहा अनेक प्रयोग किए। राष्ट्र की सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक, आध्यात्मिक, सास्कृतिक चेतना जगाने के लिए सेवाग्राम का उपयोग हुआ। रचनात्मक कार्यो का प्रत्यक्ष पाठ यहा मिलता था। गाधी जीवनदर्शन के अनुकूल जीवन जीने का प्रयास करने वाले लोग यहा एकत्र होते थे। यहा से राष्ट्रसेवा, मानव सेवा की प्रेरणा प्राप्त होती थी। मार्ग दर्शन के लिए सेवाग्राम की ओर लोग नजर दौडाते थे। राष्ट्र का प्रकाश स्तम्भ यहा था। यहा से राष्ट्र को दिशा मिलती थी। सेवाग्राम राष्ट्र के भाग्य के लिए ध्रुवतारा बना। दुनिया की चहल–पहल, भागदौड से दूर भारत के दिल मे (मध्य मे) बसा है सेवाग्राम आश्रम। सेवाग्राम का सौभाग्य रहा कि उसे राष्ट्रपिता महात्मा गाधी ने अपनी प्रयोग स्थली के रूप मे चुना। भारत के भाग्य को मोड देने वाले तथा स्वतत्रता आदोलन के कई महत्व के निर्णय सेवाग्राम मे बापू कुटी मे ही लिए गए। सेवाग्राम वर्धा से 6 किलोमीटर दूर सेगाव के पास स्थित है जिसे अब सेवाग्राम के नाम से जाना जाता है। इसे लोग बडे सम्मान के साथ 'गैर सरकारी राजधानी' कहा करते थे। स्वर्गीय श्री जे. सी कुमारप्पा कहते थे "किसी भी राजधानी का प्रमुख कार्य मुल्क की सेवा करना होता है। इस अर्थ मे सेवाग्राम सचमुच ही भारत की राजधानी है।" सेवाग्राम ने देश के हित मे काम करने वाली अनेक रचनात्मक सस्थाओ को जन्म दिया। सैकडो कार्यकर्ता, विद्वान यहा बापू की छत्रछाया मे उनके प्रयोगो मे लगे रहे।

स्वतत्रता, समानता, बधुता, सहभागिता, सर्वधर्म सम्भाव, हिन्दू–मुस्लिम

एकता, हरिजनोद्धार, श्रम प्रतिष्ठा, नशाबदी, खादी ग्रामोद्योग, कृषि गोपालन, ग्रामसेवा आदि के अनूठे प्रयोग बापू के नेतृत्व एव मार्गदर्शन मे यहा से फैले। सत्य, अहिसा, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, असग्रह, शरीर श्रम, अस्वाद, भयवर्जन, सर्वधर्म समानतत्व, स्वदेशी, स्पर्श भावना, जिन्हे 'एकादशव्रत' के नाम से जाना जाता है, को जीवन मे उतारने का प्रयोग या इनके आधार पर जीवन शैली विकसित करने का प्रयोग बापू ने सेवाग्राम मे किया। उपभोग के बजाय त्याग, सुविधा नहीं सेवा, दिखावा नही सादगी, स्वार्थ नही परमार्थ का सबक यहा फला फूला। बापू जिस समाज की रचना करना चाहते थे, उसकी आधारशिला यहा रखना चाहते थे। अपने सपनो का भारत बनाने मे जिस साधन सामग्री का प्रयोग करना चाहते थे, उसकी प्रयोगशाला यह आश्रम रहा। साधन शुद्धि एव साध्य शुद्धि का अनोखा उपयोग–मेल यहा से विकसित करना चाहते थे। मानव निर्माण की इस प्रयोगशाला से अनेक देशभक्त, देशसेवक निकले, जिन्होने समाज, राष्ट्र, मानवता के लिए अपना जीवन अर्पित किया। एक नई सभ्यता, सस्कृति का निर्माण करने की चाह रखने वाले लोगो की एकजुटता, साझेदारी, भागीदारी का शरणस्थल मिलनस्थल एव उद्भवस्थल यह स्थान रहा।

सेवाग्राम मे सर्वप्रथम गाधीजी की शिष्या मीराबहन 1935 के अत मे एक झोपडी बनाकर रहने लगी। गाधीजी ने भी शीघ्र ही यहा बसने का निश्चय कर लिया। सन् 1936 से गाधीजी स्वय भी यहा आकर रहने लगे। धीरे–धीरे और झोपडिया भी बनने लगी तथा इसने एक आश्रम का रूप लेना शुरू किया। एक छोटा–सा गाव देश और दुनिया के आकर्षण का केद्र बनने लगा। लोगो की दृष्टि सेवाग्राम की ओर उठने लगी। आश्रम मे किसी भी प्रकार का भेदभाव नही रहा। विभिन्न जाति, सम्प्रदाय, धर्म के लोग यहा रहते तथा एक साथ भोजन करते, साथ काम करते। इसे आत्मनिर्भर एव आदर्श स्थान बनाने का प्रयत्न गाधीजी ने किया। खुराक, सगठन, सफाई से लेकर देश और दुनिया की समस्याओ के बारे मे गाधी जी के विचारो को यहा कार्य रूप मे लाया गया। इन कार्यो को देखने के लिए देश विदेश से लोग यहा आते। श्रम की प्रतिष्ठा पर बापू विशेष जोर देते थे, इसलिए सभी आश्रमवासियो से अपेक्षा की जाती थी कि वे पाखानो तथा आसपास की सफाई करे। इस मामले मे गाधीजी स्वय उदाहरण थे। गाव के लिए आदर्श प्रस्तुत हो, लोग सीखे, इसलिए बापू ने आश्रम के झोपडी, घर उसी अनुरूप बनाने का आग्रह रखा।

'बापू कुटी', 'बापू दफ्तर' आश्रम के प्रमुख एव महत्त्वपूर्ण स्थान है। आश्रम मे 'आदिनिवास', 'प्रार्थना भूमि', 'बा कुटी', 'बापूकुटी', 'बापू का सचिवालय' (दफ्तर), 'आखिरी निवास', 'रसोडा' (रसोईघर), इसके साथ–साथ 'परचुरेकुटी', 'महादेव कुटी', 'किशोर निवास', 'रुस्तम भवन' (अतिथिगृह) आदि है।

प्रो अल्बर्ट आइन्सटीन ने गाधीजी के बारे मे श्रद्धाजलि व्यक्त करते हुए कहा था "उनके पास किसी प्रकार की बाहरी सत्ता नही थी। वे एक ऐसे राजनीतिज्ञ रहे जिसकी सफलता कूटनीति या बुराई पर नही बल्कि अपने व्यक्तित्व द्वारा दूसरो को आशवस्त कर देने की ताकत पर थी। वे नम्रता व बुद्धिमता मे विजय हासिल कर चुके थे। उनके साधन दृढनिश्चय व एकचितता रहे। उन्होने अपनी सारी शक्ति अपने देशवासियो को आगे बढाने व उनके जीवन मे सुधार लाने मे लगायी। एक सीधे इन्सान का बडप्पन रखते हुए यूरोप की हृदयहीनता को सहा और इस प्रकार वे बहुत ऊचे उठ गये। यह सभव है कि आने वाली पीढिया शायद ही विश्वास करे कि हाडमास का पुतला, एक ऐसा इन्सान कभी इस धरती पर जिया था।"

ऐसा सच्चा व्यक्ति सेवाग्राम आश्रम मे रहा और यहा से स्वराज्य प्राप्ति के लिए अटूट प्रयास कर सफलता प्राप्त की। गाधीजी ने स्वय किया इससे भी ज्यादा लाखो लोगो को प्रेरणा दी, उनकी प्रेरणा से लोग स्वतत्रता आदोलन मे जुडे, जूझे। आम आदमी, साधारण व्यक्ति मे गाधी ने साहस की धारा बहाई।

गाधीजी ने इस प्रयोग भूमि और साधना स्थल से शस्त्रो के बिना, सत्य, अहिसा से स्वराज्य प्राप्ति का मार्गदर्शन किया। सत्य, अहिसा को व्यक्तिगत साधना से सामूहिक बनाया। आम जनता एव समाज सेवको के लिए भी जीवन मे व्रतो की आवश्यकता सिखाई। स्वैच्छिक गरीबी को जीवन मे अपनाने का सकल्प करवाया। साध्य एव साधन शुद्धि का आग्रह रखा।

सर्वधर्म प्रार्थना, कताई, कृषि, गोपालन, सफाई, स्वराज्य के कार्यक्रम, रचनात्मक कार्यक्रमो की श्रृखला, खादी ग्रामोद्योग, व्यक्ति एव समाज को स्वराज्य की ओर ले जाने के लिए स्वावलम्बी एव स्वदेशी का सकल्प करवाते थे। ऐसा था सेवाग्राम आश्रम जो आज भी हजारो लोगो को अपनी ओर आकर्षित कर रहा है। ❑

रमेश शर्मा

2. तिरूपति बालाजी

वेंकटेश्वर मन्दिर तिरूमले वेंकटाचल नामक पहाडी पर स्थित है। यह पर्वत अति ही पवित्र माना जाता है। कहा जाता है कि विष्णु का श्री विग्रह अपने आप प्रकट हुआ। भारत मे विष्णु के आठ विग्रह है, जो स्वय प्रकट माने जाते है, उनमे यह तीसरा है।

वेकटेश्वर मन्दिर मे भगवान बराह की लगभग दो मीटर खडी मूर्ति है। भगवान अपने करो मे शख, चक्र, गदा, पद्म धारण किए हुए है। मूर्ति को भीमसेनी कपूर युक्त चदन का तिलक लगाया जाता है। यहां मन्दिर मे पूजा प्रतिदिन बडी साज–सज्जा और विधि विधान से होती है। मन्दिर के ऊपर स्वर्ण कलश है। उत्तर भारत के लोग वेकटेश्वर को केवल बाला जी कहते है।

वेकटेश्वर मन्दिर के निकट स्वामी पुष्करिणी नाम का एक विस्तृत सरोवर है, जिसके मध्य मे एक मडप बना हुआ है जिसमे दशावतारो की मूर्तिया है। इस सरोवर मे स्नान करने का विधान है। इस सरोवर के पश्चिम की ओर भगवान बराह का एक अन्य मन्दिर है। समीप ही एक नवीन कृष्ण मन्दिर भी है।

वेकटेश्वर मन्दिर से छह किलोमीटर की दूरी पर आकाश गगा नाम का एक प्रपात है, जिसका जल एक कुड मे गिरता है। इसी जल से वेंकटेश्वर की मूर्ति को स्नान कराया जाता है तथा मन्दिर के अन्य उपयोगो मे भी लाया जाता है। यहा से दो किलोमीटर दूरी पर पापनाश तीर्थ है, जहा दो पर्वतो के मध्य मे एक कुड और जलस्रोत है। यहा पर हाथी राम बाबा की समाधि और राधा–कृष्ण मन्दिर का बडा महत्व है। इसके अतिरिक्त वैकुठ तीर्थ पाण्डव तीर्थ, जाबालि तीर्थ प्रमुख है।

वेकटेश्वर मन्दिर के समीप ही कल्याणकट नामक स्थान है। इस क्षेत्र मे मुडन सस्कार कराना प्रधान कृत्य समझा जाता है। सौभाग्यवती स्त्रिया भी मुडन कराती अथवा लट कटवाती है।

वेकटाचल पहाडी पर जाने के दो मार्ग है। एक पैदल वालो के लिए, दूसरा वाहनो के लिए पक्का मार्ग। पैदल मार्ग पर कपिल तीर्थ नामक एक सरोवर मिलता है। इसमे स्नान करके पर्वत पर चढाई की जाती है। सरोवर के तट पर एक शिव मन्दिर है और उसके निकट गोपुर है। इसके आगे गैर हिंदुओ

का जाना मना है।

पर्वत पर वेकटेश्वर मन्दिर के आसपास कई धर्मशालाये है। देवस्थानम् ट्रस्ट के कई आवासगृह है, जिनमे रहने के लिए थोडा शुल्क देना पडता है।

वेकटेश्वर मन्दिर के निकट का स्टेशन तिरूपति पूर्व है। स्टेशन के आसपास की बस्ती का नाम तिरूपति है। यही से वेकटेश्वर पहाडी के लिए जाना पडता है।

तिरूमाला पूर्वी घाट की एक 2800 फुट की पहाडी पर स्थित एक छोटा–सा कस्बा है। पहाडी के नीचे तिरूपति की बस्ती है। हिदुओ के लिए दोनो बस्तियो का बहुत ही महत्व है, क्योकि वेकटेश्वर भगवान विष्णु के अवतार माने जाते है।

इस तीर्थ का महत्व इसी से आका जा सकता है कि वेकटेश्वर मन्दिर के दर्शनार्थ प्रतिदिन साठ हजार लोग आते है। ससार मे कोई भी ऐसा धर्म स्थान नही है जहा पर इतनी अधिक सख्या मे दर्शनार्थी आते हो।

ससार मे तिरूपति बालाजी वेकटेश्वर से अधिक सम्पन्न अन्य कोई देव स्थान नही है। सन् 1996–97 मे इस मन्दिर के चढावे की आय 200 करोड़ रुपये से भी अधिक थी।

तिरूपति देवस्थान ट्रस्ट समाज के अनेक क्षेत्रो मे अपना योगदान देता है। स्कूल, कॉलेज, अस्पताल तथा आयुर्वेद शिक्षा सस्थानो को चलाता है, जिसमे लगभग 12000 विद्यार्थी शिक्षा ग्रहण करते है। देवस्थान ट्रस्ट अनाथालय के माध्यम से आश्रयहीन लोगो की सेवा करता है। श्री वेकटेश्वर विश्वविद्यालय, महिला विश्वविद्यालय, कृषि महाविद्यालय तथा पशु चिकित्सा संस्थान भी देवस्थान ट्रस्ट के कार्य क्षेत्रो से सम्बन्धित है। विश्वविद्यालय से 12 कॉलेज सबधित है। देवस्थान ट्रस्ट धार्मिक पुस्तको का प्रकाशन भी करता है।

वेकटेश्वर मन्दिर की सम्पन्नता के बारे मे पहले ही लिखा जा चुका है। शायद भारत मे कोई ऐसा मन्दिर नहीं जिसमे वेकटेश्वर महादेव जैसे अमूल्य और अति सुदर कलात्मक आभूषण हो। बालाजी वेकटेश्वर की साज–सज्जा मे जो आभूषण है, उनका मूल्याकन करना बडा कठिन है।

वेकटाचल माहात्म्य के अनुसार पद्मावती देवी के पिता राजा अशोक ने पहले स्वर्ण मुकुट बनवाया था। इसी तरह की गाथा, वेकटेश्वर के दूसरे आभूषण सूर्य कटारी के बारे मे भी कही जाती है। दूसरा स्वर्ण मुकुट कृष्णदेव ने 1513 मे बनवाया था, तीसरा स्वर्ण मुकुट 1945 मे तैयार हुआ।

सन् 1973 मे देवस्थान ट्रस्ट ने ऐसा स्वर्ण मुकुट बनवाया जो वेकटेश्वर

के हीरो और जवाहरो से जडे कटि हस्तम, शक, चक्र, कर्ण पत्रम से भी अधिक मूल्यवान और कलात्मक दृष्टि से सुदर था।

सन् 1982–83 मे बेल्जियम के एन्टवर्प से 3500 केरेट भार के चार करोड तीस लाख मूल्य के हीरे खरीदे गये। ये भी अपर्याप्त पाये गये तो बाद मे देवस्थान ट्रस्ट ने बाजार से बाइस लाख के हीरे खरीदे। देवस्थान ट्रस्ट ने 26 किलोग्राम सोना दिया, जिसका स्वर्ण मुकुट बनवाया गया। यह स्वर्ण मुकुट विशेष अवसरो पर ही उपयोग मे लाया जाता है।

अभी हाल ही मे कुछ और आभूषण जोडे गये है। बालाजी की आदम कद मूर्ति आपादमस्तक आभूषणो और रत्नो से मढी हुई है।

इस मन्दिर मे प्रतिदिन ही शुद्ध घी व अन्य मूल्यवान सामग्रीयुक्त कई मन लड्डुओ का भोग लगाया जाता है जिसे यात्री खरीद कर प्रसादस्वरूप अपने घरो को ले जाते है। मन्दिर मे दर्शन करने के लिए मीलो लम्बी कतारे लग जाती है और घटो कष्ट सहनकर श्रद्धालु यात्री श्री वेकटेश्वर भगवान के दर्शन कर आत्मविभोर होकर वापस लौटते है। □

3. गंगोत्री

उत्तराखण्ड

अनेक हिन्दू ग्रंथो मे गगोत्री अथवा मा गगा का वर्णन अत्यत ही आदर तथा श्रद्धापूर्वक किया गया है। हिमालय पर्वत की तेरह हजार फुट से अधिक की ऊचाई पर स्थित 'गोमुख' कदरा से निकलकर, अनेक दुर्गम स्थानों से होते हुए ऋषिकेश मे समतल भूमि से गगा का प्रवाह प्रारम्भ होता है तथा हरिद्वार होती हुई उत्तर भारत के अनेक स्थानो से गुजरकर, बगाल मे विशाल रूप धारण कर अत मे गगासागर (बंगाल की खाडी) मे विलीन हो जाती है। गगा हजारो मील की यात्रा कर, लाखो एकड भूमि सीचती हुई करोडो लोगो का उपकार करती है। गगा मे छोटी बडी अनेक नदिया सम्मिलित होती है और प्रयागराज मे यमुना एव सरस्वती नदिया भी इसमे विलीन हो जाती है। जिस रास्ते से गंगा गुजरती है उस मार्ग के आसपास की लाखो एकड भूमि को सीच कर अन्न की वृष्टि करती है। जिन स्थानो से गगा गुजरती है, उन सभी को तीर्थ

तथा पूजनीय स्थल माना गया है और हर वर्ष गगा के किनारे अनेक स्थानो पर पर्व के रूप मे हरिद्वार, गढमुक्तेश्वर प्रयागराज, वाराणसी, पटना व कलकत्ता इत्यादि मे गगास्नान का विशेष महत्व है। गगा को विभिन्न स्थानो पर भिन्न–भिन्न नामो से जाना गया है। जब तक यह हिमालय मे रही, भागीरथी व गगोत्री के नाम से, ऋषिकेश के पास मैदानी क्षेत्रो मे गगा के नाम से तथा बगाल मे प्रवेश करते ही हुगली के नाम से जानी जाती है, जहा यह बहुत बडी नदी का रूप धारण कर लेती है।

गगा के भारत भूमि पर अवतरण की कहानी अत्यत ही रोचक शब्दो मे वर्णित की गयी है। कहा जाता है कि एक बार वर्षा के अभाव मे देश मे भयकर अकाल पडा और जल के अभाव से करोडो लोग पशुओ सहित प्यासे मरने के लिए विवश हो गये। रघुकुल के तत्कालिक राजा भगीरथ इस दयनीय दशा को देखकर अत्यत ही दुखी तथा क्षुब्ध हुए। राजा भगीरथ को सुझाव दिया गया कि वे हिमालय मे जाकर शिवजी की आराधना कर उनसे गगा को भारत के मैदानी क्षेत्र मे भेजने के लिए प्रार्थना करे। राजा भगीरथ ने हिमालय मे जाकर शिवजी से अनुकूल वरदान प्राप्त करने के लिए घोर तपस्या की, जिस स्थान पर तपस्या की गयी थी उस स्थान को 'गगोत्री' कहा जाता है। अंत मे भगवान शिव प्रसन्न हुए और राजा भगीरथ के आग्रह पर गगा को पृथ्वी पर प्रवाहित होने की आज्ञा प्रदान की। ऐसा माना जाता है कि गगा गोमुख से निकल कर शिवजी की जटाओ मे समाहित थी तथा राजा भगीरथ की तपस्या से प्रसन्न होकर उन्होने अपनी जटाओ को खोल दिया जो जल के रूप मे प्रवाहित होकर वृष्टि के अभाव से त्रस्त लाखो–करोडो लोगो को सुख व आनन्द अनवरत देती रही। यह वही गगा है जो अब हजारो मील की यात्रा करते हुए गगासागर मे विलीन हो जाती है।

हिदुओ के लिए गगा मा के समान पूजनीय है तथा हिन्दू इस पावन नदी को अत्यंत ही श्रद्धा व आदर देकर अपने आपको सौभाग्यशाली एव गौरवान्वित अनुभव करते है। अपने जीवन मे हिन्दू कम से कम एक बार अवश्य ही गगा मे स्नान करने का सौभाग्य प्राप्त करने की इच्छा रखता है। मा गगा के प्रति आस्था का अनुमान इस धारणा से सहज ही लगाया जा सकता है कि यदि किसी कारणवश कोई व्यक्ति स्वय गगास्नान करने मे असमर्थ रहे तो वह दूसरे स्नानार्थियो से प्रार्थना करता है कि जब वे गगास्नान के लिए जाये तो एक डुबकी उसके नाम की भी अवश्य लगा ले। जो लोग गगास्नान के लिए जाते है वे उस व्यक्ति विशेष की भावनाओ का

सम्मान करते हुए एक डुबकी उस व्यक्ति के नाम से भी लगाना नहीं भूलते हैं।

प्रमाणित सत्य है कि स्वच्छ बर्तन मे रखा गया गगाजल कभी खराव नहीं होता और न ही उसमे कीडे पडते है। गगाजल को पूजा–पाठ आदि शुभ कार्यो मे उपयोग किया जाता है तथा उस जल का आचमन करने से मन और आत्मा की शुद्धि होती है। मृत्यु शैय्या पर पडे व्यक्ति के कण्ठ मे गगाजल की चन्द बूदे डालकर समझा जाता है कि अब उसका मोक्ष निश्चित है। धन्य है गगा और गगाजल।

गगोत्री की यात्रा के लिए देश की चारो दिशाओ से हजारो–लाखो लोग प्रतिवर्ष यात्रा कर अपने को धन्य मानते है। यद्यपि गंगोत्री का जल बर्फ के समान ठडा होता है, प्राय सभी यात्री उस जल मे स्नान करना अपना परम् कर्तव्य मानते है। पहले गगोत्री पहुचने के लिए मार्ग अत्यत कठिन एवं भयावह था किन्तु अब आवागमन के साधन सुलभ हो गये है, इसलिए गंगोत्री की यात्रा उतनी कष्टदायी नही है। यात्री 'जय गगा माई' का उद्घोष करते हुए अपनी यात्रा पूरी करते है। उत्तराखण्ड के चार धामो मे से 'गगोत्री' का अपना अलग महत्व है। ❑

4. श्री महावीर जी

राजस्थान

भावनात्मक एकता के वास्तविक प्रतीक के रूप मे राजस्थान मे एक ऐसा पावन, पवित्र और शात तीर्थ स्थल है जो सभी जाति वर्ग, सम्प्रदाय के लोगो के लिए खुला है। यहां सभी सद्भाव से दर्शन तथा भक्ति का समान अवसर प्राप्त करते है तथा अपूर्व आनन्द का अनुभव करते है।

यह सुविख्यात दिगम्बर जैन तीर्थ, श्री महावीर जी, राजस्थान के पूर्व अचल मे करोली जिले के हिन्डौन उप खण्ड मे गम्भीर नदी के सुरम्य तट पर स्थित है। दिल्ली–बम्बई रेलमार्ग की बडी लाईन पर श्री महावीर जी नाम का स्टेशन है जहां सभी गाडिया ठहरती है, स्टेशन से यह तीर्थ स्थल 7 किलोमीटर है। सडक मार्ग द्वारा जयपुर से 140, आगरा से 170 तथा

दिल्ली से 300 किलोमीटर दूर है। श्री महावीर जी रेलवे स्टेशन से तीर्थ क्षेत्र तक क्षेत्र कमेटी द्वारा निशुल्क बस की व्यवस्था है जो सभी ट्रेनो पर उपलब्ध रहती है।

ऐसा कहा जाता है कि कोई चार सौ वर्ष पूर्व चौबीसवे तीर्थकर श्री महावीर जी की मूगा वर्णीय पाषाण की पदमासन दिगम्बर जैन प्रतिमा का भूगर्भ से उद्भव एक कृषक चर्मकार के हाथो हुआ था। यह प्रतिमा 1000 वर्ष प्राचीन है। इस चमत्कारी प्रतिमा के अतिशय से प्रभावित होकर बसवा निवासी दिगम्बर जैन श्री अमरचन्द बिलाला ने यहा एक विशाल मन्दिर का निर्माण करवाया। इस विशाल मन्दिर के गगनचुम्बी धवल शिखर एव कलशो पर फहराते जैन धर्म के ध्वज सम्यक दर्शन, ज्ञान व चरित्र का सदेश और अनुपालना की प्रेरणा देते है। मन्दिर की पार्श्व वेदी मे मूल नायक के रूप मे भगवान महावीर की मनोज्ञ प्रतिमा विराजमान है, मूल नायक के दोनो ओर तीर्थकर पुष्प देव एव आदिनाथ की प्रतिमाए है।

अन्य कलापूर्ण वेदियो मे अनेक तीर्थकरो की पाषाण प्रतिमाए एव धातु की दिगम्बर जैन प्रतिमाए है। मन्दिर के मुख्य कक्ष मे भगवान महावीर की उत्सव प्रतिमा बीचोबीच प्रतिष्ठित है। मन्दिर के भीतरी और बाहरी प्रकोष्ठो मे सगमरमरी दीवारो पर बारीक खुदाई से तथा भित्ति चित्राकन तथा उस पर सोने की पच्चीकारी के कार्य से मन्दिर की छटा को आकर्षक व प्रभावकारी बनाया गया है। मन्दिर की वाह्य परिक्रमा मे श्वेत सगमरमर पर दिगम्बर जैन आख्यानो के कलात्मक भाव उत्कीर्ण किए गए है। सुदर परिक्रमा पथ पर श्रद्धालुगण भक्ति से फेरी लगाते है। मन्दिर के चारो ओर विशाल कटला है और बीच मे कलापूर्ण देवालय है जिसके मुख्य द्वार के सम्मुख 52 फुट ऊचा सगमरमर से निर्मित मान/स्तम्भ है जिसके शीर्ष पर चार तीर्थकरो की प्रतिमाए है।

श्री महावीर जी का मन्दिर एक सुदर कटले के मध्य मे है। कटले के चारो ओर यात्रियो के आवास के लिए सुविधापूर्वक कमरे बने हुए है। कटले मे ही श्री महावीर पुस्तकालय, वाचनालय और अन्न पूर्ण भोजनशाला भी है। कटले का मुख्य प्रवेश द्वार उत्तर मुखी है दूसरा छोटा द्वार दक्षिण मे है जहा से चरण चिन्ह छत्री का मार्ग है। कटले के प्रवेश द्वार के पास ही कटला प्रागण मे बाई ओर यात्रियो की सुविधा के लिए उचित मूल्य पर शुद्ध सामान प्राप्त कराने के उद्देश्य से एक उपभोक्ता भण्डार खोला गया है। कटले के पश्चिमी

भाग मे कुन्द कुन्द विलय नाम से एक ओर सुसज्जित आवास गृह निर्मित किया गया है तथा पूर्वी भाग मे चरण चिन्ह छत्री धर्मशाला कटले से जुडी हुई है। कटले के मुख्य द्वार के बाहर ही यात्रियो की सुविधा हेतु बहुत ही सुदर स्वागत कक्ष बनाया गया है जहा पर 24 घटे कर्मचारीगण यात्रियो को कमरे आदि उपलब्ध करवाने के लिए उपस्थित रहते है।

भगवान महावीर की प्रतिमा के पावन स्थल पर चरण चिन्ह प्रतिष्ठित हैं और वहा एक कलापूर्ण छत्री निर्मित है। यहां पर बहुत ही सुदर उद्यान विकसित किया गया है। इसी उद्यान मे चरण चिन्ह छत्री के सम्मुख ही प्रागण मे 29 फुट ऊचा महावीर स्तूप है जिसका निर्माण भगवान महावीर के 2500वे निर्वाण वर्ष मे हुआ है। यहीं पर बच्चो के लिए एक सुदर पार्क बनाया गया है, वही बहुत ही सुदर बारादरी का निर्माण भी किया गया है जिसमे बैठकर यात्रीगण अलौकिक आनद व शाति का अनुभव करते है।

महावीर जयन्ती के शुभ अवसर पर यहा प्रतिवर्ष चैत्र शुक्ल 13 से वैसाख कृष्णा द्वितीय तक लक्खी मेला लगता है। मेले मे ध्वजारोहण, जयन्ती जुलूस, जलयात्रा, जिनेन्द्र रथ यात्रा और कलशाभिषेक आदि के सुदर कार्यक्रम होते है। रात्रि मे बहुत ही सुदर सास्कृतिक कार्यक्रम तथा एक दिन राष्ट्रीय कवि सम्मेलन का भी आयोजन होता है। राष्ट्रीय स्तर के इस मेले मे देश के सभी भागो से सभी समुदाय तथा वर्गों के लोग श्रद्धापूर्वक भाग लेते है।

यात्रियो के ठहरने के लिए सुविधाजनक कमरे, शोचालय स्नानगृह सहित उपलब्ध है। सामान्य धर्मशालाए भी चारो ओर बनी हुई है। इनमे यात्रियो की सुविधा के लिए बिस्तर, बर्तन व अन्य आवश्यक सामान उपलब्ध कराया जाता है।

क्षेत्र कमेटी द्वारा प्रतिवर्ष छात्र–छात्राओ के लिए छात्रवृत्तिया दी जाती है। अध्ययन हेतु पुस्तके भी उपलब्ध करवाई जाती है, विधवाओ, असमर्थ तथा असहाय स्त्री–पुरुषो को भी आर्थिक सहायता उपलब्ध करवाई जाती है।

दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्री महावीर जी की प्रबन्धकारिणी कमेटी ने सम्पूर्ण सवाई माधोपुर जिले (करोली सहित) को विकलागो के लिए कृत्रिम पैर लगवाकर सक्षम बनाने की दृष्टि से गोद लिया हुआ है। प्रत्येक वर्ष वार्षिक मेले के अवसर पर जयपुर मे निर्मित कृत्रिम पैर उपलब्ध करवाये जाते हैं तथा विकलागो को ट्राई–साइकिल व असहाय महिलाओ को सिलाई मशीन भी उपलब्ध करवाई जाती है।

अनेक सस्कृतियो के इस विशाल देश मे विविधता मे एकता के वास्तविक दर्शन श्री महावीर जी मे होते है, इसलिए यह क्षेत्र एक पावन व पवित्र पूजा स्थल है जहा वर्ष भर श्रद्धालुओ का ताता लगा रहता है। ❑

5. श्री हरमन्दिर साहिब

अमृतसर नगर बसाने का निर्णय सन् 1570 मे लिया गया था। इस स्थान का चुनाव एव उस पर बसने वाले शहर की योजना गुरु अमरदास ने बनाई थी। उन्होने अमृतसर शहर बनाने और बसाने का काम भाई जेठाजी (जो बाद मे गुरु रामदास जी बने) को सौपा था।

कहा जाता है कि एक बार सम्राट अकबर पजाब के दौरे पर गया, वह गुरु अमरंदास जी से मिलना चाहता था। गुरु अमरदास ने सम्राट अकबर से इस शर्त पर मिलना स्वीकार किया कि पहले वे सर्व साधारण के साथ जमीन पर बैठकर लगर मे सबके साथ भोजन करे। सम्राट अकबर ने ऐसा ही किया। अकबर गुरु अमरदास से इतना प्रभावित हुआ कि उसने लगर को सुचारू रूप से चलाने के लिए सरकार की तरफ से कुछ योगदान करना चाहा किन्तु अमरदास ने लगर चलाने के लिए सरकारी सहायता लेने से इनकार कर दिया। जमीन का वह टुकडा जो बादशाह ने दिया उसी के घेरे मे हरमन्दिर साहिब और गुरु रामदास का सरोवर आता है। यह सच है कि गुरु रामदास जी ने कुछ समय बाद तुग पिड के चौधरी से एक चक खरीदा था।

सबसे पहले पीने के पानी की आवश्यकता पूरी करने के लिए सतोषसर नाम का ताल बनाया गया। उसके बाद पवित्र अमृत सरोवर की खुदाई का काम किया गया। साथ ही रहने के लिए मकानो, बाजारो, व्यापारिक केद्रो, गोदामो और कारखाने आदि बनाने का भी कार्य आरभ किया गया। आरभ मे इस स्थान को 'गुरु का चक्र', 'चक्र रामदास' और 'गुरु रामदासपुर' के नाम से जाना जाता था। बाद मे पवित्र अमृत सरोवर तैयार होने के बाद इस शहर का नाम अमृतसर प्रसिद्ध हुआ।

गुरु रामदासजी ने सरोवर की खुदाई का काम अपने जीवनकाल मे पूरा कर लिया था। सन् 1581 मे ज्योति–ज्योत सौपी (दिवगत) से पहले उन्होने गुरु गद्दी अपने छोटे सुपुत्र गुरु अर्जुनदेव को दी। गुरु अर्जुनदेव जी ने पवित्र अमृतसर मे हरमन्दिर बनवाया और आसपास के भवन भी वनवाये। सन् 1589 मे हरमन्दिर साहिब की नीव एक मुसलमान फकीर साई मिया मीर से रखवाई। जब यह इमारत बनकर तैयार हो गई तो इसमे गुरुग्रन्थजी का प्रकाश सन् 1604 मे किया गया। तव से अव तक ईश्वरीय वाणी का कीर्तन इस स्थान पर निरतर जारी है।

हरमन्दिर साहिब का वर्तमान स्वरूप खालसा पथ की ओर से सन् 1765 मे बनवाया गया। सन् 1762 मे सिखो को दबा पाने मे असफल होने पर अहमदशाह अब्दाली ने उसके पहले स्वरूप को वारूद से उडा दिया था।

जब लाहौर के गवर्नर से उसे पता लगा कि सिखो की अमरशक्ति का स्रोत हरमन्दिर साहिब के साथ–साथ अमृत सरोवर भी है तो अहमदशाह अब्दाली ने सिखो का विनाश करने के लिए अमृत सरोवर को मलवे और मरे हुए पशुओ की लाशो से भर दिया था।

सिख अपने अधिकारो के लिए जूझते रहे और उन्होने सन् 1764 ई मे जत्थेबन्द होकर इतनी शक्ति अर्जित कर ली कि अफगानो को हराने और उनमे से बहुतो को बदी बनाने मे सफल हुए। उन्हे सबक सिखाने के लिए कैदियो से सरोवर साफ कराया गया। बाद मे कोई दण्ड न देते हुए उन्हे रिहा कर दिया गया।

महाराजा रणजीत सिह ने 1830 मे हरमन्दिर साहिब पर सोने के पतर चढवाये। अग्रेजो के आने तक यह स्थान स्वर्ण मन्दिर के नाम से प्रसिद्ध हो चुका था, क्योकि हरमन्दिर साहिब और उसके ऊपर की मजिल पर सोने के पतरे चढे हुए थे। सिखो मे इसका प्रचलित नाम दरबार साहिब है।

'सच्चे पातशाह' की कचेहरी अकाल तख्त का भवन गुरु हरगोविन्द साहिव ने बनवाया था। सरोवर के दोनो तरफ के अन्य भवन सिख मिसलो ने अठारहवी सदी के अत मे बनवाये। मिसलो को अगल–बगल के निवासीय क्षेत्रो मे स्थान दे दिया गया था, ताकि वे हरमन्दिर की पवित्रता कायम रखे एव आक्रमणो से हरमन्दिर को आवश्यकतानुसार बचाये।

विश्व प्रसिद्ध ऐतिहासिक तोशाखाना, दर्शनी ड्योढी, हरमन्दिर साहिब जाने के लिए मुख्य (घटाघर) द्वार के ऊपर पहली मजिल पर है। कुछ ऐतिहासिक अवसरो पर तोशाखाना की बहुमूल्य वस्तुओ की प्रदर्शनी लगाई

जाती है। इनमे हीरो से जडी हुई चादनी है जो निजाम हैदराबाद ने महाराजा रणजीत सिह को भेट की थी। इसके अतिरिक्त शिल्पकला का अद्भुत नमूना एक नीलम का मोर है, जिस पर हीरे जडे हुए है। एक सदल की चवर है, जिसके एक लाख पैतालीस हजार रेशे है। तोशाखाना मे महाराजा रणजीत सिह का अपना हीरो का हार भी है। उन्होने अपने पोते कवर नौनिहाल सिह का सेहरा भी हरमन्दिर साहिब को भेट कर दिया था।

हरमन्दिर साहिब के आम दिनो के लिये तो चादी के दरवाजे है लेकिन विशेष उत्सवो के अवसर पर सोने के पतरो से जडे दरवाजे लगाये जाते है। यह सोने के दरवाजे भी तोशाखाने मे सभाल कर रखे जाते है।

यात्रियो के लिये गुरु रामदास सराय और गुरुनानक निवास है। पजाब सरकार के पर्यटन विभाग द्वारा एक तीन–सितारा होटल और एक यूथ होस्टल भी बनाया गया है। ❑

6. बोधगया

बिहार

बौद्ध धर्मावलम्बियो के लिये बोधगया अति पवित्रतम तीर्थस्थल है। बोधगया मे ही सिद्धार्थ गौतम को ज्ञान प्राप्त हुआ था, जिसे बुद्ध धर्म के मानने वालो की भाषा मे 'सम्–सम्बोधि' कहा जाता है।

बोधगया बिहार राज्य मे स्थित है। तेरहवी सदी मे तिब्बत के तीर्थ यात्री धर्म स्वामी इस स्थान पर आये थे। उन्होने उस स्थान को, जहा पर भगवान बुद्ध को ज्ञान प्राप्त हुआ था, वज्रासन के नाम से सबोधित किया है। सम्राट अशोक ने इस स्थान को 'सम्बोधि' की सज्ञा दी। आजकल इसे बोधगया के नाम से जाना जाता है।

राजा शुद्धोधन के पुत्र सिद्धार्थ गौतम ने 29 वर्ष की आयु मे जीवन के शाश्वत सत्य को जानने के लिए ऐश्वर्यमय जीवन, पत्नी और पुत्र को त्याग दिया था। सन्यासी के रूप मे वनो मे एकातवास किया।

सबसे पहले वे अपने समय के प्रसिद्ध योगी आलार कालाम के पास गये। उनसे तमाम यौगिक क्रियाये सीखी, किंतु उनको आत्मसतुष्टि नही हुई।

इसके बाद वे उद्दक रामपुत्र के आश्रम मे रहे। उद्दक ने सिद्धार्थ को अरूप ध्यान की पद्धति सिखायी। किंतु सिद्धार्थ को उद्दक रामपुत्र के आश्रम मे तमाम यौगिक अनुभवो से गुजरने के बाद भी आत्म सतोष नही मिला। उन्होने उद्दक रामपुत्र का आश्रम भी छोड दिया।

घूमते हुए सिद्धार्थ निरजना नदी पर स्थित उरूवेला आये। उन्हे यह स्थान बहुत ही रमणीक लगा। पास मे ही एक गाव था, जहा वे भिक्षा प्राप्त कर सकते थे और निरजना नदी पर स्थित उरूवेला मे रहकर शाश्वत ज्ञान और दु ख मुक्ति के लिए प्रयत्न भी कर सकते थे।

उरूवेला मे सिद्धार्थ के साथ कौडिन्य के अलावा चार अन्य व्यक्ति भी उनके साथ रहने लगे। वे पाचो व्यक्ति सिद्धार्थ के दृढ सकल्प से अत्यत प्रभावित थे। वे सोचते थे कि अगर सिद्धार्थ को शाश्वत सत्य का ज्ञान हो गया तो वे भी उससे सत्य ज्ञान प्राप्त कर सकेगे।

इस विश्वास के साथ कि शुद्ध आचरण और दु खो से आव्याक्तिक मुक्ति के लिए गहन तप आवश्यक है, छ साल तक सिद्धार्थ व्रत और उपवास के माध्यम से साधु जीवन जीते हुए गहन तपस्या मे लीन रहे।

शारीरिक यत्रणाओ, व्रत और उपवास से उन्हे अपने लक्ष्य की प्राप्ति नही हुई। उन्होने महसूस किया कि व्रत और उपवास आदि बेकार है। इसके बाद उन्होने सामान्य भोजन लेना आरभ कर दिया।

सिद्धार्थ के इस आचरण से क्षुब्ध होकर उनके पाचो साथियो ने उनका साथ छोड दिया। उन्हे विश्वास हो गया कि सिद्धार्थ तपस्वी जीवन छोडकर, जीवन के सुखो और भोगो की ओर उन्मुख हो गया है।

पौष्टिक भोजन लेने के कारण सिद्धार्थ शारीरिक और मानसिक रूप से पुन' स्वस्थ हो गये, लेकिन उन्होने जीवन के शाश्वत सत्य के प्रति अपने आग्रह को नही छोडा।

एक दिन वे दृढ सकल्प के साथ, बोधिवृक्ष के नीचे कुशासन बिछाकर, पद्मासन मे बैठ गये और मन ही मन यह निश्चय किया कि जब तक ज्ञान प्राप्त नही होता, तब तक आसन से नही उठेगे, भले ही शरीर क्षय हो जाये।

अति ही गहन ध्यान और मानसिक चिन्तन के पश्चात उन्हे पूर्ण ज्ञान की प्राप्ति हुई। जिस वृक्ष के नीचे उन्हे ज्ञान प्राप्त हुआ था उसे बोधि वृक्ष कहा जाने लगा। निरजना नदी के किनारे जिस स्थल पर ध्यान, मनन और चिन्तन करते हुए सम्बोधि की प्राप्ति हुई थी, उसे बोधगया कहा जाता है। अपने प्राप्त

ज्ञान के आधार पर जिस धर्म का उन्होने प्रचार किया उसे बौद्ध धर्म कहा जाता है। ज्ञान प्राप्ति के बाद सिद्धार्थ गौतम भगवान या महात्मा बुद्ध कहे जाने लगे।

सबसे पहले सम्राट अशोक ने बोधगया मे मन्दिर बनवाया। उसके बाद बुद्ध धर्म के अनुयायी इस धर्म स्थल को विकसित करते रहे है।

चीनी यात्री ह्वेनसाग जब सातवीं सदी मे भारत आया, उसने मन्दिर और अशोक स्तम्भ देखा था। तमाम सुधारो और नवीनीकरण के बावजूद मन्दिर अपने मौलिक रूप मे अभी भी विद्यमान है।

सदियो के अतराल मे इस स्थान पर अनेको देवस्थान और भव्य स्मारक निर्मित किये गये है। प्रतिदिन सैकडो श्रद्धालु इस पवित्र स्थल की यात्रा करते है। समस्त बोंध जगत मे इस स्थान का विशेष महत्व है। इसी कारण विभिन्न देशो की हुकूमतो ने भगवान बुद्ध की स्मृति मे अनेक कलात्मक भवनो का निर्माण किया जिनमे बुद्ध की प्रतिमाओ को प्रतिष्ठित किया गया है। □

7. दरगाह ग़रीबनवाज़ अजमेर शरीफ

राजस्थान

जिन महान आत्माओ ने भारत भूमि को अपनी अलौकिक प्रतिभा और आध्यात्मिक शक्ति से आलोकित किया, उनमे अजमेर के ख्वाजा मोईनुद्दीन चिश्ती का नाम उल्लेखनीय है। इसलिए भारत के प्राचीनतम नगरो मे अजमेर के तीर्थराज पुष्कर मे जहा हिन्दू स्नान कर अपने को धन्य मानते है वहा मुस्लिम अपनी श्रद्धा और अकीदत के फूल औलियाओ के सिरमौर ख्वाजा साहब के मजार मुबारक पर चढाकर अपने मन की तडप को शात करते है। इस विश्वविख्यात दरगाह का मक्का के बाद दूसरा स्थान है। यही कारण है कि हर मुसलमान चाहे वह विश्व के किसी कोने का हो, हज करने से पहले अजमेर जाता है ख्वाजा के मजार पर उनकी इजाजत लेने।

गरीबो की मदद, उनसे सहानुभूति और प्रेम सदेश के कारण हजरत ख्वाजा जनमानस मे आज भी 'गरीबनवाज' और 'वावा' के नाम से प्रसिद्ध हैं। हालाकि उन्हे इस दुनिया से विदा हुए सदियां गुजर गयी, पर उनकी शोहरत मे कोई कमी नही आयी। आश्चर्य की वात यह है कि आज के इस भौतिक युग मे भी देश–विदेश के कोने–कोने से प्राय. सभी धर्मो के लोग उनके मजार पर आकर सिजदा करते, दुआए मागते, चढावे चढाते और श्रद्धांजलि अर्पित करते हैं। जिनकी मिन्नते पूरी हो जाती हैं, वे यहा आकर चादर चढाते है, देगे भी लुटाते है। लोगो का ऐसा विश्वास है कि उनके दर से जो मागोगे वही मिलेगा, क्योकि ख्वाजा साहब मे कुछ खास शक्तियां मौजूद थी। इसी वजह से उनकी आध्यात्मिक महानता और उनके पावन सदेश आज भी सारी मानव जाति का मार्ग दर्शन कर रहे हैं।

हर साल हिजरी (मुस्लिम संवत) के अनुसार 'जमाही उस्मानी' महीने के आखिरी दिन चाद दिखने के साथ ही दरगाह के शाहजहानी दरवाजे पर 'शादियाने' (नौवत शहनाई) गूज उठते हैं और दूसरे दिन पहली रजब से उर्स की खास रस्म शुरू हो जाती है। जन्नती दरवाजा जो साल मे चार वार खुलता है इसी मौके पर खोला जाता है। ख्वाजा की मजार को गुलाव जल से अच्छी तरह धोकर (गुसलकर) और इत्र छिड़ककर उसे सुगन्धित किया जाता है। कहते है पहली रजब की रात को नमाज के बाद ख्वाजा अपने 'हुजरे' यानी कुटिया मे दाखिल हुए और इबादत मे लग गये। छह दिन बाद भी जव वह नजर नही आये तो हुजरा देखा गया। पता चला कि वह अल्लाह को प्यारे हो गये। यह वात तय नहीं कि किस दिन वे गुज़रे, इसलिए पहली रजव से छह रजव तक (छह दिन) हर साल उनका पवित्र उर्स मनाया जाता है। वैसे तो हर दिन ख्वाजा के मजार शरीफ पर हाजरी बजाने जायरीन आते रहते है पर उर्स के दौरान गुलाव के फूलो व चदन की महक, अगरबत्ती व धूप की गध के मध्य पूरे छह दिन तक दरगाह की रौनक, कुरान का सामूहिक पाठ, फातिहा और कव्वालिया तो देखते ही वनती है। सारा माहौल एकदम ईशमय हो जाता है। ऐसा लगता है जैसे कोई दैवी शक्ति अपनी ओर आकर्षित कर रही है। निजाम गेट से लेकर अन्दर सहन चराग और बेगमी दालान से तारागढ पहाड की ढलान तक लाखो जायरीनो का दरगाह मे ताता लगा रहता है जो ख्वाजा की लोकप्रियता का सबसे वडा प्रमाण है। छह रजव को 'कुल' की रस्म के साथ उर्स समाप्त हो जाता है। किसी ने कहा

है.

इरादे लाख होते है, मगर सब टूट जाते है,
वही अजमेर जाते है, जिन्हे ख्वाजा बुलाते है।

समानता के सदेशवाहक और भक्ति प्रेरक चिश्ती सम्प्रदाय के इस महान सूफी सत का जन्म हुआ था मुहम्मद साहब के वश मे 537 हिजरी को ईरान मे सीस्तान कस्बे के निकट सिजर मे। पिता का नाम था गयासुद्दीन अहमद और माता का खसूला मल्का था। ख्वाजा उस्मान हारूनी के वह शिष्य थे जिनसे आध्यात्मिक दीक्षा लेने के बाद उनके उपदेशो को जनसाधारण तक पहुचाने हेतु अपना सर्वस्व त्यागकर सत्य और ज्ञान की खोज मे घर से निकल पडे।

आप ईश्वर की इबादत मे हमेशा तल्लीन रहते थे, यहा तक कि रातो रात जागकर प्रार्थना करते रहते थे। आप लगातार सत्तर साल रात को नही सोये। दिन मे रोजा रखते थे। आपके बारे मे यह प्रसिद्ध है कि आपको गुस्सा नही आता था। एक बार आप शेख अली नाम के अपने मुरीद के साथ कही जा रहे थे कि रास्ते मे एक कर्ज देने वाले ने मुरीद को यह कहकर पकड लिया कि जब तक ऋण वापस नही करोगे तब तक तुम्हे मै नही छोडूगा। हजरत ख्वाजा मोईनुद्दीन चिश्ती को गुस्सा आ गया और अपनी चादर कन्धे से उतार कर जमीन पर डाल दी। जमीन पर चादर पडते ही वह चादी–सोने के सिक्को से भर गयी और आपने ऋणदाता से कहा कि जितना तुम्हारा कर्ज है, इसमे से ले लो।

भक्ति भावना से प्रेरित होकर उन्होने समरकद, बुखारा, मक्का मदीना, बगदाद सहित अरब, ईरान, टर्की, अफगानिस्तान आदि देशो की यात्रा की। सूफी धर्म के प्रचारार्थ सन् 1192 मे मुहम्मद गोरी की सेना के साथ गजनी से भारत आये पृथ्वीराज चौहान के शासनकाल मे और तीन साल बाद लाहौर व दिल्ली से होते हुए अजमेर मे आकर बस गये। अपने गुरु की इच्छानुसार इस ऐतिहासिक नगर को स्थायी कर्मस्थल बनाया, ईश्वर से लौ लगायी और 97 वर्ष की आयु मे छह रजब 633 हिजरी को साधनारत रहते हुए इस दुनिया को छोड गये। मृत्यु के बाद ख्वाजा साहब को उसी हुजरे मे दफना दिया गया जिसमे वह रहा करते थे किन्तु उसके ऊपर कोई पक्की कब्र नही बनायी गयी थी। दो सौ साल के बाद सन् 1456 मे माडू के सुल्तान

गयासुद्दीन खिलजी ने नागौर के ख्वाजा हुसैन के आग्रह पर पक्की कब्र और एक आकर्षक गुम्बद भी बनवाया जिसके ऊपर सोने का बडा सा कलश है और चारो तरफ दीवारो पर सुनहरी कलसिया अजब बहार बिखेर देती है। दरगाह की आलीशान इमारत बनकर तैयार हुई जो अपनी बनावट, सौन्दर्य और आध्यात्मिक प्रभाव मे अनूठी है। इसका फर्श संगमरमर का बना है। दरवाजे की मेहराब मे सोने के तीन गोले लगे हुए हैं। ऊपर दस बुर्जिया बनी है जिन पर लम्बे–लम्बे कलश लगे है। सगमरमर का एक ऊचा ताबीज बनाकर वहा रखा गया। उसमे याकूत जडा है और अन्दर के पूरे हिस्से मे सोने का काम बना हुआ है। छत मे जरी के काम की कारीगरी है जिसके किनारो पर सोने की जजीरो मे सुदर कुमकुमे लगे है और मजार पर जरदोजी के काम के मखमली गिलाफ चढे हुए है।

मुगल सम्राट अकबर के शासनकाल मे दरगाह को प्रसिद्धि मिली। उसने दरगाह मे शानदार अकबरी मस्जिद बनवायी जिसकी मेहराब 56 फुट ऊंची है और 75 फुट ऊचा बुलद दरवाजा भी बनवाया जो यात्रियो को बरबस अपनी तरफ खीचता है। मजार के आलीशान दरवाजे मे अकबर की भेट की हुई किवाडो की जोडी चढी है। उसने 18 गाव दरगाह के नाम कर दिये थे जिनकी लाखो रुपये की आय से दरगाह के धार्मिक कृत्य सपन्न होते थे। चूकि ख्वाजा की कृपा से जहागीर जन्मा था, इसीलिए अकबर (उसका पिता) जियारत के लिए सन् 1570 मे आगरा से अजमेर तीन सौ मील पैदल चलकर ख्वाजा की दरगाह पर बीस दिन मे पहुचा था। तभी से अजमेर को 'अजमेर शरीफ' के नाम से पुकारा जाता है। अकबर की इस यात्रा के चित्र आज भी मुम्बई के प्रिन्स ऑफ वेल्स संग्रहालय मे सुरक्षित है और इस श्रद्धा यात्रा का वर्णन जहागीर ने अपनी आत्मकथा 'तुजक–जहागीरी' मे किया है। इसके अलावा जहागीर ने दरगाह मे एक छोटी सी मस्जिद बनवायी थी जिसे अब 'सेदलखाना' कहते है। रोजे के ऊपर सफेद सगमरमर का भव्य गुम्बद और जामा मस्जिद शाहजहा ने बनवायी थी और उसकी पुत्री जहाआरा ने चादी का सुदर मुहज्जर भेट किया था। बुलन्द दरवाजे के पास ही अकबर और जहागीर द्वारा स्थापित की गई लोहे की दो विशाल देगे भी है जिनमे उर्स के मौके पर श्रद्धालु भक्तो द्वारा घी, शक्कर व मेवो से बना हुआ सैकडों मन एक विशेष प्रकार का स्वादिष्ट दलिया पकाया और प्रसाद (तबर्रक) के रूप मे बाटा जाता है। कहा जाता है कि बडी देग मे कोई सत्तर मन और छोटी देग मे तीस मन चावल पकते है। इसी अनुपात से घी, शक्कर और मेवे

डाले जाते है। दरगाह मे पके हुए इस जायकेदार खाने को सभी लोग बडे चाव से प्रसाद समझकर खाते है। किसी प्रकार का कोई भेदभाव देखने को नही मिलता क्योकि ख्वाजा सबके है और सब ख्वाजा के है।

समय के साथ दरगाह का भी विस्तार हो गया और उसने अत्यत भव्य रूप ले लिया। आज उसकी गिनती न केवल भारत बल्कि विश्व की मशहूर दरगाहो मे की जाती है जिसे सुदर बनाने मे राजा महाराजाओ ने बडा योग दिया। दरगाह विशाल परकोटे से घिरी है। दरगाह की भि्न्न दिशाओ मे पाच दरवाजे है। हैदराबाद के निजाम द्वारा निर्मित दरवाजा निजामी दरवाजा कहलाता है। इस दरगाह से मिला हुआ अढाई दिन का झोपडा, शाहजहानी दरवाजा, जामा मस्जिद, औलिया मस्जिद, चारयार का मकबरा, महफिलखाना आदि भी दर्शनीय स्थल है।

दरगाह मे अब उनके वशज सज्जाद नशीन प्रबन्धक व व्यवस्थापक की हैसियत से सारा काम देखते है। हालाकि राज्य सरकार द्वारा स्थापित ट्रस्ट यहा भारी सख्या मे पहुचने वाले यात्रियो की सुविधाओ का पूरा इतजाम करता है, लेकिन ख्वाजा की दुआ और बरकत से किसी को कोई परेशानी नही होती। ❑

8. जलियाँवाला बाग

अमृतसर

जलियॉवाला बाग के नरसहार के बाद महात्मा गाधी ने घोषणा की थी · "भारत के जनसमूह को सिर उठाना चाहिए और अपनी मातृ भूमि को स्वतत्र करवाना चाहिए।"

13 अप्रैल, 1919 बैसाखी के उत्सव का दिन, गेहू की सुनहरी फसल की कटाई आरम्भ करने के उत्सव का दिन, खालसा का जन्मदिन, जिसकी स्थापना महान गुरु गोविन्द सिह जी ने 1698 को इस ऐतिहासिक दिन पर की थी। 1919 मे इस दिन को एक और ऐतिहासिक महत्व प्राप्त होना था, जिसने ब्रिटिश न्याय मे महात्मा गाधी की आस्था को हिला कर रख दिया और नरम विचारो वाले गाधी जी को अपनी विचारधारा बदलनी पडी।

साम्राज्यवादी ब्रिटिश निरकुश शासन के विरुद्ध भारत के सघर्ष क्रातिकारी और रक्तरजित सघर्ष को अनेक पुरुषो तथा महिलाओ के बलिदान ने पवित्र किया था। इनमे अनेक लेखक, ख्यातिप्राप्त तथा समृद्ध व्यक्ति तथा गरीब और अज्ञात व्यक्ति शामिल थे। जलियॉवाला बाग की घटना की दुखद यादे अभी भी ताजा है जहा हजारो निर्दोष व्यक्तियो की जाने गई थी। समय भी इन जख्मो को अभी भर नही पाया।

नवम्बर 1918 मे विश्वयुद्ध की समाप्ति से पूर्व ही अफसरशाही ने राष्ट्रवाद की बढ रही भावनाओ को कुचल देने के लिए अपनी नीति निर्धारित करना शुरू कर दिया था। एक ओर मोटेग्यू चैम्सफोर्ड सुधारो के प्रस्ताव और एक प्रकार की द्वि शासकीय व्यवस्था लागू करने की बाते की जा रही थी तो दूसरी ओर जस्टिस श्री एस ए टी रालेट की अध्यक्षता मे एक समिति नियुक्त की गई जिसे राष्ट्रवाद की बढ रही भावना को कुचलने के उपाय सुझाने थे। इस समिति को आमतौर पर इसके अध्यक्ष श्री रालेट के नाम पर रालेट समिति कहा जाता था।

रालेट समिति ने अपनी रिपोर्ट इस ढग से पेश की और तथ्यो को इस प्रकार तोड मरोड कर पेश किया कि भारत का स्वाधीनता आदोलन केवल डकैतियो, लूटमार, आगजनी तथा हत्याओ का सिलसिला ही दिखाई दे। यह रिपोर्ट एक ऐसा शोध पत्र मालूम पडती थी जिसका उद्देश्य यह सिद्ध करना हो कि भारतीय राष्ट्रवादी खतरनाक किस्म के अराजकतावादी और भारतीय समाज तथा कानून और व्यवस्था के लिए भारी खतरा है।

रालेट कानून ने, जिसे आम तौर पर काला कानून कहा जाता था, भारतवासियो के लिए चुनौती खडी कर दी। भारतवासियो के लिए अपने राष्ट्रीय गौरव तथा राजनीतिक आकाक्षाओ के प्रति इस चुनौती को स्वीकार करे बिना कोई चारा नही था। उनके लिए केवल एक ही रास्ता शेष रह गया था कि ब्रिटिश साम्राज्य के विरुद्ध सघर्ष शुरू करने का। गाधीजी तुरत ही आदोलन का केद्र बन गए और भारत के इतिहास का नया अध्याय आरभ हो गया।

पजाब के लैफ्टीनेट गवर्नर सर माईकल ओडवायर को अन्य ब्रिटिश अधिकारियो के मुकाबले शायद अधिक उत्सुकता थी और वह चाहते थे कि शक्ति प्रयोग को कानूनी तौर पर उचित ठहराने के लिए कोई औचित्य शीघ्र ढूढा जाये। यहा तक कि शातिमय हडतालो को भी सरकार ने गैर कानूनी घोषित कर दिया।

दूसरी ओर जोशीले पजाबियो ने इस आदोलन के लिए बहुत अधिक उत्साह दिखाया और रालेट एक्ट के विरुद्ध रोष सभाए करने के मामले मे देशभर मे सबसे आगे रहे। अमृतसर शहर के लोगो ने युद्ध की तैयारियो मे सरकार की सबसे अधिक सहायता की और अब यही शहर राजनीतिक जागृति मे अधिक सक्रिय था।

स्थानीय नेताओ मे दो प्रमुख नेता थे डाक्टर सैफ–उ–दीन किचलू और डाक्टर सत्यपाल, जिन्होने काग्रेस नेताओ को 1919 का अधिवेशन अमृतसर मे आयोजित करने का निमत्रण दिया था। 29 मार्च, 1919 को एक बैठक बुलायी गई, ताकि गाधी जी के कार्यक्रम के बारे मे बताया जाए और 30 मार्च को हडताल करने का निर्णय लिया गया। जलियॉवाला बाग मे हुई इस बैठक मे डाक्टर सत्यपाल के बोलने पर रोक लगा दी गई थी। डाक्टर किचलू ने बैठक की अध्यक्षता की और बहुत से वक्ताओ ने स्पष्ट शब्दो मे घोषणा की कि उनका आदोलन पूर्ण रूप से शान्तिपूर्ण होगा।

6 अप्रैल को फिर हडताल होने की आशका से लैफ्टीनेट गवर्नर ओडवायर ने पुलिस और सैनिक अधिकारियो के साथ पूरी व्यवस्था कर ली थी। 4 अप्रैल को अमृतसर के डिप्टी कमिश्नर माईल्ज इर्विग ने अतिरिक्त सुरक्षा बल फौरी तौर पर बुला लिए। डाक्टर किचलू, पडित दीनानाथ, पडित कोटूमल और अनुभवानन्द के सार्वजनिक तौर पर भाषण करने पर रोक लगा दी गयी थी। फिर भी सरकार के पूरे प्रयत्नो के बावजूद अमृतसर मे एक बार फिर पूर्ण रूप से हडताल हुई। हडताल की सफलता ओडवायर के लिए असहनीय चुनौती थी।

9 अप्रैल को रामनवमी का त्योहार था, अमृतसर के लोगो ने यह धार्मिक उत्सव 'राष्ट्रीय एकता दिवस' के रूप मे मनाने का निर्णय लिया। उत्सव बहुत शातमय रहा। जब ओडवायर को अमृतसर मे रामनवमी का उत्सव इस ढग से मनाए जाने का समाचार मिला तो उसने कुछ कार्रवाई करने का निर्णय लिया। गाधी जी को पजाब तथा दिल्ली मे दाखिल होने की निषेधाज्ञा जारी कर दी गई। उन्हे पलवल के निकट गाडी से उतार कर बम्बई भेज दिया गया। इसके साथ ही डाक्टर किचलू और डाक्टर सत्यपाल को भी गिरफ्तार कर लिया गया।

11 अप्रैल, 1919 को आदेश जारी कर दिया गया कि आठ से अधिक व्यक्ति एक स्थान पर एकत्रित नही हो सकते। जालधर ब्रिगेड के कमाडर ब्रिगेडियर जनरल आर ई एच डायर अमृतसर पहुच गए और उन्होने अपना

मुख्यालय रेलवे स्टेशन से रामबाग मे तब्दील कर लिया। 12 अप्रैल, 1919 को घोषणा कर दी गई कि अगले दिन जलियॉवाला बाग मे एक बैठक होगी। इस प्रकार 13 अप्रैल, 1919 के लिए कार्यक्रम बनाया गया जिससे भारत के स्वाधीनता आदोलन के इतिहास मे एक नया अध्याय आरंभ होना था।

नरसंहार

13 अप्रैल, 1919 को जलियॉवाला बाग मे लोगो की भारी भीड एकत्र हुई। उस दुर्भाग्यपूर्ण दिन की सुबह को जनरल डायर ने अपने सैनिको को लेकर अमृतसर की गलियो—बाजारो मे मार्च किया ताकि अपनी शक्ति का प्रदर्शन कर सके। कई घोषणाए पढी गई जैसे कोई भी व्यक्ति बिना आज्ञा—पत्र के शहर से नही जा सकता, आठ बजे रात के बाद गलियो मे निकलने वाले व्यक्तियो को गोली मार दी जाएगी, सभी प्रकार के जलूस निकालने की मनाही कर दी गई, एकत्र हुए लोगो को हथियारो के बल प्रयोग से तितर—बितर कर दिया जायेगा। डायर की इस घोषणा के पश्चात जवाबी घोषणा की गई जिसमे लोगो से साय चार बजे जलियॉवाला बाग मे एकत्र होने को कहा गया और बताया गया कि लाला कन्हैयालाल बैठक की अध्यक्षता करेगे। लोग दो बजे से ही वहां पहुचने शुरू हो गए थे हालाकि मीटिग का समय चार बजे का था। जनरल डायर ने अपने पास मौजूद सभी सैनिको को महत्वपूर्ण स्थानो पर तैनात कर दिया था। उसे यह सूचना मिली कि भारी संख्या मे लोग जमा हो गए है और इस सूचना की पुष्टि पुलिस अधीक्षक ने कर दी थी।

1919 मे जलियॉवाला बाग कोई बाग न था बल्कि 229 मीटर लम्बा और 183 मीटर चौडा एक बेढगा से आयताकार भूमि स्थल था। किसी समय मे यह स्थान भाई हिम्मत सिह जल्लेवाल की जायदाद था। इस प्रकार इस स्थान का नाम 'जलियॉवाला बाग' इसके मालिक के नाम से था। जलियॉवाला बाग शहर के आसपास के क्षेत्र से निचली सतह पर था और इसके आसपास तग गलिया थी। 1919 से बहुत पहले ही लोगो ने बाग के इर्द गिर्द अपने मकान बना लिए थे। तीन चार स्थान ऐसे थे जहा से लोग आसानी के साथ बाग मे आ—जा सकते थे। बाग के दक्षिणी भाग मे एक समाधि थी जिसके पास चार छोटे—छोटे वृक्ष थे और पूर्व सीमा की ओर एक बडा सा कुऑ था।

बाग के द्वार के निकट की भूमि का तल ऊँचा था। डायर ने तुरत ही 25 सैनिक अपनी दाई ओर और 25 सैनिक बाई ओर तैनात कर दिए। उस समय-

बाग मे लगभग 20 हजार लोग जमा थे। सभा मे डाक्टर किचलू का चित्र रखा हुआ था। गुप्तचर विभाग के कर्मचारी भी भीड मे मौजूद थे। हसराज जिसने बैठक का आयोजन किया था, भीड को सबोधित करते हुए आश्वासन दिलाया कि उन्हे किसी प्रकार डरना नही चाहिए। उसने यह भी कहा कि बैठक तो दो प्रस्ताव पास करने के लिए बुलाई गई है। पहला प्रस्ताव रालेट एक्ट रद्द करने और दूसरा 10 अप्रैल को गोली चलाए जाने की घटना की निदा करने तथा मृतको के परिवारो के साथ सहानुभूति व्यक्त करने का था। चार बजे के लगभग जलियॉवाला बाग के ऊपर एक विमान उडान करता देखा गया जिस पर झडा लगा हुआ था। विश्वास किया जाता है कि यह गुप्तचर कर्मचारियो के लिए सभा स्थल से चले जाने का सकेत था। लोगो ने घबरा कर वहा से जाना शुरू कर दिया, परतु वक्ता ने उन्हे आश्वासन दिलाया कि उन्हे डरने की कोई जरूरत नही। लोग फिर बैठने लगे। इसी समय उन्होने बाग के द्वार की ओर ऊँची जगह पर सशस्त्र सैनिको को खडे देखा।

यह सारा काण्ड 30 सैकिण्ड मे ही हो गया। जनरल ने तुरत ही अपने सैनिको को गोली चलाने का आदेश दे दिया। 50 सैनिको ने घुटने टेक कर पोजीशन ली, अपनी राईफले सीधी की और मच के निकट भीड के केद्र की ओर निशाना लगा कर इकट्ठे ही गोलिया बरसा दी। लोगो ने फौरन समझ लिया कि वह मौत के मुह मे फस गए है। पलक झपकते ही सारी भीड मे भगदड मच गई और गोलियो की बौछार से बचने के लिए जिसका जिधर मुह हुआ, भाग उठा। आसपास के मकानो की दीवारो ने लोगो के रास्ते बद कर रखे थे। जिन लोगो को दीवारो के बीच के छोटे रास्तो का पता था, सैकडो की सख्या मे वह उधर बढे। डायर ने लोगो को इन रास्तो से निकलने की कोशिश करते देखा तो अपने सैनिको को उस ओर गोलियो की बौछार करने का आदेश दिया। बहुत से लोग इन रास्तो के निकट मारे गए जबकि बहुत से लोग इन मार्गो की ओर भागते समय कुचल कर मारे गए। बहुत से लोगो ने पाच फुट ऊँची दीवार फाद कर भागने की कोशिश की, परतु बहुत कम लोग दीवार को फाद पाए। अधिकतर तो गोली खाकर मर गए या घायल होकर गिर पडे। कई बच्चे और वृद्ध तो भाग रही भीड द्वारा कुचले जाने से ही मर गए। बहुत से लोग बाग के उस कोने की ओर भागे, जहा कुऑ था। वह इतने भयभीत थे कि उन्हे पता ही तब चला जब वह कुए मे गिर चुके थे, क्योकि कुए की मुडेर न होने के कारण वह सभल ही न पाए।

दस पन्द्रह मिनट गोलिया वरसती रहीं और यह ताड–ताड तभी वद हुई जव सैनिको के पास गोलिया समाप्त हो गई। कुल 1650 गोलिया चलीं यानि प्रति सैनिक 33 गोलिया चलाई गई। वाद मे डायर ने यह वात स्वीकार की कि यदि उसके पास और गोलिया होतीं तो वह उन्हे भी भीड पर चला देता। इस काड मे कुल कितनी जाने गई इसकी सही जानकारी कभी नहीं मिल पाएगी। सरकारी सूत्रो के अनुसार आठ सौ से अधिक व्यक्तियो के मारे जाने तथा हजारो के घायल होने का अनुमान है।

विश्व के इतिहास मे किसी विद्रोह को दवाने के लिए इतना वर्वर तथा अमानवीय काड शायद ही हुआ जितने जलियॉवाला वाग के नरसहार के वाद अमृतसर के नागरिको के साथ किए गए। इस अमानवीय घटना के वाद 'नाईट' का खिताव वाईसराय को लौटाते हुए रविन्द्रनाथ ठाकुर ने लिखा. "अमृतसर के वदकिस्मत लोगो को जो अमानवीय सजा दी गई है और जिस कठोरता से उसे लागू किया गया है, वर्तमान या अतीत की, एक अथवा दो घटनाओ को छोड, विश्व की सभ्य सरकारो के इतिहास मे ऐसी वर्वरतापूर्ण कार्रवाई का कोई उदाहरण नहीं मिलता।" अपने देशवासियो के वढते दवाव तथा विश्व मत के आगे झुकते हुए ब्रिटेन ने जलियॉवाला वाग नरसहार की निष्पक्ष जाच कराने का आदेश दिया। इस जाच आयोग के अध्यक्ष लार्ड हटर थे।

लाहौर मे 29 वैठके करने के वाद हटर आयोग ने जनरल डायर को दोषी करार दिया ओर उसकी भर्त्सना की। हाउस ऑफ कामस ने भी जनरल डायर को फटकारा और उसकी निन्दा की परतु हाउस ऑफ लॉर्ड्स ने उसकी प्रशसा की। ब्रिटिश दैनिक 'द मार्निग पोस्ट' ने उस व्यक्ति के लिए धन जमा करने के लिए एक फड जारी किया जिसने 'कानून के नाम पर वहुत वडा अपराध' किया था।

परतु ि.न लोगो ने इस वर्वरता पूर्ण कार्य की जोरदार निन्दा की, उनमे वहुत से अग्रेज भी थे। उन्होने अपनी भावनाए सच्ची सहानुभूति से व्यक्त करते हुए दर्शक पुस्तक मे लिखा "इस स्थान को देखने के वाद मुझे अपनी कौम की ओर से शर्म महसूस होती है। मुझे लगता है कि जैसे गली मे मेरी ओर देखने वाला हर व्यक्ति मुझे हत्यारो के समुदाय का सदस्य समझता है।" पुस्तक मे एक और स्थान पर लिखा हुआ है "मुझे सभ्यता के नाम पर किए गए नरसंहार के कारण अपने आपको अग्रेज कहलाते हुए शर्म आती है। मुझे सभ्य कहलाने की तुलना मे असभ्य कहलाने मे अधिक गर्व होगा।"

जलियॉवाला बाग काड के 28 वर्ष बाद देशवासियो का स्वतत्रता का स्वप्न साकार हो गया। इस काड के शहीदो के बलिदान के कारण देशवासी स्वतत्रता का आनद उठा रहे है। एक स्मारक के रूप मे 18 फुट गहरी बुनियाद पर एक स्तम्भ खडा है जिसके चारो ओर पत्थर के चार प्रकाश स्तम्भ बने हुए है। सभी राष्ट्रीय स्मारको मे से यह अधिक पवित्र है और अद्वितीय बलिदान का प्रतीक है, भारतीय स्वाधीनता, स्वतत्रता और स्वायत्तता का। यह भारत के घटनाक्रम के मिलन का प्रतीक है। स्मारक के चारो ओर अग्रेजी, हिन्दी, पजाबी तथा उर्दू भाषाओ मे अकित है– '13 अप्रैल, 1919 के शहीदो का स्मारक'।

जिन लोगो ने 13 अप्रैल, 1919 को बलिदान दिया था, उनकी आत्माए अभी भी जीवित है और हम मे राष्ट्रीयता की भावना पैदा करने के लिए हमारा मार्गदर्शन कर रही है। आज भी उनके बलिदान हमे कठिनाइया झेल कर प्राप्त की गई आजादी की रक्षा करने और पृथकतावादी शक्तियो का मुकाबला करने की प्रेरणा देते है। □

9. सेन्ट माइकेल चर्च

शिमला

सेन्ट माइकेल चर्च का निर्माण सन् 1885 मे हुआ था। इसका निर्माण भारत के कैथोलिक वायसराय लार्ड रिपन ने कराया था।

हिमालय क्षेत्र मे शायद यह सबसे अधिक भव्य चर्च है। इस चर्च की विशाल इमारत लाल–भूरे रग के ठोस पत्थरो से बनी हुई है। इस चर्च के निर्माण के लिए पत्थर कालका से खच्चरो पर लाद कर लाये गये थे। टीक की लकडी बर्मा से, जो आजकल म्यामार कहलाता है, लाई गई थी। देवदार की लकडी नजदीक के जगल से प्राप्त की गई थी। इसके निर्माण मे पूरे पाच साल लगे।

चर्च का मध्य भाग, जो छह हजार वर्ग फीट है, एक हजार आदमियो के शामिल होने की क्षमता वाला बनाया गया। मुख्य प्रार्थना मच बारह सौ वर्ग फीट का है, इसके दोनो ओर दो–दो पूजा स्थल है। इस चर्च के दरवाजे और

खिडकिया बर्मा से लाई गई टीक लकडी से निर्मित है। इसकी छत, मेहराव, सीढिया, तख्त और पैर नीचे करके बैठने वाली बेचे देवदार लकडी से बनाई गई है।

मुख्य मेहराव बहुत ही भव्य और आकर्षक है। इसकी भीतरी सजावट अत्यत मनमोहक तथा कलात्मक है। छज्जे से देखने पर नीचे का हिस्सा क्रास की तरह दिखाई पडता है।

सगमरमर की पाच वेदिया सन् 1885 मे इटली से लाई गई थीं। मुख्य वेदी पर ईसा मसीह को सूली पर चढाये जाने वाले दृश्य के ऊपर वाली तथा बगल मे वेदिकाओ जिनमे सेन्ट जोसेफ और सेन्ट फ्रासिस के दृश्य चित्र है, खिडकियो के रगीन काच जर्मनी से मगाये गये थे। ये सभी कला के अद्‌भुत नमूने है।

सन् 1900 मे चर्च मे सुमधुर आवाज देने वाले घटो के साथ शिखर का निर्माण जोडा गया। हिमालय क्षेत्र मे शायद पहला चर्च है जिसके शिखर को बहुत ही अद्‌भुत ढग से घटो और घटियो से सयुक्त किया गया है। पीतल के तीन घटे, पाच–पाच फीट ऊँचे है। सुमधुर आवाज देने वाले घटो से सयुक्त शिखर का निर्माण शिमला की जनता द्वारा, सी आर. कालीस्टस की स्मृति मे किया गया था।

सन् 1932 मे चर्च मे कुछ दरारे दिखाई पडने लगी। सन् 1980 तक ये दरारे बहुत ही चौडी हो गई और चर्च को अनुपयुक्त करार दिया गया।

पिछले पाच साल मे देश और विदेश से इसकी मरम्मत के लिए धन इकट्‌ठा किया गया और इसकी अच्छी तरह मरम्मत की गई। इसका पुराना सौन्दर्य पुन लौट आया है और अभी भी इसके साज और सुधार का कार्य जारी है।

सन् 1993 के अक्तूबर मे सेन्ट माइकेल के कैथोलिक भक्तो को एक विशेष उपहार दिया गया। चर्च मे मदर मेरी की मूर्ति स्थापित की गई। इस मूर्ति का आकार और प्रकार मैक्सिको की 15वी सदी की पौराणिक गाथा के अनुसार निर्मित किया गया है।

यह ऐतिहासिक और विशाल चर्च अब सामान्य जनता के लिए पुन खोल दिया गया है। ❑

10. राम जन्मभूमि : अयोध्या

सप्तपुरियो मे प्रथम पुरी अयोध्या है। राम जन्म के पूर्व से ही इस तीर्थ का महत्व रहा है। इक्ष्वाकु से लेकर श्री रामचन्द्रजी तक सभी चक्रवर्ती नरेशो ने अयोध्या के सिहासन को विभूषित किया है। इस पुरी का विशेष महात्म्य इसलिए है कि यही भगवान राम ने अवतार लिया था।

अयोध्या का प्राचीन इतिहास बताता है कि वर्तमान अयोध्या को महाराज विक्रमादित्य ने बसाया था। महाराज विक्रमादित्य ने देशाटन करते हुए सयोगवश सरयू तट पर अपना शिविर डाला। उस समय यहा वन था। महाराज विक्रमादित्य को इस भूमि मे कुछ चमत्कार दिखाई पडा। उन्होने खोज प्रारभ की। आस पास के निवासियो और सतो से ज्ञात हुआ कि यही अवध की पवित्र भूमि है जहा भगवान राम ने अवतार लिया था। इस स्थान की विशेषता को सुनकर महाराज ने इस नगर अयोध्या को पुन बसाया। वहा मन्दिर, सरोवर, कूप आदि बनवाये।

मथुरा के समान अयोध्या को भी बार–बार ध्वस्त किया गया। इस प्रकार अब अयोध्या मे प्राचीनता के नाम पर केवल सरयू नदी और पवित्र भूमि ही बच रही है।

अयोध्या नगर लखनऊ से 135 किलोमीटर की दूरी पर सरयू (घाघरा) के दक्षिण तट पर बसा है। उत्तर भारत रेलवे पर अयोध्या स्टेशन है। स्टेशन से सरयू नदी लगभग 5 किलोमीटर दूर है। सरयू पार होकर अयोध्या जाया जा सकता है।

अयोध्या मे सरयू के किनारे कई सुदर पक्के घाट बने हुए है। किंतु सरयू की धारा अब घाटो से दूर चली गई है। पश्चिम से पूरब चले तो घाटो का यह क्रम मिलेगा। ऋण मोचन घाट, सहस्रधारा, लक्ष्मण घाट, स्वर्णद्वार, गगा महल, शिवाला घाट, जराई घाट, अहिल्याबाई घाट, धौरहरा घाट, रूप कला घाट, नया घाट, जानकी घाट और राम घाट।

लक्ष्मण घाट— यहा के मन्दिर मे लक्ष्मणजी की 5 फुट ऊँची मूर्ति है। यह मूर्ति सामने कुण्ड मे पाई गई थी। कहा जाता है कि यही से लक्ष्मणजी परमधाम पधारे थे।

स्वर्गद्वार— इस घाट के पास नागेश्वर नाथ महादेव का मन्दिर है। कहते है कि यह मूर्ति कुश द्वारा स्थापित की गई थी। इसी मन्दिर को पाकर महाराज विक्रमादित्य ने अयोध्या का जीर्णोद्वार किया। इरा मन्दिर के पीछे एक गली मे कालेराम का मन्दिर है। इसमे काले पाषाण के एक ही शिलाखंड पर निर्मित राम पचायतन की मूर्तिया है। कहा जाता है कि राम जन्म के स्थान पर जिस मूर्ति की प्रतिष्ठा महाराज विक्रमादित्य ने की थी, वह यही मूर्ति है। स्वर्गद्वार घाट पर ही यात्री पिण्डदान करते है।

अहिल्याबाई घाट— इस घाट से थोडी दूर पर त्रेतानाथ जी का मन्दिर है। कहते है कि श्री भगवान राम ने यहा यज्ञ किया था।

नया घाट— इस घाट के पास तुलसीदास जी का मन्दिर है। इससे दो फर्लांग पर महात्मा मनीराम का आश्रम (मनीराम की छावनी) है।

राम कोट— कभी यह दुर्ग था। कहा जाता है कि उसमे 20 द्वार थे किंतु अब तो चार स्थान ही उसके अवशेष माने जाते है हनुमान गढी, सुग्रीव टीला, अगद टीला और भक्त गजेन्द्र।

हनुमान गढ़ी— यह स्थान सरयू तट से लगभग एक किलोमीटर से कुछ अधिक दूरी पर है। इस गढी का निर्माण नवाब शुजाउद्दौला ने प्रारम्भ किया था और उसकी मृत्यु के उपरान्त उसके पुत्र और मत्री टिकैत राय ने इसे पूर्ण कराया। गढी मे 60 सीढी चढने पर हनुमानजी का मन्दिर मिलता है। इस मन्दिर मे हनुमान की बैठी मूर्ति है। इस मन्दिर की मान्यता अधिक है।

कनक भवन— अयोध्या का मुख्य मन्दिर यही है जो ओरछा नरेश का बनवाया हुआ है। यह सबसे विशाल एव भव्य है। इसे श्री रामजी का अन्त पुर या सीताजी का महल कहते है। मन्दिर मे राम पचायतन की मूर्तिया है।

जन्म स्थान— कनक भवन से आगे श्री राम जन्मभूमि है। जन्म स्थान के पास कई मन्दिर है सीता रसोई, चौबीस अवतार, कोप भवन, रत्नसिहासन, आनन्द भवन, रग महल, साखी गोपाल आदि।

तुलसी चौरा— राजमहल के दक्षिण खुले मैदान मे तुलसी चौरा है। यह वह स्थान है जहा गोस्वामी तुलसीदास ने श्री रामचरितमानस की रचना

प्रारम्भ की थी।

मणि पर्वत— तुलसी चौरा से लगभग एक किलोमीटर की दूरी पर मणि पर्वत है जो एक टीला है। टीले के ऊपर मन्दिर है। यही पर अशोक के 200 फुट ऊँचे एक स्तूप का अवशेष है।

दतून कुण्ड— यह स्थान मणि पर्वत के पास ही है। वैष्णव कहते है कि रामजी यहा दातौन करते थे। कुछ लोगो का कहना है कि गौतम बुद्ध जब अयोध्या मे रहते थे तब उन्होने एक दिन अपनी दातौन यहा गाड दी थी जो सात फुट ऊँचा वृक्ष हो गई। अब यही उसका स्मारक है।

अयोध्या मे बहुत अधिक मन्दिर है। नवीन मन्दिर तथा सतो के स्थान अयोध्या मे बहुत अधिक है।

अयोध्या की दो परिक्रमाये है। बडी परिक्रमा स्वर्गद्वार से प्रारम्भ होती है। अयोध्या की छोटी परिक्रमा राम घाट से प्रारम्भ होती है।

श्री रामनवमी के अवसर पर अयोध्या मे सबसे बडा मेला होता है। दूसरा मेला आठ–नौ दिन तक श्रावण शुक्ल पक्ष मे झूले का होता है। कार्तिक पूर्णिमा पर भी यात्री सरयू स्नान करने आते है।

मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान श्री रामचन्द्र की जन्मस्थली होने के कारण हिन्दुओ के लिए अयोध्या आस्था व भक्ति का प्रमुख केन्द्र है। □

अध्याय दो

1. बदरीनाथ धाम

भारत की चारो दिशाओ मे चार धाम है, जिनमे एक उत्तराखण्ड मे है। यह धाम भगवान नारायण के मदिर के लिए विख्यात है। बदरीनाथ धाम नर नारायण पर्वतो के मध्य की घाटी मे तथा अलकनन्दा नदी के दाहिने तट पर अवस्थित है। प्राचीन समय मे यहा बदरि अर्थात् बेर का वन था, इसलिए इस तीर्थ का नाम बदरिका आश्रम और भगवान का नाम बदरी नारायण पडा। यहा नारद मुनि ने भगवान की आराधना की थी, इसलिए इसे नारद क्षेत्र भी कहा जाता है। यह सर्वश्रेष्ठ धाम है। यहा भगवान विष्णु का श्री विग्रह स्वयं प्रकट हुआ, अत. इसे अष्ट वैकुण्ठ मे से एक माना जाता है।

आदि शकराचार्य आठवी सदी मे बदरी आये थे। उन्होने नारद कुण्ड से प्राचीन देव मूर्ति का उद्धार कर उसे तप्त कुण्ड के पास गुरुडगुफा मे प्रतिष्ठित किया था। इसके बहुत समय पश्चात गढवाल के राजा ने वर्तमान मदिर का निर्माण कराकर देव प्रतिमा को स्थापित किया। इस मदिर के शिखर पर जो स्वर्ण कलश और स्वर्ण छतरी है, उसे इन्दौर की महारानी अहिल्याबाई ने चढाया था।

बदरीनाथ धाम मे पहुचकर, अलकनन्दा मे स्नान करना अत्यत कठिन है। अलकनन्दा के तो यहा दर्शन ही किए जाते है। स्नान तो यात्री तप्त कुण्ड मे करते है। स्नान करके मदिर मे जाना पडता है। वन तुलसी की माला, चने की कच्ची दाल, गरी गोला, मिश्री आदि प्रसाद चढाने के लिए यात्री ले जाते है। मदिर जाते समय बायी ओर शकराचार्य जी का मदिर मिलता है। मुख्य मदिर मे सामने गुरुडजी है।

श्री बद्रीनाथ जी की शालग्राम शिला मे बनी ध्यानमग्न चतुर्भुज मूर्ति है, जिसके ललाट मे हीरा लगा है। भगवान के दाहिने पार्श्व मे कुबेर और गणेशजी एव बाये पार्श्व मे नर नारायण जी की मूर्तिया है। विष्णु के समीप

श्री देवी, भू देवी विराजमान है। इस मदिर के दक्षिण की ओर लक्ष्मीजी का मदिर है, जिसमे लक्ष्मीजी की भव्य मूर्ति स्थापित है। मदिर के घेरे मे अन्य कई देव मूर्तिया है।

मुख्य मदिर से बाहर मदिर के घेरे मे ही शकराचार्य की गद्दी है। मदिर का कार्यालय है जहा घटा लटकता है, वहा बिना धड की घण्टाकर्ण की मूर्ति है।

बदरीनाथ धाम के अन्य तीर्थ

श्री बदरीनाथ मदिर के सिह द्वार से 4–5 सीढी उतर कर शकराचार्य मदिर है। इसमे लिग मूर्नि है। उससे 3–4 सीढी नीचे आदि केदार का मदिर है। नियम है कि आदि केदार के दर्शन करके बदरीनाथ के दर्शन करना चाहिए। केदारनाथ के नीचे तप्त कुण्ड है। इसे अग्नितीर्थ कहा जाता है। तप्त कुण्ड के नीचे पचशिला है

1. गरुड़ शिला— वह शिला है जो केदारनाथ मदिर को अलकनन्दा की ओर से रोके हुए है। इसी के नीचे होकर उष्णजल तप्त कुण्ड को जाता है।

2. नारद शिला— तप्त कुण्ड से अलकनन्दा की ओर बडी शिला है। यह अलकनन्दा तक है। इसके नीचे अलकनन्दा मे नारद कुण्ड है। इस पर नारदजी ने दीर्घकाल तक तप किया था।

3. मार्कण्डेय शिला— नारद कुण्ड के पास अलकनन्दा की धारा है। इस पर मार्कण्डेय ने भगवान की आराधना की थी।

4. नरसिंह शिला— नारद कुण्ड से ऊपर जल मे एक सिहाकार शिला है। हिरण्य कश्यप के वध के बाद नृसिह भगवान यहा पधारे थे।

5. बाराही शिला— अलकनन्दा के जल मे यह उच्च शिला है। पाताल से पृथ्वी का उद्वार करने के बाद हिरण्याक्ष वध के पश्चात यहा शिला रूप मे उपस्थित हुए। यहा गगाजी मे प्रहलाद कुण्ड, कर्मधारा और लक्ष्मीधारा तीर्थ है।

ब्रह्मकपाल तीर्थ— अलकनन्दा के किनारे एक शिला है। यह ब्रह्मकपाल (कपाल मोचन) तीर्थ है। यहा यात्री पिण्डदान करते है। शकरजी ने जव ब्रह्माजी का पाचवा मस्तक कटुभाषी होने के दोष के कारण काटा, तब वह उनके हाथ मे चिपक गया। जब समस्त तीर्थो मे घूमते–घूमते शकरजी यहा

आये, तब हाथ मे सटा कपाल स्वत गिर गया। इस ब्रह्मकपाल तीर्थ के नीचे ही ब्रह्मकुण्ड है। यहा ब्रह्मा जी ने तप किया था।

माता मूर्ति— ब्रह्मकुण्ड से गगा के किनारे ऊपर जहा अलकनन्दा मुडती है, अत्रि अनुसूर्या तीर्थ है। आगे चलने पर श्वेत झरना मिलता है, जिसे इन्द्रधारा कहा जाता है। इसे इन्द्रपद तीर्थ भी कहते है। कहते है कि यहा इन्द्र ने तप किया था। यहा से थोडी दूर आगे माणा गाव अलकनन्दा के दूसरी ओर बसा है। इधर ही नर नारायण की माता मूर्ति देवी का छोटा मदिर है। यह क्षेत्र धर्म क्षेत्र है। भाद्र शुक्ला द्वादशी को यहा मेला लगता है।

लक्ष्मी वन— माता मूर्ति से लगभग 6 किलोमीटर दूर लक्ष्मी वन है। वदरीनाथ के आसपास वृक्षो का नाम नही कितु यहा ऊँचे नीचे भोजपत्र के वृक्ष है। यहा लक्ष्मीधारा नाम का छोटा झरना है। आगे मार्ग बहुत कठिन है। नारायण पर्वत सीधी दीवाल के समान है। वहा सैकडो धाराये गिरती है।

सत्पथ— लक्ष्मी धारा के आगे चक्रतीर्थ है। यह तालाव के आकार का मैदान है जिसमे एक जलधारा भी वहती है। इससे 5–6 किलोमीटर दूर सत्पथ है। मार्ग आगे बहुत कठिन है। इस कठिन मार्ग के अत मे सत्पथ का त्रिकोण सरोवर है। स्वच्छ हरे जल से भरा यह अद्भुत तथा मनोहर है। इसका अमित माहात्म्य है। स्कन्द पुराण मे कहा गया है कि एकादशी को विष्णु भगवान यहा स्नान करने आते है।

वसुधारा— अलकापुरी शिखर के पास से अलकनन्दा के दूसरे किनारे होकर लौटने पर वसुधारा मिलती है। वसुधारा नाम का चार सौ फुट ऊँचा एक जल प्रपात है। यह बदरी स्थान से आठ किलोमीटर दूर है। वसुधारा से 3–4 किलोमीटर नीचे आने पर माणा के पास अलकनन्दा मे सरस्वती की धारा मिलती है, इसे केशव प्रयाग कहते है।

माणा ग्राम— बदरिका आश्रम से तीन किलोमीटर दूर माणा ग्राम है। तिब्बत के रास्ते से यह भारत की अतिम बस्ती है। कहा जाता है कि माणा की व्यास गुफा मे व्यासदेव ने समग्र वेद को चार खण्डो मे सम्पादित किया था।

अलकापुरी— अलकनन्दा के उद्गम स्थान का नाम अलकापुरी है। अलकनन्दा का उद्गम स्थान भी नारायण पर्वत के नीचे ही है। सत्पथ मार्ग के समीप लक्ष्मीवन के निकट यह स्थान है।

बदरीनाथ की ऊँचाई 3155 मीटर है। बदरिका आश्रम की जोशीमठ से 42 तथा ऋषिकेश से बदरीनाथ की दूरी 212 किलोमीटर है। बदरीनाथ जाने के लिए केदारनाथ से दो राजमार्ग है। पहला, ऊखीमठ, चमोली होकर, दूसरा रुद्रप्रयाग होकर। बदरिका आश्रम तक मोटर, बसो द्वारा जाया जा सकता है। हरिद्वार, ऋषिकेश व दिल्ली से बद्री के लिए नियमित बस सेवा है।

प्राय यात्री उत्तराखण्ड क्षेत्र मे स्थित चारो प्रमुख पवित्र स्थलो—बदरीधाम, केदारनाथ, गगोत्री व यमनोत्री की यात्रा एक साथ ही करते है जिसमे 12 से 15 दिन का समय लग जाता है। □

2. काशी : वाराणसी

उत्तर प्रदेश

काशी विश्व की सबसे प्राचीन नगरी है। वेदो मे इसका कई जगह उल्लेख है। पुराणो के अनुसार यह आद्य वैष्णव स्थान है। इसे बनारस या वाराणसी भी कहा जाता है। कहा जाता है कि यह पुरी भगवान शकर के त्रिशूल पर बसी है। वरणा और असि नामक नदियो के बीच बसी होने के कारण इसे वाराणसी कहते है।

काशीखण्ड के अनुसार काशी के बारह नाम है— काशी, वाराणसी, अविमुक्त, आनन्द कानन, महाशमशान, रुद्रावास, कशिका, तप स्थली, मुक्ति भूमि (क्षेत्र पुरी) और श्री शिव पुरी (त्रिपुरारी नगर)।

अयोध्या, मथुरा, माया (हरिद्वार), काशी, काची, अवन्तिका (उज्जैन) तथा द्वारिका ये सात पुरिया है। इनमे काशी मुख्य मानी गई है। 'काश्या मरणान्मुक्ति' काशी मे जो मरे वह मुक्त हो जाता है। यह शास्त्र की घोषणा है। इस पर आस्था रखते हुए सहस्रो वर्ष से देश के कोने–कोने से लोग देहोत्सर्ग के लिए काशी आते रहे है। बहुत से लोग मरने के लिए काशी मे ही निवास करते है। जहा देह त्यागने से प्राणी मुक्त हो जाये, वह अविमुक्त क्षेत्र यही है।

यहा द्वादश ज्योतिर्लिगो मे विश्वनाथ नाम का ज्योतिर्लिग है। इसके अतिरिक्त यहा भारत के सभी देवी देवताओ के मदिर स्थापित है। इस महानगर मे जितने मदिर है उतने भारत मे किसी तीर्थ मे नही है। ब्रह्मा का

दिन पूरा होने पर भी यह नगर नाश को नहीं प्राप्त होता। प्रलयकाल मे इसे शिवजी अपने त्रिशूल पर धारण किये रहते है।

काशी भारत का प्राचीनतम विद्या केन्द्र और सास्कृतिक नगर है। यह किसी एक प्रान्त, एक सम्प्रदाय या समाज का नगर नही है। भारत के निवासियो के यहा मुहल्ले है। कश्मीर से कन्याकुमारी और आसाम, भूटान से कच्छ तक के लोग यहा स्थायी रूप से बसे है। भगवान विश्वनाथ की इस पुरी मे सभी सम्प्रदाय के लोग रहते है। उनकी सस्थाये है और उपासना स्थान है। सस्कृत विद्या का तो यह सदा से सम्मानीय केन्द्र रहा है। धार्मिक व्यवस्था मे पूरे देश के लिए काशी के विद्वानो का निर्णय सदैव शिरोधार्य रहा है और काशी के विद्वान कौन? वे काशी के विद्वान जो काशी मे रहे। उनका और उनके पूर्व पुरुषो का जन्म कहा किस प्रात मे हुआ, इससे कोई विवाद नही, क्योकि काशी तो भारत की नगरी है। भगवान विश्वनाथ की पुरी मे प्रान्तीयता या किसी और संकीर्णता का स्थान कैसे हो सकता है।

द्वादश ज्योतिर्लिगो मे भगवान शकर के विश्वनाथ ज्योतिर्लिग के अलावा 51 शक्तिपीठो मे एक शक्तिपीठ (मणिकर्णिका पर विशालाक्षी) काशी मे है। यहा सती का कर्णकुण्डल गिरा था। इनके भैरव, काल भैरव है। भगवती भागीरथी के बाये तट पर यह नगर अर्धचन्द्राकार पाच–छह किलोमीटर तक बसा है, अब तो नगर का विस्तार बहुत हो गया है।

काशी प्रसिद्ध ग्राड ट्रक रोड पर अवस्थित है। उत्तर रेलवे के मुगलसराय, लखनऊ, सहारनपुर, अमृतसर रेलमार्ग पर, मुगलसराय से बारह किलोमीटर की दूरी पर काशी स्टेशन एव सत्रह किलोमीटर की दूरी पर वाराणसी जक्शन स्टेशन है।

सप्त पुण्य नदियो मे गगा प्रथम है। काशी मे गगा स्नान करना परम पुण्य का कार्य माना जाता है। पुराणो मे कहा गया है कि गगा मे स्नान करने से सभी पाप नष्ट हो जाते है और मरने पर विष्णु लोक प्राप्त होता है। काशी मे गगाजी के तट पर लगभग पचास साठ घाट है। लेकिन पाच घाट मुख्य माने गये है। ये है – 1 वरणा सगम घाट, 2 पच्च गगा घाट, 3 मणिकर्णिका का घाट 4 दशाश्व मेध घाट और 5 असि सगम घाट।

काशी के मंदिर

श्री विश्वनाथ जी: काशी का सर्व प्रधान मदिर यही है। मदिर पर स्वर्ण

कलश चढा है, जिसे इतिहास प्रसिद्ध पजाब के राजा रणजीत सिह ने अर्पित किया था। इस मदिर के सम्मुख सभा मण्डप है और मण्डप के पश्चिम मे दण्ड पाणीश्वर मदिर है। सभा मण्डप मे बडा घटा तथा अनेक देव मूर्तिया है। द्वादश ज्योतिर्लिगो मे यह विश्वेश्वर लिग है। मुख्य मदिर के वावब्य कोण मे डेढ सौ शिव लिग है जिन्हे शिवजी की कचेहरी कहते है। मदिर के उत्तर मे एक कूप है, जिसे ज्ञान वापी कहते है। विश्वनाथ मदिर को अठारहवी सदी मे इदौर की महारानी अहिल्या बाई ने बनवाया था। प्राचीन विश्वनाथ मदिर को आततायियो ने विनष्ट कर दिया था, उसके सभा मण्डप के स्थान पर मस्जिद बनी है।

अन्नपूर्णा मंदिरः विश्वनाथ मदिर से थोडी दूर पर अन्नपूर्णा मदिर है। चादी के सिहासन पर अन्नपूर्णा की पीतल की मूर्ति विद्यमान है। मदिर के सभा मण्डप के पूर्व कुबेर, सूर्य, गणेश, विष्णु तथा हनुमानजी की मूर्तिया तथा यन्त्रेश्वर लिग है, जिस पर श्री यत्र खुदा हुआ है। इस मदिर के साथ एक खण्ड और है जिसका आगन विस्तृत है। उसमे महाकाली शिव परिवार, गगावतरण, लक्ष्मी नारायण, श्रीराम परिवार, राधा–कृष्ण, उमा महेश्वर और अत मे नृसिह जी की सगमरमर की सुदर मूर्तिया है। चैत्र शुक्ल 9 तथा आश्विन शुक्ल 8 को अन्नपूर्णा के दर्शन पूजन की विशेष महिमा है। इस मदिर से थोडा आगे ढुढिराज गणेश मदिर है।

अक्षय वटः श्री विश्वनाथ मदिर के द्वार से निकलकर, ढुढिराज गणेश की ओर चले तो बाई ओर शनैश्वर का मदिर मिलता है। पास मे एक ओर महावीर जी है। एक कोने मे वटवृक्ष है, जिसे अक्षय वट कहा जाता है। यहा दुपदायित्व तथा नकुलेश्वर महादेव है।

गोपाल मंदिरः चौखम्बा मोहल्ले मे बल्लभ सम्प्रदाय का यह मुख्य मदिर है। इसमे श्री गोपालजी तथा मुकुन्द राय जी के विग्रह है। पूजा सेवा बल्लभ सम्प्रदाय के अनुसार होती है। गोपाल मदिर के सामने रणछोडजी का मदिर, बडे महाराज का मदिर, बलदेवजी का मदिर और दाऊजी का मदिर है। ये सभी मदिर बल्लभ सम्प्रदाय के है।

काल भैरवः यह मदिर भैरव नाथ मुहल्ले मे है। यह सिहासन पर स्थित चतुर्भुजी मूर्ति है, जो चादी से मढी है। भैरव जी का वाहन काला कुत्ता है। ये नगर के कोट पाल है। कार्तिक कृष्ण 8, मार्गशीर्ष कृष्ण 8, चतुर्दशी तथा रविवार को भैरवजी के पूजन दर्शन का विशेष महत्त्व है।

व्यवहार के कारण रानी तारामती व्याकुल होकर अपनी असहाय अवस्था पर रोने व विलाप करने लगी। रानी के रुदन को सुनकर आकाश के देवता भी व्याकुल हो गये और वे भगवान विष्णु की शरण मे उपस्थित हुए और इस कठिन परिस्थिति के निदान के लिए उनसे प्रार्थना की। भगवान विष्णु स्वय विश्वामित्र के रूप मे श्मशान मे उपस्थित हुए और उन्होने राजा हरिश्चन्द्र व रानी तारामती से कहा कि उन्होने तो केवल राजा हरिश्चन्द्र के सत्याचरण की परीक्षा के लिए ही इस घटनाचक्र का निर्माण किया था जिसमे वे सफल रहे है। भगवान विष्णु के आशीर्वाद से बालक रोहित पुन॰ जीवित हो उठा और सत्यवादी राजा हरिश्चन्द्र को उनका समस्त राजपाट पुन॰ वापस मिल गया। आज भी काशी मे गगा के किनारे हरिश्चन्द्र घाट विख्यात है।

महात्मा गाधी ने अपनी पुस्तक 'आत्मकथा' मे वर्णन किया है कि बचपन मे उन्होने राजा हरिश्चन्द्र के जीवन पर आधारित एक नाटक देखा था और वे इस नाटक से इतने प्रभावित हुए कि उन्होने भी अपने जीवन मे सत्याचरण करने का निर्णय लिया और जिस पर वे अपने समस्त जीवन मे अडिग रहे। सत्य पर अडिग रहने व सत्याचरण के कारण ही 'सत्याग्रह' का अस्त्र भारत के स्वतत्रता सग्राम मे प्रयोग मे आया और आजादी प्राप्त करने मे इस अस्त्र की प्रमुख भूमिका रही है।

विश्वविद्यालयः काशी मे महामना पडित मदनमोहन मालवीय जी द्वारा स्थापित काशी हिन्दू विश्वविद्यालय है जहा देश–विदेश के हजारो विद्यार्थी विभिन्न विषयो की शिक्षा ग्रहण करते है। इस विश्वविद्यालय के विद्यार्थियो का भारत के स्वतत्रता सग्राम मे विशेष योगदान रहा है। अब यह भारत का सबसे बडा विश्वविद्यालय है जिसकी आधारशिला सन् 1920 मे महात्मा गाधी द्वारा रखी गई थी।

अन्य महत्त्वपूर्ण स्थानः काशी मे ही दो अन्य महत्त्वपूर्ण मदिर स्थापित है। पहला मदिर भारतमाता के नाम से प्रसिद्ध है जिसका निर्माण स्वर्गीय बाबू शिवप्रसाद गुप्त द्वारा किया गया है। यहा समूचे भारत (अब पाकिस्तान सहित) का मानचित्र सगमरमर मे अकित किया गया है। उत्तर मे हिमालय से प्रारम्भ कर सुदूर दक्षिण मे हिन्द महासागर, अरब सागर व बगाल की खाडी को उनकी ऊँचाइयो व गहराइयो के अनुपात से बहुत

कलात्मक ढग से दर्शाया गया है जिसे देखकर समस्त भारत के दर्शन सुगमता से हो जाते है।

दूसरा मदिर मानस मदिर के नाम से जाना जाता है। यहा गोस्वामी तुलसीदास की प्रतिमा के अतिरिक्त समस्त तुलसी रामायण को चित्रो सहित दीवारो पर काले व सुनहरे अक्षरो मे बहुत आकर्षित ढग से प्रस्तुत किया गया है जिसे देखकर दर्शक आत्मविभोर हो जाते है।

ऐसी अद्भुत है काशी नगरी जहा सृष्टि के प्रारम्भ से बाबा विश्वनाथ निवास करते है। ❑

3. दरगाह हज़रत निज़ामुद्दीन औलिया

दिल्ली

हजरत निजामुद्दीन औलिया को हजरत महबूबे इलाही या ईश्वर का प्यारा भी कहा जाता है। आपके पिता सैय्यद अहमद बिन अली थे। आपके पूर्वज बुखारा शहर के रहने वाले थे। आपके पिता के दादा और माता के दादा बुखारा से लाहौर, लाहौर से बदायू पहुचे और वही पर सकूनत अख्तियार कर ली। आपका जन्म सन् 1238 मे बदायू मे हुआ। सोलह साल की उम्र मे हजरत ख्वाजा निजामुद्दीन बदायू से दिल्ली आ गये। आपका जब जन्म हुआ तो उसी रोज आपके पडोस मे रहने वाले एक ज्योतिषी ने कहा कि यह बहुत बडा बुजुर्ग होगा और जमाने के बादशाह इसके कदमो पर सिर झुकाते रहेगे।

हजरत निजामुद्दीन औलिया का सिलसिला चिश्तियो से था और इस सिलसिले के महापुरुषो का काम शुरू से ही धार्मिक नेतृत्व व समाज सुधार रहा है। साथ ही इन महापुरुषो ने अपने समय के शासको से कभी कोई सबध नही बनाया, परतु यह अलग बात है कि शाही दरबार के गलत रीति–रिवाजो के सुधार का काम भी वे किया करते थे। हजरत मोईनुद्दीन से लेकर हजरत निजामुद्दीन चिश्ती तक यह मानी हुई बडी हकीकत थी कि

न तो उनको दरबार मे जाना था और न समय के शासको से मुलाकात करनी थी और अपने सिद्धात पर ये लोग अटल रहते थे और इसका यह नतीजा रहा कि राजनीति के दाव–पेचो मे इनका दामन नही उलझा।

हजरत शेख निजामुद्दीन जब से शेख फरीद के पास से दिल्ली आये थे, उनके समय मे दिल्ली के तख्त पर सात बादशाह बैठे, लेकिन एक मौके के अलावा, जबकि धार्मिक शिक्षा की जरूरत थी, वह कभी न तो दरबार मे गये और न ही समय के शासको को अपने यहा आने की आज्ञा ही दी।

आपके यहा ये परम्परा थी कि जो लोग आपके यहा आते थे, मिठाई और तोहफा खरीद कर अपने साथ लाते और पेश करते। एक बार कुछ लोग आपके दर्शन के लिए आ रहे थे, साथ मे तोहफे के रूप मे कुछ चीजे ला रहे थे।

एक मौलवी साहब भी दर्शनार्थियो के साथ थे। मौलवी साहब ने सोचा कि लोग अलग–अलग तरह के तोहफे पेश करेगे और वे हजरत निजामुद्दीन औलिया के सामने रखे जायेगे। हजरत का सेवक सभी को उठाकर ले जायेगा। क्या पता चलेगा कि कौन क्या लाया है? उन्होने थोडी मिट्टी रास्ते से उठाकर कागज मे बाध ली, जब सब दर्शनार्थी उपस्थित हुए तो सभी ने अपने तोहफे आपके सामने रखे। मौलवी साहब ने भी अपनी पुडिया सामने रख दी। हजरत का सेवक जब सब वस्तुए उठाकर ले जाने लगा तो मिट्टी की पुडिया को भी उठाना चाहा। हजरत ने सेवक से कहा कि उसको यही छोड दो। यह मेरी आंख का सुरमा है। ऐसा बरताव देख मौलवी साहब ने तौबा की और माफी मागी तथा उनके शिष्य बन गये।

हजरत ख्वाजा निजामुद्दीन की सोहबत और उनकी शिक्षा मे सिर्फ ईश्वरीय सेवा प्रार्थना की ही बात नही थी बल्कि हर आदमी को वे अच्छा इसान बनाने का प्रयास करते रहते थे। सब लोगो से उनका यही कहना था कि दूसरो की भलाई करो, बुराई से लडने की ताकत पैदा करो। इसका असर यह होता था कि उस समय के शासको मे भी जी हजूरी की जगह पर सच्ची बात कहने की ताकत पैदा होती थी। हजरत निजामुद्दीन को धार्मिक शिक्षा का प्रमुख केद्र बिदु समझा जाता था। यही कारण था कि उनके जीवनकाल मे और उनके स्वर्गारोहण के बाद भी सभी धर्मो के लोग उनके पास आते रहते है और दुआए और मिन्नते मागते है। उनका यह भी मानना था कि लोगो मे केवल बाते करके बदलाव नही लाया जा सकता बल्कि धर्म प्रचारक अपनी जीवन पद्धति को इस तरह बनाये कि लोगो के

लिए अनुकरणीय हो और बाद मे उनके खलीफो और मुरीदो ने उनके निर्देशो के अनुसार जीवन पद्धति अपनायी और अपने जीवन को एक नमूने के तौर पर पेश किया।

जब आपकी उम्र 94 साल की हुई, आप बीमार पडे और चालीस दिन तक बीमार रहे। आपकी बीमारी के कारण आपके अनुयाइयो और शुभचिन्तको मे हैरानी बढती जा रही थी। इसी दौरान आप प्रतिदिन कई बार गायब हो जाते और प्रगट हो जाते। इसी समय अपने तमाम अहबाबो और शिष्यो को बुलाया और कहा कि खानखा मे जो कुछ भी हो, लोगो मे बाट दो और पैसा अनाज जो भी हो कोई चीज बाकी न रखना। एक मुरीद ने आकर प्रार्थना की कि सब कुछ बाटा जा चुका है परतु कुछ हजार मन गल्ला फकीरो के लिए रखा है। आपने हुक्म दिया कि इस गल्ले को क्यो रख दिया गया है, इसको भी बाट दिया जाये। जब सेवको और गरीबो ने आपसे आकर यह प्रार्थना की कि हजरत बाद मे हम लोगो का क्या होगा? आपने फरमाया कि तुम लोगो को मेरे रोजे से इस कदर मिल जाया करेगा कि सुकून से जी लेना। आपको अमीर खुसरो से बहुत ही प्रेम और लगाव था और आप यहा तक कहते थे कि एक कब्र मे दो आदमी दफन हो सकते तो मै कहता कि मेरे साथ खुसरो को दफन कर दो। जिस समय हजरत निजामुद्दीन औलिया ईश्वर के प्यारे हुए, उस समय अमीर खुसरो लखनौती मे थे। खबर पहुची तो आप वापस आये और कब्र पर जाना चाहा तो लोगो ने कहा कि ईश्वर के प्यारे हजरत निजामुद्दीन औलिया का यह आदेश था कि खुसरो को मेरे कब्र पर न आने देना वरना कब्र फट जायेगी। लोगो के रोकने पर खुसरो ने एक दोहा पडा

गोरी सोवे सेज पर, मुख पर डाले केश।
चल खुसरो घर अपने, शाम भई चहूँ देश।।

अमीर खुसरो वही गिरकर बेहोश हो गये। इसके बाद तीन महीने जिन्दा रहे और 1325 ई या 725 हिजरी मे ही ईश्वर के प्यारे हो गये। उन्हे महबूबे इलाही के पाव के पास दफन किया गया।

दरगाह शरीफ की जियारत के लिये सारे भारत और विदेशो से हजारो लाखो लोग यहा आकर हाजरी देते है और अपना नजराना पेश करते है। प्रतिवर्ष उर्स के मौके पर एक सप्ताह तक यहा मेला लगता है और मशहूर कव्वाल अपना कलाम पेश करते है जिन्हे सुनने के लिए हजारो लोग आते है। ◻

4. सारनाथ

सारनाथ बुद्ध धर्म का मुख्य केन्द्र है। वास्तव मे यह बुद्ध धर्म की राजधानी है। सम्राट अशोक के समय से इस स्थान को पुन. महत्ता मिली, क्योकि सम्राट अशोक ने सारनाथ मे अनेको देव स्थल और स्मारक निर्मित कराये। सदियो से सारनाथ बुद्ध धर्म का महत्त्वपूर्ण स्थान बना हुआ है।

सबसे पहले भगवान बुद्ध ने सारनाथ मे ही अपना 'धर्म चक्र प्रवर्तन' का उपदेश दिया था।

सारनाथ जिसका प्राचीन नाम इसिपहन (ऋषि पहन) या मृगदान था, उत्तर प्रदेश के वाराणसी जिले मे स्थित है।

सारनाथ के प्राचीन अवशेषो मे सम्राट अशोक का स्तभ विशेष रूप से उल्लेखनीय है। सम्राट अशोक द्वारा स्थापित इस स्तंभ मे बाद मे गुप्तकाल और कुषाण काल मे दो आलेख अकित किये गये।

अशोक स्तभ, जो खडित है, सारनाथ के सग्रहालय मे रखा हुआ है। इस स्तभ के ऊपर चार सिह है जिसे भारतीय गणराज्य ने अपना राज्य चिन्ह बना लिया है।

सारनाथ मे कई स्तूप है, जिनमे धमेख तथा धर्मराजिक स्तूप विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

सारनाथ का मुख्य तीर्थस्थल एक विशाल ढांचा है जो भक्तो द्वारा निर्मित तमाम स्तूपो से घिरा हुआ है जो खुदाई की वजह से खण्डहर सा बन गया है।

इसके अलावा सारनाथ मे अन्य स्थान भी महत्त्वपूर्ण है। चौखण्डी और मूलगन्ध कुटी विहार भी सारनाथ मे विशेष महत्त्व रखते है। गया से इसिपहन लौटते हुए चौखण्डी मे ही भगवान बुद्ध की मुलाकात उन पाच साथियो से हुई थी, जो उन्हे गया मे छोडकर आ गये थे। बाद मे भगवान बुद्ध को छोडकर आने वाले ये पाच व्यक्ति सबसे पहले भगवान बुद्ध की शरण मे आये और उनका उपदेश ग्रहण किया।

मूलगन्ध कुटी विहार वह स्थान है, जहा पर बुद्ध ने अपना प्रथम वर्षाकाल बिताया था। इस स्थान पर आजकल एक विशाल मदिर है। इस मदिर को अनागरिक धर्मपाल, जो बाद मे श्री देव मित्र धर्मपाल के नाम से विख्यात हुए,

ने निर्मित कराया था। यह मदिर सन् 1923 मे बनना शुरू हुआ और सन् 1939 मे पूर्ण रूप से बनकर तैयार हुआ।

चीनी यात्री फाह्यान तथा ह्वेनसाग क्रमश पाचवी और सातवी सदी मे सारनाथ आये थे।

धर्मराजक स्तूप तथा चर्मचक्र विहार, महिपाल प्रथम के शासनकाल मे पुन निर्मित किये गये। बौद्ध धर्मावलम्बी रानी कुमार देवी ने भी सारनाथ मे एक विहार का निर्माण कराया था।

देश विदेश के सैकडो बौद्ध धर्मावलम्बी प्रतिदिन सारनाथ दर्शनार्थ आते है। मूलगन्ध कुटी विहार मे प्रतिदिन प्रात साय महासघ धर्मचक्र प्रवर्तन सूत्र का पाठ होता है और यह धार्मिक कृत्य बौद्धो मे बहुत ही लोकप्रिय हो गया है।

सारनाथ से ही प्रथमत बौद्ध धर्म का प्रारम्भ हुआ, इसलिए बौद्धो के लिए सारनाथ विशेष महत्व वाला उनकी आस्था का केन्द्र है। ❑

5. गुरुद्वारा सीसगंज

दिल्ली

दिल्ली मे चादनी चौक मे स्थित गुरुद्वारा सीसगज सिखो के नवे गुरु तेग बहादुर का बलिदान स्थल है।

गुरु तेग बहादुर छठे गुरु हर गोविन्द के सबसे छोटे पुत्र थे। उनका जन्म अमृतसर नगर के गुरु के महल मे वैशाख बदी 5, सवत् 1768 विक्रमी तदनुसार 9 अप्रैल 1621 को हुआ था। अपने पिता गुरु हरगोविन्द की मृत्यु के बाद वे अपनी माता और पत्नी के साथ बकाला मे रहने लगे। वहा पर उन्होने लगभग 20 साल तक एकान्त साधना मे बिताये।

गुरु हरकिशन की मृत्यु के पश्चात 40 साल की उम्र मे उन्होने गुरु गद्दी सभाली। गुरु तेग बहादुर का बलिदान इतिहास की अति ही अनोखी घटना है। इतिहासकार श्री एस एम लतीफ ने पजाब के इतिहास मे लिखा है– "सम्राट औरगजेब ने सैकडो ब्राह्मणो को जेल मे इस आशा से डाल रखा था

कि इन ब्राह्मणो के इस्लाम ग्रहण करने पर हिन्दुस्तान के अन्य लोग भी इस्लाम ग्रहण कर लेगे।"

सन् 1671 मे इफ्तिहखार खान को कश्मीर का सूबेदार बनाया गया। वह कट्टर और सकीर्ण प्रवृत्ति का मुसलमान था। उसने कश्मीर के ब्राह्मणो को चेतावनी दी कि या तो इस्लाम ग्रहण कर ले या मृत्युदड के भागी बने। श्री पी. एन कौल कश्मीर के इतिहास मे लिखते है कि कुछ धार्मिक ब्राह्मण इकट्ठे हुए और इफ्तिहखार खान द्वारा चेतावनी को ध्यान मे रखकर अत्याचार से मुक्ति के लिए अमरनाथ गुफा मे शिवजी के स्थान तक गये। वहा किसी पडित ने बताया कि उसे दिव्य दर्शन से आभास मिला है कि सब ब्राह्मणो को गुरु तेग बहादुर के पास जाना चाहिए। पाच सौ काश्मीरी ब्राह्मण गुरु तेग बहादुर से मिलने आनन्दपुर साहब पहुचे।

उपरोक्त 500 ब्राह्मणो ने कृपाराम को अपना प्रतिनिधि नियुक्त किया। कृपाराम सारस्वत ब्राह्मण था और श्रीनगर से चालीस मील दूर मत्तन का रहने वाला था। कृपाराम ने अति ही विनीत स्वरो मे, श्री पी. एन. कौल काश्मीर के इतिहासकार के शब्दो मे, गुरु तेग बहादुर से कहा– "हम शारीरिक और आध्यात्मिक दृष्टि से असमर्थ है। जिस तरह भगवान कृष्ण ने द्रौपदी की रक्षा की थी, उसी प्रकार इस मुसीबत के समय आप हमारी रक्षा करे।"

कृपाराम के विनीत स्वरो को सुनकर गुरु तेग बहादुर गभीर हो गये। इस बात को सुनकर गुरु गोविन्द सिह ने जो अभी छोटे ही थे, गुरु तेग बहादुर से पूछा, "इसका उपाय क्या है?" गुरु तेग बहादुर ने कहा– "किसी महान व्यक्ति का बलिदान"। बालक ने अपने पिता से कहा– "आपसे अधिक महान कौन होगा"। अपने पुत्र की यह वाणी सुनकर गुरु तेग बहादुर ने काश्मीर के ब्राह्मणो की प्रार्थना पर अपना बलिदान देने का निश्चय कर लिया और कश्मीरी ब्राह्मणो से कहा कि अपने शासक से कहो कि यदि गुरु तेग बहादुर इस्लाम ग्रहण कर लेते है तो कश्मीरी ब्राह्मण भी मुसलमान बन जायेगे।

परिणामस्वरूप गुरु तेग बहादुर को दिल्ली बुलाया गया। मानवीय गरिमा व विश्वास की रक्षा तथा कश्मीरी ब्राह्मणो को दिये गये अपने वचनो का पालन करने के लिए गुरु तेग बहादुर ने सभी प्रकार की यातनाओ को झेलते हुए मृत्यु का वरण किया।

औरगजेब ने गुरु तेग बहादुर को चादनी चौक की कोतवाली मे सख्त पहरे मे रखने का हुक्म दिया। उन्हे एक ऐसे लोहे के पिजडे मे रखा गया, जिसमे

न तो वे खडे हो सकते थे न लेट सकते थे। जब गुरु तेग बहादुर दबाव मे नही आये, तब उन्ही के सामने उनके परम प्रिय शिष्य भाई मतिदास को आरे से चीरा गया। भाई दयालदास को खौलते हुए कडाह मे डाला गया। भाई सतीदास को यातनाये देकर मारा गया। आतक फैलाने के लिए इनके शरीर के टुकडे–टुकडे करके चादनी चौक मे टाग दिये गये।

इन तमाम यातनाओ के बावजूद गुरु तेग बहादुर ने अपना सिर नही झुकाया। भारी भीड के सम्मुख कोतवाली के सामने, वृक्ष के नीचे, काजी बहाउद्दीन के आदेश पर जलालुद्दीन ने उनकी गर्दन तलवार से काट दी।

चादनी चौक मे स्थित जहा गुरुद्वारा सीसगज है, वही पर गुरु तेग बहादुर का बलिदान हुआ था।

गुरुद्वारा सीसगज ससार भर के सिखो का एक अत्यत महत्वपूर्ण आस्था का केन्द्र है। यहा पर विश्व भर के सिख तथा अपने विश्वास की हर कीमत पर रक्षा करने मे विश्वास करने वालो, गुरुद्वारा सीसगज मे, गुरु तेग बहादुर के सम्मान मे अपना मत्था टेक कर अपने को भाग्यशाली तथा धन्य समझते है। □

6. मन्दिर श्री पद्मनाभ स्वामी

तिरुअनन्तपुरम नगर का नाम श्री अनन्त पद्मनाभ स्वामी के मदिर तथा इसकी स्थिति के कारण है। यहा के प्रमुख देवता विष्णु शेषनाग के फणो पर अनन्तशायी है। इसलिए इस नगर का नाम अनन्तपुरम (नगर) प्रसिद्ध हो गया। यद्यपि यहा के मदिर की प्राचीनता के बारे मे कोई अभिलेख प्राप्त नही है, फिर भी यह विश्वास किया जाता है कि यह मदिर कई हजार साल पुराना है।

इस मदिर के गोपुर (प्रवेशद्वार) बहुत ही ऊँचे है। श्री पद्मनाभ स्वामी का यह मदिर वैष्णवो के 108 तीर्थस्थानो मे एक है। इस मदिर के पवित्र परिसर मे निर्मित मुख्य मडप के 400 ग्रेनाइट पत्थर के घुमावदार स्तभ बहुत ही आकर्षक है। इसका गोपुर 100 फुट ऊँचा है। इसमे पौराणिक गाथाओ के चित्र अकित है। मदिर की 80 फुट ऊँचाई पर विष्णु पताका दूर से ही दिखाई

पडती है। विष्णु के वाहन गरुड की मूर्ति मंदिर की ऊँचाई पर स्थित है। मदिर के भीतर पवित्र मुख्य पूजास्थल पर तीन द्वारो को पार करके जाना पडता है। मदिर मे प्रवेश केवल हिन्दू ही कर सकते है लेकिन मदिर मे प्रवेश करने के लिए हिदुओ को भी एक सुनिश्चित वस्त्र धारण करने पडते हैं।

तिरुअनन्तपुरम की प्रसिद्धि अठारहवी सदी मे हुई, जब पद्मनाभ पुरम से राजधानी तिरुअनन्तपुरम लाई गई। ट्रावनकोर राज्य के राजा अपने को पद्मनाभ दास कहते थे और इस मदिर के अनन्तशायी विष्णु भगवान के प्रति पूर्णतया समर्पित थे। इस तरह ट्रावनकोर राज्य के स्वामी विष्णु भगवान थे और राजा भगवान विष्णु के न्यास के केवल कार्यकारी सरक्षक थे।

यहा पर आने वाले दर्शनार्थियो का भक्तिभाव बहुत ही प्रभावोत्पादक है। इस मदिर के साथ कई गाथाये जुडी हुई है। कहा जाता है कि जहा पर मदिर है, वहा पर पहले जगल था। इस जगल मे एक दरिद्र दम्पत्ति रहता था। जब पुरुष जगल मे लकडी काटने जाता था, तब स्त्री घर में रह जाती थी। उसने जगल मे किसी बच्चे की रोने की आवाज सुनी। जब वह जगल की पगडडियो से चलती हुई, बच्चे के रोने के स्थान पर पहुची तो उसे बहुत ही सुदर और आभा से पूर्ण शिशु दिखा। शिशु के प्रति प्रेम से आप्लावित होकर उसने बच्चे की सफाई की और दूध पिलाया। वह बच्चे को अपने घर ले जाना चाहती थी, किंतु यह सोचकर कि शायद उस बच्चे की मा इसको देखने के लिये आये, इसलिए इच्छा होते हुए भी बच्चे को अपने घर नही ले गई।

अपने घर जाकर उस स्त्री ने अपने पति से बच्चे के सबध मे बताया। यह सब सुनकर स्त्री के पति को शिशु को देखने की इच्छा हुई। वहा जाकर दम्पत्ति ने देखा कि एक बहुत बडा काला सांप बच्चे को बडी सावधानी से एक नजदीक के पेड के विवर की ओर घसीट रहा था। उसके बाद वह अपने फन से बच्चे को धूप से बचाये रखने के लिए छाया किये रहा। दम्पत्ति ने महसूस किया कि वह शिशु साधारण शिशु नही, बल्कि भगवान विष्णु का अवतार है। इसके बाद उन्होने भक्तिभाव से अभिभूत होकर दण्डवत प्रणाम किया और आशीर्वाद प्राप्त किया।

जब बच्चे से सबधित खबर फैली तब तत्कालीन राजा उस शिशु के दर्शनार्थ जगल गये, लेकिन बच्चे के दर्शन नहीं हुए, तो उन्होने उस जगह पर एक विशाल आनन्द पद्मनाभ स्वामी मदिर का निर्माण कराया।

इस मदिर के अलावा तिरुअनन्तपुरम मे अन्य दर्शनीय स्थान भी है। यहा पर सौ साल पहले निर्मित एक वेधशाला है। राजाओ द्वारा निर्मित कई महल है, जो बहुत ही आकर्षक और विशाल है। तिरुअनन्तपुरम का पुराना आकर्षण अभी भी कायम है।

तिकोनी छतो और वुर्जो से सुसज्जित तिरुअनन्तपुरम का सग्रहालय भी आकर्षण का केन्द्र है। तमाम कलात्मक वस्तुओ मे 250 साल पुराना भगवान विष्णु का रथ बहुत ही सुदर है। इसके अलावा लकडी से मदिरो के नमूने, आभूषण और पुरानी वस्तुए सग्रहालय को अति ही सार्थक बना देती है।

सग्रहालय के परिसर मे चित्र प्रदर्शनी कला के प्रेमियो के लिए आदर्श स्थान है। सर्वश्री रवि वर्मा, रवीन्द्र नाथ टैगोर, जैमिनीराय, के के हेब्बार के चित्र वहा पर प्रदर्शित है। राजपूत और मुगल शैली के लघु चित्र भी दर्शनीय है। तजौर पेटिग के अलावा इडोनेशिया, चीन और जापान के भी चित्र वहां देखने को मिलते है।

तिरुअनन्तपुरम का नगर का बाजार विभिन्न प्रकार की वस्तुओ की बिक्री का केन्द्र है। इसके अलावा, यहा का समुद्र तट बहुत ही आनन्दमयी है जो पर्यटको के लिए आकर्षण का प्रमुख केन्द्र है। यह समुद्र तट विश्व के अति ही रमणीय तटो मे एक माना जाता है।

नावो पर जल भ्रमण के अलावा तिरुअनन्तपुरम की यात्रा अधूरी है। समुद्र के किनारे ताड के पेडो और उन पेडो के झुरमुटो के मध्य छोटे–छोटे झोपडो की भरमार है। इसके अलावा केरल निवासियो का मित्रवत व्यवहार भी सराहनीय है। ❑

7. अवर लेडी ऑफ माउन्ट चर्च

अवर लेडी ऑफ माउन्ट से सबधित पवित्र स्थान माउन्ट मेरी, माता मौली या मदर मौली के नाम से विख्यात है और भारत मे ईसाईयो का अति ही प्रसिद्ध तीर्थ स्थल है। इस तीर्थ स्थल के प्रति हिन्दू, मुसलमान और अन्य समुदायो के लोग भी

आदर और श्रद्धा का भाव रखते है। बम्बई मे माहिम के सामने के शिखर पर यह भव्य तीर्थ स्थल स्थित है। जिस पहाडी पर माउन्ट मेरी का भव्य चर्च स्थित है, वह पहाडी बम्बई और उप नगरीय स्थानो को समुद्र के बीच मे स्थित होकर विभाजित करती है।

इस चर्च से सबसे नजदीक वाला रेलवे स्टेशन बान्द्रा है। बम्बई की बसो का आवागमन निरन्तर रहता है और टैक्सी से पहाडी के ऊपर तक जाया जा सकता है।

अपने प्रारम्भिक काल मे यह साधारण स्थान था। बाद मे इसे प्रार्थना भवन मे परिवर्तित किया गया। अन्य सूत्रो से ज्ञात होता है कि सन् 1678 मे पुर्तगालियो द्वारा इस स्थान को प्रार्थना भवन मे परिवर्तित किया गया। पुर्तगाली भाषा मे इसे कपिला, डे. एन. सेनहोर डी मान्टे कहा जाता था। सन् 1679 के बाद यह पवित्र और प्रसिद्ध तीर्थ स्थल हो गया। ईसाईयो और गैर ईसाई समुदायो का इस तीर्थ स्थल मे आना जाना रहता था।

कहा जाता है कि उस समय (1698–1701) जब एक पुर्तगाली यहा का वायसराय था, मस्कत के अरबो ने बान्द्रा पर हमला किया। उन्होने इस तीर्थ स्थल को लूटने का प्रयास किया, क्योकि उन्हे विश्वास था कि इसमें खजाना छिपा हुआ है। लेकिन उन पर मधुमक्खियो की एक विशाल सेना ने हमला बोल दिया और उन्हे अपने हथियार छोडकर भागना पडा।

लेकिन ऐतिहासिक सत्य यह है कि जब मराठो ने यहा पर विजय प्राप्त की, तो अग्रेजो के कहने पर, पुर्तगालियो ने इस प्रार्थना भवन को नष्ट कर दिया ताकि सामरिक दृष्टि से यह महत्वपूर्ण स्थान मराठो के अधिकार मे न आने पाये। इस अवसर पर पवित्र वर्जिन मेरी की मूर्ति को माहिम मे सेन्ट माइकेल चर्च मे सुरक्षा के लिए पहुचाया गया। बाद मे सन् 1761 मे इसे वापस लाकर नजदीक ही एक निर्मित प्रार्थना भवन मे इस मूर्ति को पुन. स्थापित किया गया।

इस स्थान पर जो वर्तमान चर्च है, उसका निर्माण सन् 1904 मे किया गया। अपनी ऊँची मीनारो के साथ यह चर्च गोथिक वास्तुकला का अद्‌भुत उदाहरण है।

इस चर्च मे अवर लेडी ऑफ माउन्ट के जीवन से सबधित चित्र उकेरे गये है। बाद मे पोप पायस 12वे द्वारा इस चर्च को माइनर बैसलिका घोषित किया गया जिसके कारण इसकी महत्ता मे वृद्धि हुई।

ईसा मसीह की मा, मेरी के सम्मान मे आठ सितम्बर क बाद रविवार से लेकर रविवार तक एक बहुत बडा मेला लगता है। इस अवसर पर सभी धर्मो और जातियो के हजारो लोग लेडी ऑफ दि माउन्ट के प्रति अपना सम्मान और श्रद्धा प्रकट करने के लिए इकट्ठा होते है।

भारत के कोने–कोने से हजारो श्रद्धालु ईसाई, माता मौली के प्रति श्रद्धा और आस्था से पूर्ण बान्द्रा आते है। उनकी दृष्टि मे ईसाईयो का यह भारत भर मे पवित्र स्थान है। यह विश्वास किया जाता है, माता मौली चमत्कारिक देवी है। वे अपने भक्तो की कामनाओ को पूरा करती है। हजारो हिन्दू और मुसलमान दम्पत्ति सन्तान प्राप्ति तथा सन्तान की भीषण व्याधियो से मुक्ति की कामना से माता मौली की प्रार्थना करते है और कामना पूरी होने पर अपनी कृतज्ञता प्रकट करने के लिए माता मौली के दर्शनार्थ बान्द्रा आते है।

यह सब वृतान्त गजेटियर ऑफ इडिया, महाराष्ट्र स्टेट ग्रेटर बाम्बे डिस्ट्रिक्ट, खड 3, पृष्ठ 498–499 मे अकित है। ❑

8. सम्मेद शिखर : पारसनाथ

बिहार

यह प्रधान जैन तीर्थ है। पारसनाथ जैनियो के पाच पवित्र पर्वतो मे यह सबसे पवित्र पर्वत माना जाता है। जैनियो की धारणा है कि इस पर्वत की वन्दना से ही मनुष्यो को नरक नही जाना पडता। जैन इसे सम्मेद शिखर या शिखरजी कहते है। जैनियो के सभी सम्प्रदाय इसे परम पवित्र क्षेत्र मानते है।

सम्मेदाचल महा पवित्र तथा अत्यत प्राचीन सिद्ध क्षेत्र है। इसकी वन्दना करना जैन अपना अहोभाग्य समझते है। अनन्त तीर्थकर भगवान, अपनी अमृतवाणी और दिव्य दर्शन से इस तीर्थ को पवित्र बना चुके है। अनन्त मुनिगण यहा से मुक्त हुए। बीस तीर्थकर भी यही से मोक्ष प्राप्त करके दिवगामी हुए।

जैन धर्म के अनुसार यदि कोई जीव इस तीर्थ की यात्रा वन्दना भाव सहित करे तो उसे पचास भव भी धारण नही करने पडते। इस क्षेत्र का इतना

प्रबल प्रभाव है कि वह 49 भवो मे ही ससार भ्रमण से छूटकर मोक्ष का अधिकारी होता है। पडित द्यानत राय जी ने तो यहां तक कहा है–

"एक बार बन्दे जो कोई
ताको नरक पशुगति नहि होई।"

प्रसिद्ध है कि इस सिद्धाचल पर देवेन्द्र ने आकर जिनेन्द्र भगवान के निर्वाण स्थल चिन्हित कर दिये थे। उन स्थानो पर चरण चिन्ह सहित सुदर टोक निर्मित की गई थी। कहते है कि सम्राट श्रेणिक के समय वे अतीव जीर्ण अवस्था मे थी। काल दोष से वे भी नष्ट हो गई। बाद मे अनेक दानवीरो ने अपनी लक्ष्मी का सदुपयोग करके उनका जीर्णोद्वार कराया।

सन् 1678 मे यहा पर दिगम्बर जैनियो का एक महान जिन विम्ब प्रतिष्ठोत्सव हुआ था। पहले पालगज के राजा इस तीर्थ की देखभाल करते थे। किंतु मुसलमानो के आक्रमण की वजह से यहां का मुख्य मन्दिर नष्ट हो गया। तब एक स्थानीय जमींदार भगवान पार्श्वनाथ की प्रतिमा को अपने घर उठा ले गया। वह यात्रियो से कर वसूल कर उनको दर्शन कराता था। कर्नल मेकेन्जी ने सन् 1820 मे यह दृश्य अपनी आखो से देखा था, जो कुछ भेट चढती थी, वह सब ले लेता था।

पार्श्वनाथ की टोक वाले मन्दिर मे दिगम्बर जैन प्रतिमा ही प्राचीन काल से रही है। अब दिगम्बर और श्वेताम्बर दोनो सम्प्रदायो के जैन इस तीर्थ को पूजते है और मानते है।

पारसनाथ पर्वत की तराई मे स्थित बस्ती का नाम मधुवन है। यही से पारसनाथ पर्वत की परिक्रमा, जिसे जैन वन्दना कहते है, प्रारम्भ होती है। तीन किलोमीटर की चढाई पर गधर्व नाला मिलता है। उससे एक डेढ किलोमीटर आगे दो मार्ग हो जाते है। बाई ओर के मार्ग से जाना चाहिए, क्योकि वह सीता नाला होकर गौतम स्वामी टोक को गया है। टोको (शिखरो) पर प्राय चरण चिन्ह है। मन्दिरो मे पहले गौतम स्वामी टोक की वन्दना (परिक्रमा) करके, बाई तरफ वन्दना करने जाना चाहिये। आगे चन्द्रप्रभुजी की टोक बहुत ऊँची है। उससे आगे अभिनन्दन नाथ की टोक होकर तलहटी मे जल मन्दिर आते है। जल मन्दिर मे तीर्थकरो की मूर्तिया है। जल मन्दिर से फिर गौतम स्वामी की टोक पर चढना पडता है और वहा से दाहिनी ओर का मार्ग पकड कर पश्चिम के स्थानो पर होते हुए अत मे पार्श्वनाथ की टोक पहुचते है। यह सबसे ऊँचा शिखर है। इसे स्वर्ण भद्र

टोक कहा जाता है। यहा से यात्री सीधे नीचे लौटता है। रास्ते मे बीसपथी कोठी की ओर से जलपान का प्रबध होता है।

मधुबन मे भी कुछ जैन मन्दिर है। वहा छोटा सा बाजार भी है। भोजनादि की सब सामग्री दुकानो पर मिल जाती है।

मुगलसराय, गया, आसनसोल रेलमार्ग पर गया से 152 किलोमीटर की दूरी पर पारसनाथ रेलवे स्टेशन है। यहा तेरापथी और बीसपथी दो धर्मशालाये है। यहा से सम्मेद शिखर दिखाई देता है। यहा से पारसनाथ पर्वत बाईस किलोमीटर है। बस या टैक्सी द्वारा पहाड की तलहटी से मधुबन पहुचना चाहिये। ईसरी से मधुवन 22 किलोमीटर है। ईसरी मे चार दिगम्बर जैन मन्दिर है।

मधुवन मे तेरापथी और बीसपथी कोठियो के अधीन कई धर्मशालाये है। दिगम्बर जैन मन्दिर भी अनेक है जो सुदर और दर्शनीय है। ☐

9. ज्वालामुखी मन्दिर

पश्चिमी हिमालय जिसे वैदिक काल मे त्रिगर्त प्रदेश भी कहा जाता रहा है और जिसे जालन्धर पीठ के नाम से भी याद किया जाता है, ज्वालामुखी इक्यावन शक्तिपीठो मे से एक है और इसे सबसे ऊँचा स्थान दिया गया है। दन्त कथा के अनुसार इस ज़गह भगवती सती की जिव्हा गिरी थी। भगवान शिव उन्मत भैरव रूप मे स्थित हैं। इस तीर्थ मे देवी के दर्शन ज्योति रूप मे किए जाते है।

यह स्थान कागडा जिला हिमाचल प्रदेश मे स्थित है और यही प्रसिद्ध ज्वालामुखी का मन्दिर है। ज्वालाजी का नाम निरन्तर प्रज्ज्वलित ज्योति के रूप मे होने के कारण इसका नाम ज्वालाजी के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

कहा जाता है कि इस जगह मुगल बादशाह अकबर आया था और इसने ज्योति की परीक्षा लेने के लिए इस पर लोहे की मोटी चादरे बिछायी। लेकिन ज्योति फिर भी प्रज्ज्वलित रही और फिर अकबर बादशाह ने सोने का छत्र चढाकर ज्वालाजी की पूजा की।

अकबर यहा आया या नही आया, इस बारे मे कोई ऐतिहासिक प्रमाण नही है। लेकिन इससे यह सिद्ध होता है कि यह स्थान सभी के लिए पूजनीय रहा है। पजाब के सिख महाराजा रजीत सिह यहा कई बार आए और इस मन्दिर को जागीर दी। महाराजा पटियाला ने यहा एक बहुत बडी हवेली बनवाई जिसे बाद मे ज्वालामुखी के पण्डो, जिन्हे भोजकी कहा जाता है, को दान कर दी।

शिव महापुराण मे इन शक्तिपीठो की उत्पत्ति की कथा विस्तार से कही गई है जिसमे इस पीठ का वर्णन भी आता है। किसी समय मा पार्वती के पिता दक्ष प्रजापति द्वारा अपनी राजधानी मे एक महायज्ञ का आयोजन किया गया था। किसी वैमनस्य के कारण उन्होने मा पार्वती और भगवान शिव को इस यज्ञ मे नही बुलाया जबकि सभी देवी देवता एव राजा महाराजाओ को निमन्त्रण दिया गया। मा पार्वती को जब इस बात का पता चला तो उन्होने अपने पति की आज्ञा भी न मानी और यज्ञ मे बिना बुलाए चली गई। वहा जब उन्होने देखा कि यज्ञ मे भगवान शकर और उनके लिए कोई आसन नहीं है तो वह बहुत अपमानित हुई। इस प्रकार तिरस्कृत होकर मा पार्वती ने उसी समय महायज्ञ की ज्वाला मे अपने प्राणो की आहुति दे दी।

भगवान शकर को जब यह मालूम हुआ तो वह तत्काल यज्ञ के स्थान पर पहुचे और क्रोधाग्नि मे जलते हुए सती के शरीर को अपने कन्धे पर उठाकर पृथ्वी की परिक्रमा करने लगे। उनका क्रोध इतना तीव्र था कि तीनो लोक कापने लगे। देवताओ ने जब यह भयकर एव प्रलयकारी दृश्य देखा तो उन्होने भगवान शकर के क्रोध को शात करने के लिए भगवान विष्णु की शरण ली। भगवान विष्णु ने स्थिति को देखा और अपने धनुषवाण से सती के मृत शरीर को काटना प्रारम्भ कर दिया। इस तरह पृथ्वी पर जहा–जहा सती के शरीर के अग गिरे वही अनेक रूपो मे शक्तिया प्रकट हुई और इस तरह 51 शक्तिपीठ स्थापित हो गए।

यह माना जाता है कि हिमाचल प्रदेश मे सती की जिव्हा कागडा घाटी के ज्वालामुखी नामक स्थान पर गिरी थी जहा स्वत अग्नि अर्थात् ज्वाला रूप मे मा ने जन्म लिया और ज्वालाजी कहलाई।

मन्दिर निर्माण की घटना के सबध मे यह मान्यता है कि जब माता ने ज्वाला रूप मे जन्म लिया तो एक ग्वाले को सबसे पहले एक घने जगल मे गौए चराते हुए इस ज्योति के दर्शन हुए। यह जमाना राजा भूमिचन्द्र का था।

जैसे ही उसे इस घटना का पता चला तो वह उसी समय वहा आया और उसने एक मन्दिर का निर्माण करवा दिया। उसके बाद इसकी महत्ता बढती गई और मन्दिर परिसर का विस्तार भी होता रहा।

मन्दिर मे कुल नौ ज्योतिया है जिनका महात्म्य अलग अलग माना गया है। मुख्य द्वार के समक्ष चादी की जालीनुमा वेदिका मे मुख्य ज्योति महाकाली का रूप मानी जाती है। यही श्री ज्वालाजी है। इसके नीचे महामाया अन्नपूर्णा की ज्योति है। तीसरी ज्योति चण्डीमाता और चौथी श्री हिगलाज भवानी के रूप मे विद्यमान है। पाचवी, छठी, सातवी, आठवी और नौवी ज्योति क्रमश श्री विन्ध्यवासिनी, महालक्ष्मी, श्री सरस्वती, श्री अम्बिका, श्री अजना माता की है।

नवरात्रो मे ज्वालामुखी के दर्शनार्थ सारे भारत से श्रद्धालु आते है जिनकी सख्या लाखो तक होती है। वापस लौटते समय यात्रीगण 'जय माता दी' का उद्घोष करते हुए अपने घरो को प्रस्थान करते है। ☐

10. कुरुक्षेत्र

धर्मक्षेत्रे कुरुक्षेत्रे समवेता युयुत्सवः ।
मामकाः पाण्डवाश्चैव किमकुर्वत सञ्जय ।।

कुरुक्षेत्र वह पुण्य स्थल है जहा लगभग 5000 वर्ष पूर्व विश्वविख्यात धार्मिक एव दार्शनिक ग्रन्थ श्रीमद्भगवत गीता की महाभारत युद्ध प्रारम्भ होने से पूर्व श्री कृष्ण व अर्जुन के मध्य सवाद के रूप मे रचना हुई थी। मूल ग्रथ सस्कृत भाषा मे है किंतु इसके अनुवाद विश्व की सभी भाषाओ मे अनेक बार प्रकाशित हुए है। इस परम पवित्र ग्रन्थ का मानव की उन जटिल समस्याओ के निराकरण की दिशा मे अत्यत ही महत्वपूर्ण स्थान है जो प्रतिदिन हर व्यक्ति के जीवन मे उपस्थित रहती है और जिन्हे वह कुशलतापूर्वक हल करने मे प्राय असफल रहता है। मोह ग्रस्त अर्जुन के सम्मुख जो समस्याए युद्ध से पूर्व उपस्थित थी, वैसी ही समस्याए मानव जीवन मे हर समय उपस्थित रहती है। श्री कृष्ण के उपदेश

द्वारा अतत. अर्जुन का मोह भग हुआ और वह पुन उत्साहित होकर अपने कर्तव्य का पालन करने की दिशा मे अग्रसर हुआ था। महाभारत का युद्ध जो 18 दिनो तक चला और जिसमे कौरव व पाण्डव दोनो पक्षो के 18 लाख लोग मारे गए थे, वह युद्ध कुरूक्षेत्र के मैदान मे ही लडा गया था। यहा भगवत गीता की उपयोगिता की चर्चा करना मुख्य उद्देश्य नही है वरन् मात्र यह दर्शाना है कि गीता जैसे महत्वपूर्ण ग्रन्थ की रचना कुरूक्षेत्र मे हुई थी।

कुरूक्षेत्र का इतिहास वास्तव मे सक्षिप्त रूप से भारत का इतिहास ही है। इस भू क्षेत्र मे सरस्वती नदी के तट पर ऋषियो ने सर्वप्रथम वेद मत्रो का उच्चारण किया। ब्रह्मा तथा अन्य देवताओ ने यज्ञो का आयोजन किया। महर्षि वशिष्ठ तथा विश्वामित्र ने ईश्वरीय ज्ञान प्राप्त किया। कौरवो और पाण्डवो ने कुरूक्षेत्र को युद्ध क्षेत्र चुना। इसी से सवधित महाभारत की रचना हुई

प्राचीन धार्मिक ग्रन्थो के आधार पर यह कहा जा सकता है कि महाभारतीय युद्ध से लेकर महाराजा हर्षवर्धन तक यह क्षेत्र सास्कृतिक और सामाजिक दोनो ही दृष्टिकोणो से उन्नति के शिखर पर था।

कुरूक्षेत्र अर्थात् कुरू का खेत, एक विस्तृत क्षेत्र है जो लगभग 50 मील लम्बा और उतना ही चौडा है। यह समस्त क्षेत्र ही अत्यत पवित्र माना जाता है। पुराणो ने इसकी महिमा का विस्तारपूर्वक वर्णन किया है।

कुरूक्षेत्र हरियाणा प्रदेश मे स्थित है। हिन्दू तीर्थ यात्रियो के लिए चार युगो का धर्मक्षेत्र कुरूक्षेत्र एक पवित्र तीर्थ स्थल है। पुराणो मे उल्लेख आता है कि इस क्षेत्र मे किया हुआ दान तप इत्यादि 13 दिन तक 13 गुनी वृद्धि को प्राप्त होता है।

इस क्षेत्र मे सात पवित्र वन तथा सात पवित्र नदिया मानी जाती है।

इन सात वनो का वर्णन इस प्रकार है

1 काम्यक वन, 2 अदिति वन, 3 व्यास वन, 4 फलकी वन, 5 सूर्यवन, 6 मधुवन और 7 शीत वन।

सात नदियो के नाम इस प्रकार है

1 सरस्वती, 2 वैतरणी नदी, 3 आपगा नदी, 4. मधुस्रवा नदी, 5 कौशिकी नदी, 6 हषद्वती नदी और 7 हरिण्वती नदी।

इसी प्रकार इस क्षेत्र मे चार सरोवर तथा चार कूप अति पवित्र माने जाते हैं.

पवित्र कूप— 1 चन्द्र कूप, 2 विष्णु कूप, 3 रुद्र कूप तथा 4. देवी कूप।

कुरुक्षेत्र मे 360 तीर्थो की गणना की जाती है, लेकिन बहुत कम यात्री होते है जो सभी तीर्थो के दर्शन का कष्ट सहन कर सके।

यहा के प्राचीन वनो का अब कोई विशेष अवशेष नही रहा है। वनो को काटकर अब खेतो का रूप दिया जा चुका है। उन वनो के स्थानो पर उनके नाम से वहा गाव बसे हुए है जिनसे इस बात का पता लगता है कि कभी वे पवित्र वन थे। वनो की पहचान अब इस प्रकार की जाती है·

1. **काम्यक् वन**— यहा कमोधा ग्राम है तथा काम्यक् तीर्थ भी है।
2. **अदिति वन**— यहा पर अमीर ग्राम है तथा अदिति तीर्थ भी है।
3. **व्यास वन**— यहा पर वारसा ग्राम है।
4. **फलकी वन**— यहा पर फरल ग्राम है तथा प्रसिद्ध फल्गु तीर्थ है।
5. **सूर्यवन**— यहा सजूमा ग्राम है तथा सूर्यकुण्ड तीर्थ है।
6. **मधुवन**— यहा मोहिना ग्राम है।
7. **शीत वन**— यहा पर सीवन ग्राम है।

इसी प्रकार पवित्र नदिया भी अच्छी हालत मे नही है। उनके प्रवाह बद हो चुके है। सरस्वती के अलावा अन्य नदियो का पता लगाना भी असभव है। सरस्वती नदी मे बरसात के मौसम मे कही कही पानी बहता है तथा अन्य ऋतुओ मे वह भी सूख जाता है।

ब्रह्मसर— सरोवर एक विस्तृत सरोवर है। यह लगभग 1442 गज लम्बा तथा 700 गज चौडा है। सरोवर मे दो द्वीप है। इन द्वीपो मे प्राचीन मन्दिर तथा ऐतिहासिक महत्व के स्थान है। पुराणो मे उल्लेख है कि महाभारत युद्ध से पहले ब्रह्मसर नामक सरोवर पहले महाराज कुरू ने तैयार कराया था। सन् 1948 मे राष्ट्रपिता महात्मा गाधी की अस्थिभस्म का एक भाग इस पवित्र सरोवर मे भी प्रवाहित किया गया।

ब्रह्म सरोवर के मध्य मे बडे द्वीप पर चन्द्र कूप अति प्राचीन पवित्र स्थान है। यह एक कुवा है जो कुरुक्षेत्र के चार पवित्र कुवो मे गिना जाता है।

संनिहित सर— यह ब्रह्मसर से बहुत छोटा है। इसकी लम्बाई चौडाई क्रमश 500 गज तथा 150 गज है। इसके तीन ओर घाट है। सरोवर के पश्चिमी तट के नजदीक लक्ष्मी नारायण का अति प्राचीन मन्दिर है। इसे सूर्य सरोवर भी कहते है।

थानेश्वर (स्थाण्वीश्वर) तीर्थ– यह थानेसर शहर से लगभग दो फर्लांग की दूरी पर है। यह अत्यत पवित्र सरोवर हैं। इसके तट पर ही भगवान स्थाण्वीश्वर का प्राचीन मन्दिर हं।

ज्योतिसर– कुरूक्षेत्र पेहेवा मार्ग पर नगर से आठ मील की दूरी पर ज्योतिसर हे। यही श्री कृष्ण भगवान ने अर्जुन को गीता का उपदेश दिया था। यहा अक्षय वट नाम का एक वट वृक्ष हे जो वहुत ही पवित्र माना जाता हे।

भद्रकाली मन्दिर– स्थाणु शिव मन्दिर से थोडी दूर पर भद्रकाली मन्दिर हे जिसमे दो खड हैं। नीचे के खड मे भद्रकाली की मूर्ति है तथा ऊपर के खड मे शिव पार्वती की मूर्तिया है।

थानेसर रेलवे स्टेशन के निकट वस्ती मे नाभि कमल तीर्थ नाम पुष्करिणी है। इसके निकट एक मन्दिर मे व्रह्मा और विष्णु की मूर्तिया है। व्रह्मसर से पाच किलोमीटर की दूरी पर वाण गंगा नाम पुष्करिणी है। कहा जाता हे कि यहीं शर शय्या पर पडे भीष्म पितामह के जल मागने पर पृथ्वी पर जो वाण छोडा था, उसके प्रहार से भूमि फट कर जलधारा प्रकट हुई। उसी जलस्रोत का यह सरोवर हैं।

इसके अलावा अनेक ऐसे तीर्थ स्थान हे जो ऋषियो ओर महाभारत की घटनाओ से जुडे हुए है।

पृथूदक (पेहेवा)

कुरूक्षेत्र को वडा पुण्यमय कहा गया है लेकिन पृथूदक जिसे अव पेहेवा कहते है, कुरूक्षेत्र से भी अधिक पुण्यमय है। पृथूदक अम्वाला जिले मे सरस्वती के दाहिने तट पर अवस्थित है। महाराज पृथु ने अपने पिता की अन्त्येष्टि यहीं की थी। अत· यह उन्ही के नाम पर प्रसिद्ध हो गया। हजारो यात्री प्रतिवर्ष पितृ पक्ष मे यहा श्राद्ध करने आते है। उस समय यहां वडा मेला लगता है।

यहां के प्रसिद्ध तथा प्राचीन मन्दिर एव दर्शनीय स्थान निम्नलिखित है:

1. **पृथ्वीश्वर महादेव**– यह प्राचीन शिव मन्दिर है जिसका निर्माण सर्वप्रथम महाराज पृथु ने कराया था। इसका जीर्णोद्वार महाराजा रणजीत सिह ने कराया था।

2. **सरस्वती देवी**– यह सरस्वती देवी का छोटा सा मन्दिर, सरस्वती नदी के घाट पर ही बना हुआ है। मन्दिर के द्वार पर चित्रकारी किया हुआ एक दरवाजा लगा हुआ है जो एक स्थान से खुदाई के वक्त निकला था।
3. **स्वामी कार्तिक**– पृथ्वीश्वर महादेव मन्दिर के समीप अत्यत प्राचीन मन्दिर स्वामी कार्तिक का है।
4. **चतुर्मुख महादेव**– प्राचीन तथा विशाल मन्दिर है। शिवलिग असली कसौटी का बना हुआ है। पास ही अष्टधातु की बनी हुई हनुमानजी की विशाल मूर्ति है।

सूर्यग्रहण के अवसर पर लाखो लोग कुरूक्षेत्र मे इकट्ठे होते है और ब्रह्मसर व अन्य सरोवरो मे स्नान कर पुण्य लाभ उठाने के लिए लालायित रहते है। इस अवसर पर राज्य सरकार की ओर से यात्रियो की सुख सुविधाओ के लिए महीनो पहले आवश्यक तैयारी प्रारम्भ हो जाती है जिस पर करोडो रुपया खर्च होता है। ▫

अध्याय तीन

1. श्री रामकृष्ण मिशन

पिछली शताब्दी मे ईश्वर को अवतार लेने की आवश्यकता पडी। श्रीकृष्ण गीता मे कहते है जब–जब धर्म की हानि और अधर्म की वृद्धि होती है, तब–तब (भगवान) धर्म की पुन स्थापना हेतु मानव शरीर धारण करते है। इस प्रकार वह विभिन्न युगो मे राम, कृष्ण, ईसा मसीह, बुद्ध, चैतन्य महाप्रभु और इस युग मे श्रीरामकृष्ण बनकर आए।

जब भगवान अवतार लेते है तो प्रायः अपने साथ अपनी शक्ति भी लाते है। इस प्रकार श्री रामचन्द्र के साथ सीता, श्रीकृष्ण के साथ राधिका, बुद्ध के साथ यशोधरा और चैतन्य महाप्रभु के साथ विष्णुप्रिया आई। वर्तमान युग मे भी वही महामाया श्रीरामकृष्ण के साथ श्री सारदा देवी के रूप मे आई।

श्रीरामकृष्ण का जन्म 18 फरवरी, 1836 को पश्चिमी बंगाल के हुगली जिले मे कामारपुकुर गाव मे प्रभात वेला मे हुआ था। उनके पिता का नाम श्री क्षुदीराम चट्टोपाध्याय तथा माता का नाम चन्द्रामणि था तथा उनका बचपन का नाम गदाधर था।

श्रीरामकृष्ण के जीवन को तीन भागो मे विभाजित किया जा सकता है आदि लीला, मध्य लीला तथा अतिम लीला। आदि लीला कामारपुकुर मे लगभग 16 वर्षो तक घटित हुई। दूसरा भाग मध्य लीला कलकत्ता के समीप दक्षिणेश्वर तथा अतिम भाग अर्थात अतिम लीला श्यामपुकुर और काशीपुर मे सपन्न हुई।

कामारपुकुर मे प्रारम्भिक दिनो मे उनकी आध्यात्मिक महानता के पर्याप्त प्रमाण है। एक दिन वे जब धान के खेतो के पास से गुजर रहे थे तो अचानक आकाश मे काले गर्जनभरे बादल छा गए और इस काली पृष्ठभूमि पर उन्होने आकाश मे कुछ सफेद सारस पक्षी उडते हुए देखे। इस दृश्य को देखकर वे ईश्वर की अद्भुत सुदरता के विषय मे सोचने लगे और

आनन्द मे लीन हो गए। फिर एक बार शिवरात्रि की रात मे वे पाइन के घर समाधि मे लीन हो गए। क्योकि शिव का अभिनय करने वाला पात्र जब अभिनय के लिए नही आ सका तो गदाधर से शिव का अभिनय करने का अनुरोध किया गया। मच पर आते ही वह भगवान शिव के चिन्तन मे इतने लीन हो गए कि वे वह भूमिका न कर सके तथा गहरी समाधि मे डूब गए और प्रदर्शन रुकवाना पडा। इस प्रकार उनके कामारपुकुर के दिन ऐसे गुजरे और जब वे लगभग 16 वर्ष के थे तो उनके बडे भाई उन्हे कलकत्ता ले गए।

कलकत्ता के समीप ही दक्षिणेश्वर के काली मन्दिर मे श्रीरामकृष्ण के जीवन का महत्वपूर्ण अध्याय प्रारम्भ हुआ। उस समय श्रीरामकृष्ण काली मन्दिर के पुजारी थे। उन्होने देवी की मूर्ति मृण्मयी के रूप मे नही अपितु चिन्मयी के रूप मे देखी। सत्य के सच्चे जिज्ञासु के रूप मे वे यह जानना चाहते थे कि इस पाषाण प्रतिमा के पीछे क्या वास्तविकता है? और यही विचार उनके मस्तिष्क मे घर कर गया। वे प्रतिदिन रोते थे और देवी से प्रार्थना करते थे, "हे मा! क्या यह सत्य है कि तुम्हारा अस्तित्व है, अथवा यह कवियो की केवल कपोल कल्पना मात्र ही है? यदि आप सत्य है तो हे मा! आप मेरे प्रति इतनी निष्ठुर क्यो है कि मेरे सामने प्रकट होकर मुझे दर्शन नही देती। यदि आप काले पत्थर की मूर्ति ही है तो आपकी पूजा करने से क्या लाभ?" एक बार जब मा काली को देखने की उनकी इच्छा तीव्र हो गई, तो उन्होने सोचा कि वह उन्हे देखे बिना नही रह सकते, अत उन्होने मन्दिर मे माता की तलवार से अपना जीवन समाप्त करने का निर्णय किया। उसी समय मा उनके सामने प्रकट हुई। आने वाले वर्षो मे उनकी आध्यात्मिक तपस्या बढती गई तथा भक्ति मे और वृद्धि होती गई। श्रीरामकृष्ण को तान्त्रिक पथ भैरवी ब्राह्मणी ने दिखाया। एक अन्य गुरु जटाधारी के सान्निध्य मे श्रीरामकृष्ण ने राम की आराधना के रहस्यो को जाना और राम के साक्षात् स्वरूप का अनुभव किया। उन्होने माता–पिता, मित्र और प्रियतम के माध्यम से परमात्मा से तादात्म्य स्थापित कर लिया था। तोतापुरी नामक एक सन्यासी ने उन्हे ब्रह्म के वेदात सत्य की शिक्षा दी तथा उन्हे सन्यास मे दीक्षित किया। तीन दिन के अल्प समय मे ही श्रीरामकृष्ण ने ब्रह्म के साथ अभिन्न पूर्ण ऐक्य का अनुभव किया। इस प्रकार उन्हे मानव के आध्यात्मिक प्रयास का चर्मोत्कर्ष प्राप्त हो गया। जब

कि तोतापुरी (श्रीरामकृष्ण के सन्यासी गुरु) को अपने ऐक्य की अनुभूति के लिए 40 वर्षो तक कठोर सघर्ष करना पडा था।

एक सूफी सत के मार्गदर्शन मे उन्होने इस्लामी पथ का अनुसरण किया तथा तीन दिन मे ही उन्होने पैगम्बर मोहम्मद के दर्शन कर लिए। एक दिन जब श्रीरामकृष्ण यदु मलिक के घर मे ईसा मसीह व मदर मेरी का चित्र देख रहे थे तो वे अत्यधिक भाव विभोर हो गए। दूसरे दिन पचवटी मे उन्हे यीशू मसीह के दर्शन हुए और वे श्रीरामकृष्ण के शरीर मे प्रवेश कर गए। इस प्रकार अपने व्यक्तिगत अनुभवो तथा विभिन्न धर्मो की अनुभूतियो के आधार पर उन्होने प्राचीन वेदो की उस उक्ति को प्रमाणित किया कि "एक सद विप्रा. बहुधा वदन्ति।" सत्य एक है, ज्ञानी व्यक्ति इसे विभिन्न नामो से पुकारते है।

जिस प्रकार कमल के खिलने पर भौरे उसकी सुगन्ध से आकर्षित होकर स्वय चले जाते है उसी प्रकार उनकी आध्यात्मिक तपस्या के पूर्ण होने के कारण श्रद्धालु भक्त दूर–दूर से उनके पास आने लगे। विभिन्न धर्मो की एकता के साथ–साथ वे कई अन्य बातो की भी शिक्षा देते थे। उनके प्रथम शिष्य नरेन्द्रनाथ दत्त थे जो बाद मे ससार मे स्वामी विवेकानन्द के नाम से प्रसिद्ध हुए। उनका जन्म 1863 मे कलकत्ता मे हुआ था। जब वे कॉलेज के विद्यार्थी थे तो वे पहली बार श्रीरामकृष्ण से मिले और उन्होने पूछा, "श्रीमान, क्या आपने ईश्वर को देखा है?" श्रीरामकृष्ण ने कहा, "हा, मैने ईश्वर को और भी अधिक स्पष्ट देखा है जिस प्रकार मै तुम्हे देख रहा हू। तुम भी उसे देख सकते हो।"

श्रीरामकृष्ण चाहते थे कि उनके शिष्य सभी प्राणियो मे ईश्वर के दर्शन करे और आराधना की भावना से प्राणियो की सेवा करे। इस प्रकार एक दिन जब नरेन्द्रनाथ ने श्रीरामकृष्ण से लगातार तीन चार दिनो तक समाधि मे लीन रहने की आज्ञा मागी तो श्रीरामकृष्ण ने उन्हे यह कहकर लताडा कि "तुच्छ वस्तु माग रहे हो। तुम्हे शर्म आनी चाहिए। तू बडी ओछी बुद्धि वाला है रे। इससे भी उच्चतर अवस्था है। तू ही तो गाता है –"जो कुछ है सो तू ही है। मैने तो यह समझा था कि तुम वटवृक्ष की भाति बनोगे और हजारो लोग तुम्हारी छाया मे विश्राम करेगे। परतु अब मै यह देख रहा हू कि तुम अपनी मुक्ति खोज रहे हो।" श्रीरामकृष्ण चाहते थे कि नरेन्द्रनाथ खुले नेत्रो से ब्रह्म को देखे। उन्होने कहा, "क्या तुम्हारी आखे बंद होने पर ईश्वर का

अस्तित्व है और खोलने पर उसका अस्तित्व नहीं? जो कुछ है वह सब ईश्वर ही है। ब्रह्म को खुले नेत्रो से देखो। प्रत्येक जीव ही परमात्मा है।" अत श्रीरामकृष्ण से ससार ने जीव और ब्रह्म के पारस्परिक सबध के नए सिद्धात को सीखा। स्वामी जी के लेखो, पत्रो और व्याख्यानो मे यही आह्वान पाया जाता है कि सभी जीवो को ईश्वर मानकर उनकी सेवा करना ही एकमात्र सबसे बडा धर्म है।

स्वामी विवेकानन्द चाहते थे कि जो अद्वैत वेदात उस समय तक वनो और मठो तक सीमित था उसे लोगो के दैनिक जीवन मे लाया जाये और इस कार्य को पूरा करने के लिए उन्हे श्रीरामकृष्ण के उपदेश मे एक मूल वाक्य प्राप्त हुआ, "प्रत्येक जीव शिव है और जीव सेवा ही शिव पूजा है।"

दक्षिणेश्वर के काली मन्दिर मे पुजारी रहते हुए श्रीरापकृष्ण अपनी गहन साधना के वर्षो मे अपने स्वास्थ्य का ध्यान न रख सके तथा नींद ने भी उनका साथ छोड दिया था। वे पागल व्यक्ति की तरह व्यवहार करते थे। वे ससार को एकदम भुलाकर माता की प्रतिमा के सामने लगातार घटो बैठे रहे थे। वे कभी हसते, कभी रोते और कभी मूर्ति के अदर मा को देखकर बातचीत करते थे। भोग लगाते समय वे मा को सबोधित करते हुए कहते थे कि, "मा, क्या तू चाहती है कि पहले मै भोजन करू" ऐसा कहकर वे इसे चखते और उसके बाद उसे मा को अर्पित करते। कई बार वे फूलो को अपने सिर, छाती, अगो यहा तक कि वे अपने पैरो से स्पर्श कराकर मा काली को अर्पित करते थे। उनके इसी असामान्य व्यवहार के कारण लोग उन्हे पागल समझते थे और यह समाचार गाव मे उनकी वृद्धा माता के पास भी पहुच गया। वे इससे अत्यत विचलित हुई और उन्हे अपने पास ले आई। यद्यपि उनके स्वास्थ्य मे कुछ सुधार हुआ परतु उनका मन तो सदैव एक पृथक साम्राज्य मे रहता था। वे पहले की तरह सभी सासारिक विषयो से विरक्त रहते थे। इसलिए उनकी माता तथा भाई ने उनका विवाह करने का निश्चय किया ताकि वे गृहस्थ जीवन मे रुचि ले। दुर्भाग्यवश एक पागल व्यक्ति के साथ कोई भी अपनी पुत्री का विवाह करने के लिए तैयार नही हुआ था।

जब मा और भाई के उपयुक्त वधू खोजने के सभी प्रयास विफल हो गए और इसलिए उन्हे दु खी देखा तो श्रीरामकृष्ण ने स्वय उनकी चिता दूर करते हुए दिव्य भाव से कहा, "आप क्यो इधर–उधर ढूढ रहे है? जयरामबाटी जाओ, वहा आप रामचन्द्र मुखोपाध्याय के घर मे वधू पाएगे जो ईश्वर की

इच्छा से मेरे लिए नियत है।" श्रीरामकृष्ण के शब्द अक्षरश सत्य सिद्ध हुए। रामचन्द्र की एक पुत्री थी जिसका नाम सारदा मणि था। सारदा देवी केवल पाच वर्ष की थी और श्रीरामकृष्ण तेईस वर्ष के थे। उनका विवाह जयरामबाटी मे सपन्न हुआ।

विवाह के पश्चात वे दक्षिणेश्वर लौट आये और अपनी बाल वधू को भुलाकर आध्यात्मिक तपस्या मे लीन हो गए। जैसे–जैसे दिन गुजरते गए, सारदा बडी हो गई। श्रीरामकृष्ण की हालत के बारे मे गाव मे अनेक अफवाहे फैलने लगीं। सारदा की सहेलियो ने उससे कहा, "सारू, पूरी तरह से यह जानते हुए भी कि वह (श्रीरामकृष्ण) पागल है, तुम्हारे पिता ने तुम्हारे लिए कैसा वर चुना है"? कोई भी पतिव्रता स्त्री अपने पति के विषय मे ऐसी बाते सुनकर प्रसन्न नही होगी। इसलिए सारदा ने स्वय इस बात की सच्चाई का पता लगाने के लिए दक्षिणेश्वर गई।

इतने वर्षो बाद उन्होने जब श्रीरामकृष्ण के कक्ष मे प्रवेश किया तो उनके स्नेही पति द्वारा स्वागत के भव्य एव कोमल शब्दो ने तुरत उसके संदेह को उसी समय दूर कर दिया जो अपने पति की मानसिक स्थिति के बारे मे सारदा देवी के मन मे घर कर गया था। उन्होने सोचा, "अरे, मेरे पति पागल नही है।" वे अपने पति के साथ उसी कमरे मे रही और आठ महीने तक एक ही शय्या पर सहवास किया। इसी समय एक रात श्रीरामकृष्ण ने उनसे कहा, "मेरे लिए तो मा ने यह बतलाया है कि वह प्रत्येक स्त्री मे निवास करती है और इसलिए मै प्रत्येक स्त्री को माता के समान समझता हू। तुम्हारे लिए भी मेरे मन मे यही विचार है। यदि तुम मुझे सासारिक विषयो मे घसीटना चाहती हो तो यह तुम्हारा अधिकार है क्योकि मेरा तुमसे विवाह हुआ है। अब मुझे बताओ तुम क्या चाहती हो?"

सारदा एक पवित्र एव महान आत्मा थी। वह अपने पति की इच्छाओ को समझ गई और उनकी भावनाओ का सम्मान किया। उन्होने निश्चिन्त होकर कहा, "नही, मै आपको क्यो ससार मे घसीटूगी? मै तो आपके चुने हुए पथ पर आपकी सहायता करने आई हू।"

एक दिन जब सारदा उनके पाव दबा रही थी तो उन्होने श्रीरामकृष्ण से पूछा "आप मुझे क्या समझते है"? श्रीरामकृष्ण ने उत्तर दिया, "मा, जिसकी पूजा मन्दिर मे होती है और वह मा जिसने इसे (शरीर की ओर इशारा करते हुए) जन्म दिया और वही मा जो अब मेरे पाव सहला रही है। मै सदैव तुम्हे आनदमयी मा का साक्षात रूप मानता हू।"

श्रीरामकृष्ण ने अपनी पत्नी की निर्मल पवित्रता का उल्लेख करते हुए एक बार अपने शिष्यो से कहा था, "यदि वह पूर्णतया पवित्र न रही होती, यदि उसने आत्मसयम खो दिया होता तो कौन कह सकता है कि मै भी आत्मसयम न खो चुका होता और अपने मन को शारीरिक स्तर तक न ले आया होता।" इस दृष्टिकोण से हम यह कह सकते है कि श्रीरामकृष्ण मानव जाति के लिए श्री सारदा देवी की महानतम देन है।

एक शुभ दिन उन्होने जगन्माता के स्थान पर सारदा देवी की पूजा की तथा जगज्जननी जानकर उनके चरणो मे अपनी जप माला के साथ अपनी जीवनपर्यन्त तपस्या के फल समर्पित कर दिए। इस प्रकार उस समय उसी दिन से उन्हे पावन श्री सारदा देवी कहा जाने लगा, जो न केवल श्रीरामकृष्ण के भक्तो के लिए मा थी अपितु सारी मानव जाति की मा थी। श्री मा सारदा देवी ने एक बार कहा था, "श्रीरामकृष्ण जगदम्बा को सबके भीतर देखते थे। वे इस बार मुझे मानवता को ईश्वर के मातृत्व भाव की शिक्षा देने के लिए छोड गए है।"

श्री सारदा देवी के बारे मे श्रीरामकृष्ण ऐसा कहा करते थे, "वह सारदा है, सरस्वती है। ज्ञान प्रदान करने आई है। वह आनन्दमयी है। वह क्या ऐसी वैसी है? वह मेरी शक्ति है।" वास्तव मे बहुत कम लोग जानते है कि श्रीरामकृष्ण की इस देवी पत्नी का महान रामकृष्ण सघ की चमत्कारिक प्रगति तथा प्रसार मे कितना बडा हाथ है।

कलकत्ता के कासीपुर के उद्यान गृह मे अपनी देह छोडने से पहले श्रीरामकृष्ण ने एक दिन नरेन्द्रनाथ को अपने कमरे मे बुलाया और अपनी सारी शक्तिया उन्हे प्रदान कर दी और कहा, "नरेन, आज मैने अपना सर्वस्व तुम्हे दे दिया है और मै फकीर हो गया हू। इन शक्तियो से तुम ससार का बहुत कल्याण करोगे।" इसी उद्यान गृह मे अगस्त, 1886 मे अपना नश्वर शरीर त्यागने से कुछ दिन पूर्व एक असाधारण घटना घटी। उस दिन नरेन्द्रनाथ अपने गुरुदेव श्रीरामकृष्ण के समीप बैठे थे और सोच रहे थे कि इस भयकर दर्द से पीडित श्रीरामकृष्ण यदि किसी प्रकार बोल पडे और यह घोषणा कर दे कि वे ईश्वर है तो वह निश्चय ही उन पर विश्वास कर लेगे। जब वे ऐसा सोच ही रहे थे तब श्रीरामकृष्ण ने उन्हे स्पष्ट कहा, "अभी तक अविश्वास? वह जो राम थे और वह जो कृष्ण थे अब वही इस देह मे रामकृष्ण है।"

स्वामी विवेकानन्द ने अपने महान गुरुदेव के विषय मे क्या कहा था।

"श्रीरामकृष्ण का सदेश आधुनिक ससार को यही है– मतवादो, धर्म सिद्धातो, पन्थो तथा गिरिजाघरो एव मन्दिरो की परवाह मत करो। प्रत्येक मानव मे अस्तित्व के सार अर्थात् 'आध्यात्मिकता' की तुलना मे ये सब तुच्छ है। मनुष्य के अदर यह भाव जितना ही अधिक व्यक्त होता है, वह उतना ही जनकल्याण के लिए सामर्थ्यवान हो जाता है। प्रथम इसी आध्यात्मिकता की उपार्जना करो, किसी मे दोष मत ढूढो, क्योकि सभी मतो और पन्थो मे कुछ न कुछ अच्छाई होती है। अपने जीवन द्वारा यह दिखा दो कि धर्म का अर्थ मात्र शब्द, नाम अथवा मत नही है अपितु इसका अर्थ आध्यात्मिक अनुभूति है।"

जिस देश मे जितने अधिक ऐसे मनुष्य जन्म लेगे, उतना ही वह राष्ट्र उन्नत होगा, और जिस देश मे ऐसे व्यक्ति विल्कुल नही है, वह नष्ट हो जायेगा, किसी प्रकार नही बच सकता। अत. मेरे गुरुदेव का मानव जाति के लिए यह सदेश है। "आध्यात्मिक वनो और स्वय सत्य की उपलब्धि करो।". सभी धर्मो की मौलिक एकता घोषित करना एव स्पष्ट करना ही मेरे गुरुदेव का उद्देश्य था। अन्य धर्मसस्थापको ने विशेष धर्मो का उपदेश दिया था और वे धर्म उनके नाम से प्रचलित है, परतु उन्नीसवी शताब्दी के इस महापुरुष ने स्वय के लिए कुछ भी दावा नही किया। उन्होने किसी धर्म को धक्का नही पहुचाया, क्योकि उन्होने प्रत्यक्ष अनुभव कर लिया था कि वास्तव मे सब धर्म एक ही शाश्वत धर्म के विभिन्न रूप है।"

रामकृष्ण भावधारा

अगस्त, 1886 को श्रीरामकृष्ण की देह त्याग के बाद, वराहनगर मे कलकत्ता से लगभग तीन किलोमीटर दूर, स्वामी विवेकानन्द के नेतृत्व मे श्रीरामकृष्ण के संन्यासी शिष्यो ने उनके नाम पर एक मठ की स्थापना की। 1899 ई मे इस मठ का बेलूर मे स्थायी रूप से स्थानान्तरण कर दिया गया।

रामकृष्ण मिशन की स्थापना 1897 ई मे स्वामी विवेकानन्द द्वारा अपने गृहस्थ व सन्यासी भक्तगणो की सहायता से की गई थी। इसके उद्देश्य निम्नलिखित थे.

1. जगत के सभी धर्ममतो को एक अखण्ड सनातन धर्म का रूपान्तर मात्र समझते हुए सभी धर्मावलबियो के बीच आत्मीयता की स्थापना करना।
2. उन्नतचरित्र कर्मी तैयार करना जो विज्ञान एव अन्यान्य विषयो मे पारगत

होकर जनसाधारण की भौतिक तथा आध्यात्मिक उन्नति के लिए आत्मोत्सर्ग करेगे।

3 कला, शिल्प व श्रमजीविका को प्रोत्साहित करना। □

2. श्री केदारनाथ

उत्तराखण्ड

केदारनाथ द्वादश ज्योतिर्लिगो मे प्रमुख ज्योतिर्लिग माना गया है। केदारनाथ पर्वत की तलहटी मे केदारनाथ मंदिर स्थित है। कहा जाता है कि इसका निर्माण पाण्डवो ने कराया था। इस मन्दिर की निर्माणशैली मौलिक और स्वतत्र है। मन्दिर का चवूतरा काफी ऊँचा है। मन्दिर मे एक गंभीर और अलौकिक शाति का वातावरण है। प्राकृतिक सौन्दर्य का जो दृश्य यहा है, वेसा अन्यत्र मिलना कठिन है। चारो ओर केवल बर्फ ही बर्फ दिखती है। यह मन्दिर 11 हजार फुट से अधिक की ऊँचाई पर स्थित है।

सत्ययुग मे उपमन्युजी ने यहीं भगवान शकर की आराधना की थी। द्वापर मे पाण्डवो ने यहा तपस्या की। यह केदार क्षेत्र अनादि है। केदारनाथ मे भगवान शकर का नित्य सानिध्य बताया गया है। महर्षि रूप धारी भगवान शकर के विभिन्न अग पाच स्थानो मे प्रतिष्ठित हुए, इससे ये स्थान पच केदार माने जाते है। केदारनाथ मे पृष्ठ भाग, मद महेश्वर मे नाभि, तुगनाथ मे बाहु, रुद्रनाथ मे मुख एव कल्पेश्वर मे जटा। परतु शिव पुराण मे ऐसा कोई उल्लेख नहीं है। केवल केदारनाथ का उल्लेख है। केदारनाथ के दर्शनार्थियो को पशुपतिनाथ का दर्शन करना आवश्यक है, अन्यथा, केदारनाथ की यात्रा अधूरी मानी जाती है।

इस तीर्थ की बस्ती मन्दाकिनी नदी के बाये तट पर बसी है। इस बस्ती के तीन ओर पर्वत है। उत्तर की ओर, हिमाच्छादित सुमेरू पर्वत है जहा मन्दाकिनी नदी का उद्गम है।

केदारनाथ का अति प्राचीन मन्दिर एक विस्तृत चबूतरे पर स्थित है। धरातल से पन्द्रह सीढिया चढनी पडती है। केदारनाथ मे कोई निर्मित मूर्ति नहीं है। वहुत वडी त्रिकोण शिला है। यही महर्षि रूपधारी भगवान शकर का

पृष्ठ भाग है। यात्री स्वय जाकर पूजा करते है।

दूधगगा, स्वर्गद्वारी, मधुगगा और सरस्वती, स्वर्ग की ये चार नदिया यहां मन्दाकिनी से आकर मिलती है। मन्दिर के पीछे से उतरती हुई, स्वच्छन्द गति से शखनिनाद करती हुई, ये नदिया मन्दिर के परिसर को अपने पवित्र जल से धोती हुई आगे बढती है। शीतकाल मे समस्त केदारनाथ वर्फ से ढका रहता है। इसलिए मन्दिर भी शीतकाल मे बद रहता है। अतः ठड के दिनो मे पूजा उखीमठ से सपन्न होती है।

मन्दिर का द्वार दक्षिणाभिमुख है। जिसके सम्मुख वृषभ की मूर्ति है। सभा मडप की भित्तियो पर कई देव मूर्तियां अकित है।

यहा पाचो पाण्डवो की मूर्तिया है। भीमगुफा और भीमशिला है। कहते है कि इस मन्दिर का जीर्णोद्धार आदि शकराचार्य ने कराया था और यही उन्होने देह त्याग भी किया था। मन्दिर के पीछे की ओर आदि शंकराचार्य की समाधि है।

मन्दिर के पास कई कुण्ड है। मन्दिर के वाहर परिक्रमा के पास अमृतकुण्ड, ईशानकुण्ड, हसकुण्ड, रेतसकुण्ड आदि तीर्थ है।

केदारनाथ मन्दिर मे ऊषा, अनिरुद्ध, पच पाण्डव, श्रीकृष्ण तथा शिव पार्वती की मूर्तिया है। मन्दिर के ईशान कोण पर ईशानेश्वर शिव मन्दिर और पूर्व की ओर गणेश मन्दिर है।

इस तीर्थ के माहात्म्य के सबध मे शिव पुराण मे लिखा है जो मनुष्य भक्ति पूर्वक केदारेश्वर और बद्री नारायण की दर्शन पूजा करता है, उसके समस्त दु.ख दूर हो जाते है और उसे इच्छित फल की प्राप्ति होती है।

पुराणो मे यह भी लिखा है जो मनुष्य बदरिकाश्रम की यात्रा के पूर्व केदारेश्वर के दर्शन नही करेगा, उसे बदरी नारायण के दर्शन एव तीर्थ स्नान का कोई पुण्य फल प्राप्त नहीं होगा और उसकी यात्रा निष्फल होगी। इसी कारण पहले केदारेश्वर की यात्रा और उसके पश्चात बदरिकाश्रम की यात्रा की जाती है।

ऋषिकेश से देव प्रयाग, श्रीनगर, रुद्र प्रयाग होते हुए बसों व कार द्वारा केदारनाथ पहुचा जा सकता है। ऋषिकेश से केदारनाथ की दूरी दो सौ चौबीस किलोमीटर है। ☐

3. हरिद्वार

तीर्थ यात्रा का हिन्दू सस्कृति तथा हिन्दू धर्म मे प्रधान स्थान है। विश्व मे भारत ही एकमात्र ऐसा विलक्षण देश है जहा पूर्णतया सात्विक प्रवृत्ति का विकास हुआ है। जिसमे तीर्थो का शास्त्रीय, मनोवैज्ञानिक, दार्शनिक, आध्यात्मिक, नैतिक और सामाजिक दृष्टि से विशेष महत्व है।

हिमालय के चौमुख, गगोत्री धाम से निकलकर करीब 300 किलोमीटर का टेडे मेडे पर्वतीय रास्तो वाला सफर पूरा करके भगीरथी गगा जहा पहली बार समतल भूमि का स्पर्श करती है, वही स्थान हरिद्वार के नाम से विख्यात है। इस पवित्र नगर के उत्तर से दक्षिण की ओर बहती गगा नदी के पश्चिमी किनारे पर रोडीबेलवाला द्वीप और उसके दाहिने 134 वर्ष पुरानी उत्तरी गगानहर बह रही है। प्राचीन काल से हरिद्वार तपस्वियो, साधुओ व गगा स्नान का पुण्य चाहने वाले तीर्थ यात्रियो एव पर्यटको के लिए बडे आकर्षण का केद्र रहा है। कहा जाता है कि रामायण काल मे रावण को मारने के बाद श्रीराम व लक्ष्मण अपने भाईयो के साथ ब्रह्म हत्या के पाप का प्रायश्चित करने हरिद्वार आये थे। यहा उन्होने गगास्नान कर फिर आगे देवप्रयाग मे जाकर तपस्या की थी। भरत ने ऋषिकेश मे तथा लक्ष्मण ने ऋषिकेश से कुछ आगे जाकर तप किया था। महाभारत काल की भी कई कथाये हरिद्वार के साथ जुडी हुई है। भीष्म पितामह के पितामह प्रतीप एक बार हरिद्वार आये और गगा किनारे बैठकर ध्यानमग्न हो गये।

तीर्थयात्रियो, पर्यटको और साधु सन्यासियो के लिए हरिद्वार मे हर की पौडी ब्रह्मकुण्ड सर्वाधिक पवित्र व आकर्षण का केद्र है। महाराजा श्वेत ने ब्रह्मा की तपस्या की थी और ये वरदान प्राप्त किया था कि स्वय ब्रह्मा यहा शिव व विष्णु सहित सभी देवी देवताओ के साथ निवास करेगे। तभी से यह स्थान ब्रह्मकुण्ड कहलाने लगा। हर की पौडी पर स्नान, ध्यान, पूजा और सायकालीन आरती से हरिद्वार आने वाले तीर्थयात्री के लम्बे समय से सजोये हुए स्वप्न की पूर्ति होती है। अमृत कुम्भ से इसी स्थान पर अमृत की बूदे छलकने की मान्यता ने इस महत्ता को द्विगुणित कर दिया है।

हर की पौडी की व्यवस्था की जिम्मेदारी हरिद्वार के तीर्थ पुरोहितो की

एकमात्र सस्था श्री गगा सभा पर है। श्री गगा सभा हरिद्वार के पुरोहितो का मच और उनकी एक अधिकृत सस्था है जो 1916 मे ब्रिटिश सरकार के निर्णय के विरोध मे बनी थी। हर की पौडी पर अनादिकाल से गगा की मुख्यधारा एक उपधारा के रूप मे प्रवाहित हो रही है। 1854 मे मुख्य धारा पर वाध बनाकर गगा नहर निकाली गई। नहर निकालने के बाद भी हर की पौडी पर मुख्य धारा की एक उपधारा प्रभावित हो रही थी। परतु 1914 मे प्रदेश की ब्रिटिश सरकार ने इस उपधारा पर भी वाध बनाकर हर की पौडी मे कृत्रिम धारा भेजने का निर्णय लिया तो स्थानीय तीर्थ पुरोहितो, साधु–सन्तो व महन्तो ने इसका उग्र विरोध किया।

इस सरकारी योजना के विरोध मे महामना प. मदन मोहन मालवीय जी के नेतृत्व मे एक सफल आदोलन दो वर्ष तक चला और अततः तत्कालीन गवर्नर जेम्स मेस्टन को एक सर्वदलीय सभा मे सरकारी निर्णय वापस लेने की घोषणा करनी पडी। उक्त आदोलन की सफलतापूर्वक समाप्ति के वाद मालवीय जी ने देश के प्रमुख राजाओ, धर्माचार्यो, नेताओ और ब्रिटिश अधिकारियो से विचार–विमर्श कर श्री गगाजी की पवित्रता, तीर्थ की मर्यादा और हर की पौडी की व्यवस्था व जन सुविधाये प्रदान करने के लिए शासन व जनता के बीच तालमेल बिठाने के लिए हरिद्वार के तीर्थ पुरोहितो को लेकर एक सस्था गगा सभा की स्थापना की।

हर की पौडी पर सफाई, तीर्थोचित मर्यादा का पालन और विशिष्ट पर्व पर व मेलो पर शासन को उचित परामर्श देकर व्यवस्था करना इस सगठन का प्रमुख उद्देश्य है। देशभर मे गगाजी की आरती का सर्वाधिक सुदर दृश्य हर की पौडी मे ही दिखाई पडता है। इस नयाभिराम दृश्य के पीछे भी गगा सभा की ही प्रेरणा है। गगा सभा के प्रमुख उल्लेखनीय कार्यो मे 1928 मे गन्दा नाला योजना का विरोध, 1935 का सत्याग्रह, हरिद्वार को मद्य मास निषेध क्षेत्र घोषित करवाना, हर की पौडी पर अलग से अस्थि प्रवाह घाट का निर्माण करवाना, हर की पौडी पर जूते, चप्पल और चमडे का सामान ले जाने की मनाई करना, गगाजल मे नाव चलाने पर प्रतिबध लगवाना, सिनेमा आदि के अश्लील इश्तहार हर की पौडी पर न लगने देना, महामना मालवीय जी का स्मारक बनवाना, गगाजी मे मछली पकडने पर रोक लगवाना, 1977 मे अखिल भारतीय तीर्थ पुरोहित महासभा की स्थापना, 1978 मे गगा सभा अतिथि भवन की स्थापना, हर की पौडी महिलाघाट के

समीप गगा मन्दिर का निर्माण, प्रकाश के लिए हर की पौडी पर जनरेटर लगाकर ट्यूब लाईटो की व्यवस्था कराना, हर की पौडी पर 1986 मे नये घाटो की व्यवस्था कराना, अपर रोड हरिद्वार का नाम मालवीय मार्ग घोषित कराना, देश के दूरस्थ क्षेत्रो तथा विदेशो के हिन्दू धार्मिक प्रेमियो द्वारा प्रेषित अस्थियो को विधिवत गगाजी मे प्रवाहित करवाना, यात्रियो की माग पर गगाजल भिजवाना, तीर्थ के धार्मिक विकास कार्यो मे सरकार को परामर्श देना एव कार्य कराना, जन सुविधा के लिए अतिम यात्रा वाहन की नि:शुल्क व्यवस्था कराना आदि शामिल है।

कुम्भ-अर्द्धकुम्भ महापर्व – विराट जनपर्व

कुम्भ लाखो श्रद्धालुओ की उपस्थिति मे हजारो वर्षो से मनाया जाने वाला ऐसा पर्व है जो हरिद्वार, प्रयाग, नासिक और उज्जैन, इन चारो स्थानो पर बारी–बारी से आयोजित किया जाता है। हरिद्वार और प्रयाग दो स्थल उत्तर प्रदेश मे है और यहा कुम्भ के साथ–साथ कुम्भ के छठे वर्ष पर अर्द्धकुम्भ के मेले भी आयोजित होते है। इस शताब्दी का अतिम कुम्भ 1998 मे हरिद्वार मे हुआ। कुम्भ पर्व की शुरूआत सम्राट हर्षवर्धन (612–647 ई) से मानते है। चूकि कुम्भ के अवसरो पर लाखो की सख्या मे यात्री आते है, इसलिए कुम्भ के अवसर पर भारी व्यवस्थाये की जाती है। उ प्र सरकार ने इस वर्ष अतिम महापर्व पर लगभग एक करोड यात्री आने का अनुमान लगाया था तथा उसके अनुकूल ही यात्रियो की सुविधा के लिए प्रबध किये गए थे।

माना जाता है कि ईश्वर की प्राप्ति के लिए हिमालय पर्वत की ऊँचाईयो पर साधना हेतु जाने का मार्ग यही से प्रारम्भ होता है। इसीलिए इसे हरिद्वार कहा जाता है। हिमालय की ऊँचाईयो से गगा प्रवाहित होती हुई हरिद्वार से ही समतल बहना शुरू करती है तथा हरिद्वार से गगा छोटी बडी अनेक नदियों मे मिलकर हजारो मील की यात्रा कर गगासागर तक पहुचती है। भारत के विभिन्न भागो से लाखो करोडो यात्री प्रतिवर्ष गगा के पवित्र जल मे स्नान करने यहा आते है। पौराणिक कथाओ के अनुसार जब समुद्र मथन हुआ था उस समय मथन से निकला अमृत कलश प्राप्त करने के लिए देवताओ एव दैत्यो मे भयकर युद्ध हुआ। इस सघर्ष मे देवताओ की विजय हुई। परिणामस्वरूप उस अमृत कलश को लेकर देवताओ के आकाशमार्ग से

जाते समय इस स्थल पर कलश से कुछ अमृत की बूदे हरकी पौडी पर गिर गयी थी, इसलिए हरिद्वार अनेक हिन्दू ग्रथो मे पवित्र स्थान माना गया है। हरिद्वार मे प्रति बारह वर्ष के उपरात यहा कुम्भ एव हर छठे वर्ष अर्धकुम्भ का विशाल मेला आदिकाल से ही आयोजित किया जाता है। इन कुम्भ एव अर्धकुम्भ के अवसरो पर हर की पौडी पर स्नान करने के लिए विश्व भर के हिन्दू यहा आकर गगाजी मे डुबकी लगाकर अपने को अत्यत ही भाग्यशाली मानते है। इन अवसरो पर सारे देश से लाखो सन्त सन्यासी भी यहा आकर निश्चित मुहूर्त मे स्नान करना अपना परम कर्तव्य मानते है। अपने जीवन मे कम से कम एक बार हिन्दूजन इस जगह आने का अवश्य प्रयास करते है।

हरिद्वार मे सैकडो की सख्या मे देवी देवताओ के विशाल मन्दिर एवं ऋषि मुनियो के भव्य आश्रम स्थापित है। जिनमे हजारो की सख्या मे साधु संत एवं विरक्त निवास करते है। इन आश्रमो में विरक्त साधु सतो एवं दीन दुखियो के लिए अन्य क्षेत्रो मे भोजन की व्यवस्था, धर्मार्थ औषधालय तथा गुरुकुलो की नि शुल्क व्यवस्था है। हरिद्वार मे ही एक छोटी सी पहाडी पर प्राचीन कालीन मंशा देवी का मन्दिर तथा चण्डी देवी का मन्दिर है जिनके दर्शनो का लाभ यात्री अवश्य उठाते है।

गगा हिमालय से नीचे उतरकर ऋषिकेश होती हुयी जब हरिद्वार के समीप पहुच रही थी तब वह एक धारा के रूप मे थी, लेकिन ज्योहि वह हरिद्वार के समीप पहुची तो देखा कि भिन्न–भिन्न स्थानो पर सात ऋषि तपस्या कर रहे थे। गगा तपस्वियो का सम्मान करते हुए उनकी तपस्या मे बाधा न डालते उनके पास से विभिन्न सात धाराओ मे विभाजित होकर हरिद्वार तक पहुची। इस स्थान को अब सप्त सरोवर कहा जाता है तथा यहीं पर सप्तऋषि मन्दिर का भी निर्माण किया गया है।

हर की पौडी पर स्वजनो की अस्थि विसर्जन व पितरो का श्राद्ध भी सपन्न किया जाता है। यहा मा गगा की सायकालीन आरती का मनोहारी दृश्य अत्यत सुखदायक होता है। इसे देखने के लिए हजारो लोग सायकाल के समय हर की पौडी के दोनो ओर एकत्रित हो जाते है। यहा फूलो से बनी छोटी–छोटी नौकाए, जिनमे दीप भी जले रहते है, प्रवाहित की जाती है। यह दृश्य गगा मा के प्रति भक्तिभाव उत्पन्न करता है।

भारत माता मन्दिर

हरिद्वार मे सप्त ऋषि आश्रम के निकट समन्वय सेवा ट्रस्ट द्वारा भारत माता मन्दिर का निर्माण किया गया है। समस्त हरिद्वार मे यह सबसे ऊँचा आठ खण्डो पर आधारित मन्दिर है जिसमे यात्रियो की सुविधा के लिए लिफ्ट लगाई गई है। प्रथम खण्ड मे ही भारत माता की अत्यत भव्य मूर्ति का निर्माण किया गया है जिसके चरणो मे सगमरमर से निर्मित भारत का मानचित्र दर्शाया गया है जो बहुत ही आकर्षक है। मानचित्र के जरिए एक दृष्टि मे ही समस्त भारत के दर्शन हो जाते है और इस देश की विशालता का अनुमान सहज ही लग जाता है। अन्य खण्डो मे भी विभिन्न धर्मो व सम्प्रदायो से सम्बन्धित उनके महापुरुषो व देवी देवताओ की मूर्तिया स्थापित की गई है।

इस मन्दिर की एक विशेष बात यह भी है कि भारत की स्वतत्रता के लिए जो व्यक्ति शहीद हुए है, उनकी मूर्तिया भी एक खण्ड मे स्थापित की गई है जो यात्रियो के लिए प्रेरणादायक है। यह मन्दिर समस्त भारत मे अपने प्रकार का एक अनूठा मन्दिर है। ❑

4. गुरुद्वारा पटना साहिब

सिखो के पाच पवित्र तख्तो मे श्री हरमन्दिर जी साहिब का बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान है। अमृतसर के स्वर्ण मन्दिर के बाद पटना साहिब को ही अधिक महत्त्व दिया जाता है। ज्ञातव्य है कि गुरु गोविन्द सिह का जन्म सन् 1666 ई मे इसी पटना शहर मे हुआ था। आज उनकी इसी जन्मभूमि पर विशाल हरमन्दिर खडा है। गुरुजी का जन्म स्थान होने के कारण सारी दुनिया के सिखो तथा गुरु के प्रति श्रद्धा रखने वालो की भावनाये इसके साथ जुडी हुई है।

गुरु गोविन्द सिह के बचपन का नाम गोविन्द राम था। वे लगभग 9 वर्ष तक यहा रहे। इस नौ वर्ष की अवस्था तक पटना शहर की गलियो मे तथा गगा नदी के किनारे अपने दोस्तो मित्रो के साथ खेलते रहे। उनके पटना से

जाने के बाद ऐसे कई स्थल तीर्थस्थल बन गये जहा उनकी स्मृति आज भी कायम है।

जिस स्थान पर तख्त श्री हरमन्दिर साहिब आजकल स्थित हे, वहा पर सालस राय जौहरी की हवेली थी जो पहले गुरु नानक का अनुयायी था। उस पर गुरु नानक के उपदेशो का इतना प्रभाव पडा कि उसने अपनी महलनुमा हवेली को धर्मशाला का रूप दे दिया। नौवे गुरु तेग बहादुर साहिब जब पटना पधारे तो इसी स्थान पर ठहरे थे।

मुल्ला अहमद बुखारी ने अपनी पुस्तक 'मीरात उल अहवाल जहानामा' मे तख्त हरमन्दिर साहिब का वर्णन निम्न शब्दो मे किया है। वे 18वी सदी के अत मे पटना मे रहते थे।

"गुरु गोविन्द सिह के जन्म स्थान पर सिखो ने एक शानदार भवन बनाया है और इसे शक्ति का केन्द्र मानकर इसे हरमन्दिर नाम दिया है। इसे सगत भी कहते है और इसका बडा आदर और सत्कार किया जाता है। उन्होने इस स्थान को तीर्थ स्थान का रूप दे दिया है।"

महाराजा रणजीत सिह ने 1839 मे हरमन्दिर साहिब को दोबारा बनवाया क्योकि पहली इमारत अग्नि की भेट हो गई थी। परतु महाराजा नई इमारत बनने से पहले ही स्वर्ग सिधार गये।

सन् 1934 मे बिहार राज्य मे भूचाल आने से हरमन्दिर साहिब का कुछ हिस्सा गिर गया था। मौजूदा हरमन्दिर का निर्माण कार्य 19 नवबर, 1954 मे शुरू हुआ और तीन वर्ष मे इसकी इमारत बनकर तैयार हुई।

दशम गुरु की कुछ निशानिया इस ऐतिहासिक स्थान मे सभाल कर रखी हुई है जिसमे एक पालना है जिसके चारो पाये सोने से मडे हुए है। गुरुजी बचपन मे इस पालने मे सोते थे। इसके अलावा चार तीर है और गुरुजी की पवित्र तलवार और खडाऊँ का जोडा भी है। नौवे गुरु और दसवे गुरु के हुक्मनामे एक पुस्तक मे इस पवित्र स्थान पर रखे हुए है।

गुरु गोविन्द सिह के पिता गुरु तेग बहादुर पजाब से असम की यात्रा के समय पटना आये और यहा कुछ समय के लिए रुके। उनकी पत्नी माता गुजरीबाई गर्भवती थी। इसलिए भी यहा पडाव डालना आवश्यक हो गया था। उन्होने माता गुजरीबाई को यही छोडकर असम के लिए प्रस्थान किया था।

पटना शहर के प्रमुख सिख तीर्थो मे तख्त श्री हरमन्दिर साहिब, मैनी सगत (बाल लीला), गुरु का बाग, गोविन्द घाट, गुरुद्वारा गायघाट, हाडी साहब (दानापुर) विशेष उल्लेखनीय है। इनमे तख्त श्री हरमन्दिर, मैनी सगत तथा गोविन्द घाट ही गुरु गोविन्द सिह के बाल जीवन से सबधित है।

तख्त श्री हरमन्दिर के निकट ही दक्षिण पूर्व मे गुरुद्वारा मैनी सगत है। यह बाल लीला गुरुद्वारा के नाम से अधिक विख्यात है। राजा फतहचन्द जी मैनी नाम के एक बडे जमीदार थे। यह उनका निवास स्थान था। उनके कोई सतान नही थी। पासपडोस के बच्चे उनके प्रागण मे खेलने आया करते थे। गोविन्द राम भी उन बच्चो के साथ हो लिया करते थे। वे गोविन्द राम को देख कर बहुत ही प्रसन्न होते थे। एक दिन खेलते–खेलते बालक गोविन्द राम, बरामदे मे बैठी महारानी की गोद मे बैठ गये और कहा, "मा मै भूखा हू, मुझे कुछ खाने को दो।" घर मे उस समय चने की घुगनी के अलावा और कोई चीज नही थी। रानी ने वही घुगनी उनके सामने हाजिर कर दी जिसे गोविन्द ने बडे प्रेम से खाया।

नौ वर्ष की अवस्था समाप्त होने पर जब अपने पिता गुरु तेग बहादुर के आदेश से गोविन्द राम पजाब चले गये तो रानी ने अपने जीवनकाल मे ही अपने महल को गुरुद्वारा बना दिया। रोजाना यहा बच्चो को घुगनी बाटी जाती है। आज भी उनकी स्मृति मे घुगनी का भोग लगता है, जो लोगो के बीच प्रसाद के रूप मे वितरित की जाती है।

तख्त श्री हरमन्दिर से सटे उत्तर गगा नदी के सुरम्य तट पर छोटा सा गुरुद्वारा गोविन्दघाट है। गोविन्द राम जी बचपन मे अपने मित्रो के साथ यही खेलने जाया करते थे। यही पर गोविन्द राम का सोने का कडा गगा मे गिर गया था। उसी स्मृति मे उसी स्थान पर गुरुद्वारा कायम है, जिसे गोविन्दघाट गुरुद्वारा कहते है।

इसके अतिरिक्त अन्य गुरुद्वारे जैसे गुरुद्वारा गायघाट, गुरुद्वारा होडी साहब तथा गुरुद्वारा गुरु का बाग भी उल्लेखनीय है जिनके सबध मे कई लोक कथाये प्रचलित है।

बहुत से अन्य गुरुद्वारे या तो व्यक्तिगत सम्पत्ति के रूप मे है या ध्वस हो गये है। ❑

5. माता वैष्णोदेवी

पश्चिमोत्तर भारत मे वैष्णव देवी की बडी मान्यता है। अश्विनी मास की नवरात्रि मे यहा मेला लगता है। जम्मू राज्य के अन्तर्गत त्रिकुट्टा नाम का एक पर्वत है, जिस पर वैष्णोदेवी का गुफा मदिर है।

कटरा से साढे बारह किलोमीटर की दूरी पर वैष्णोदेवी की गुफा है। यहा लगभग आठ मीटर लम्बी एक सकरी गुफा है जिसके भीतर एक हाथ लम्बी एक पिडी है। इसी पिडी को महाकाली, महालक्ष्मी और महासरस्वती मानकर पूजा की जाती है। देवी के चरण के नीचे से जल प्रवाहित होता रहता है। अनेक यात्री इस जल को प्रसाद स्वरूप अपने साथ ले जाते है। गुफा का मुह बहुत छोटा है, पहले लेटकर प्रवेश किया जाता है, पुन खडे होकर जाया जाता है। बाहर निकलने के लिए जो दूसरी ओर का मार्ग है, वह अपेक्षाकृत कुछ बडा है। यह गुफा मदिर चौबीसो घटे अर्थात् दिन रात खुला रहता है। भीतर विद्युत प्रकाश की व्यवस्था है।

देवी के दर्शन का नियम अति कठोर है। देवी के चरण के नीचे से जो जलधारा प्रवाहित होती है, उस जल से स्नान कर एव पवित्र और स्वच्छ वस्त्र पहन कर ही गुफा मे प्रवेश करना चाहिए। स्नान के पश्चात मल–मूत्र त्याग करना एव खान–पान करना वर्जित है। महिलाओ और पुरुषो के स्नान गृह पृथक है। कहा जाता है कि अपवित्र वस्त्र धारण कर अथवा अपवित्रता पूर्वक गुफा मे प्रवेश करने वालो को शारीरिक, मानसिक एव आर्थिक कष्ट उठाने पडते है। यह भी कहा जाता है कि ऐसे लोगो को देवी का पिड दिखाई नही देता।

वैष्णोदेवी से लगभग एक किलोमीटर की कठिन चढाई के पश्चात भैरव मदिर मिलता है। यह मदिर सागर के जल स्तर से 2172 मीटर की ऊँचाई पर स्थित है। कहा जाता है देवी के दर्शन के पश्चात भैरव का दर्शन करना चाहिए अन्यथा यहा की यात्रा पूर्ण नही मानी जाती।

वैष्णोदेवी की यात्रा कटरा बस्ती से प्रारम्भ होती है। जम्मू से कटरा 49 5 किलोमीटर है। कटरा मे यात्री सेटर कार्यालय है। यहा पुलिस का भी कार्यालय है। यहा नाम पता लिखाने से एक परचा मिलता है। बाणगगा

चट्टी पर पहुचने पर पुन इन परचो की जाच होती है। इसके बाद ही पर्वत पर चढने की अनुमति मिलती है जिसमे क्रम सख्या अकित रहती है। इसी क्रम सख्या के आधार पर गुफा मे प्रवेश करने का प्रावधान है।

कटरा से बाणगगा तक पक्का राजमार्ग है जहा चढाई शुरू होती है। बाणगगा सागर के जल स्तर से 870 मीटर, इसके बाद चरण पादुका 1089 मीटर, आदि कुमारी 1578 मीटर, साजी छत 2075 मीटर और बाद मे वैष्णोदेवी की गुफा 1762 मीटर की ऊँचाई पर स्थित है। यहा सीढियो और ढलवा मार्ग दोनो है। सीढियो की बनावट अच्छी नही है, इसलिए गिरने का भय रहता है। ढलवा मार्ग पर विद्युत प्रकाश की व्यवस्था रहती है। अशक्त और वृद्ध लोगो के लिए टट्टू और डोली का भी प्रबन्ध है। इनका भाडा कश्मीर सरकार द्वारा नियत्रित रहता है। कटरा स्थित टूरिस्ट सेटर कार्यालय के माध्यम से टट्टू अथवा डोली ठीक कर लेनी चाहिए।

तिरुपति बालाजी के पश्चात माता वैष्णोदेवी की यात्रा के लिए सर्वाधिक लोग यात्रा करते है जिनकी सख्या अब प्रतिवर्ष 50 लाख से भी अधिक हो गई है। पहले इस मदिर की व्यवस्था कुछ पण्डो व पुजारियो के परिवार तक ही सीमित थी कितु अब इसकी व्यवस्था जम्मू व कश्मीर की सरकार द्वारा नियुक्त एक ट्रस्ट द्वारा की जा रही है। करोडो रुपया प्रतिवर्ष भेट व चढावे के रूप मे प्राप्त हो रहा है और मूल्यवान सोने व जवाहरात के आभूषण माता को भेट स्वरूप अर्पण किये जाते है। मदिर की आय का एक बहुत बडा हिस्सा यात्रियो की सुख सुविधा के लिए खर्च किया जा रहा है। टूटी–फूटी पगडडियो के स्थान पर नई रोशनी युक्त सडको का निर्माण किया जा रहा है। स्थान–स्थान पर यात्रियो के लिए पीने के शुद्ध जल व शौच इत्यादि की व्यवस्था की गई है। मार्ग मे पर्याप्त सख्या मे होटलो व भोजनालयो की भी व्यवस्था है। जहा यात्री कम खर्च मे स्वच्छ भोजन का आनद ले सकते है।

शेरोवाली माता का गुणगान करते हुए हजारो लाखो यात्री आनन्द व सुविधापूर्वक अपनी यात्रा समाप्त कर प्रसाद के रूप मे अखरोट इत्यादि को भेट कर परम सतोष का अनुभव करते है। प्राय प्रतिदिन ही बडी सख्या मे नव विवाहित पति पत्नी सुखमय जीवन के लिए माता का आशीर्वाद प्राप्त करने हेतु श्रद्धापूर्वक मदिर की परिक्रमा कर अपने कर्तव्य का पालन करते है। ऐसी भी मान्यता है कि जो व्यक्ति सच्चे मन से माता वैष्णोदेवी की यात्रा करता है उसकी मनोकामना अवश्य ही पूरी होती है। □

6. दरगाह हज़रत बख़्तियार काकी

हजरत कुतबुद्दीन बख्तियार काकी का जन्म 572 हि ओश इराक मे हुआ। ऐसी मान्यता है कि आपके जन्म के आधी रात के समय जमीन से आसमान तक आपके घर के अदर रोशनी फैली हुई थी। मौलाना अबुहफस औशी से शिक्षा ग्रहण करने के बाद फिर बगदाद का सफर किया और वहा से अपनी शिक्षा पूरी की। कुछ समय बगदाद मे रहने के बाद दिल्ली की तरफ कूच किया और फिर हजरत गरीब नवाज चिश्ती अजमेरी के शिष्य बने और उनके मुरीद हुए। काफी समय हजरत मोईनुद्दीन की सेवा मे रहकर उनके आदेश के अनुसार पुन. दिल्ली आये और दिल्ली आकर वहा ठहरे जहा अब हुमायूँ का मकबरा है। बादशाह आपके दर्शन के लिए हर चौथे दिन आता था। वह आपसे प्रार्थना कर आपको महरौली ले आया था।

एक दिन हजरत ख्वाजा मोईनुद्दीन चिश्ती, हजरत कुतबुद्दीन बख्तियार काकी के पास आए। सारा शहर उनके दर्शन के लिए उमड कर जा पहुचा। हजरत निजामुद्दीन ने हजरत बख्तियार काकी, जो उनके मुरीद थे, को अजमेर चलने का हुक्म दे दिया लेकिन जब आपके अजमेर जाने की खबर दिल्ली मे फैली तो लोगो मे बैचेनी सी फैल गई। इस खबर को सुनते ही बादशाह से लेकर अमीर व गरीब रोते हुए आपकी सेवा मे उपस्थित हुए और सबने यही प्रार्थना की कि आप दिल्ली छोड कर न जाये।

जब आपका पहला पडाव दिल्ली मे पडा तो सुल्तान शमसुद्दीन अल्तमस ने आपके दिल्ली आगमन को हाथो हाथ लिया था, लेकिन आपने शाही दरबार से कोई सबध रखना पसद नही किया और सुल्तान की हर पेशकश जैसे– ओहदा, जागीर को कुबूल नही किया और पहले की लोखरी, फिर मलिक एजाजुद्दीन की मस्जिद के करीब फकीरो की तरह जीवन गुजारना शुरू किया। परतु शमसुद्दीन अल्तमस आपकी सेवा मे हाजिर होता रहा। ख्वाजा कुतबुद्दीन बख्तियार काकी ने दिल्ली वापस आकर तेजी के साथ दूसरो को अच्छी शिक्षा देना आरभ किया। सत्य और धर्म के मार्ग पर चलने हेतु वे मार्गदर्शन भी करते रहे। उन्होने स्वय तो शाही दरबार से कोई सबध नही रखा और जीवन का इसे आदर्श भी बनाया और अपने पूरे सिलसिले

का उसूल भी बना दिया कि हुकूमत और दौलत से किसी भी तरह का कोई सबध न रखकर सिलसिले के लोग ईश्वर की भक्ति और इसानी भाईचारा बढाने का कार्य करते रहे।

हजरत कुतबुद्दीन बख्तियार काकी को छोटी उम्र से ही इबादत का शौक था और दिन रात ईश्वर की प्रार्थना मे तल्लीन रहा करते थे। यही नही आप दिन रात मे तीस हजार बार हुजूर रसूले मकबूल पर रूहे दरूद भेजते थे।

हजरत ख्वाजा बख्तियार काकी जीवन भर स्वस्थ्य समाज के निर्माण के लोगो को शिक्षा दीक्षा देते रहे। उन्होने दरवेश (धर्म भिक्षु) का चित्रण करते हुए कहा कि यदि दरवेश लोगो को दिखाने के लिए अच्छा कपडा पहने तो यह समझ लो कि वह दरवेश नही है बल्कि इस राह का लुटेरा है। जो दरवेश अपनी इच्छा के मुताबिक अच्छा खाना खाये तो यकीन मानो वह भी झूठा है और जो दरवेश धनवानो के साथ उठे बैठे तो उसे दरवेश न समझो बल्कि इस राह से हटा हुआ है और जो दरवेश अपने इन्द्रियो की इच्छा के मुताबिक खुश दिल खोल कर सोता है तो यकीन मानो कि उसमे कोई खूबी नही है। ख्वाजा कुतबुद्दीन बख्तियार काकी ने मनुष्य का कमाल चार चीजो पर टिका हुआ बताया है. कम खाए, कम सोए, कम बोले और लोगो से मेल जोल कम रखे।

आपका 633 हि 14 रबीउल अव्वल मुताबिक 27 नवबर 1125, बमुकाम, महरौली शरीफ दिल्ली मे स्वर्गवास हो गया। स्वर्गवास से पहले ईद के दिन ईदगाह से मकान की तरफ आप वापस आ रहे थे तो एक ऐसे मैदान से होकर गुजरे जहा कोई कब्र या मजार नही थी, ख्वाजा वही देर तक रुके रहे। किसी सेवक ने प्रार्थना की कि ईद का दिन है और लोग इतजार मे है। आप यहा क्यो रुक गये? आपने जवाब दिया कि मुझे यहा से दिलो की खुशबू आती है, दूसरे वक्त जमीन के मालिक को बुलाकर आपने उस स्थान को खरीद लिया और उस जमीन को अपने दफन के लिए निश्चित किया और वही दफन किये गये। यह दरगाह महरौली मे स्थित है और धार्मिक सौहार्द की निशानी है। सभी धर्मो के लोग यहा आकर अपने श्रद्धा सुमन अर्पित करते है और अपनी ओर से फलो का नजराना पेश करते है तथा मन की सच्ची शाति प्राप्त करते है। यहा प्रतिदिन हजारो लोग देश विदेश से जयारत के लिए आते है और यहा से होकर सीधे अजमेर शरीफ ख्वाजा मोईनुद्दीन चिश्ती की दरगाह मे जाते है। ये गरीब नवाज का हुक्म है कि जो मेरी कब्र

की जयारत के लिए आये, पहले मेरे दिलवर ख्वाज़ा कुतव साहव की दरगाह पर हाजरी दे, फिर मेरे पास आये।

फूलवालों की सैर

जब अग्रेजो ने अकवरशाह सानी, जो शाहआलम का पुत्र था, पकडकर कैद कर लिया तो अकवरशाह सानी की मा ने यहां हज़रत ख्वाजा कुतव साहब मे आकर दुआ (प्रार्थना) की, अगर मेरा लडका रिहा हो जायेगा तो मै दरगाह पर फूलो की चादर चढाऊगी। जव पुत्र रिहा हो गया तो यहा सावन भादो का महीना था, मोतिया चमेली की वहार थी, हल्की–हल्की फुहार का महीना था, तभी उन्होने यहा फूलो की चादर चढाई तथा वाद मे यह फूलो के पखो के रूप मे मनाई जाने लगी जो मुगलिया सल्तनत के आखिरी वादशाह वहादुर शाह जफर तक कायम रही। यहा के हालात ठीक न होने के कारण कुछ समय तक अंग्रेजो ने इसे वंद भी कर दिया था, लेकिन भारत की स्वतत्रता के पश्चात सन् 1952 मे भारत के प्रथम प्रधानमत्री पडित जवाहरलाल नेहरू ने इसे पुन. शुरू किया। तभी से आज तक यह उत्सव ऐतिहासिक हिन्दू मुस्लिम एकता का प्रतीक 'फूलवालो की सैर' का मेला आयोजित किया जा रहा है। दिल्ली के हजारो लोग इस सैर मे शामिल होकर दरगाह हजरत कुतुव साहिव और इसके निकट ही माता योगमाया के मदिर मे साथ साथ फूलो की चादरे चढा कर अपनी श्रद्धाजलि अर्पित करते है और वे अपनी अकीदत का इजहार करते है।

अब तो 'फूलवालो की सैर' एक राष्ट्रीय उत्सव के रूप मे आयोजित किया जाता है। इसे विभिन्न सरकारो का सहयोग मिल रहा है। यह उत्सव कई दिनो तक जारी रहता है। ☐

7. श्रवणबेलगोल

कर्नाटक राज्य के हासन जिले मे स्थित श्रवणबेलगोल जैनो का अति प्राचीन और परम पावन तीर्थ है। उत्तरवासी इसे जैन बद्री कहते है। यह स्थान काशी और गोमटट् तीर्थ नामो से भी प्रसिद्ध रहा है।

यहा पर श्री बाहुबली भगवान की लगभग 18 मीटर (57 फुट) ऊँची अद्वितीय विशाल प्रतिमा है जो लगभग पन्द्रह सोलह किलोमीटर से ही दृष्टिगोचर होने लगती है। इसे देखने सभी धर्मावलम्बी आते है। इस मूर्ति के ऊपर किसी प्रकार का छाजन नही है। सेकडो वर्षो से धूप और पानी पडते हुए भी इस मूर्ति मे किसी प्रकार का दोष नही आया है।

ईसा से पूर्व तृतीय शतक मे सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य राजपाट छोड़कर श्रवणबेलगोल आये थे। साथ मे उनके गुरु भद्रबाहु स्वामी भी थे। यही पर चन्द्रगुप्त ने जैन धर्म की दीक्षा ली थी। बाद मे गगा राजाओ के सरक्षण मे चौथी से दसवी शताब्दी तक जैन धर्म का प्रचार और प्रसार हुआ।

श्री बाहुबलीजी तीर्थकर ऋषभदेव के पुत्र भरत जी चक्रवर्ती के भाई थे। राज्य के लिए दोनो भाईयो मे सघर्ष हुआ और बाहुबली की विजय हुई। विजय के बाद भी अविजित भाई को राज्य देकर बाहुबली तप करने के लिए चले गये। भरतजी ने पोदनपुर मे उनकी वृहत्य काय मूर्ति स्थापित की। कालातर मे उसके चारो ओर इतने कुक्कर सर्प हो गये कि दर्शन करना भी दुर्लभ हो गया। गगराजा रायमल्ल के सेनापति चामुडराय अपनी माता की इच्छा के अनुसार उनकी वदना के लिए गये। परतु उनकी यात्रा अधूरी रही। इसलिए उन्होने श्रवणबेलगोल मे वैसी मूर्ति स्थापित करने का निश्चय किया। उन्होने चन्द्रगिरि पर्वत पर, जिसे अब चामुडराय शिला कहा जाता है, खडे होकर एक स्वर्ण तीर मारा। वह इन्द्रगिरि पहाड की चट्टान मे जा लगा। उस चट्टान मे उनको गोम्मटेश्वर के दर्शन हुए। श्री चामुडराय ने श्री नेमिचन्द्राचार्य की देख रेख मे महान मूर्ति बनवाई। यह घटना सन् 983 के लगभग की है। यह मूर्ति उत्तराभिमुख है और हलके भूरे रग के महीन ककरीले पत्थर (ग्रेनाइट) को काटकर बनाई गई है। यह मूर्ति इतनी विशाल, स्वच्छ और सजीव है कि लगता है शिल्पी अभी इसे बनाकर गया हो।

श्रवण बेलगाव के दोनो ओर दो मनोहर पर्वत विध्यगिरि (इन्द्रगिरि) और चन्द्रगिरि है। इन्द्रगिरि को यहा के लोग दोड्ड वेटा (बडा) पहाड कहते है। इसी विध्यगिरि (इन्द्रगिरि) पर भगवान बाहुवली की प्रतिमा स्थापित है। इस पर चढने के लिए पाच सौ सीढिया बनी हुई है। इस पर्वत पर चढते ही पहले व्रह्मदेव मन्दिर पडता है जिसकी अट्टालिका मे पार्श्वनाथ स्वामी की एक मूर्ति है। पर्वत की चोटी पर जिसके अदर बहुत से प्राचीन जैन मन्दिर हैं, घुसते ही 'चौबीस तीर्थकर बसदि' एक छोटा–सा मन्दिर है। इसमें चौबीस पट्ट विराजमान है। इसकी स्थापना सन् 1648 मे हुई थी। इस मन्दिर के

उत्तर पश्चिम में एक कुड है। उसके पास 'चेन्नगण वसदि' नामक दूसरा मन्दिर है। इसमे भगवान चन्द्रप्रभु की पूजा होती है। यह मन्दिर लगभग 1673 ई. मे चेन्नगण ने बनवाया था।

इसके आगे चवूतरे पर वना हुआ 'ओदेगल वसदि' नामक मन्दिर है। यह कडे ककड का बना हुआ है। यह मन्दिर होयसल काल का है। इस मन्दिर की छत के मध्य भाग मे सुदर कमल लटका हुआ है। श्री आदिनाथ भगवान की प्रतिमा दर्शनीय है। श्री शक्तिनाथ और नेमिनाथ की भी सुदर मूर्तिया है।

विध्य पर्वत के एक छोटे घेरे मे श्री वाहुवली (गोम्मट) स्वामी की विशालकाय मूति विद्यमान है। इस घेरे के वाहर ब्रह्मदेव नामक स्तम्भ है। इसे गगावश के राजमत्री सेनापति चामुडराय ने वनवाया था जो गोम्मटसार के रचयिता श्री नेमिचन्द्राचार्य के शिष्य थे। गुरु और शिष्य की मूर्तिया भी उस पर अकित है। सामने ही गोम्मटेश के आकार मे घुसने का अखड द्वार है। इस द्वार के दाहिनी ओर वाहुवली जी का छोटा मन्दिर और उनके वडे भाई भरतजी का मन्दिर है।

प्रति बारह चौदह साल के अतराल पर वाहुवली का महामस्तकाभिषेक उत्सव होता है। गोम्मटेश्वर की मूर्ति को उस समय घी, दूध, दही, मधु, सिन्दूर, चन्दन, रुपये–पैसे, मणि मुक्ता, 1008 घडे पवित्र जल से स्नान कराया जाता है। सन् 1398 से यह उत्सव मनाया जा रहा है। सन् 1981 मे मूर्ति प्रतिष्ठा के हजार वर्ष पूरे होने पर महामस्तकाभिषेक का विशेष उत्सव मनाया गया था। उत्सव के अवसर पर दूर दराज से जैन धर्मावलम्वी आते है। देश देशांतर से पर्यटक भी आते हे।

चन्द्रगिरि पर्वत इन्द्रगिरि (विध्यगिरि) से छोटा है। यह लगभग 55 मीटर ऊँचा है। यहा घेरे के भीतर कई सुदर जैन मन्दिर है। एक देवालय घेरे के बाहर है। यहां प्राय सभी मन्दिर द्रविड शिल्पकला की शैली के है। सवसे प्राचीन मन्दिर आठवी सदी का बताया जाता है। पर्वत पर चढने पर पहले भद्रबाहु स्वामी की गुफा मिलती है, जिसमे उनके चरण चिन्ह विद्यमान है। भद्रबाहु गुफा के ऊपर पहाड की चोटी पर मुनियो के चरण चिन्ह मिलते है।

दक्षिण द्वार से घेरे मे प्रवेश करते ही एक सुदर मान स्तम्भ मिलता है। यह बहुत ऊँचा है और इसके सिरे पर ब्रह्मदेव की मूर्ति है। गगवशी राजा का स्मारक रूप लेख भी इस पर खुदा हुआ है। इसी स्तम्भ के पास कई

शिलालेख चट्टान पर उत्कीर्ण है। शिलालेख करीब 650 ई मे बना था। इसमे स्पष्ट उल्लेख है कि भद्रबाहु और चन्द्रगुप्त दो महान मुनि हुए है। मानस्तम्भ से पश्चिम की ओर सोलहवे तीर्थकर श्री शातिनाथ का एक छोटा सा मन्दिर है। मन्दिर की मूर्ति दर्शनीय है। इस मन्दिर के खुले स्थान मे भरत की सुदर मूर्ति खडी है। पूर्व दिशा मे महा नवमी मडप है, जिसमे बीस स्तम्भ है। एक स्तभ पर मत्री नामदेव ने सन् 1170 मे नयकीर्ति नामक मुनिराज की स्मृति मे लेख खुदवाया है।

पूर्व मे पार्श्वनाथ जी का बहुत बडा मन्दिर है। इसके सामने एक मान स्तभ है। पार्श्वनाथ का मन्दिर शिल्पकला का उत्कृष्ट नमूना है। इसी के पास 'कत्रेले बसदि' नामक विशाल मन्दिर है। इसे विष्णुवर्धन के सेनापति गगराज ने बनवाया था। इसमे आदिनाथ की मूर्ति विराजमान है।

चन्द्रगिरि पर्वत पर सबसे छोटा मन्दिर 'चन्द्रगुप्त बसदि' है। इसमे श्रुतकेवली भद्रबाहु और सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य के जीवन सबधी चित्र बने हुए है और पार्श्वनाथ स्वामी की मूर्ति विराजमान है। श्री भद्रबाहु और चन्द्रगुप्त का यह बहुत ही सुदर स्मारक है। 'मञ्जिगण बसदि' नामक मन्दिर मे चौदहवे तीर्थकर अनन्तनाथ की पाषाण मूर्ति विराजमान है। 'शासन बसदि' मन्दिर मे आदिनाथ की मूर्ति विराजमान है जिसमे एक शिलालेख भी है। इस मन्दिर को सन् 1157 मे सेनापति गगराज ने बनवाया था। उन्होने इसका नाम 'इन्द्रकुलगृह' रखा था।

'चन्द्रप्रभ बसदि' मे आठवे तीर्थकर श्री चन्द्रप्रभ की सुदर मूर्ति विद्यमान है। इसे गगराजा शिवमार ने बनवाया था। 'सुपार्श्वनाथ बसदि' मे सुपार्श्वनाथ की पद्मासन प्रतिमा विद्यमान है। 'चामुडराय बसदि' पहाड के सबसे बडे मन्दिरो मे है। इसमे 22वे तीर्थकर श्री नेमिनाथ की प्रतिमा है। इसके अलावा होसल नरेश विष्णुवर्धन की रानी शान्तलदेवी द्वारा निर्मित 'सबतिगधवारण बसदि', विशाल मन्दिर बनवाया, जिसमे भगवान शातिनाथ की प्रतिमा विद्यमान है। होयसल काल का 'शातिश्वर बसदि' मन्दिर भी है। चन्द्रगिरि पर्वत के उत्तर मे होयसल सेनापति गगराज ने 'जिन नाथपुर' का निर्माण सन् 1117 मे कराया था। यह मन्दिर दर्शनीय है, इसके स्तभ कसौटी पत्थर के है।

इसके अतिरिक्त श्रवणबेलगोल गाव मे भी कई दर्शनीय जैन मन्दिर है। इनमे 'भडारी बसदि' मन्दिर सबसे बडा है। 'अक्कन बसदि' होयसल शिल्प

शैली का मन्दिर है, जिसमे पार्श्वनाथ की प्रतिमा विद्यमान है। सिद्धात वसदि, नगर जिनालय, मगाई बसदि आदि अनेक मन्दिर हे।

यहा का निकटस्थ रेलवे स्टेशन हासना है। दक्षिण रेलवे के मैसूर से 119 किलोमीटर दूर हासना स्टेशन है। यह तीर्थ वगलौर से 140 किलोमीटर हासन से 52 किलोमीटर और मैसूर से 83 किलोमीटर है। □

8. राजगृह

बिहार

राजगृह को राजगिरि भी कहा जाता है। यह भारतवर्ष का सबसे प्राचीन नगर है। इस नगर को राजा वसु ने बसाया था, इसलिए इसे प्राचीन काल मे बसुमती भी कहा जाता था।

राजगृह मे ही सारिपुत्र और मौद्गलायन भगवान बुद्ध से मिले थे। बौद्ध धर्म ग्रहण करने के बाद भगवान बुद्ध के बहुत ही आत्मीय शिष्यो मे उनकी गिनती होने लगी।

राजगृह मे सैकडो लोग भगवान बुद्ध के अनुयायी बने। राजगृह का सवसे अधिक धनवान नवयुवक पिप्पली, भगवान बुद्ध का अनुयायी वना जो बाद मे महा काश्यप कहलाया।

बुद्ध इतिहास के दो महत्वपूर्ण व्यक्ति देवदत्त, भगवान बुद्ध का चचेरा भाई जो उनका घोर विरोधी था और अजातशत्रु जिसने पिता, विम्बसार को बदी बनाया था, इसी नगर मे रहते थे।

जब मगध के राजा विम्बसार को पता लगा कि भगवान बुद्ध राजगृह आ रहे है, तो वह भी उनके दर्शनार्थ बीस हजार एक सौ ब्राह्मणो के साथ गया। उनके उपदेशो से प्रभावित होकर बिम्बसार उनका अनुयायी बन गया।

बिम्बसार ने भगवान बुद्ध को अपने राज प्रासाद मे भोजन के लिए आमत्रित किया। उपदेशो के सुनने के बाद बिम्बसार ने उन्हे वेणुबन भिक्षुओ के ठहरने के लिए प्रदान किया।

राजगृह मे ही गिद्धकूट पर्वत पर भगवान बुद्ध ने अतानातीय सुत्त का उपदेश दिया था और भगवान बुद्ध इसी गिद्धकूट पर्वत की एक शिला पर बैठ कर ध्यान किया करते थे।

राजगृह के कुछ स्थान विशेष रूप से उल्लेखनीय है.

जीवक आम्र कुंज— यहा पर उस समय का प्रसिद्ध वैद्य जीवक रहा करता था।

बिम्बसार जेल— यह वह स्थान है, जहा पर अजातशत्रु ने अपने पिता बिम्बसार को कारागार मे डाल रखा था।

मनियर मत्स्य स्तूप— यहा पर अजातशत्रु की सहायता से महाकाश्यप के नेतृत्व मे पहला सागायन (सभा) का आयोजन किया गया था।

वेणुवनाराम— इसे बिम्बसार ने तपोवन के नजदीक निर्माण कराया था।

मुगलन स्तूप— यह महा मौद्गलायन की स्मृति मे निर्मित किया गया था।

जब भगवान बुद्ध राजगृह मे थे, तब उनके पिता शुद्धोधन ने उन्हे कपिलवस्तु आने के लिए निमत्रित किया था।

राजगृह बौद्धो का एक ऐतिहासिक स्थान है। पुरातत्व विभाग द्वारा अभी खोज कार्य जारी है। जो भी अवशेष प्राप्त हुए है, सरकार द्वारा सुरक्षित रखे गये है। राजगृह बौद्धो के लिए अति ही पवित्र स्थान है। ❑

9. सैक्रेड हार्ट कैथेड्रल चर्च

नई दिल्ली

सन् 1919 मे फादर ट्यूक वानुची को यह जिम्मेदारी सौपी गई कि वे नई दिल्ली मे एक चर्च का निर्माण कराये। श्री वानुची ने चर्च के निर्माण के सबध मे योजना बनानी प्रारम्भ कर दी।

इस सबध मे आठ वास्तुविदो को निमन्त्रित किया गया और उन्होने कैथेड्रल चर्च के निर्माण के सबध मे अपने मानचित्र प्रस्तुत किए। इसके लिए सर एडवर्ड के नेतृत्व मे एक समिति गठित की गई। कुछ सुधारो के साथ मिस्टर मेड द्वारा प्रस्तुत नई दिल्ली मे बनने वाले कैथेड्रल के भवन का मानचित्र और योजना स्वीकार हुई। आगरा के आर्क बिशप रेवेरेन्ड फादर वानी ने सन् 1929 मे नई दिल्ली मे गोल डाकखाने के पास बनने वाले

शैली का मन्दिर है, जिसमे पार्श्वनाथ की प्रतिमा विद्यमान है। सिद्धात वसदि, नगर जिनालय, मगाई बसदि आदि अनेक मन्दिर है।

यहा का निकटस्थ रेलवे स्टेशन हासना है। दक्षिण रेलवे के मैसूर से 119 किलोमीटर दूर हासना स्टेशन है। यह तीर्थ वगलौर से 140 किलोमीटर हासन से 52 किलोमीटर और मैसूर से 83 किलोमीटर है। ▫

8. राजगृह

राजगृह को राजगिरि भी कहा जाता है। यह भारतवर्ष का सबसे प्राचीन नगर है। इस नगर को राजा वसु ने वसाया था, इसलिए इसे प्राचीन काल मे वसुमती भी कहा जाता था।

राजगृह मे ही सारिपुत्र और मौद्गलायन भगवान बुद्ध से मिले थे। बौद्ध धर्म ग्रहण करने के बाद भगवान बुद्ध के बहुत ही आत्मीय शिष्यो मे उनकी गिनती होने लगी।

राजगृह मे सैकडो लोग भगवान बुद्ध के अनुयायी बने। राजगृह का सवसे अधिक धनवान नवयुवक पिप्पली, भगवान बुद्ध का अनुयायी बना जो बाद मे महा काश्यप कहलाया।

बुद्ध इतिहास के दो महत्वपूर्ण व्यक्ति देवदत्त, भगवान बुद्ध का चचेरा भाई जो उनका घोर विरोधी था और अजातशत्रु जिसने पिता, विम्बसार को वदी बनाया था, इसी नगर मे रहते थे।

जब मगध के राजा विम्बसार को पता लगा कि भगवान बुद्ध राजगृह आ रहे है, तो वह भी उनके दर्शनार्थ बीस हजार एक सौ ब्राह्मणो के साथ गया। उनके उपदेशो से प्रभावित होकर बिम्बसार उनका अनुयायी बन गया।

बिम्बसार ने भगवान बुद्ध को अपने राज प्रासाद मे भोजन के लिए आमत्रित किया। उपदेशो के सुनने के बाद बिम्बसार ने उन्हे वेणुबन भिक्षुओ के ठहरने के लिए प्रदान किया।

राजगृह मे ही गिद्धकूट पर्वत पर भगवान बुद्ध ने अतानातीय सुत्त का उपदेश दिया था और भगवान बुद्ध इसी गिद्धकूट पर्वत की एक शिला पर बैठ कर ध्यान किया करते थे।

राजगृह के कुछ स्थान विशेष रूप से उल्लेखनीय है.

जीवक आम्र कुंज— यहा पर उस समय का प्रसिद्ध वैद्य जीवक रहा करता था।

बिम्बसार जेल— यह वह स्थान है, जहा पर अजातशत्रु ने अपने पिता बिम्बसार को कारागार मे डाल रखा था।

मनियर मत्स्य स्तूप— यहा पर अजातशत्रु की सहायता से महाकाश्यप के नेतृत्व मे पहला सागायन (सभा) का आयोजन किया गया था।

वेणुवनाराम— इसे बिम्बसार ने तपोवन के नजदीक निर्माण कराया था।

मुगलन स्तूप— यह महा मौद्गलायन की स्मृति मे निर्मित किया गया था।

जब भगवान बुद्ध राजगृह मे थे, तब उनके पिता शुद्धोधन ने उन्हे कपिलवस्तु आने के लिए निमत्रित किया था।

राजगृह बौद्धो का एक ऐतिहासिक स्थान है। पुरातत्व विभाग द्वारा अभी खोज कार्य जारी है। जो भी अवशेष प्राप्त हुए है, सरकार द्वारा सुरक्षित रखे गये है। राजगृह बौद्धो के लिए अति ही पवित्र स्थान है। □

9. सैक्रेड हार्ट कैथेड्रल चर्च

नई दिल्ली

सन् 1919 मे फादर ट्यूक वानुची को यह जिम्मेदारी सौपी गई कि वे नई दिल्ली मे एक चर्च का निर्माण कराये। श्री वानुची ने चर्च के निर्माण के सबध मे योजना बनानी प्रारम्भ कर दी।

इस सबध मे आठ वास्तुविदो को निमत्रित किया गया और उन्होने कैथेड्रल चर्च के निर्माण के सबध मे अपने मानचित्र प्रस्तुत किए। इसके लिए सर एडवर्ड के नेतृत्व मे एक समिति गठित की गई। कुछ सुधारो के साथ मिस्टर मेड द्वारा प्रस्तुत नई दिल्ली मे बनने वाले कैथेड्रल के भवन का मानचित्र और योजना स्वीकार हुई। आगरा के आर्क बिशप रेवेरेन्ड फादर वानी ने सन् 1929 मे नई दिल्ली मे गोल डाकखाने के पास बनने वाले

कैथेड्रल चर्च की आधारशिला रखी। इस चर्च के निर्माण मे पूरे पाच साल लगे।

नई दिल्ली मे गोल डाकखाने के पास स्थित चर्च का, जिसे केथेड्रल ऑफ सैकेड हार्ट कहा जाता है, पवित्रीकरण 8 दिसवर 1935 को किया गया। इस चर्च के पवित्रीकरण और अभिमन्त्रित करने का कार्य दूसरे अन्य छह बिशपो की उपस्थिति मे महामहिम लियो कियर केल्स के द्वारा सपन्न हुआ। सन् 1985 मे परम पवित्र पोप पाल द्वितीय इस चर्च मे पधारे थे। इससे इस चर्च की महत्ता मे और भी वृद्धि हुई। परम पवित्र तथा महामहिम पोप ने इस चर्च को प्रभु ईसा के पवित्र नाम पर समर्पित किया। इसके साथ ही उन्होने दिल्ली की समस्त जनता के लिए अपना आशीर्वाद दिया और प्रार्थना की कि प्रभु ईसा का पवित्र हृदय उनकी रक्षा करे।

ईसा मसीह के जन्मदिन के अवसर पर इस चर्च के परिसर मे एक विशाल मेला आयोजित किया जाता है जिसमे हजारो लोग भाग लेकर उत्सव मनाते है और गरीबो को दान व वस्त्र इत्यादि भेट करते है। □

10. मन्दिर सोमनाथ

गुजरात

सोमनाथ का मन्दिर अरब सागर तट पर स्थित है। यहा पाटना नाम का एक दुर्ग था, जिसके भग्नावशेष अभी तक विद्यमान है। इसका पौराणिक नाम प्रभास क्षेत्र है। इसलिए इस क्षेत्र को प्रभास पाटन कहते है।

सोमनाथ का मन्दिर, शैवो और वैष्णवो दोनो का तीर्थ स्थान है। सोमनाथ के प्राचीन मन्दिर को यवनो द्वारा कई बार नष्ट किया गया। उसी स्थान पर अब नया मन्दिर बना है। स्वतत्रता के पश्चात इसका निर्माण भारत के तत्कालीन गृहमत्री स्वर्गीय वल्लभभाई पटेल की प्रेरणा से भारत सरकार ने कराया है। इस मन्दिर के निर्माण मे प्राचीन सोमनाथ मन्दिर के अवशेषो का भी पर्याप्त उपयोग किया गया है। इसके निकट ही इन्दौर की महारानी अहिल्याबाई द्वारा निर्माण कराया हुआ, दूसरा सोमनाथ का प्राचीन मन्दिर है।

यही जरा नामक व्याध के बाण से श्री कृष्ण ने अपना शरीर छोडा था। यहा भगवान श्रीकृष्ण, भगवान विष्णु आदि देवताओ के मन्दिर है।

सोमनाथ के मन्दिर के निकट के सागर को अग्नितीर्थ अथवा अग्निकुड कहते है। इस तीर्थ मे स्नान करके लोग प्राची त्रिवेणी मे स्नान करने जाते है।

प्राची त्रिवेणी सोमनाथ मन्दिर से कुछ दूरी पर है। यहा कपिला, सरस्वती और हरिण्या तीन नदियो का सगम है। इसलिए इसको प्राची त्रिवेणी कहते है। त्रिवेणी स्नान का विशेष महत्व है। सगम तट पर त्रिवेणी माता, महाकालेश्वर, श्रीराम, श्रीकृष्ण और भीमेश्वर के मन्दिर है। इसी घाट के निकट प्राचीन सूर्य मन्दिर और सूर्यकुड नामक प्राचीन बावडी है। निकट ही रुद्रेश्वर शिव मन्दिर तथा महाकाली के प्राचीन मन्दिर है।

यहा एक गीता मन्दिर है। इस मन्दिर की भित्तियो पर सम्पूर्ण गीता अकित है। इसी के निकट नदी तट पर एक चबूतरा है जिसको देहोत्सर्ग कहते है। कहा जाता है, जरा नाम के व्याध के बाण से आहत होकर श्रीकृष्ण यहा आये और अतर्ध्यान हो गये।

सोमनाथ अति विशाल मन्दिर है जिसमे शिवलिग स्थापित है। सायकाल के श्रृगार के पश्चात आरती का दर्शन बडा सुदर होता है।

अहिल्याबाई द्वारा निर्माण कराये गये, सोमनाथ मन्दिर के दो खण्ड है। ऊपर के खण्ड मे शिवलिग स्थापित है। इसके नीचे तत्वगृह है।

सोमनाथ मन्दिर से छह किलोमीटर की दूरी पर भालूपुर ग्राम मे भालक तीर्थ है। कहा जाता है यही एक पीपल के वृक्ष के नीचे लेटे हुए श्रीकृष्ण के चरण मे बाण लगा था। यहा कई मन्दिर है।

प्राचीन सोमनाथ मन्दिर के अवशेष आज भी अरब सागर तट पर देखे जा सकते है, किन्तु इन अवशेषो का अधिकतर भाग समुद्र मे विलीन हो गया है। ❑

अध्याय चार

1. श्रीकृष्ण जन्म स्थान

मथुरा और वृन्दावन के आसपास का क्षेत्र, जिसका विस्तार 84 कोस बताया गया है, ब्रज मण्डल के नाम से प्रसिद्ध है। इसके अन्तर्गत मथुरा, वृन्दावन, गोकुल, गोवर्धन, बरसाना, नन्द गाव आदि क्षेत्र आते है। इस क्षेत्र का माहात्म्य कई पुराणो मे वर्णित है। लिखा है कि ब्रज का रज उडकर जिस प्राणी के सिर पर पड जाये, वह मुक्त हो जाता है। बराह पुराण मे कहा गया है कि मेघा नक्षत्र पूर्णिमा को प्रयास स्नान का जो फल है वह प्रतिदिन इस तीर्थ के स्नान का फल है। मथुरा मे एक क्षण रहने का जो फल है वह सहस्र वर्ष काशी वास के समान है।

यही मथुरा नगरी मे राजा कस की कारागृह मे भगवान कृष्ण ने जन्म लिया था। यही कस का वध कर अपने माता–पिता बासुदेव व देवकी को कारागृह से मुक्त कराया था।

मथुरा उत्तर प्रदेश का एक प्रमुख नगर एव सप्तपुरियो मे एक पुरी है। यह अति प्राचीन तीर्थ है। इसका पौराणिक नाम मधुवन अथवा मथुरा था। भगवान श्रीकृष्ण ने तो द्वापर के अत मे यहा अवतार लिया, कितु यह क्षेत्र अनादि काल से परम पावन माना जाता है।

मथुरा दिल्ली से 147 किलोमीटर और आगरा से 54 किलोमीटर दूर यमुना नदी के तट पर स्थित है।

यह हिन्दुओ के तीर्थस्थल के अलावा बौद्ध और जैन धर्म का भी केद्र रहा है। बौद्ध धर्म के केद्र के रूप मे मथुरा का उल्लेख अपने यात्रा विवरण मे फाह्यान ने किया है। इसी प्रकार 19वे और 21वे तीर्थंकर मल्लीनाथ व नेमिनाथ के नाम भी मथुरा से जुडे हुए है।

मथुरा का इतिहास तीन विनाशक हमलो का भी शिकार रहा है। सन् 1017 मे महमूद गजनवी ने मथुरा को लूटा और आग लगवा कर नष्ट कर दिया। इसके बाद सन् 1500 मे सिकन्दर लोदी ने मथुरा को तहस–नहस कर

दिया और सन् 1669 ई मे सम्राट औरगजेब ने इसे भ्रष्ट किया। अब इस क्षेत्र मे 500 वर्षो से अधिक के प्राचीन मन्दिर नही मिलते। केवल ब्रज की भूमि, यमुना नदी और गिरिराज गोवर्धन ही प्राचीन काल के है।

मथुरा यमुना नदी के तट पर बसा है। यमुना नदी भी सप्त पुण्य नदियो मे एक है। इस तीर्थ मे यमुना स्नान और निवास से ही पुण्य फल प्राप्त होता है। इस नदी मे स्नान का माहात्म्य है।

मथुरा मे श्री यमुना जी के किनारे 24 मुख्य घाट है। जिसमे लगभग आधे घाट विश्राम घाट से उत्तर और आधे दक्षिण मे है। विश्रोम घाट इसमे मुख्य घाट है। कहते है कि कस वध के पश्चात यहा पर श्रीकृष्ण ने विश्राम किया था। यहा सायकालीन यमुना की आरती दर्शनीय होती है। यम द्वितीया को यहा स्नानार्थियो का मेला लगता है। घाट के पास ही श्री बल्लभाचार्य की बैठक है।

सतीबुर्ज विश्राम घाट के निकट सन् 1570 ई मे लाल पत्थरो से निर्माण कराया हुआ एक गुबज है। कहा जाता है कि कस वध के पश्चात उसकी रानी यही सती हुई थी।

प्राचीन मथुरा नगर वहा था जहा आज केशवदेव का कटरा है। वहा जन्म भूमि स्थान पर ब्रजनाम का बनवाया श्री केशवदेव का मन्दिर था जिसे तुडवाकर औरगजेब ने मस्जिद बनवा दी। मस्जिद के पीछे दूसरा केशव मन्दिर बन गया है। मन्दिर के पास पोतरा कुण्ड नामक विशाल कुण्ड है। इसके पास ही कृष्ण जन्म भूमि का मन्दिर है। यहा एक पुराना गगाजी का मन्दिर भी है। इसी ओर भूतेश्वर महादेव के पास ककाली टीले पर ककाली देवी का मन्दिर है। इसके आगे बलभद्र कुण्ड तथा बलदेव जी और जगन्नाथ जी के मन्दिर है।

बाराह पुराण मे कहा गया है कि जो मथुरा के प्राप्त होने पर उसकी प्रदक्षिणा करता है, उसने सातो द्वीपवाली पृथ्वी की प्रदक्षिणा कर ली। ब्रजमडल की परिक्रमा को वन यात्रा कहते है। यह परिक्रमा प्रतिवर्ष भाद्रपद शुक्ल चतुर्दशी से प्रारभ होकर पूरे डेढ मास मे पूर्ण होती है। इसमे ब्रजमडल के सभी तीर्थ आ जाते है। प्रति वर्ष सहस्रो यात्री इस यात्रा मे सम्मिलित होते है।

प्रत्येक एकादशी तथा अक्षय नवमी को मथुरा परिक्रमा होती है। देवशयनी तथा देवोत्थानी एकादशी को मथुरा वृन्दावन की सम्मिलित परिक्रमा की जाती है, जिसे 'वन विहार' कहते है।

श्रीकृष्ण जन्माष्टमी के अवसर पर मथुरा के सभी मन्दिरो को सुरूचिपूर्ण ढग से सजाया जाता है और भजन कीर्तन के विशेष आयोजन किये जाते है, जिनका प्रसारण आकाशवाणी व दूरदर्शन के माध्यम से भी किया जाता है। श्रावण व भाद्रपद महीनो मे लाखो लोग मथुरा व वृन्दावन की यात्रा करते है तथा श्रीकृष्ण के प्रति अपनी आस्था व भक्ति प्रकट कर अपने को सौभाग्यशाली मानते है। ☐

2. गुरुद्वारा सचखंड श्री हजूरसाहब

महाराष्ट्र

यह ऐतिहासिक गुरुद्वारा गोदावरी नदी के किनारे स्थित है। हजूरसाहब नादेड की महत्ता इसलिए है कि यह सिखो के पाच तख्तो मे से एक है।

गुरु गोविन्द सिह जी नादेड के इलाके मे गोदावरी के तट पर सुदर प्राकृतिक दृश्यो मे अपना तम्बू लगाकर टिके हुए थे। थोडे समय मे उन्होने भूमि का एक टुकडा मोल लेकर एक मकान बनवा लिया। यहा गुरुजी पर्याप्त समय तक रहे और हर ओर से काफी सिख यहा आकर इकट्ठे हुए। यहा पर गुरुजी का प्रात काल भजन कीर्तन मे व्यतीत होता, दोपहर को लगर मे भोजन करते। जिसमे गरीबो को भी भोजन कराया जाता था। दोपहर के पीछे ग्रथ की कथा सुनते और कभी कभी शाम को शिकार खेलने निकलते।

यहा पर एक साधु नारायणदास अथवा माधवदास बैरागी रहता था, जिसको गुरुजी मिले। माधवदास बैरागी अमृतपान करके बदासिह बहादुर बन गया। इस बहादुर योद्धा ने सिख इतिहास को एक जबरदस्त मोड दिया। बदासिह बहादुर ने 1709 से लेकर 1715 तक सात वर्षो मे देश के उत्तर पश्चिम मे मुगल शासन की जडे हिला दी और पजाब की आजादी के लिए रास्ता खोल दिया।

एक रात गुरुजी को अकेले सोये हुए देखकर एक पठान ने उनके पेट मे कटार घोप दी। गुरुजी घाव लगते ही सावधान हो गये। एक हाथ मे घाव

को दबाकर दूसरे हाथ मे तलवार लेकर अपने कातिल पर ऐसा भरपूर वार किया कि उसे वही ढेर कर दिया। जख्म बेशक गहरा नही था, पर नाजुक अवश्य था। सिख इकट्‌ठे हो गये। योग्य जर्राह बुलाकर मरहम पट्‌टी की गई और जख्म सी दिया। कुछ ही दिनो मे घाव भरने लगा और स्वस्थता के चिन्ह दिखाई पडने लगे। गुरुजी ने एक दिन कमान से तीरन्दाजी के निशाने का यत्न किया तो जोर लगाने के कारण घाव फिर ताजा हो गया। सूजन हो गई। घाव को ठीक करने की पूरी कोशिश की गई, लेकिन ठीक न हो सका और दशा प्रतिदिन बिगडती गई। गुरुजी का अतिम समय करीब आ गया।

गुरुजी ने पाच पैसे और नारियल मगवा कर प्रचलित परपरा के अनुसार गुरु ग्रन्थ के आगे रखे। माथा टेककर खालसे को कहा कि हमारे बाद खालसे के गुरु केवल ग्रन्थजी होगे। उन्होने 7 सितम्बर, 1708 को नादेड मे ज्योति जोत समाने से पहले निम्न वचन कहे–

"आज्ञा भई अकाल की, तबहि चलायो पथ।
सब सिखन को हुकुम है, गुरु मानियो ग्रन्थ।
गुरुग्रन्थ जी मानियो, पगट गुरा की देह।
जाके मन मे भेद है, खोज शब्द से लेह।"

गुरुग्रन्थ साहब को गुरु पद आसीन करने के दूसरे दिन 7 सितम्बर, 1708 को गुरु गोविन्द सिह अपनी ज्योति अकाल पुरुष मे लीन हो गये।

जिस स्थान पर गुरुजी परम धाम सिधारे थे, वही पर गुरुद्वारा सचखड, श्री हजूरसाहब नादेड स्थित है। महाराजा रणजीत सिह के आदेशानुसार यह गुरुद्वारा 1832 ई. और 1873 के अतराल मे निर्मित किया गया। इस दुमजिले भवन को गुरुद्वारा सचखड, श्री हजूरसाहिब और अविचल नगर साहिब कहते है। इस इमारत का नक्शा हरमन्दिर साहब अमृतसर से मिलता जुलता है। गुरुद्वारे की अन्दरूनी सजावट भी हरमन्दिर साहब जैसी है। अदर के कमरे को अगीठा साहब कहते है। इसकी दीवारो पर सोने का पत्तर जडा हुआ है। पहली मजिल पर गुरुग्रन्थ साहब का पाठ दिन रात होता है। गुरुद्वारे का गुबद और कलश ताबे की चादरो का बना हुआ है जिस पर सोने का पानी चढा हुआ है।

गुरु गोविन्द सिह जी के स्मृति चिन्ह गुरुद्वारे मे सभाल कर रखे हुए है। इनमे सुनहरा खजर, एक बन्दूक, 35 तीरो सहित तरकश, दो धनुष, कीमती पत्थरो से जुडी हुई एक ढाल और पाच सुनहरी तलवारे है। ☐

3. पशुपतिनाथ

पशुपतिनाथ मन्दिर नेपाल का विख्यात मन्दिर है जो काठमाडू के पूर्वी भाग मे वागमती नदी तट पर स्थित है। नेपाल एक हिन्दू राष्ट्र है।

काठमाडू नेपाल की राजधानी है। इस नगर के चारो ओर पर्वत श्रेणिया है, जिनकी घाटी मे यह नगर वसा हे। इस घाटी का क्षेत्रफल 218 वर्ग मील है। सागर के जलस्तर से इस घाटी की ऊँचाई 4423 फुट है। इस नगर का प्राचीन नाम कान्तिपुर था। सन् 1596 मे, यहा एक विशाल काष्ठ मण्डप का निर्माण हुआ, तव उसी काष्ठ मण्डप के नाम से इस नगर को काठमाडू या काठमाडौ कहा जाने लगा। नेपाली भाषा मे मडप को मडू अथवा माडौ कहते है।

इसी नगर मे वागमती और विष्णुमती नदी का सगम है। नगर के पूर्वी भाग मे पशुपतिनाथ का मन्दिर है। इसके अलावा नगर मे अन्य कई मन्दिर है। वागमती नदी के तट पर नेपाल के रक्षक, मछदरनाथ (मत्स्येन्द्र नाथ) का मन्दिर है। पशुपतिनाथ मन्दिर विष्णुमती नदी के तट पर हे। पशुपतिनाथ मन्दिर के गर्भ गृह मे पञ्चमुख शिवलिग है जो भगवान शकर की अष्ठ तत्व मूर्तियो मे एक माना जाता है। महर्षि रूपधारी भगवान शिव का यह शिरोभाग है। पास ही एक मण्डप मे नन्दी की मूर्ति है। पशुपतिनाथ मन्दिर के समीप ही देवी का विशाल मन्दिर है।

मुख्य मन्दिर मे महर्षि रूपधारी शंकर का शिरोभाग है जिसका पृष्ठ भाग केदारनाथ मे स्थित है। केदारनाथ के दर्शन के पश्चात अथवा पहले यहा का दर्शन अनिवार्य है अन्यथा केदारनाथ की यात्रा पूर्ण नही मानी जाती।

पशुपतिनाथ मन्दिर का अधिकाश भाग काष्ठ निर्मित है, परतु इसके चारो दिशाओ मे जितने भी द्वार है, सब चादी के है। यह मन्दिर प्रात. मध्याह्न एक बजे तक और साय काल 7 बजे के बाद से 10 बजे तक खुला रहता है। प्रात दस वजे के बाद से एव सायं काल 7 बजे के बाद चारो द्वारो से दर्शन होते है। मन्दिर के प्रागण मे कई देव मन्दिर है, जिनमे पूर्व की ओर गणेश मन्दिर है। मन्दिर के प्रागण मे दक्षिण की ओर एक द्वार है, जिसमे एक सौ चौरासी शिवलिगो की पक्तिया है। कहा जाता है कि इसके दर्शन और परिक्रमा करने से चौरासी लाख योनियो मे जन्म नही होता। इसके

निकट ही वागमी तट पर कई और भी मन्दिर है। मध्याह्न बारह बजे, श्रृगार और आरती का बडा सुदर दर्शन होता है।

पशुपतिनाथ को पारसनाथ भी कहा जाता है। इस कारण यह किवदन्ती प्रचलित हो गई है कि यह शिवलिग पारस का है। सुनने मे आया है कि यहा पारस का एक छोटा शिवलिग है जो मन्दिर के ऊपरी खड मे किसी गुप्त भाग मे रखा है जिसका कोई दर्शन नही कर सकता। वह इतना तेजोमय है कि उसके निकट किसी के जाने की सामर्थ्य नही है। उससे इतनी ज्योति निकलती है कि वहा प्रकाश की आवश्यकता नही पडती।

पशुपतिनाथ मन्दिर से थोडी दूर, गुह्येश्वरी देवी का मन्दिर है। यह मन्दिर विशाल और भव्य है। यह पाच शक्तिपीठो मे है। सती के दोनो जानु यहा गिरे थे।

राजभवन के द्वार पर एक हनुमान मूर्ति स्थापित है, इसी कारण इस राजभवन को हनुमान ढोका कहा जाता है। नेपाली भाषा मे द्वार को ढोका कहते है। इसके सम्मुख तीन खड का एक विशाल काष्ठ मडप है जिसका निर्माण राजा नरसिह मल्ल ने सन् 1596 ई मे कराया था। यह मडप लगभग पचास मीटर लम्बा और इतना ही चौडा है। इसी काष्ठ मडप के नाम पर इस नगर का नाम काठमाडू या काठमाडौ पडा। इस मडप मे गोरखनाथ की एव अन्य कई देव मूर्तिया है।।

भारत से काठमाडू जाने वालो के लिए रक्सौल रेलवे स्टेशन जाना पडता है, जिसके थोडी दूर बाद, नेपाल सीमा प्रारम्भ होती है। काठमाडू के लिए अब हवाई जहाजो का भी आवागमन होता है। मोटर और बसो से भी जाया जा सकता है। ☐

4. दरगाह हज़रत साबिर कलियरी

आपका जन्म सन् 1105 ई को कस्बा खोरवाल, मुल्तान मे हुआ जो बाबा फरीद की जगह है। आपके पिता हजरत गौशुल आजम शेख अब्दुल जिलानी के पोते थे और आपकी माता बाबा फरीदउद्दीन गजेशकर की सगी बहन थी। आप बचपन मे ही इतने कुशाग्र बुद्धि के थे कि जो तालीम बच्चे महीनो मे हासिल

करते थे, आप वह शिक्षा थोडे दिनो मे ही पूरी कर लेते थे। आपकी आठ साल की धार्मिक शिक्षा अधिकतर घर पर ही हुई। घर की तालीम से आप इतने निपुण हो गये कि इनका लगाव रुहानी शिक्षा की तरफ चला गया। आप हर समय रुहानी शिक्षा हासिल करने के इच्छुक और वेचेन रहने लगे। रुहानी शिक्षा मे आपकी इच्छा और बैचेनी देखकर आपकी माता ने आपको अपने भाई हजरत बाबा फरीद की देख रेख और सरपरस्ती मे दे दिया। जब आपकी माता ने आपको अपने भाई को सौप दिया तो बाबा फरीद बहुत ही प्रसन्न हुए और प्रसन्नता के साथ अपनी बहन से कहा कि तुमने ऐसा फरमाबरदार और मुबारक बेटा लाकर दिया है जो सारी दुनिया को नूर से चमकाने वाला है।

बाबा फरीद के पास आते ही हजरत मख्दूम की रुहानी शिक्षा शुरू हो गई। आप बारह साल के भी नही हुए थे कि हजरत बाबा ने आपको अपने हाथ से दीक्षित किया। वेटे को भाई को सौपकर हजरत मख्दूम की माता ने हज जाने का इरादा किया और अपने भाई से कहा कि भाई इसका ख्याल रखना। मेरा बच्चा भूखा न रहने पाए। बाबा फरीद ने हजरत मख्दूम को उनकी माता के सामने बुलाकर हुकुम दिया कि बेटा सुबह से तुम ही गरीबो को लगर खाने (भोजन) को बाटा करो। इस तरह हजरत बाबा फरीद ने बहन की इतमिनान के लिए भाजे को लगर खाने का प्रबधक बना दिया और मा विश्वस्त होकर अपने आख के तारे को भाई के पास छोडकर हज चली गयी।

हजरत मख्दूम दूसरो को लगर तो बाटते रहे परतु खुद खाना पीना छोड दिया था, इसलिए बहुत दुबले पतले और कमजोर हो गये थे। जब आपकी माता ने हज से लौटकर बेटे की हालत देखी तो भाई से कहा कि मैने जाते समय आपसे प्रार्थना को थी कि मेरे बच्चे को भूखा मत रखना, लेकिन आपने तो इसे एक दिन भी खाना नही दिया। बाबा फरीद ने जवाब दिया, "मैने तो तुम्हारे सामने ही अलाउद्दीन को लगर खाने का अधिकार दे दिया था, इसमे मेरा क्या कसूर है?" यह कहकर बाबा फरीद ने हजरत मख्दूम को बुलाया और उनसे भूखा रहने का कारण पूछा तो आपने जवाब दिया कि मुझको लगर (भोजन) बाटने की आज्ञा दी गई थी, उसमे से खाने को नही। यह जवाब सुनकर बाबा फरीद दग रह गये और फरमाया कि यह साबिर (सब्र करने वाला) है। अल्लाह ने इसको खाने के लिए पैदा ही नही

किया। इससे पता चलता है कि हजरत मख्दूम की सब्र और बर्दाश्त करने की शक्ति कितनी ऊँची थी।

हजरत मख्दूम एक जलाली सत माने जाते है। जब हजरत मख्दूम कलियर आये तो यहा के ऑलियो ने आपका विरोध शुरू कर दिया और बात इतनी बढ गई कि हजरत के सेवको और मुरीदो को तकलीफ देने लगे, यहा तक कि ऑलियो की जमात ने जामा मस्जिद से आपको और आपके सेवको और मुरीदो को पहली पक्ति से उठ जाने को और पीछे जाकर बैठ जाने को कहा। जब बात और आगे बढी तो आपने ध्यान से सर उठाकर कहा कि इस देश के वली को मस्जिद मे आगे बैठने का अधिकार है तो ऑलियो ने सवाल किया कि तुम्हारे वली होने का तर्क क्या है? आपने जवाब दिया कि हमारे वली होने का तर्क है कि तुम सभी इसी समय मर जाओगे और शहर के निवासियो मे से भी कोई जिन्दा नही रहेगा तथा बहुत दिनो तक यह शहर बस नही पायेगा।

यह कहते हुए आप अपने साथियो सहित जामा मस्जिद से बाहर निकल आये। आपके मस्जिद से निकलते ही मस्जिद गिर गयी, हजारो आदमी उसमे दबकर मर गये, शहर मे ऐसी जबरदस्त बीमारी आ पडी कि कोई जिन्दा नही बचा। आपके गुस्से की निगाह जब जमीन पर पडी तो बारह कोस तक पेड, जमीन, गाव, आदमी, हर एक चीज जल कर राख हो गयी। आपमे वैसे तो शुरू से ही बहुत ज्यादा जलाल था लेकिन कलियर की बर्बादी के बाद आपका जलाल इतना बढ गया कि जिस स्थान पर आपकी निगाह पडती थी वही आग की लपटे उठने लगती थी।

आपका स्वर्गवास सन 1291 हि को हुआ। हजरत शेख शमसुद्दीन तुर्क पानीपत को आपके खलीफाओ मे सबसे बडी जगह हासिल थी। आपने अपने जीवन को हजरत मोईनुद्दीन की सेवा मे दान कर दिया था। आप इन चौबीस सालो मे हजरत से एक दिन भी अलग नही हुए। हजरत शेख को लोगो से हजरत के स्वर्गवास की खबर मिली तो वे जल्द ही कलियर पहुच गये और देखा वास्तव मे हजरत मख्दूम की मौत हो चुकी है और आपके जनाजे के आस पास शेर, भेडिये घेरा डाले बैठे है। हजरत शेख के पहुचने के बाद सारे पशु चले गये, तब हजरत शेख के कफन दफन के बाद फर्द के पवित्र शरीर को कब्र मे दफना दिया। ऐसा कहा जाता है कि आपके स्वर्गवास के बाद भी आपके जलाल का यह हाल था कि आपके रोजे

मुबारक पर से कोई चिडिया उड कर नही जा सकती थी और यदि कोई भूले भटके उडकर चली भी जाती तो गिरकर मर जाती है।

हजरत के रोजह के जलाल और गुस्से का यह आलम था कि जब कोई आपके मजार पर हाज़िरी के लिए जाता तो दूर से ही आग की लपटे उसके तरफ बढती, तो वह वही ठिठक कर रह जाता। आखिर मे एक वहुत बडे पहुचे हुए बुजुर्ग के आने से हजरत के गुस्से मे कमी हुई और रूडकी के समीप आपका पवित्र मजार निर्मित हुआ और लोगो को आपके पवित्र मजार मे हाजिरी का मौका मिला।

हर साल उर्स के मौके पर हजारो लोग दरगाह पर जमा होकर अपनी श्रद्धाजलि अर्पित करते है और कव्वालियो का कार्यक्रम आयोजित किया जाता है जिसमे देश भर के प्रसिद्ध कव्वाल अपना कलाम पेश करते है। □

5. कन्याकुमारी

कन्याकुमारी देवी का अति प्राचीन मन्दिर भारत के दक्षिण मे कन्याकुमारी अन्तरीप मे स्थित है। यहा तीन ओर सागर है। पूर्व मे बगाल की खाडी, दक्षिण मे हिन्द महासागर और पश्चिम मे अरब सागर है। भारत के द्वादश प्रधान देवी विग्रहो मे कन्याकुमारी देवी भी एक है। यह तीर्थ अति पवित्र सिद्ध क्षेत्र माना जाता है।

यहा पर कन्याकुमारी का प्रधान और विशाल मन्दिर है। इसमे देवी कन्याकुमारी की मूर्ति प्रतिष्ठित है। यह बडी भव्य देवी मूर्ति है। दर्शन करते ऐसा आभास होता है कि साक्षात देवी ही खडी है। देवी के एक हाथ मे माला है। नाक और मुख के ऊपर बडे–बडे हीरे है। देवी का दर्शन प्रात काल चार बजे से मध्याह्न ग्यारह बजे तक और साय पाच बजे से रात्रि नौ बजे तक होता है।

गर्भ गृह के पार्श्व मे एक द्वार है जिसके भीतर इन्द्रकान्त विनायक का मन्दिर है। इसके दूसरे द्वार पर भद्रकाली का मन्दिर है। यह देवी 51 शक्ति पीठो मे एक है। मुख्य मन्दिर कई घेरो मे है। वहा तक जाने के लिए

कई द्वार पार करने पडते है।

देवी मन्दिर के दक्षिण पश्चिम के सागर तट पर गाधी मडप है। कन्याकुमारी मन्दिर के पूर्व की ओर एक शैलद्वीप है, जिस पर विवेकानन्द के अनुयायियो ने एक मन्दिर का निर्माण कराकर विवेकानन्द की प्रतिमा स्थापित की है।

विवेकानन्द शैलद्वीप पर चरण पादु का मन्दिर है। इसमे देवी कुमारी के चरण चिन्ह है।

यहा सागर स्नान का अधिक माहात्म्य है। कन्याकुमारी मन्दिर के पूर्व और दक्षिण की ओर कई तीर्थ है जिनमे मातृ तीर्थ अधिक विख्यात है। समुद्र घाट पर गणपति विनायक का छोटा मन्दिर है।

सूर्योदय और सूर्यास्त का दृश्य जैसा यहा दिखाई पडता है, अन्यत्र कही भी नही दिखता। हजारो लोग इस अनुपम दृश्य को देखने के लिए प्रात साय यहा एकत्रित होते है जिनमे विदेशी भी होते है जो विशेष रूप ये दृश्य देखने के लिए यहा की यात्रा करते है।

देव मन्दिर के समीप देवस्थानक ट्रस्ट के आवास गृह है, जो यात्रियो के लिए अधिक सुविधाजनक है। इसके अलावा कुछ दूर पर केरल भवन, धर्मशाला तथा विवेकानन्द कमेटी के भी आवास गृह है, इनमे थोडा शुल्क देकर ठहरा जा सकता है। ❑

6. चित्रकूटधाम

चित्रकूट के घाट पर भई सन्तन की भीड।
तुलसीदास चन्दन घिसें तिलक देत रघुबीर।।

परम पावन है यह स्थल जहा भगवान राम ने अपने बनवास काल के प्रारम्भ मे कुछ समय निवास किया था। रानी केकैई के दुराग्रह पर राजा दशरथ ने विवश होकर अपने ज्येष्ठ पुत्र राम को 14 वर्ष का बनवास दिया। अपने पिता की आज्ञा का पालन करने हेतु उन्होने अपनी पत्नी सीता व छोटे भाई लक्ष्मण सहित अयोध्या त्याग कर वन के लिए प्रस्थान किया। सरयू नदी पार कर चित्रकूट

ही वह स्थान था जहा इन तीनो ने एक पर्ण कुटी का निर्माण कर निवास की व्यवस्था की। भरतजी अनेक अयोध्या निवासियो के साथ इसी स्थान पर श्रीराम से विनती करने आये थे कि वे पुन अयोध्या वापस चले और राजगद्दी पर सुशोभित हो। किन्तु राम ने भरत का आग्रह स्वीकार नही किया और कहा कि पिता के आदेश का पालन कर भरत स्वय ही अयोध्या की गद्दी पर बैठे और वहा का राज करे। जब भरत अपने प्रयास मे विफल हो गये तो अत मे उन्होने श्रीराम से विनयपूर्वक विनती की कि वे उन्हे अपनी चरणपादुकाए ही दे दे जिन्हे वे अयोध्या के राज सिहासन पर सुशोभित कर श्रीराम के नाम पर ही राज काज चलायेगे। श्रीराम ने भरत का यह आग्रह स्वीकार कर अपनी खडाऊँ भरत को दी और भरत ने इन्हे शिरोधार्य कर अयोध्या वापस आकर इन्हे विधिवत राज सिहासन पर सुशोभित किया और स्वयं राज सिहासन के नीचे बैठ कर श्रीराम की अनुपस्थिति मे राज काज चलाया। चित्रकूट ऐसा ही पावन स्थान है जिसके कण कण मे आस्थावान व्यक्ति भगवान राम के दर्शन करते है। ऐसा भी कहा जाता है कि रामभक्त तुलसीदास जी ने भगवान राम के दर्शन चित्रकूट के घाट पर ही किये थे जिसकी पुष्टि के रूप मे उपरोक्त उद्धृत दोहे की रचना की गई है।

वैसे भी चित्रकूट सदा से तपोभूमि रही है। महर्षि अत्रि का यहा आश्रम था जिसमे अनेक तपस्वी और मुनिगण रहा करते थे। इसी क्षेत्र मे गोस्वामी तुलसीदास को भगवान राम का दर्शन प्राप्त हुआ था। इस तीर्थ के माहात्म्य रामायण, महाभारत, स्कद पुराण, पद्म पुराण आदि ग्रन्थो मे विस्तारपूर्वक दिये गये है।

चित्रकूट बस्ती का भौगोलिक नाम सीतापुर है। यह बस्ती पयस्विनी अर्थात् मन्दाकिनी तट पर बसी है। मध्य रेलवे के मानिकपुर झासी रेलमार्ग पर 39 किलोमीटर की दूरी पर चित्रकूट धाम कर्वी स्टेशन है। जहा से सात किलोमीटर की दूरी पर सीतापुर अर्थात् चित्रकूट बस्ती है।

चित्रकूट मे कामदगिरि की परिक्रमा तथा देवदर्शन मुख्य है। यहा पयस्विनी नदी पर चौबीस पक्के घाट है। जिनमे चार मुख्य है

1 राघव प्रयाग, 2. कैलास घाट, 3 राम घाट और 4 धृतकुल्या घाट।

गोस्वामी तुलसीदास के रहने के दो स्थान चित्रकूट मे है। एक तो रामघाट के पास गली मे और दूसरा कामतानाथ (कामदगिरि) की परिक्रमा मे चरणपादुका के पास।

रामघाट के ऊपर यज्ञवेदी मन्दिर है। कहते है कि यहा ब्रह्माजी ने यज्ञ किया था। उसी मन्दिर के जगमोहन मे उत्तर की ओर पर्णकुटी स्थान है, जहा श्रीराम बनवास के समय निवास करते थे।

राघव घाट यहा का मुख्य घाट है। यहा पयस्विनी मे धनुषाकार बहता एक नाला मिलता है, जिसे लोग मन्दाकिनी कहते है। कहते है कि भगवान श्रीराम ने इसी घाट पर स्वर्गीय महाराज दशरथ को तिलाजलि दी थी। इस घाट के ऊपर भक्त गजेन्द्रेश्वर का मन्दिर है। इस घाट पर स्नान का विशेष महत्व माना जाता है।

कामदगिरि (कामतानाथ) की परिक्रमा– यह एक छोटी पहाडी है। यह पहाडी परम पवित्र मानी जाती है। इस पर ऊपर नही चढा जाता। इसी की परिक्रमा की जाती है। परिक्रमा साढे चार किलोमीटर की है। पूरा परिक्रमा मार्ग पक्का है।

परिक्रमा मे पहला स्थान मुखारविन्द पडता है। यह स्थान अत्यत पवित्र माना जाता है। उसके पश्चात परिक्रमा मे छोटे बडे अनेको मन्दिर मिलते है। उनमे मुख्य है श्री हनुमानजी, साक्षी गोपाल, लक्ष्मी नारायण, श्री रामजी का स्थान, तुलसीदास जी का स्थान, केकैयी और भरत जी का मन्दिर, चरण पादुका और लक्ष्मण जी का मन्दिर।

चित्रकूट मे कई स्थानो पर चरण चिन्ह मिलते है, जिनमे तीन मुख्य है 1 चरण पादुका, 2 जानकी कुड और 3 स्फटिक शिला। चरण पादुका के स्थान मे गुमटी के समान तीन मन्दिर बने है। एक मे बाये पैर का चिन्ह है जो छोटा है। दूसरे मे बहुत बडे पैर का चिन्ह है। तीसरे मे बहुत से पद चिन्ह है। कहा जाता है कि यहा श्रीराम भरत से मिले थे। उस समय पाषाण द्रवित होने से उनमे चरण चिन्ह बन गये।

चरण पादुका के पास ही लक्ष्मण पहाडी है। ऊपर जाने के लिए 150 सीढी चढनी पडती है। कहा जाता है कि यह लक्ष्मण जी का प्रिय स्थान था। वे रात मे यही बैठकर पहरा दिया करते थे।

हनुमान धारा एवं सीता रसोई– मदाकिनी नदी के दूसरे तट से तीन किलोमीटर की दूरी पर एक पहाडी है, जिस पर 350 सीढिया चढने पर हनुमान जी एक मूर्ति मिलती है। इस मूर्ति के ऊपर से पतली जलधारा गिरती है, इसी को 'हनुमान धारा' कहते है। हनुमान धारा से सौ सीढी ऊपर

'सीता रसोई' है।

जानकी कुंड— मन्दाकिनी नदी का एक घाट है। यहा जानकी जी स्नान किया करती थी। इसलिए उसे जानकी कुड कहा जाता है। नदी तट पर श्वेत पत्थरो पर जानकी जी के वहुत से चरण चिन्ह है। घाट के ऊपर जानकी मन्दिर है। यहा से एक या डेढ किलोमीटर की दूरी पर स्फटिक शिला है। यही इन्द्र के पुत्र जयत ने कौवे का रूप धारण करके श्री सीता जी को चोच मारी थी।

अनुसूया (अत्रि आश्रम)— स्फटिक शिला से 5 किलोमीटर दक्षिण की ओर नदी तट पर एक पहाडी है, जिसकी तराई मे महर्षि अत्रि का आश्रम है। इस आश्रम का प्रचलित नाम अनुसूयाजी है। यहा अत्रि, अनुसूया, दत्तात्रेय, दुर्वासा, और चन्द्रमा की मूर्ति है। पहाडी के ऊपर कई गुफाये है। एक गुफा मे हनुमानजी की मूर्ति है। चित्रकूट का यह सवसे रमणीक स्थान है।

गुप्त गोदावरी— अनुसूयाजी से 9 किलोमीटर की दूरी पर यह स्थान है। एक अधेरी गुफा मे पन्द्रह सोलह गज भीतर सीता कुड है जिसमें झरने का जल गिरता रहता है। यह कुण्ड कम गहरा है। यहा से जल प्रवाहित होकर गुफा के बाहर कुछ दूरी पर जाकर लुप्त हो जाता है, इसलिए इसे गुप्त गोदावरी कहते है।

भरत कूप— चित्रकूट बस्ती से छह किलोमीटर की दूरी पर भरत कूप तीर्थ है। श्रीराम के राज्याभिषेक के लिए समस्त तीर्थो का जल भरतजी ले गये थे। वह जल महर्षि अत्रि के आदेश से इस कूप मे डाला गया। यह कूप सर्व तीर्थ स्वरूप माना जाता है। इस कूप के निकट राम और भरत के मन्दिर है।

राम शय्या— भरत कूप, चित्रकूट मार्ग पर यह स्थान है। एक शिला पर दो व्यक्तियो के लेटने के चिन्ह है और मध्य मे एक धनुष का चिन्ह है। कहते है कि इसी शिला पर सीता और राम ने एक रात्रि विश्राम किया था।

चित्रकूट भगवान राम की नित्य क्रीडा भूमि है। वहा वे नित्य निवास करते है। वे न कभी चित्रकूट छोडते है, न अयोध्या। इसीलिए चित्रकूट का माहात्म्य विशिष्ट है। ☐

7. सेन्ट जेम्स चर्च

दिल्ली

सेन्ट जेम्स चर्च जो कश्मीरी गेट, दिल्ली मे स्थित है, प्रोटेस्टेन्ट चर्च है। भारत मे प्रोटेस्टेन्ट मिशनरी बहुत बाद मे आये। ईसाई धर्म मे सुधार आदोलन से ईस्ट इडिया कपनी सबधित व्यापारी तथा उसके निदेशक ज्यादा प्रभावित थे। ईस्ट इडिया कपनी चर्चो के निर्माण को प्रोत्साहित नही करती थी, इसलिए व्यापारियो और निदेशको ने अपने स्वय के खर्च पर चर्च का निर्माण कराया। कश्मीरी गेट के सेन्ट जेम्स चर्च का निर्माण कर्नल स्किनर ने सन् 1841 मे कराया था।

19वी शताब्दी के मध्य मे ईस्ट इडिया कपनी की समृद्धि, शक्ति और प्रतिष्ठा बहुत बढ गई थी। तब प्रोटेस्टेन्ट मिशनरी आने शुरू हुए और चर्चो के कार्य के लिए उन्हे काफी धन भी मिलने लगा, तभी प्रोटेस्टेन्ट चर्चो का भारत मे अच्छे ढग से प्रारम्भ हुआ। इससे पहले चर्च की इमारते लोगो ने अपने निजी साधनो का उपयोग करके बनवाई थी। इसी परपरा मे कश्मीरी गेट के सेन्ट जेम्स चर्च का कर्नल स्किनर ने सन् 1841 मे निर्माण कराया था।

सेन्ट जेम्स चर्च, दिल्ली का एक पुराना और मशहूर प्रोटेस्टेन्ट चर्च है। □

8. ब्रजेश्वरी देवी मन्दिर

हिमाचल

कांगडा 'त्रिगर्त' प्रदेश मे आता है। 'त्रिगर्त' का अर्थ है तीन गढ्ढे या तीन नदिया। रावी, व्यास और सतलुज। इन तीन नदियो की घाटियो के अन्तर्गत जो स्थान आते है, उन्हे वैदिक काल मे 'त्रिगर्त' प्रदेश कहा गया था। कहते है कि कागडा नगर को महाभारत काल मे कटोच वश के राजा सुशर्म ने बसाया और यही ब्रजेश्वरी देवी का मन्दिर स्थापित किया। शारदा लिपि मे जो

शिलालेख बैजनाथ मे है, उसमे कागडा को सुशर्मपुर और नगरकोट कहा गया है।

ब्रजेश्वरी माता के मन्दिर मे हर साल करोडो रुपयो का सोना, चादी, हीरे, जवाहरात लोग चढाते थे और इसकी ख्याति दूर–दूर तक पहुच गई थी। पश्चिमी उत्तर प्रदेश के लोगो की यह कुलदेवी रही है। चूकि इस मन्दिर मे करोडो की सपत्ति थी, इसलिए 1019 ई मे महमूद गजनवी कागडा पर हमला करके मन्दिर मे ज़ो कुछ भी सोना, चादी और यहा तक कि चादी से मढे हुए दरवाजे भी ऊँटो पर लाद कर गजनी ले गया।

इसके अतिरिक्त इस स्थान की एक और विशेष महिमा है – जब सतयुग मे राक्षसो का वध करके ब्रजेश्वरी देवी ने विजय प्राप्त की, तो सभी देवताओ ने अनेकानेक प्रकार से उनकी स्तुति की थी। उस समय से मकर सक्रान्ति का पर्व माना गया है। जहां जहां पर देवी के शरीर मे घाव लगे थे, वहा वहा देवताओ ने मिलकर घृत (घी) का लेप किया था। इसे परम्परा मानते हुए आज भी मकर संक्रान्ति के अवसर पर माता के ऊपर पाच मन देशी घी, एक सौ बार शीतल कुए के जल मे धोकर, मक्खन तैयार करके, मेवो तथा अनेक प्रकार के फलो से सुसज्जित करके एक सप्ताह तक जागरण के उपरान्त माई के ऊपर चढा दिया जाता है।

पुराने ग्रन्थो के अनुसार कागडा जालन्धर पीठ का मुख्य गढ रहा है। जब जालन्धर राक्षस का भगवान शकर से युद्ध हुआ तो उसकी सेना मे शुम्भ निशुम्भ ने भी अपनी सारी सेना के साथ भाग लिया। शुम्भ निशुम्भ ने माया द्वारा पार्वती का सृजन कर उसे अपने रथ के साथ रस्सो से जकडकर बाध रखा था। ऐसा रूप देख कर भगवान शकर अत्यत क्रोधित हो शुम्भ निशुम्भ के साथ घोर सग्राम करने लगे। शुम्भ निशुम्भ भयभीत हो समरागण से भागने लगे। उस समय भगवान शकर जी ने उन्हे शाप दिया कि भागते पर वार करना अपराध है पर भगवती पार्वती तुम्हारा वध अवश्य करेगी।

आज कागडा मन्दिर मे देश के कोने–कोने से लोग श्रद्धापूर्वक आते है। माता ब्रजेश्वरी देवी के दर्शन पिण्डी के रूप मे होते है। यहा नित्य नियमपूर्वक माता ब्रजेश्वरी देवी का श्रृगार, पूजन एव आरती इत्यादि की जाती है।

आजकल यह मन्दिर हिमाचल सरकार के अधिनियम के तहत एक कमेटी के सुपुर्द है जिसके अध्यक्ष जिलाधीश कागडा है और पूरी देख रेख मन्दिर अधिकारी जो तहसीलदार के पद का होता है, के अधीन रहती है। यहा नियमित लगर की व्यवस्था है। लगर मे खाना यात्रियो को नि शुल्क दिया

जाता है। इस मन्दिर मे रोजाना सैकडो की सख्या मे श्रद्धालु आते है। नवरात्रो मे यहा पर इतने यात्री आते है कि तिल धरने को भी जगह नही रहती। □

9. कुशीनगर

उत्तर प्रदेश

कुशीनगर जिसे कुसीनारा, कुसीग्राम तथा कुसावती नाम से भी सबोधित किया जाता है, उत्तर प्रदेश के देवरिया जिले मे स्थित है। कुशीनगर मे ही भगवान बुद्ध परिनिर्वाण को प्राप्त हुए थे और यही पर उनका अतिम सस्कार किया गया था।

प्राचीन काल मे श्रावस्ती और राजगृह के बीच कुशीनगर व्यापार का एक बहुत बडा केन्द्र था। यही से होते हुए व्यापारी श्रावस्ती से राजगृह आया जाया करते थे।

कुशीनगर बौद्धो के लिए बहुत ही पवित्र स्थान है। भगवान बुद्ध ने भी कुशीनगर की प्रशसा की थी।

जब बुद्ध अस्सी वर्ष को हो गये, तब वे कुशीनगर आये थे। उनके दो प्रिय शिष्य, सारिपुत्र और मौदग्लायन, पहले ही दिवगत हो चुके थे। उस समय प्रजापति गौतमी, भगवान बुद्ध की सौतेली मा, जो बाद मे भिक्षुणी हो गई थी, यशोधरा (पत्नी) और राहुल (पुत्र) भी नही रहे।

वर्षाकाल मे भगवान बुद्ध वैशाली से वेणुबन गये। वहा पर भगवान बुद्ध बहुत ही अधिक रोगग्रस्त हो गये, जिसके कारण उन्हे बहुत ही अधिक पीडा झेलनी पडी। उन्होने पीडा को बहुत ही धैर्यपूर्वक बर्दाश्त किया। जब कुछ अच्छे हुए तब उन्होने आनन्द से कुशीनगर चलने को कहा। इसके बाद वे कुशीनगर आ गये। भगवान बुद्ध ने पहले ही अपने परिनिर्वाण की घोषणा कर दी थी।

आनन्द को आश्चर्य हुआ कि भगवान बुद्ध ने परिनिर्वाण के लिए कुशीनगर जैसे नगर को क्यो चुना, कुशीनगर जगल मे बसा हुआ था। आनन्द ने प्रार्थना की कि भगवान बुद्ध चम्पा, वाराणसी, (सारनाथ) साकेत, राजगृह, कौशाम्बी या श्रावस्ती जैसे स्थान को पसन्द करे।

भगवान बुद्ध ने आनन्द से कहा, "कुशीनगर का अतीत अति ही गौरवमय रहा है। इससे पहले भी यहा मै कई बार आ चुका हू।"

भगवान बुद्ध आनन्द और अपने अन्य अनुयायियो के साथ कुशीनगर आये। नगर के किनारे मल्लो के शाल बन मे ठहरकर, आनन्द से कहा, "दो शाल वृक्षो के बीच मे उत्तर की ओर सिराहना करके मेरा बिस्तर बिछा दो।"

इसके बाद भगवान बुद्ध एक पैर को दूसरे पैर पर टिका कर दाहिनी करवट करके मननशील मुद्रा मे लेट गये।

भगवान बुद्ध को अपने अतिम समय का आभास हो गया था, इसलिए उन्होने मल्लो को बुला भेजा। मल्ल भगवान बुद्ध के अतिम दर्शनो के लिए दौड पडे।

भगवान बुद्ध ने वहा पर उपस्थित बौद्ध भिक्षुओ को महत्वपूर्ण बाते समझाई। भगवान बुद्ध के ये उपदेश और वार्तायें महा परिनिर्वाण सूत्र के नाम से प्रसिद्ध है। भगवान बुद्ध के अतिम काल मे जो भी घटा, वह सब इसमे वर्णित है।

महा परिनिर्वाण के पहले, भगवान बुद्ध ने आनन्द को अपने अवशेषो के सबध मे निर्दिष्ट किया और अत मे भिक्षुओ से अपने अतिम उपदेश मे कहा, "सभी वस्तुए क्षणिक और व्ययधर्मी है, अपने उद्वार का उपाय स्वय अपने ज्ञान और बुद्धि से करो।"

भगवान बुद्ध ने इसके बाद अतिम सास ली। जब मल्लो को पता लगा तो सभी मल्ल जहा बुद्ध का पार्थिव शरीर विद्यमान था, वहा दौडे हुए आये। बाल, वृद्ध, नवयुवक, नवयुवतिया और वधुए सभी मल्ल परिवारजन छह दिन तक भगवान बुद्ध के पार्थिव शरीर पर पुष्प, सुगन्धित वस्तुओ को अर्पित कर अपना सम्मान प्रकट करते रहे।

सातवे दिन उनका अतिम सस्कार किया। मल्लो ने सात दिन तक भगवान बुद्ध की अस्थियो को सभा भवन मे रखा। भगवान बुद्ध के परिनिर्वाण की खबर सब जगह फैल गई। अतिम सस्कार के बाद भगवान बुद्ध के अवशेषो के आठ दावेदार थे। वे थे, मगध सम्राट अजातशत्रु, वैशाली के लिच्छवि, कपिलवस्तु के शाक्य, बुलिका के क्षत्रिय, राम ग्राम के कोलिय, बौद्ध धर्म मे दीक्षित वेत्थादिपाक के ब्राह्मण, पावा के मल्ल तथा कुशीनगर के मल्ल। बुद्ध के अवशेषो के आठ भाग किए गए और आठो दावेदारो मे बाट

दिये गये। अस्थि पात्र, द्रोण ब्राह्मण को दिया गया। पिप्पली वन के कोलियो को जलने से बचा हुआ अवशेष दिया गया।

भगवान बुद्ध के अतिम सस्कार के बाद दो विहार, महा परिनिर्वाण तथा मुकट बन्धन विहार निर्मित किए गए।

सम्राट अशोक ने तीन मन्दिर बनवाये तथा दो शिल्प स्तम्भ स्थापित किये, जिनमे महा परिनिर्वाण तथा अवशेषो के बटवारे का वर्णन अकित है।

अन्य उल्लेखनीय स्थल है, निर्वाण मन्दिर, निर्वाण चैत्य तथा निर्वाण तीर्थ। ये तीनो एक ही मच पर स्थापित है।

जहा पर बुद्ध का दाह सस्कार हुआ था, वहा पर अगारचैत्य स्थित है। यह विश्वास किया जाता है कि उस समय इसी स्थान पर मल्ल राजाओ का राज्याभिषेक होता था।

मुख्य स्तूप तथा मठक्वार मुख्य स्थान के अगल बगल ही स्थित है। कुशीनगर गोरखपुर से 53 मील की दूरी पर स्थित है। बुद्ध पूर्णिमा के दिन इस छोटे से नगर मे चहल पहल बहुत ही अधिक बढ जाती है। □

10. हस्तिनापुर

हस्तिनापुर मेरठ जिले मे स्थित है। खेकडा से मेरठ 53 किलोमीटर और दिल्ली से 62 किलोमीटर दूर है। मेरठ उत्तरं प्रदेश का प्रमुख शहर तथा उत्तर रेलवे का प्रमुख स्टेशन है। मेरठ मे भी काफी सख्या मे जैन रहते है। मेरठ से 37 किलोमीटर दूर हस्तिनापुर है। दिल्ली व मेरठ से हस्तिनापुर के लिए बसे चलती है।

महाभारत काल मे हस्तिनापुर कुरू प्रदेश की राजधानी थी। कौरव और पाण्डव यही के थे। भारत के इतिहास मे हस्तिनापुर का विशेष महत्व है। जैनियो की दृष्टि मे हस्तिनापुर तीर्थो का राजा है। यही धर्म परपरा का शुभारभ हुआ। यह वह महातीर्थ है, जहा से दान की प्रेरणा ससार ने प्राप्त की।

हस्तिनापुर ही वह तीर्थ है, जहा आदि तीर्थंकर का एक वर्ष के उपवास के बाद पदार्पण हुआ था। तब यहा के राजा श्रेयास थे। उन्होने भगवान को इक्षुरस (ईख का रस) देकर पुण्य लाभ प्राप्त किया था। कहा जाता है कि उस दिन राजा श्रेयास की भोजनशाला मे भोजन अक्षय हो गया। शहर के सारे नर नारी भोजन कर गये, तब भी भोजन जितना था, उतना ही बना रहा। अपने इस शुभ कार्य के कारण राजा श्रेयास दीनतीर्थाकर की पदवी से विभूषित किए गए।

दान के कारण ही भगवान आदिनाथ के साथ राजा श्रेयांस को भी याद करते है। जिस दिन प्रथम आहार हुआ, उस दिन वेशाख सुदी तीज थी। तब से आज तक वह दिन प्रतिवर्ष पर्व के रूप मे मनाया जाता है। अब उसे आखा तीज या अक्षय तृतीया कहते है। वह दिन इतना महान हो गया कि कोई भी शुभ कार्य उस दिन बिना किसी ज्योतिषी से पूछे कर लिया जाता है।

भगवान आदिनाथ के पश्चात अनेक महापुरुषो का इस पुण्यधरा पर आगमन होता रहा है। यही पर श्री शान्तिनाथ, कुंथुनाथ एवं अरहनाथ के चार चार कल्याणक हुए अर्थात् यहीं गर्भ, जन्म, तप और ज्ञान प्राप्त करके तीर्थकर पद प्राप्त किया। तीनो तीर्थकरो ने यहां से समस्त छह खण्ड पृथ्वी पर राज्य किया, किन्तु उन्हे शाति की प्राप्ति नहीं हुई। बाद मे उसको तृणवत समझ कर उसका त्याग कर दिया। इस प्रकार वे धर्म चक्रवर्ती हुए। बारह भावनाओ मे उनके विषय मे लिखा गया है·

कोटि अठारह घोडे छोडे, चौरासी लख हाथी।
इत्यादिक बहुतेरी सम्पत्ति, जीरणतृण समत्यागी।।

कुछ विद्वानो के अनुसार भगवान पार्श्वनाथ का भी यहां पदार्पण हुआ था और श्री मल्लिनाथ का समवसरण भी यहा आया था।

बलि और उसके मन्त्रियो द्वारा अकपनाचार्य और 700 मुनियो का यही उपसर्ग किया था। उस उपसर्ग को मुनि विष्णु कुमार ने वामन का रूप धारण कर दूर किया था। तभी से रक्षाबंधन का पर्व प्रारम्भ हुआ।

यहा दिल्ली के मुगलकालीन शाही खजाची और धर्मात्मा राजा हरसुखराय का बनवाया हुआ एक विशाल और भव्य जैन मन्दिर है। इसका निर्माण 1801 मे हुआ था। इसके विशाल द्वार का निर्माण राजा सुगनचन्द्र ने कराया था।

यहा तीनो भगवानो के (जिनके कल्याणक यहा हुए थे) चरण चिन्हो सहित तीन नसिया है। भगवान महावीर के 2500 निर्वाण महोत्सव के उपलक्ष्य मे यहा बाहुबली मन्दिर मे 24 तीर्थकरो की टोके, जल मन्दिर, पाडुक शिला आदि का भी निर्माण हुआ है।

यहा कार्तिक मे विशाल मेला लगता है। श्वेताम्बर मन्दिर मे भगवान आदिनाथ के अक्षुरस आहार के दिन भी समारोह होता है।

हस्तिनापुर के समीप एक गाव है– बहसूमा। यहा एक भव्य जैन मन्दिर है, जिसमे दर्शनीय प्राचीन मूर्तिया है। ❑

अध्याय पांच

1. पंढरपुर

यह नगर भीमा (चन्द्रभागा) नदी के तट पर बसा है। यह क्षेत्र संतो के निवास के लिए प्रसिद्ध है। पढरपुर महाराष्ट्र प्रदेश का श्रेष्ठ तीर्थ है। महाराष्ट्र के सतो के पढरीनाथ आराध्य देवता है। भक्त पुण्डरीक, सत तुकाराम, नामदेव, नरहरि आदि सतो की आराध्य स्थली पढरपुर तथा विट्ठल मदिर है।

विट्ठल मदिर पढरपुर का प्रधान मदिर है, जिसमे भगवान श्रीकृष्ण दोनो हाथ कमर पर रखकर खडे है। इन्ही को पढरीनाथ भी कहते है। इस मंदिर के घेरे मे कई और मदिर है जिनमे रूक्मिणी (रघुभाई), बलराम, सत्यभामा, जाबवती और राधा जी के प्रसिद्ध मदिर हैं। यहा से कुछ दूर कोदड राम का मदिर है। नगर के मध्य मे सत तुकाराम का मदिर है।

भीमा नदी के तट पर कई मंदिर है, जिनमे लक्ष्मी नारायण का मदिर प्रमुख है। इस मंदिर मे भगवान नारायण और लक्ष्मीजी की मूर्तियां प्रतिष्ठित है। इसके अतिरिक्त नारद की रेती (नारद मंदिर) और विष्णुपद अधिक विख्यात है। यहा पर एक चबूतरे पर भगवान विष्णु के चरण चिन्ह एव कई अन्य देवताओ और सतो के मदिर है। नदी तट के कई मंदिर वर्षाकाल मे पानी मे डूबे रहते है।

यहा से कुछ दूरी पर गोपालपुर ग्राम है। यहा पर श्रीकृष्ण का मदिर है। मदिर मे नानाबाई की वह चक्की भी सुरक्षित है, जिसे श्रीकृष्ण ने अपने हाथो चलाया था।

नगर के एक ओर कैकाडी महाराज का बनवाया हुआ एक नवीन मदिर है, जिसमे देवताओ और महात्माओ को मिलाकर पाच सौ मूर्तिया है। ये मूर्तिया दो भवनो के कई खण्डो मे सजाई गई है। इनकी सजावट का क्रम इस तरह का है कि एक भवन मे प्रवेश कर समस्त मूर्तियो के दर्शन करते हुए दूसरे भवन से बाहर निकला जा सकता है।

भीमा नदी के उस पार बल्लभाचार्य की बैठक है। नगर के मध्य मे तनपुरे महाराज द्वारा निर्माण करवाया हुआ एक मदिर है, जिसमे मिट्टी की मूर्तिया सजाई गई है।

पढरपुर रेलवे स्टेशन से विट्ठल मदिर दो किलोमीटर की दूरी पर है। दक्षिण मध्य रेलवे के कुईवाडी मिरन रेलमार्ग पर पढरपुर रेलवे स्टेशन स्थित है। ❑

2. प्रयागराज

उत्तर प्रदेश

"सरस्वती, यमुना और गगा का वहा सगम है, जहा स्नान करने वाले ब्रह्म पद को प्राप्त होते है। उस तीर्थराज प्रयाग की जय हो। जहा श्यामल अक्षय वट अपनी छाया से मनुष्यो को दिव्य सत्व गुण प्रदान करता है, जहा भगवान माधव अपने दर्शन करने वालो के पाप ताप काट डालते है, उस तीर्थ राज प्रयाग की जय हो।"

उपरोक्त कथन पद्म पुराण का है, इसी से स्पष्ट है कि प्रयाग राज की कितनी महत्ता है।

प्रयाग तीर्थ राज कहे जाते है। समस्त तीर्थो के ये अधिपति है। सातो पुरिया इनकी रानिया कही गई है। गगा यमुना की धारा ने पूरे प्रयाग क्षेत्र को तीन भागो मे बाट दिया है। इनमे गगा यमुना के मध्य का भाग गार्हस्पत्याग्नि, गगा पार का भाग (झूसी प्रतिष्ठानपुर) आहवनीय अग्नि और यमुना पार का भाग दक्षिणाग्नि माना जाता है। इन भागो मे पवित्र होकर एक–एक रात्रि निवास से इन अग्नियो की उपासना का फल मिलता है।

प्रयाग सभी ओर से केद्र मे है। सभी ओर से ट्रेन और बसो से प्रयाग पहुचा जा सकता है। यहा का मुख्य रेलवे स्टेशन इलाहाबाद जक्शन है।

किसी विशेष तीर्थ का कुछ विशेष कर्म होता है। प्रयाग का मुख्य कर्म मुडन है। त्रिवेणी सगम के निश्चित स्थान पर मुडन होता है। विधवा स्त्रिया भी मुडन कराती है। सौभाग्यवती स्त्रियो के लिए वेणीदान की विधि है।

सौभाग्यवती स्त्रिया अपने पति से लट कटवा कर सगम मे प्रवाहित करती है।

त्रिवेणी स्नान— मुण्डन के पश्चात त्रिवेणी स्नान होता है। जहा गगाजी का उज्ज्वल जल यमुनाजी के नीले जल से मिलता हो, वही सगम है। यहा सरस्वती गुप्त है। सगम का स्थान वदलता रहता है। वर्षा के दिनो मे गगाजल सफेदी लिए मटमैला और यमुना जल लालिमा लिए रहता है। शीतकाल मे गगाजी अत्यत शीतल और यमुना जल कुछ उष्ण होता है। सगम पर ये अतर स्पष्ट दिखते है। प्राय. नौका मे बैठकर लोग सगम स्नान करते है। किन्तु पैदल कुछ दूर जल मे चलकर भी सगम स्नान किया जा सकता है, वहुत से लोग करते भी है।

त्रिवेणी तट पर पक्का घाट नही है। वहा पण्डे अपनी चौकियां (तख्ते) तट पर और जल के भीतर भी लगाये रहते है। उन पर वस्त्र रखकर यात्री स्नान करते है। पंडो के अलग अलग चिन्ह वाले झडे होते है। जिनसे यात्री अपने पडे का स्थान सुविधापूर्वक ढूढ सकते है।

त्रिवेणी, विन्दुमाधव, सोमेश्वर, भारद्वाज, वासुकिनाग, अक्षयवट और शेष (बलदेव जी) – ये प्रयाग के मुख्य स्नान है। इनके अतिरिक्त और भी बहुत से देवस्थान प्रयाग क्षेत्र मे है।

माधव— प्रयाग शताध्यायी के अनुसार अक्षयवट के दाहिने भाग मे वेणी माधव वैष्णव पीठ होना चाहिए किन्तु अब त्रिवेणी सगम पर जल रूप मे ही वेणी माधव माने जाते है। प्रयाग मे कुछ बारह माधव कहे गये है। वे है: 1. शख माधव (झूसी की ओर छत नगा के पास मुशी के बाग मे), 2. चक्रमाधव (अरैल मे), 3 गदा माधव (नैनी के एक मदिर मे यह मूर्ति है), 4 पद्म माधव (वीकर–देवरिया मे केवल स्थान निर्देशक पत्थर है), 5 अनन्त माधव (अक्षय वट के पास), 6. विन्दु माधव (कहीं मूर्ति नही है– स्थान द्रौपदी घाट के पास), 7 मनोहर माधव (द्रवेश्वर नाथ मदिर मे मूर्ति है), 8 असि माधव (नागवासुनिक के पास होना चाहिए), 9 सकट हर माधव (झूसी मे हस तीर्थ के पीछे सध्यावट के नीचे), 10 आदि वेणी माधव (त्रिवेणी पर जल रूप मे), 11. आदि माधव (अरैल मे) और 12 श्री वेणी माधव (दारागज मे)।

इस तीर्थ के प्रधान देवता, भगवान श्री वेणी माधव है। इनका मदिर दारागज मुहल्ले मे है, जैसा कि ऊपर लिखा गया है।

अक्षय वट— प्रयाग के तीर्थो मे अक्षय वट मुख्य है। किले के यमुना किनारे

वाले भाग मे अक्षयवट है और उस वट वृक्ष का दर्शन सप्ताह मे दो दिन सबके लिए खुला रहता है। यमुना किनारे के फाटक से वहा तक जाया जा सकता है।

हनुमानजी– किले के पास हनुमानजी का मदिर है। यहा पर भूमि पर लेटी हनुमानजी की विशाल मूर्ति है। वर्षा ऋतु मे बाढ आने पर यह स्थान जलमग्न हो जाता है।

मन कामेश्वर– किले से थोडी दूर पश्चिम, यह शिव मदिर है जो यमुनातट पर है। यहा नौका से जाने का साधन है। यमुना के दूसरे तट पर अरैल ग्राम है जहा सोमनाथ शिव मदिर है।

नाग वासुकि– वक्सी मुहल्ले मे गगा तट पर नाग वासुकि का मदिर मिलता है। नाग पचमी को यहा मेला लगता है। नाग वासुकि से आगे चलकर दो मील पश्चिम, गगा के किनारे बलदेवजी (शेषजी) का मदिर है। बलदेवजी से दो मील आगे गगा तट पर कोटि तीर्थ है जिसे अब शिव कुटी कहते है। श्रावण से यहा मेला लगता है। यहा एक शिव मदिर है।

ललितादेवी– तत्र चूणामणि के अनुसार प्रयाग मे 51 शक्ति पीठो मे एक शक्ति पीठ है। यहा सती की हस्तागुलि गिरी थी। यहा की शक्ति ललिता देवी है और भव नामक भैरव है। प्रयाग मे ललिता देवी की मूर्तिया दो है– एक अक्षयवट के पास और दूसरी मीरपुर की ओर। किले मे ललिता देवी के समीप ही ललितेश्वर शिव है। ललिता देवी का ठीक स्थान जो शक्ति पीठ है अलोपी देवी है। अलोपी देवी का मदिर दारागज से आधे किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। यहा बहुत से लोग अपने बच्चो का मुडन सस्कार कराते है।

भारद्वाज आश्रम– करनल गज मे यह स्थान है। यहा भारद्वाजेश्वर का शिवलिग है तथा एक मदिर मे हजार फणो वाली शेषनाग की मूर्ति है।

अन्य शिव मदिरो मे ब्रह्मेश्वर, सोमेश्वर, शूलटकेश्वर और माधवेश्वर है। नगर मे कृष्ण के भी कई मदिर है।

प्रयाग मे प्रति माघ मास मे मेला लगता है। इसे कल्पवास कहते है। बहुत से श्रद्धालु यात्री प्रतिवर्ष गगा यमुना के मध्य मे कल्पवास करते है। कल्पवास कोई सौर मास की मकर सक्रान्ति से कुम्भ की सक्रान्ति तक मानते है और कोई चन्द्र मास के अनुसार माघ महीने भर की मानते है।

प्रयाग मे प्रति बारहवे वर्ष जब वृहस्पति वृष राशि मे और सूर्य मकर राशि मे होते है कुम्भ पर्व होता है। इसमे लाखो यात्री आते है। कुभ से छठे वर्ष अर्ध कुम्भी मेला होता है। इस अवसर पर भी माघ पर प्रयाग मे भारी मेला रहता है।

प्रसिद्ध है कि सम्राट हर्षवर्धन प्रयाग मे प्रति पाचवे वर्ष धर्म सभा का आयोजन करते थे और उसमे अपना सर्वस्व दान कर दिया करते थे।

प्रयाग की अन्तर्वेदी परिक्रमा दो दिन मे होती है और वाहिर्वेदी परिक्रमा दस दिन मे सपन्न होती है। वाहिर्वेदी परिक्रमा करने वालो को दसवें दिन त्रिवेणी तट पर जाकर, फिर अन्तर्वेदी परिक्रमा करनी चाहिए। ◻

3. गुरुद्वारा रकाबगंज

नई दिल्ली

गुरुद्वारा रकाबगंज ससद भवन के पास नई दिल्ली मे स्थित है। इस गुरुद्वारे का भी अपना एक इतिहास है जो गुरु तेग बहादुर के बलिदान से जुडा हुआ है। जिस समय गुरु तेग बहादुर का सिर धड से अलग किया गया, उस समय बडी तेज आधी आई और अधेरा छा गया। गुरु तेग बहादुर के अतिम दर्शनो के लिए भीड भी काफी इकट्ठी हो गई थी। इस अफरातफरी मे, जैता रगरेटा ने (सफाई करने वालो की जाति से सबधित) अति ही शीघ्रता से गुरु तेग बहादुर के शीश को अपनी झोली मे डाला और भीड मे खो गया। बाद मे भाईजैता ने गुरु तेग बहादुर के शीश को गुरु गोविन्द सिह के पास आनन्दपुर पहुचाया।

गुरु तेग बहादुर के बलिदान के बाद, शाही आतक के कारण किसी की हिम्मत नही हुई कि वह अपने को सिख कहे।

सूरज प्रकाश मे लिखा है–

हम है, सिख न किनहु बतावा। दुबक रहे निज, निज घर आवा।।

गुरुओ के प्रति उनके सामाजिक समता के पक्ष मे किए गए प्रयत्नो के कारण छोटी जाति के लोग गुरुओ और सिख धर्म के प्रति अति ही गहन आस्था रखते थे। वे गुरु कार्य के लिए सभी प्रकार के कष्टो को सहन करने के लिए तैयार रहते थे।

तेजा सिह तथा गडा सिह अग्रेजी मे लिखित सिखो के सक्षिप्त इतिहास

मे लिखते है

"कोई भी उच्चवर्गीय सिख सिर रहित शरीर के अतिम सस्कार के लिए आगे नही आया। केवल एक लबाना सिख (छोटी जाति से सबधित) अपने कुछ साथियो की मदद से पहरेदारो की नजर बचाकर गुरु तेग बहादुर के सिर रहित शरीर को एक गाडी मे लाद कर अपनी झोपडी मे ले गया और अपनी झोपडी मे आग लगा दी। गुरु तेग बहादुर के सिर रहित शरीर के साथ साथ झोपडी मे रखा उसका सारा सामान जलकर राख हो गया। यह सब उसने इसलिए किया ताकि झोपडी का जलना एक दुर्घटना समझा जाये और शासको को कोई सदेह न हो। जैता नाम के एक रगरेटा सिख ने जो सफाई करने वालो की जाति से सबधित था, गुरु तेग बहादुर के शीश को तीव्र गति से चलकर आनन्दपुर पहुचाया और उसे गुरु गोविन्द सिह के सामने प्रस्तुत किया। जैता के असीम भक्तिभाव को देखकर गुरु गोविन्द सिह अति ही द्रवित हो उठे और अपनी बाहे जैता के गले मे डाल दी और कहा कि तुम्हारे माध्यम से सभी रगरेटो को जो गुरु के ही अपने बेटे है, आलिगन कर रहा हू।"

जहा पर आज गुरुद्वारा रकाबगज है, वही लखीशाह बजारा की झोपडी थी। उसकी झोपडी उस जमाने के रकाबगज नाम के गाव मे थी, जहा गुरु तेग बहादुर के सिर रहित शरीर का सस्कार लखीशाह की झोपडी मे हुआ था, इसलिए इस गुरुद्वारा को गुरुद्वारा रकाबगज कहा जाता है।

इस गुरुद्वारे की महत्ता इसी से स्पष्ट है कि यहा पर बलिदानी गुरु तेग बहादुर का सिर रहित शरीर का दाह सस्कार हुआ था। सिखो के लिए यह अति ही पवित्र स्थान और तीर्थ स्थल है। □

4. पावापुरी

पावापुरी अतिम तीर्थकर भगवान महावीर की निर्वाण भूमि है। पावापुरी बिहार प्रदेश मे स्थित है। यह स्थान राजगृह से 24 किलोमीटर है। यह सिद्ध क्षेत्र है।

पावापुरी का प्राचीन नाम अपापापुर (पुण्यभूमि) था। जिस स्थान पर भगवान महावीर ने निर्वाण प्राप्त किया था, वहा पद्म सरोवर

नामक विशाल सरोवर है। यह दो फर्लांग लम्बा और लगभग इतना ही चौडा है। कहते है किसी समय यह सरोवर चौरासी बीघे मे फैला हुआ था।

कहा जाता है कि भगवान महावीर के निर्वाण के समय असख्य देवी देवता और नर नारी यहा एकत्र हुए थे। भगवान का निर्वाण होने पर उपस्थित जन समूह ने भक्तिभाव से विह्वल होकर उस स्थान की धूल मस्तक पर धारण की। भीड इतनी अधिक थी कि एक एक चुटकी धूल लेने से ही यहा सरोवर वन गया।

पद्म सरोवर के मध्य मे श्वेत सगमरमर का एक जैन मदिर है। यह जल मदिर कहलाता है। मदिर तक पहुचने के लिए पाषाण का पुल बना है। जल मदिर के सामने समवसरण मदिर बना हुआ है। तट पर भव्य जैन धर्मशाला है।

जल मदिर मे भगवान महावीर के चरण चिन्ह विराजमान हे। बाई ओर एक वेदी पर गणधर गौतम स्वामी के चरण चिन्ह हैं। दाई ओर एक वेदी पर गणधर सुधर्मा स्वामी के चरण चिन्ह हे। मदिर मे केवल गर्भगृह ही है।

इस क्षेत्र मे पहले यहा एक धर्मशाला और दो मदिर थे। दर्शन पूजन की दृष्टि से इन दोनो मदिरो पर दिगम्बरो और श्वेताम्बरो का समान अधिकार है।

मदिर के निकट ही पावापुरी सिद्ध क्षेत्र दिगम्बर जैन कार्यालय है। यहा पर सात दिगम्बर जैन मदिर है। दो मजिला धर्मशालाये है। यहां श्री महावीर दिगम्बर जैन औषधालय भी है। यहा आवास की उत्तम व्यवस्था है।

पावापुरी मे कार्तिक कृष्ण त्रयोदशी से कार्तिक शुक्ल प्रतिपदा तक विशाल मेला लगता है।

कुछ साठियाव या फाजिल नगर को पावा (भगवान महावीर की निर्वाण भूमि) मानते है। यह टीलो पर बसा हुआ है। इसके चारो ओर खण्डहर दिखाई पडते है।

इस मान्यता के पक्ष मे एक विशाल सरोवर का होना, आठ–दस पोखरो का होना, शालवृक्ष का होना (जो गगा के दक्षिण मे नही है), भगवान बुद्ध के उस समय के स्थान से सामीप्य, मल्लगण तत्र के इलाके मे होना आदि प्रमाण दिए जाते है। जो भी हो, यह विवादास्पद क्षेत्र है।

यह स्थान राजमार्ग न 28 पर देवरिया से 56 किलोमीटर, गोरखपुर से

67 किलोमीटर और पडरौना से 40 किलोमीटर पर साठिया गाव या फाजिल नगर पर स्थित है।

फाजिल नगर बस अड्डे से कुछ दूर पर जैन धर्मशाला है। एक बहुत बडा जैन मदिर भी बन रहा है। महावीर भगवान के 2500वे निर्वाणोत्सव के उपलक्ष्य मे श्री भगवान महावीर महाविद्यालय भी स्थापित हो गया है। □

5. दरगाह बिहार शरीफ

हजरत मख्दूम जहा शेख शर्फुद्दीन यह्या मनेरी बिहारी अपने समय के प्रख्यात विद्वान सूफी सत थे। उन्होने बिहार के एक कस्बे बिहार शरीफ मे रहकर शिक्षा दीक्षा का कार्यक्रम चलाया, जिसका प्रभाव हिन्दुस्तान मे ही नही हिन्दुस्तान के बाहर भी पडा और सैकडो लोग अपनी जिज्ञासा के समाधान के लिए रोज उनके पास हाजरी देने लगे।

आपके पितामह हजरत इमाम मुहम्मद ताज फकीह फिलस्तीन के एक स्थान कुद खलील से आये थे। शेख शर्फुद्दीन के पिता का नाम मख्दूम कमाल उद्दीन यह्या था। आपका जन्म 6 जुलाई, 1263 को पटना के निकट मनेर मे हुआ और इसीलिए आपके नाम के साथ मनेरी लगा।

शेख शर्फुद्दीन यह्या मनेरी की शुरूआती शिक्षा माता पिता की देखरेख मे पूरी हुई और बाद मे अपने शिक्षक मौलाना अशरफउद्दीन अबू किवामा से प्राप्त की जो दिल्ली के बडे मशहूर विद्वान थे और मनेर आ गये थे। शेख शर्फुद्दीन अपने गुरु के साथ सोनारगाव (बगाल) चले गये और बडी लगन से शिक्षा प्राप्ति मे लग गये और उस समय प्रचलित शिक्षा के अतिरिक्त दर्शनशास्त्र, कुरान, हदीस, गणित तथा ज्योतिष शिक्षा मे परिपूर्णता प्राप्त की। शिक्षा दीक्षा मे परिपक्वता प्राप्ति के बाद गुरु ने अपनी लडकी से इनकी शादी कर दी। अपने पिता के देहात की सूचना पाकर वह अपने परिवार के साथ मनेर चले आये।

कुछ दिनो के बाद अपनी माता से आज्ञा लेकर अपने धर्म गुरु की तलाश

मे दिल्ली चले गये और दिल्ली के मशहूर सूफी सत हजरत निजामुद्दीन औलिया के दरबार मे हाजिर हुए। वहा से हजरत ख्वाजा नजीबुद्दीन फिरदोसी के यहा गये और उनसे ही शिक्षा दीक्षा प्राप्त कर उनके शिष्य हो गये। अपने धर्म गुरु की आज्ञा से स्वदेश लौटे। रास्ते मे गुरु के देहात की सूचना मिली। गुरु के निर्देशो की रोशनी मे वह दिल्ली नहीं गये। रास्ते मे शाहाबाद (आरा) के नजदीक बिह्या के जगल मे एक मोर की आवाज सुनकर मुग्ध हो गये और जगल मे चले गये और बडी कठोर तपस्या शुरु की। बारह वर्षो तक वह बिह्या के जगलो मे तपस्या करते रहे। लोगो ने उन्हे राजगीर के जगलो मे देखा और उन्होने करीब चालीस वर्षो तक तपस्या की। जब लोगो को उनकी तपस्या और परिपक्वता का पता चला तो भारी भीड उनकी कुटिया मे आने लगी।

अत. मजबूर होकर राजगीर के नजदीक बिहारशरीफ मे रुक जाना पडा और वहीं से शिक्षा दीक्षा देने का उनका सिलसिला शुरु हुआ। मख्दूम साहेब 52 वर्ष यहा रहे और 121 वर्ष की आयु मे यहा ही उनका जनवरी 1384 मे स्वर्गवास हुआ और अपनी खानकाह (मठ) मे दफन किये गये। सदियो बीतने पर आज भी उनकी खानकाह मे हजारो श्रद्धालु रोज हाजरी देते है और उनकी दुआओ से लाभान्वित होते हैं।

मख्दूम साहेब (यही नाम प्रचलित है) ने बहुत सी पुस्तके लिखीं। अब तो उनका अंग्रेजी मे अनुवाद भी हो रहा हैं। उनकी खानकाह (मठ) का पता है· खानकाह मोयज्जम, बिहारशरीफ. नालदा–803 101. □

6. कामाख्या देवी

असम

कामाख्या देवी का मदिर, आसाम प्रदेश की राजधानी गुवाहाटी नगर के एक ओर नीलाचल नामक पहाडी पर स्थित है। यह देवी पीठ 51 शक्ति पीठो मे प्रधान एवं सिद्ध पीठ माना जाता है। कहा जाता है कि यहा सती देह का योनि भाग गिरा था और गिरने के साथ ही पाषाण रूप मे परिणत हो गया।

पहाडी की तराई मे जहा राजमार्ग है, वही प्रवेश द्वार है। इस प्रवेशद्वार

से एक किलोमीटर की सीधी चढाई पडती है। यह देवी पीठ भूमि के नीचे है। धरातल से सात सीढिया उतरने पर चल मूर्ति का दर्शन होता है। वहा से बाई ओर के द्वार से पुन दस सीढिया नीचे उतरने पर देवी पीठ का दर्शन होता है। यहा कोई मूर्ति नही है। यहा एक हाथ गहरा कुड है, जिसमे एक हाथ ऊँचा एव बारह अगुल चौडा योनिपीठ है, जो लाल वस्त्र से ढका रहता है। यही सिद्धपीठ है। इसी के दर्शन पूजन का विधान है। दस महाविधाओ मे षोडशी देवी का नाम ही कामाक्षी देवी है। इसी के बगल मे मातगी (सरस्वती) एव कमला (लक्ष्मी) दोनो देवियो के पीठ स्थान है।

नीलाचल पर्वत के सर्वोच्च शिखर पर भुवनेश्वरी देवी का मदिर स्थित है। पुराणो के अनुसार इस मदिर मे महागौरी देवी ही भुवनेश्वरी देवी के नाम से स्थित है। दस महाविधाओ मे इसकी गणना है।

ब्रह्मपुत्र नदी मे एक शैल द्वीप है, जिस पर उमानन्द मदिर स्थित है। मुख्य मदिर मे उमानन्द अथवा उमानाथ नामक अनादि शिवलिग है। जिनको कामाक्षी देवी का भैरव या रक्षक कहा जाता है। इस मदिर के समीप एक दूसरा मदिर है, जिसमे चन्द्रशेखर नामक शिवलिग है। शुक्रेश्वर घाट मे मुनिवर शुक्राचार्य द्वारा स्थापित एक शिव मदिर है, जिसमे एक विशाल शिवलिग है। इस मदिर के नीचे जनार्दन मदिर और योगेश्वर शिव मदिर है।

पास ही चित्रावल पहाडी के शिखर पर नव ग्रह मदिर है। मुख्य मदिर मे पृथक–पृथक नौ लिग मूर्तिया है।

गुवाहाटी नगर से कुछ दूरी पर वशिष्ठाश्रम है। आश्रम के भीतर एक शिव मदिर है। जिसमे एक कुड है। इस कुड मे एक प्राकृतिक शिवलिग है। यहा सख्या, ललिता और कान्ता नामक तीन जल प्रवाह है। इनमे स्नान करना पुण्यप्रद माना जाता है।

ब्रह्मपुत्र नदी के पार दो प्राचीन मदिर है, एक नदी तट पर कूर्मरूपी भगवान नारायण का, दूसरी पहाडी पर अश्वक्रान्त का। नदी तट से 135 सीढिया चढने पर मदिर मिलता है। सभामडप के दस सीढियो के नीचे गर्भगृह है, जिसमे अनत शय्या पर भगवान नारायण की मूर्ति है। यहा का विधान है कि सर्वप्रथम कूर्मरूपी भगवान का दर्शन करने के उपरान्त, अश्वक्रान्त का दर्शन करना चाहिए। □

7. बौध स्तूप, सांची

सांची एक महान बौद्ध तीर्थ है। यह मध्य प्रदेश मे भोपाल से 47 किमी उत्तर पूर्व मे स्थित है। साची बौद्ध तीर्थ अपने स्तूपो, बौद्ध विहारो, मन्दिरो तथा सुसज्जित स्तभो के लिए विख्यात है। साची मे ईसा पूर्व तीसरी शताब्दी से लेकर 12वीं सदी तक निर्मित स्मारक विद्यमान है।

साची का प्रथम तथा अत्यत आकर्षक वृहद स्तूप न. 1 है। इस स्तूप का निर्माण सम्राट अशोक ने आरभ किया था तथा उनके उत्तराधिकारियो ने इसे ईसा पूर्व तीसरी से दूसरी शताब्दी मे पूरा किया। यह स्तूप बहुत ही बडे आकार का है। यह 116.4 मीटर ऊँचा और इसका व्यास 37 मीटर का है। भारत मे पत्थरो का प्राचीनतम स्थापत्य यह स्तूप ही है। स्तूप मे कोई बुद्ध प्रतिमा नही है। स्तूप के चारो ओर पत्थर के रेलिग व अलिन्द है। उसके ऊपर पत्थर का छत्र है। पद्म, पीपल वृक्ष व चक्र के माध्यम से बुद्ध के जन्म, ज्ञान प्राप्ति और धर्मोपदेश की घटनाओ को दर्शाया गया है। पैरो की छाप से बुद्ध के निर्वाण को दिखाया गया है।

समूचे भारत मे अशोक ने हजारो स्तूपो का निर्माण कराया जिनमे आठ साची मे थे, जिनमे से तीन स्तूप आज भी विद्यमान है। कलिग के युद्ध के रक्तपात तथा विभीषिका से विचलित होकर इसी साची मे सम्राट अशोक ने ईसा पूर्व 257 ई. मे बौद्ध धर्म की दीक्षा ली थी। साची से ही सम्राट अशोक ने अपने पुत्र महेन्द्र और पुत्री सघमित्रा को श्रीलका भेजा।

बौद्ध धर्म का वर्चस्व खत्म होने के लम्बे समय तक साची जन साधारण की नजरो से ओझल रहा। सन् 1818 मे अग्रेज पुरातत्व विद् डाइरेक्टर जनरल जान मार्शल के नेतृत्व मे इसकी खोज हुई। सन् 1881 मे इसके सरक्षण का कार्य आरम्भ हुआ। सन् 1912–19 मे इसका जीर्णोद्वार हुआ। स्तूप के चार प्रवेश द्वार अर्थात् तोरण है।

पूर्व द्वार— पूर्व द्वार मे राजकुमार गौतम बुद्ध के प्रस्थान तथा निर्वाण लाभ के दृश्य है। जब बुद्ध गर्भ मे थे तब उनकी मा द्वारा देखे गये स्वप्न— चाद पर खडा हाथी का दृश्य भी अकित है। इस तोरण द्वार मे हाथ से झूलते पक्षी की मूर्ति अति ही आकर्षक है।

पश्चिम द्वार— पश्चिम द्वार मे जातक कथाये तथा बुद्ध को आसुरी शक्तियो द्वारा प्रलोभन के दृश्य अकित है। बुद्ध के सात जन्मो की कहानी को दर्शाया गया है। सारनाथ मे बुद्ध के धर्मोपदेश तथा परम ज्ञान प्राप्ति के दृश्य अकित किए गए है।

उत्तर द्वार— आम के पेड के नीचे भगवान बुद्ध को धर्म का प्रचार करते हुए दिखाया गया है। उनके पैरो से प्रकाशपुज छिटक रहा है और माथे से जल की धारा प्रवाहित है। श्रावस्ती मे राजा देवदूत को दिखाये गये दिव्य ज्ञान का अलौकिक दृश्य भी अकित है। यह भी दृश्य अकित किया गया है कि बानर भगवान बुद्ध को मधु पात्र दे रहे है।

दक्षिण द्वार— इस द्वार मे भगवान बुद्ध के जन्म से सबधित दृश्यो को दिखाया गया है। पद्म के ऊपर बुद्ध की माता खडी है। दक्षिण तोरण मे बुद्ध के जन्म, बौद्ध धर्म के ग्रहण के बाद अशोक की जीवनी सहित जातक कथाये भी उत्कीर्ण है।

इसमे कोई शक नही, भारत मे बौद्ध शिल्प कला का सबसे अधिक आकर्षक और भव्य रूप यह वृहद स्तूप ही है।

वृहद स्तूप के दक्षिणी द्वार के निकट अशोक स्तम्भ है। इसकी शिल्प कला अद्वितीय है।

वृहद स्तूप के पश्चिम मे पहाडी ढाल पर 7 मीटर ऊँचाई वाला स्तूप–2 है। इसमे तोरण नही है और आकार मे छोटा है। चार प्रवेश पथ है। इस स्तूप की सारी दीवार अलकृत है। फूल, जीव जन्तु, मानव और पौराणिक आख्यान अकित है। पास ही मे अशोक की अर्द्धागिनी द्वारा निर्मित मूल विहार भी है।

स्तूप न 3 विशेष रूप से उल्लेखनीय है। यह स्तूप 15 मीटर ऊँचा है। प्रवेश पथ मे तोरण है। माटी के नीचे पत्थर के बक्से मे बुद्ध के शिष्य, सारिपुत्र, महामेग मल्लाना (मौद्‌ग्लायन) के देहावशेष है। सन् 1858 मे इसे लदन ले जाया गया था किन्तु सन् 1953 मे इसे पुन· साची लाया गया। ❑

8. सेन्ट मेरी चर्च

सरधना के सेन्ट मेरी चर्च को बेगम समरू का चर्च कहा जाता है। इस चर्च का निर्माण बेगम समरू ने सन् 1822 मे कराया था। इस चर्च के निर्माण की रूपरेखा पाटुवा के एन्टोनियो रीगीलिनी ने तैयार की थी, जो बेगम समरू की सेना मे मेजर था।

मुगल शासन के समाप्त होते ही, देश मे अराजकता की स्थिति पैदा हो गयी थी। ऐसी अराजक स्थिति मे यूरोपीय व्यक्तियो मे भी राजनैतिक महत्वाकाक्षाये जागी। इन्ही लोगो मे एक जर्मन व्यक्ति, वाल्टर रेनहार्ट था, जिसे भारत मे समरू के नाम से जाना जाता था। उसने भाडे के सैनिको की एक सेना सगठित कर रखी थी और धन प्राप्ति के बदले अपने भाडे की सेना को उस समय भारतीय शासको की सेवा मे जुटा देता था। ऐसा करते हुए उसने सरधना मे अपना एक छोटा सा राज्य स्थापित कर लिया। उसने एक मुस्लिम लडकी से शादी की, जो बेगम समरू के नाम से विख्यात थी।

समरू के सन् 1788 मे देहात के बाद, बेगम समरू ने राज काज सभाल लिया। यह भारत मे पहली ईसाई महिला थी, जो एक राज्य की स्वतत्र शासक थी। बेगम समरू की प्रार्थना पर पोप ने इस चर्च का उद्घाटन किया था। सन् 1834 मे बेगम ने अपने पारिवारिक पुरोहित को चर्च मे धर्मपाल (वायसराय अपोस्टोलिक) नियुक्त किया। सन् 1836 मे बेगम समरू की मृत्यु हो गई, इसके बाद सरधना राज्य को ईस्ट इडिया कपनी के राज्य मे शामिल कर लिया और सरधना के चर्च को आगरा के चर्च से सबद्ध कर दिया गया।

इस चर्च मे बेगम समरू का सगमरमर के पत्थरो से निर्मित एक बहुत ही सुदर स्मारक बना हुआ है, जिसकी रूपरेखा कैनोवा के शिष्य इटली के मूर्तिकार एडैमो टाडोलिनी ने तैयार की तथा उसका निर्माण कराया। ❑

9. बहाई कमल मन्दिर

भारतीय उप महाद्वीप का यह बहाई उपासना मन्दिर दुनिया के सात बहाई मन्दिरो मे एक है। कमल, जो उपासना और धर्म से अटूट रूप से सबधित है, सौन्दर्य और पावनता का प्रतीक है, जिसमे प्रकाश और विकास का आदर्श सन्निहित है, इस मन्दिर के वास्तुशिल्पी की प्रेरणा का स्रोत बना।

बहाई उपासना मन्दिर मे मुख्य प्रार्थना सभागार है, एक सहायक भवन है जिसमे स्वागत कक्ष, पुस्तकालय और प्रशासनिक भवन है।

कमल के चारो ओर घूमने के लिए प्लेटफार्म और सीढिया है जो कमल के जल मे तैरते पत्तो के प्रतीक, नौ सरोवरो को घेरे हुए है। ये सरोवर कमल मन्दिर तथा पूरे भवन के वातानुकलन मे भी सहायक है। बाहर की ओर इस कमल की पखुडिया हिम श्वेत सगमरमर से मडित है जो कक्रीट की सतह पर जडे गये है। सभागार के भीतर श्वेत सगमरमर की फर्श है और बाहरी प्लेटफार्म और सीढियो पर लाल बलुहा पत्थर जडा गया है। मन्दिर के भीतर के गुम्बद और दीवारो की सतह पर हल्का दानेदार कक्रीट है जिस पर कोई आवरण नही है और विशाल गोलाकार कक्रीट के शहतीर भीतर के गुम्बद को एक अलग और अनूठा सौन्दर्य प्रदान करते है।

बहाई उपासना मन्दिर का उद्देश्यः बहाई उपासना मन्दिर नस्ल, राष्ट्र, जाति, वर्ग अथवा धर्म के भेदभावो से मुक्त होकर सर्वशक्तिशाली परमेश्वर की उपासना के लिए समर्पित है। यहा के उपासना कार्यक्रम मे विभिन्न धर्मो के चुने हुए अशो का पाठ सम्मिलित है। प्रार्थना और ध्यान के लिए मन्दिर का सभागार सभी धर्मानुयायियो के लिए खुला है।

बहाई धर्मग्रथ अपने अनुयायियो को आदेश देता है कि पूरी सच्चाई, ईमानदारी, निष्ठा, सद्भावना और मित्रता के भाव के साथ ससार के सभी लोगो, सभी जातियो और धर्मो के साथ मेल मिलाप करे।

बहाई धर्मः बहाई धर्म एक स्वतत्र विश्व धर्म है जिसका प्रवर्तन 1844 मे हुआ। विश्व के धर्मो मे नवीनतम इस धर्म के सस्थापक थे ईश्वरावतार बहाउल्लाह।

बहाउल्लाह का जन्म 12 नवबर, 1817 को ईरान के एक सभ्रात और यशस्वी कुल मे हुआ था। "ईश्वर केवल एक है" इस उद्घोषणा को ससार के सम्मुख रखने के लिए उन्होने ऐश्वर्य और सुख के जीवन को तिलाजलि दे दी। उन्होने बताया कि धार्मिक सत्य कभी सपूर्ण नही होता, सापेक्ष होता है–ईश्वरीय शिक्षाओ का मनुष्यजाति के आध्यात्मिक विकास के लिए क्रमश. प्रकाशन होता है। उन्होने ही यह सत्य मुखरित किया था कि मनुष्य जाति एक है, "सारी धरती एक देश है और सपूर्ण मानवजाति इसके नागरिक है।"

ईश्वरावतार के रूप मे अपने विराट कार्य की पहली अनुभूति बहाउल्लाह को 1853 मे हुई। उन्हे देशनिकाला देकर इराक की राजधानी बगदाद भेज दिया गया। वही 10 वर्ष बाद उन्होने सार्वजनिक रूप से यह उद्घोषणा की कि वही ईश्वरावतार है। जिनके प्रकट होने की भविष्यवाणिया विश्व के सभी धर्मग्रथो मे की गई थीं। बगदाद से भी उन्हे निष्कासित करके कुस्तुनतुनिया, इस्ताम्बूल और वहा से एड्रियानोपल भेजा गया। अत मे कैदखानो के शहर अक्का मे सन् 1868 मे उन्हे भेजा गया। लगभग 40 वर्षो के देशनिकाले, कारावास और कष्टो के जीवन के बाद 1892 मे बहाउल्लाह का स्वर्गारोहण हुआ।

आज ससार के 360 से अधिक देशो और प्रदेशो मे बहाई धर्म के 1,15,000 से अधिक केद्र है और बहाई साहित्य का 730 से अधिक भाषाओ और बोलियो मे अनुवाद हो चुका है। ❑

10. अरविन्द आश्रम

सन् 1910 मे पाण्डिचेरी मे आने के बाद श्री अरविद अपने निवास स्थान को आश्रम कहना पसद नही करते थे। वे लिखते है कि जब मै पाण्डिचेरी आया था तो मेरे साथ तीन चार लोग थे, जिन्हे मै अपना मित्र और सहचर ही समझता था। मेरा उनका गुरु शिष्य का नाता नही था। राजनीति की वजह से वे मेरे साथ आये थे, लेकिन धीरे–धीरे आध्यात्मिक सबधो का विकास होता गया।

जब अधिक लोग उनके पास आध्यात्मिक जिज्ञासा और योग शिक्षा के लिए आने लगे, तब भी वे अपने निवास स्थान को आश्रम कहने मे सकोच करते रहे।

जब सन् 1920 मे मदर पाण्डिचेरी आई तो उसके बाद अनुयायियो की सख्या तेजी से बढने लगी, इस तरह आश्रम की तरह स्थिति बनने लगी। श्री अरविन्द के पास आने वालो के निवास, भोजन तथा अन्य व्यवस्था का भार मदर को सभालना पडा। उस समय लोगो को ठहराने के लिए मकान खरीदने और किराये पर लेने पडे। मकानो की मरम्मत, पुनर्निर्माण, स्वच्छता के साथ भोजनादि की व्यवस्था आवश्यक हो गई। साथ ही आध्यात्मिक जीवन से सबधित बहुत से क्रियाकलाप मदर के निर्देशन मे होने लगे।

श्री अरविन्द 24 नवबर, 1926 को एकान्तवास मे चले गये। परिणामस्वरूप सारी भौतिक और आध्यात्मिक देख रेख मदर को सभालनी पडी। साधको की इच्छाओ और आध्यात्मिक जीवन के प्रति उनकी निष्ठा के कारण यह स्थान अपने आप आश्रम बन गया।

आधी शताब्दी पहले अरविन्द आश्रम मे केवल दो दर्जन साधक थे, लेकिन अब आश्रम निवासियो की सख्या 1200 तक पहुच गई है। बहुत से ऐसे लोग भी है, जो आश्रम मे नही रहते है, पाण्डिचेरी मे रहते है, लेकिन आश्रम की तमाम गतिविधियो मे शामिल होते है। आश्रम मे भारत, एशिया, यूरोप और अमेरिका के विभिन्न धर्मावलम्बी स्त्री पुरुष रहते है। धर्म, देश और जाति के नाम पर कोई भेदभाव नही किया जाता है।

अरविन्द आश्रम सन्यासियो और ससार से विरक्त लोगो का आश्रम नही है। अरविन्द की शिक्षाओ के अनुरूप इस आश्रम का एक विशेष चरित्र है।

अरविन्द आश्रम के योग का लक्ष्य पारपरिक योग से भिन्न है। अरविन्द आश्रम का योग, जीवन का एक वास्तविक अग है। केवल मानसिक अनुशासन और निश्चित नियमो का पालन मात्र नही है। अरविद आश्रम का भी सभी तरह के यौगिक अनुशासनो की तरह एक ही उद्देश्य है। आत्म साक्षात्कार, दिव्यता और परम शुद्धता। लेकिन आश्रम मे कोई एक निश्चित प्रक्रिया का अनुसरण नही होता। श्री अरविन्द और मदर के निर्देशन मे अरविन्द आश्रम मे साधक को आतरिक प्रशिक्षण से गुजरना पडता है। श्री अरविन्द तथा माताजी द्वारा लिखी गई पुस्तको तथा वार्ताओ मे आतरिक प्रशिक्षण का निर्देशन उपलब्ध है। ❑

अध्याय छह

1. विवेकानन्द स्मृति मन्दिर

भारत के दक्षिण के अतिम छोर पर, जहा से समुद्र का प्रारम्भ होता है, कन्याकुमारी का मन्दिर स्थित है। कहा जाता है कि यही पर पार्वती ने शिवजी को वर के रूप मे प्राप्त करने के लिए तपस्या की थी, इसलिए यह स्थान अति पवित्र माना जाता है। कन्याकुमारी नाम के ग्राम का नाम भी इसी के नाम पर आधारित है।

कन्याकुमारी मन्दिर के दक्षिण पूर्व समुद्र के बीच मे दो चट्टाने है, जिन्हे कई दशको से विवेकानन्द चट्टानो के नाम से जाना जाता है। समुद्र के बीच मे दोनो चट्टानो के बीच का फासला 220 फुट है।

इन दोनो चट्टानो मे से छोटी चट्टान बडी चट्टान की अपेक्षा समुद्री किनारे से अधिक नजदीक है, लेकिन इस चट्टान पर कोई समतल स्थान नही है। दूसरी बडी चट्टान जो 534 फुट लम्बी और 420 फुट चौडी है, समुद्र के किनारे 450 गज की दूरी पर स्थित है। इस चट्टान पर यात्री खडे होकर हिमालय पर्वत तक देश के भू भाग के सबध मे सोचने के लिए भावाविभूत हो जाते है।

स्वामी विवेकानन्द ने सारे देश का भ्रमण किया। हिमाच्छादित हिमालय की कन्दराओ मे भी योगियो और साधु सतो के दर्शनो के लिए गये ताकि उनको आध्यात्मिक ज्ञान की प्राप्ति हो। भ्रमण करते हुए वे दक्षिण मे आये और कन्याकुमारी मन्दिर से कुछ दूरी पर समुद्र मे स्थित चट्टाने उनको बहुत प्रिय लगी। ध्यानस्थ होने के लिए इससे अच्छा और प्रिय अन्य कोई स्थान नही लगा।

वे तैर कर बडी चट्टान पर पहुचे और अत्यत एकान्त मे जन कोलाहल से दूर प्रार्थना और ध्यान मे मग्न हो गये। अत मे उनकी वर्षो की साधना सफल हुई और उन्हे आध्यात्मिक प्रकाश के दर्शन हुए। उन्हे अपने अदर

छिपे हुए ज्ञान और उद्देश्य का प्रकाश मिला। उन्हे अध्यात्म के अतिम लक्ष्य की प्राप्ति हुई। इसके बाद ही उन्होने भारत की आध्यात्मिक परंपरा के प्रकाश को विश्व मे फैलाने का निश्चय किया।

उन्हे भारत को दुर्दशा से मुक्त करने का समाधान मिला। उन्हे इस बात का ज्ञान हुआ कि भारत जो कभी अपने आध्यात्मिक ज्ञान और अत्यत समृद्धि के कारण गौरव के शिखर पर था, क्यो अधोपतन के गर्त मे गिरा। उन्होने भारत की उस कमजोरी को भी पहचाना, जिसके कारण देश और राष्ट्र के रूप मे भारत का विशेष व्यक्तित्व ही समाप्त हो गया।

उन्होने अपने अतरतम की गहराई मे यह महसूस किया कि उच्च आध्यात्मिक विवेक के माध्यम से भारत पुन अपनी प्राचीन गौरवमयी स्थिति मे पहुच सकता है। इस तथ्य को ध्यान मे रखते हुए उन्होने भारत की आध्यात्मिक परपराओ, ज्ञान और आदर्शो के पुनरुद्वार का दृढ सकल्प किया।

कन्याकुमारी मन्दिर से कुछ दूरी पर स्थित, चट्टान मे ध्यानस्थ एक साधारण सन्यासी विवेकानन्द बाद मे महान राष्ट्र निर्माता और विश्व के महान उपदेशक के रूप मे अवतरित हुए।

वह स्थान (समुद्र मे चट्टान) जहा पर स्वामी विवेकानन्द ध्यानस्थ होकर आध्यात्मिक चेतना से अभिभूत हुए, कालान्तर मे 'विवेकानन्द रॉक' के नाम से मशहूर हो गया।

स्वामी विवेकानन्द के प्रति श्रद्धा और भावनात्मक लगाव के कारण यह महसूस किया गया कि उनकी पावन स्मृति मे उस चट्टान पर, जहा पर वे समाधिस्थ हुए थे, एक महान तथा विशाल स्मारक बनाया जाये। इस कार्य को मूर्त रूप देने के लिए, अखिल भारतीय स्वामी विवेकानन्द शताब्दी समारोह तथा विवेकानन्द रॉक मेमोरियल कमेटी का गठन किया गया।

विवेकानन्द रॉक मेमोरियल सोसायटी का गठन सन् 1962 मे किया गया, जिसे अब विवेकानन्द केद्र कहा जाता है। तमिलनाडु सरकार के सहयोग और सलाह से विवेकानन्द स्मारक बनने की भूमिका तैयार हो गई।

जब स्मारक बन कर तैयार हो गया तो 2 सितम्बर, 1970 भाद्र पद शुक्ला द्वितीया को स्मारक के पवित्रीकरण का दिन नियुक्त हुआ, क्योकि शिकागो मे 1893 मे सपन्न होने वाली धर्म ससद मे इसी तिथि को स्वामी विवेकानन्द ने अपनी अपूर्व प्रतिभा और आध्यात्मिक चेतना से सारे जगत को अभिभूत कर दिया था।

स्मारक के मध्य मे स्वामी विवेकानन्द की साढे सात फुट ऊँची बहुत ही भव्य तथा प्रभावोत्पादक सुदर मूर्ति है। स्मारक मे ही ध्यान मडप है। ध्यान मडप मे एक वेदी पर ऊँ (ओऽम) शब्द उत्त्कीर्णित है। विवेकानन्द स्मारक का भव्य भवन बडे ही कलात्मक ढग से निर्मित किया गया है, जो वास्तुकला का अद्भुत नमूना है।

विवेकानन्द केद्र का कार्य केवल स्मारक के निर्माण तक ही सीमित नही रह गया। केद्र ने अपना कार्य विस्तार जीवन के लगभग सभी क्षेत्रो मे किया है। स्वामी विवेकानन्द के सेवा के सदेश को कार्यरूप मे परिणत करने के लिए कार्य कुशल प्रतिभाशाली और प्रशिक्षित जीवन व्रती तैयार किये जाते है। जीवन व्रतियो का यह समूह मठ निवासी सन्यासियो की तरह नहीं है। पांच साल के प्रशिक्षण के बाद उन्हे आवश्यकतानुसार विभिन्न क्षेत्रो मे भेजा जाता है, वहा वे विवेकानन्द के सदेशवाहक होने के साथ–साथ जनता की सेवा भी निष्ठा के साथ करते है। जीवन व्रती 30 साल से कम उम्र के पारिवारिक दायित्वो से रहित होते है। उनकी एक निष्ठ सेवाओ के बदले विवेकानन्द केद्र उन्हे आजीवन, साधारण जीवन व्यवस्था उपलब्ध कराता है।

भारत भर मे विवेकानन्द केद्र 55 स्थानो मे कार्यरत है। ये उप केद्र स्वामी विवेकानन्द के संदेश को साधारण जनता तक पहुंचाते है। देशभर मे फैले हुए ये उप केद्र राष्ट्रीय एकता, पर्यावरण से सबधित जागरुकता और व्यक्तित्व के विकास के लिए गोष्ठियो का आयोजन करते है।

निष्ठावान जीवन व्रती कार्यकर्ताओ को प्रशिक्षित करके, उन्हे भारतवर्ष मे रहने वाले उपेक्षित वर्गो की सेवा मे जुटाने के लिए विवेकानन्द केद्र प्रतिष्ठान (ट्रस्ट) की स्थापना की गई है, जिसका उद्देश्य भारत मे अनेको स्थानो पर निष्ठावान कार्यकर्ताओ को प्रशिक्षित करके, उन्हे भारत की साधारण जनता की सेवा के लिए कार्यशील बनाना है। इसके लिए सभी प्रकार के सहयोग की आवश्यकता है। विवेकानन्द केद्र प्रतिष्ठान को दिया जाने वाला दान कर मुक्त है।

स्वामी विवेकानन्द की वाणी

मेरा आदर्श अवश्य ही थोडे शब्दो मे कहा जा सकता है और वह है – "मनुष्य जाति को उसके दिव्य स्वरूप का उपदेश देना तथा जीवन के प्रत्येक क्षेत्र मे उसे प्रकट करने का उपाय बताना।"

तुम इस धराधाम पर देवता हो। मनुष्य को पापी कहना ही पाप है। यह मानव स्वभाव पर घोर लाछन है! उठो! आओ, ऐ सिहो! इस मिथ्या भ्रम को झटक कर दूर फेक दो कि तुम भेड हो, तुम तो जन्म मरण रहित नित्यानन्दमय आत्मा हो। तुम जड पदार्थ नही हो। तुम शरीर नही हो। जड पदार्थ तुम्हारा गुलाम है, तुम उसके गुलाम नही।

ससार का इतिहास उन थोडे से व्यक्तियो का इतिहास है जिनमे आत्मविश्वास था। यह विश्वास अन्तस्थित देवत्व को ललकार कर प्रकट कर देता है। तब व्यक्ति कुछ भी कर सकता है, सर्व समर्थ हो जाता है। असफलता तभी होती है जब तुम अन्तस्थ अमोघ शक्ति को अभिव्यक्त करने का यथेष्ट प्रयत्न नही करते।

नास्तिक वह है जो स्वय मे विश्वास नही करता। प्राचीन धर्मो ने कहा है–"नास्तिक वह है जो ईश्वर मे विश्वास नही करता।" नया धर्म कहता है– "नास्तिक वह है जो स्वय मे विश्वास नही करता।"

यह कभी न सोचना कि आत्मा के लिए कुछ असभव है। ऐसा कहना ही भयानक नास्तिकता है। यदि पाप नामक कोई वस्तु है तो यह कहना ही एकमात्र पाप है कि मै दुर्बल हू अथवा अन्य कोई दुर्बल है।

जब तक करोडो भूखे और अशिक्षित रहेगे तब तक मै उस प्रत्येक आदमी को विश्वासघातक समझूगा जो उनके खर्च पर शिक्षित हुआ है, परतु जो उन पर तनिक भी ध्यान नही देता।

भगवान को खोजने तुम कहा जाओगे– क्या ये गरीब, दुखी और दुर्बल भगवान नही है? पहले उन्ही की पूजा क्यो नही करते? गगा तीर पर कुआ खोदने क्यो जाते हो? इन्ही को अपना भगवान, इन्ही का ध्यान करो, इन्ही के लिए कर्म करो तथा प्रभु से निरतर इनके लिए प्रार्थना करो। प्रभु तुम्हारा अवश्य पथ प्रदर्शन करेगे।

पवित्रता, धैर्य और अध्यवसाय, इन्ही तीनो गुणो से सफलता मिलती है और सर्वोपरि है प्रेम।

ससार के सभी धर्म जीवनरहित विडम्बना हो गए है। ससार चाहता है चरित्र। ससार को ऐसे लोगो की आवश्यकता है जिनके हृदय मे निस्वार्थ प्रेम प्रज्वलित हो रहा है। उस प्रेम से प्रत्येक शब्द का वज्रवत प्रभाव पडेगा।

यदि हर देश मे एक दर्जन भी सिह समान साहसी पुरुष हो, ऐसे सिह जिन्होने अपने बधन तोड दिए हो, जिनकी चेतना अपरिमित (अनत) हो और ब्रह्म मे लीन हो, जिनको धन, शक्ति और यश किसी की भी कामना न हो,

तो वे ससार मे हलचल मचा देने के लिए पर्याप्त है।

कोई भी कर्म लौकिक नही होता। सभी कार्य पूजा और आराधना है। प्रत्येक पुरुष को, प्रत्येक नारी को, प्रत्येक जीव को भगवानस्वरूप समझो। तुम किसी की सहायता नही कर सकते, प्रभु की सतानो की सेवा करो, साक्षात प्रभु की ही सेवा करो– जब कभी तुम्हे अवसर मिले। यदि प्रभु की इच्छा से तुम उनकी किसी सतान की सेवा कर सको, तो सचमुच तुम धन्य हो। अपने आप को बहुत बडा मत समझो।

विकास ही जीवन है और सकोच ही मृत्यु। प्रेम ही विकास है और स्वार्थपरता ही सकोच। तुम्हारे अंदर पूर्ण शक्ति निहित है, तुम सब कुछ करने मे समर्थ हो। इस शक्ति को पहचानो, यह मत सोचो कि तुम निर्वल हो। तुम बिना किसी की सहायता लिए ही सब कुछ करने मे समर्थ हो। सर्वशक्ति तुम्हारे अंदर विद्यमान है। उठो और अपना अन्त.स्थ ब्रह्मभाव अभिव्यक्त करो। उठो, जागो अब और मत सोओ। तुम्हारे प्रत्येक के भीतर एक शक्ति विद्यमान है जिसके द्वारा तुम संपूर्ण अभाव व दु.खो को दूरकर सकते हो। इस बात पर विश्वास करने से ही वह शक्ति जाग उठेगी।

स्त्रियो की पूजा करके सभी जातिया बडी बनी है। जिस देश मे, जिस जाति मे स्त्रियो की पूजा नही वह देश, वह जाति कभी बडी न बन सकी और न कभी बन ही सकेगी।

वर्तमान दिशा से स्त्रियो का प्रथम उद्धार करना होगा। सर्वसाधारण को जगाना होगा, तभी तो भारत का कल्याण होगा।

मैने इतनी तपस्या करके यही सार समझा है कि जीव जीव मे वे अधिष्ठित है, इसके अतिरिक्त ईश्वर और कुछ भी नही है। "जो जीवो की सेवा करता है, वही ईश्वर की सेवा करता है।"

आओ, अपने ऐशो आराम, नाम, यश, ऐश्वर्य, यहा तक कि अपने जीवन को भी न्यौछावर कर मान श्रृखला का एक सेतु निर्माण कर डालो ताकि उस पर से होकर लाखो जीवात्माये इस भव सागर को पार कर ले।

उठो, जागो क्योकि बडा उपयुक्त समय आ गया है। हमारे सम्मुख सब कुछ विदित होता जा रहा है। डरो नही, साहसी बनो। केवल हमारे शास्त्रो मे ही भगवान को 'अभी–अभी' विशेषण दिया गया है। हमे भी 'अभी' निर्भय होना होगा और बस काम बन जायेगा। उठो! जागो क्योकि तुम्हारे देश को इस असीम बलिदान की आवश्यकता है।

निडरता से आगे बढो। एक दिन क्या, एक वर्ष मे भी सफलता की आशा मत करो। अपना लक्ष्य उच्चतम रखो। देश, सत्यता व मनुष्यता के प्रति कार्य मे सदा आज्ञाकारी व अनन्त निष्ठावान रहोगे तो ससार को हिला कर रख दोगे। याद रखो मनुष्य का चरित्र बल ही सब कुछ है, अन्य कुछ भी नही।

अतएव उठो, साहसी बनो, वीर्यवान बनो। सब उत्तरदायित्व अपने कन्धे पर लो। यह याद रखो कि तुम स्वय, अपने भाग्य के निर्माता हो। तुम जो कुछ बल या सहायता चाहो, बस सब तुम्हारे ही भीतर विद्यमान है। हमेशा बढते चलो। मरते दम तक गरीबो और पददलितो के लिए सहानुभूति यही हमारा आदर्श वाक्य है।

हे महान आत्माओ! जागो, जागो! ससार दु.खाग्नि से जला जा रहा है, क्या तुम सोये रह सकते हो? मरते दम तक कार्य करते रहो। मै तुम्हारे साथ हू, और जब मै चला जाऊँगा तो मेरी आत्मा तुम्हारे साथ काम करेगी। ❑

2. पंचवटी : नासिक

महाराष्ट्र

गोदावरी नदी के दाहिने तट पर बसा हुआ नासिक महाराष्ट्र प्रदेश का प्रख्यात नगर है। गोदावरी के बाये तट पर पचवटी है। ये दोनो बस्तिया नासिक नगर के ही दो भाग है। वनवास काल मे भगवान राम ने कई मास तक पचवटी मे निवास किया था। यही लक्ष्मण जी ने शूर्पणखा की नासिका (नाक) काटी थी, इसलिए इस क्षेत्र का नाम नासिक पडा। यहा पर प्रति बारहवे वर्ष सूर्य और वृहस्पति के सिह राशि मे आने पर कुभ स्नान का मेला लगता है।

यहा पर गोदावरी नदी मे स्नान का विशेष महत्व है, क्योकि गोदावरी भी पवित्र सप्त नदियो मे एक है। यहा नदी मे बहुत थोडा जल रहता है। अत स्नानार्थियो की सुविधा के लिए स्थान–स्थान पर जलधारा को रोक दिया गया है, जिससे कई कुड बन गये है। पचवटी की ओर रामकुड है। कहा जाता है कि यहा भगवान राम ने स्नान किया था। अत इस कुड मे स्नान

का अधिक महत्व है। इस कुड के निकट गोदावरी देवी का मन्दिर है, जिसका दर्शन केवल कुभ पर्व के अवसर पर होता है।

पचवटी की ओर कुड के ऊपर कपालेश्वर शिव मन्दिर है। इस मन्दिर की विशेषता यह है कि यहां वृषभ की मूर्ति मन्दिर के पीछे है। यहा से थोडा आगे नदी तट पर नरोशकर का विशाल मन्दिर है। इसका घटा इतना बडा है कि इसकी ध्वनि पाच किलोमीटर दूर तक सुनाई पडती है।

पचवटी तीर्थ का प्रधान मन्दिर कालाराम मन्दिर है जो गोदावरी तट से चौथाई किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। इसमे राम, लक्ष्मण और सीता की बडी भव्य मूर्तिया स्थापित है। मन्दिर का निर्माण इस प्रकार हुआ है कि वर्ष के दो प्रमुख दिनो मे सूर्य की किरणे मूर्ति के ऊपर पडती है।

कालाराम मन्दिर से कुछ दूरी पर सीता गुफा है। कहा जाता है कि वनवास काल मे सीताजी ने इसी गुफा मे निवास किया था और यही से रावण ने उनका हरण किया था। यहा बरगद के पाच वट (बरगद) है, इसलिए इसका नाम पंचवटी पड़ा।

कालाराम मन्दिर से दो किलोमीटर की दूरी पर तपोवन है। यहा पर कपिला और गोदावरी दो नदियो का संगम है। उसके समीप ही एक छोटा सा राम मन्दिर है। सगम से थोडा पहले लक्ष्मण जी का एक विशाल मन्दिर है। कहा जाता है कि यही लक्ष्मण जी ने शूर्पणखा की नाक काटी थी। कहा जाता है कि यही महर्षि गौतम की तप.स्थली थी।

गोदावरी के दाहिने तट पर नासिक है, वहा भी कई धार्मिक तथा दर्शनीय स्थान है। गोदावरी नदी पर जो सबसे ऊँचा सेतु है, उसी के निकट नदी तट पर सुंदर नारायण मन्दिर है, जिसमे भगवान नारायण की अतिभव्य मूर्ति प्रतिष्ठित है। इस मन्दिर का निर्माण काल सन् 1756 है।

नासिक से छह किलोमीटर की दूरी पर टाकली बस्ती है। यहां एक मन्दिर में समर्थ रामदास की बनाई गोबर की हनुमान मूर्ति है और एक गुफा मे शिवाजी एव समर्थ रामदास की प्रतिमाये है। यहा समर्थ गुरु रामदास बारह वर्षो तक रहे थे।

नासिक के दक्षिण पश्चिम की ओर लगभग आठ किलोमीटर की दूरी पर 23 बौद्ध गुफाये है। इनका नाम पाडव गुफा है। इनमे कई दर्शनीय है। इन गुफाओ से पांडवो का कोई सबध नही, केवल इनका नाम पांडव गुफा है।

नासिक से साढ़े नौ किलोमीटर की दूरी पर एक पहाडी है, जिस पर राम शय्या मन्दिर है। इसी के निकट दो तीन गुफाये है। कहा जाता है कि

इन्ही गुफाओ मे वनवास काल मे राम ने निवास किया था और यही रावण ने सीता हरण किया था।

यहा की सप्त श्रृगी पहाडी बहुत मशहूर है जो नासिक से लगभग 45 किलोमीटर दूर है। इसके एक पर्वत शिखर पर चडिका देवी का अति विख्यात मन्दिर है। 750 सीढियो के ऊपर देवी का गुफा मन्दिर है। इसमे दस फुट ऊँची अष्टादश भुजा सिदूर चर्चिता देवी की खडी मूर्ति है। ◻

3. वृन्दावन—मथुरा

उत्तर प्रदेश

मथुरा से 10 किलोमीटर उत्तर की तरफ वृन्दावन है। इस क्षेत्र मे भगवान श्रीकृष्ण ने अनेक प्रकार की लीलाये की थी। अत. यह क्षेत्र भगवान श्रीकृष्ण का लीलाक्षेत्र कहा जाता है।

ब्रह्मवैवर्त पुराण मे कथा है कि सतयुग मे महाराज केदार की पुत्री वृन्दा ने यही श्रीकृष्ण को पति रूप मे पाने के लिए घोर तपस्या की थी। उसकी तपस्या से प्रसन्न होकर भगवान श्रीकृष्ण ने दर्शन दिये। वृन्दा की पावन तपोभूमि होने से यह वृन्दावन कहा जाता है। भौगोलिक दृष्टि से कुछ वर्ष पूर्व तक यह क्षेत्र वृन्दा अर्थात् तुलसी के वृक्षो का वन था, इसलिए इसे वृन्दावन कहा जाता है।

वृन्दावन मदिरो का समूह है। यहा गली—गली मे मन्दिर है। यहा जितने मन्दिर है उतने मथुरा और अयोध्या मे भी नही है। अत इस क्षेत्र के मुख्य मदिरो का ही वर्णन किया जा सकता है।

गीता मन्दिर— मथुरा वृन्दावन मार्ग पर लगभग मध्य मे श्री जुगुल किशोर बिडला द्वारा बनवाया गीता मन्दिर है। यह अति ही भव्य है। इसमे गीता गायक श्रीकृष्ण की सगमरमर की विशाल एव सुदर मूर्ति स्थापित है तथा सपूर्ण गीता सुललित अक्षरो मे पत्थर पर उत्कीर्ण की गई है।

कृष्ण—गोपाल मन्दिर— मथुरा वृन्दावन राजमार्ग मे वृन्दावन से दो किलोमीटर पहले कृष्ण गोपाल मन्दिर है। इसे जयपुर मन्दिर भी कहा जाता है। जयपुर के राजा सवाई माधोसिह ने इसका निर्माण सवत् 1774 मे कराया

था। मन्दिर एक विस्तृत घेरे के भीतर है। मुख्य मन्दिर मे कृष्ण गोपाल की मूर्ति है।

वृन्दावन की परिक्रमा पाच–छः किलोमीटर की है। परिक्रमा क्रम के अनुसार पहले यमुना तट पर कालियदह आता है, जहां श्रीकृष्ण ने कालियनाग को नाथा था। वहां कालिय मर्दनकर्ता भगवान की मूर्ति है। उसके आगे युगलघाट है, जहा युगुल किशोर जी का मन्दिर है। इसके पास ही मदनमोहन मन्दिर है।

इसके वाद महाप्रभु चैतन्य के स्नेह पात्र अद्वैताचार्य गोस्वामीजी की तपोभूमि अद्वैतवट है। जहा अष्ट सखियो का मन्दिर है। उससे आगे स्वामी हरिदास जी के अराध्य वांके विहारी का मन्दिर है। वृन्दावन का यही प्रधान मन्दिर है। इस मन्दिर की अनेक विशेषतायें है। श्री विहारी जी के दर्शन लगातार नहीं होते। वीच–वीच मे पर्दा हटाया जाता है। केवल अक्षय तृतीया को उनके चरणो के दर्शन होते हैं। केवल शरतपूर्णिमा को वे वंशीधारण करते हैं और केवल एक दिन श्रावण शुक्ला 3 को झूले पर विराजमान होते हैं।

इससे आगे श्री हितहरिवंशजी के अराध्य श्री राधा वल्लभजी का मन्दिर है। फिर दानगली, मानगली, यमुनागली, कुजगली तथा सेवाकुंज हैं। सेवाकुंज मे रगमहल नामक एक छोटा मन्दिर है जिसमे श्री राधा कृष्ण के चित्रपट हैं। सेवाकुंज के वारे मे यह प्रसिद्ध है कि वहां रात्रि में प्रतिदिन भगवान श्रीकृष्ण की रासलीला होती है। इसलिए वहां रात्रि मे कोई रहने नहीं पाता।

श्रृंगारवट मे श्री राधिकाजी की वैठक है। लोई वाजार मे सवा मन के शालग्रामजी का मन्दिर है। आगे शाहविहारीजी का सगमरमर का मन्दिर है। उसके पास निधिवन है, जहां स्वामी हरिदासजी विराजते थे और जहां श्री वांकेविहारी जी प्रकट हुए थे। श्री वांकेविहारी जी के रूप मे परमनिधि के प्रकट होने के कारण इसे निधिवन कहते है।

निधिवन के पास ही श्री राधारमण जी का मन्दिर है। ये श्री चैतन्यदेव के कृपापात्र श्री गोपालभट्ट के आराध्य हैं। इससे आगे श्री गोपीनाथ का मन्दिर है।

वशीवट के पास श्री गोकुलानन्द मन्दिर है। वंशीवट मे श्री राधा कृष्ण के चरण चिन्ह हैं। उससे आगे महाप्रभु श्री वल्लभाचार्यजी की बैठक है।

वही आगे श्री गोपेश्वरनाथ महादेव का मन्दिर है। इसके दर्शन के बिना वृन्दावन की यात्रा पूर्ण नही मानी जाती। इसलिए इस क्षेत्र का यह प्रधान मन्दिर है।

आगे विस्तृत स्थान पर श्री लालाबाबा का मन्दिर है। इसके पीछे की ओर जगन्नाथ घाट पर श्री जगन्नाथ जी का मन्दिर है।

लालाबाबा के मन्दिर के पास ब्रह्मकुड है। यही श्रीकृष्ण ने गोपो को ब्रह्म दर्शन कराया था। इससे लगा हुआ श्री रगजी का मन्दिर है। दक्षिण भारत की शैली का रामानुज सम्प्रदाय का यह विशाल एव भव्य मन्दिर है। इस मन्दिर के उत्सवो मे पौष का ब्रह्मोत्सव तथा चैत्र का वैकुण्ठोत्सव मुख्य है।

श्री रगजी के मन्दिर के सम्मुख श्री गोविन्द देवजी का प्राचीन मन्दिर है। श्री गोविन्दजी ब्रजनाथ द्वारा स्थापित थे।

श्री रगजी के पीछे ज्ञान गुदडी स्थान है। यह विरक्त महात्माओ की भजनस्थली है। कहते है कि उद्धवजी का गोपियो के साथ सवाद यही हुआ था।

स्मरण रहे कि मथुरा वृन्दावन पर बार–बार आक्रमण हुए है। प्राचीन काल से हूण, शक आदि जातिया इसे नष्ट करती रही है। मुस्लिम हमलावरो ने इन तीर्थो को तीन बार ध्वस्त किया। परिणामस्वरूप यहा प्राचीन मन्दिर नही रह गये हैं। वृन्दावन मे 500 वर्ष से पुराना कोई मन्दिर नहीं है। ब्रज मे प्राचीन तो भूमि, यमुना जी और गिरिराज गोवर्धन है। □

4. गुरुद्वारा आनन्दपुर साहिब

आनन्दपुर साहब सिखो के पाच तख्तो मे से एक है। सिखो का यह बहुत ही पवित्र स्थान है। यह उनकी परपरा और इतिहास के साथ जुडा हुआ है। यह रोपड से 45 किलोमीटर की दूरी पर सतलुज नदी के किनारे गुरु तेग बहादुर जी द्वारा बसाया हुआ शहर है।

सिख इतिहास से सबधित और भी कई गुरुद्वारे यहा पर है जैसे गुरुद्वारा गुरु का महल। इसे नौवे गुरु ने अपने निवास के लिए बनवाया था। यही पर दसवे गुरु के चार साहिबजादो का जन्म हुआ था। इसके नजदीक ही गुरुद्वारा सीसगज, जहा पर नौवे गुरु के शीश का सस्कार किया गया था। स्मरण रहे जब गुरु तेग बहादुर दिल्ली मे शहीद हो गये तो धड से अलग उनके सिर को भाई जैता रगरेटा ने मुगल सेना की आख बचाकर आनन्दपुर लाकर गुरु गोविन्दसिह के सामने प्रस्तुत किया था।

जिन जगहो पर गुरुद्वारे केसगढ, लौहगढ, फतेहगढ और आनन्द गढ दिखाई देते है, वहा पर चार किले थे, जो गुरु गोविन्दसिह ने बनवाये थे। गुरु गोविन्दसिह जी को मुगलो और राजपूत शासको की सेना से कई लडाइया लडनी पडी थी।

आनन्दपुर मे ही गुरु गोविन्दसिह जी ने पाच प्यारो को अमृत छकाया था और 1699 मे खालसा पथ का निर्माण किया था। गुरु के लिए शीश समर्पित करने वालो मे लाहौर के दयाराम खत्री, दिल्ली के धरमदास जाट, द्वारिका के मोहकमचन्द धोबी, जगन्नाथ (पुरी) के हिम्मत कहार और बीदर (कर्नाटक) के साहिबचन्द नाई थे। वही पर इन पाच प्यारो से अमृत पानकर अपना नाम गुरु गोविन्द राम से बदलकर गोविन्दसिंह रख लिया था जिसके विषय मे मशहूर है कि आपै गुरु, आपै चेला। खालसा पथ निर्माण के बाद हर सिख के नाम के आगे सिह लिखना तथा पाच ककारो (केश, कच्छा, कडा, कृपाण और कघा) का धारण करना अनिवार्य कर दिया था।

गुरु गोविन्दसिह के प्रयासो के परिणामस्वरूप कुछ दिनो मे ही आनन्दपुर मे लगभग 80 हजार लोगो ने अमृतपान किया और पाच ककारो को धारण करके गुरु गोविन्दसिह के अनुयायी बनकर सिंह बने।

तेजासिह और गडासिह 'सिखो के सक्षिप्त इतिहास' मे लिखते है– "वे लोग जो समाज मे सबसे नीचे समझे जाते थे, उनमे खालसा पथ का बहुत ही प्रभाव पडा। सफाई का काम करने वाले, नाई और हलवाई, जिन्होने कभी तलवार को हाथ से स्पर्श भी नही किया था और जिनके पूर्वज पीढी दर पीढी ऊँचे वर्गो की गुलामी करते आ रहे थे, गुरु गोविन्दसिह के प्रेरक नेतृत्व मे महान योद्धा बने, जो गुरुजी के आदेश पर मौत के मुह मे भी घुसने को तैयार रहते थे।"

जिस जगह पर गुरुजी ने पाच प्यारो को अमृत छकाया था, उसी स्थान

पर गुरुद्वारा केसगढ बना हुआ है। यहा पर प्रतिदिन दशम पिता गुरु गोविन्दसिह के शस्त्रो के दर्शन कराये जाते है।

हर साल होली के अगले दिन आनन्दपुर साहब मे सिख परपरा के अनुसार होले मोहल्ले का त्योहार मनाया जाता है। उस समय यहा जगी शानो शौकत की झलक दिखाई जाती है। लाखो श्रद्धालुजन खुशी से भरपूर माहोल मे यह त्योहार मनाते है।

आनन्दपुर मे गुरु तेगबहादुर की याद मे बनाया गया सग्रहालय देखने योग्य है। इस सग्रहालय मे बहुत सी तस्वीरे और चित्र है, जिनमे सिखो के सघर्षपूर्ण इतिहास की झलक देखने को मिलती है।

यात्रियो के लिए आनन्दपुर साहिब मे ठहरने की समुचित व्यवस्था है। पजाब सरकार के पर्यटन विभाग की ओर से पाच डबलबेड वाले कमरे बने हुए है। इसके अलावा नजदीक ही नगल मे पजाब सरकार का 70 कमरो वाला यात्री निवास है। इसके अलावा भाखडा नागल बोर्ड की ओर से भी यात्रियो के लिए रिहायश का प्रबन्ध है। □

5. दरगाह बाबा हाजी मलंग

बाबा हाजी मलग की दरगाह, मुसलमानो, हिन्दुओ तथा अन्य समुदायो के लिए एक पवित्र स्थान है। सभी सम्प्रदायो के लोग हजारो की सख्या मे बाबा हाजी मलग की दरगाह मे अपनी आस्था और श्रद्धा प्रकट करने के लिए इकट्ठे होते है। इसलिए हाजी मलग की दरगाह सभी के लिए एक तीर्थस्थान हो गया है।

बाबा हाजी मलग की दरगाह, महाराष्ट्र मे थाणा जिले के कल्याण रेलवे स्टेशन से लगभग 11 किलोमीटर की दूरी पर मलगशा पहाडी पर स्थित है।

कल्याण रेलवे स्टेशन से बाबा हाजी मलग की दरगाह तक जाने के लिए ब्रह्मन वाडी तक बस आदि की अच्छी व्यवस्था है। इसी ब्रह्मन वाडी नामक छोटी सी बस्ती से दरगाह तक पहुचने के लिए पहाड की चढाई शुरू होती है। इससे पहले दरगाह तक पहुचने मे बडी कठिनाई होती थी,

लेकिन अब कुछ भक्तजनो ने मिलकर एक सुगम रास्ता बनवा दिया है जिससे हजारो दर्शनार्थी श्री हाजी मलंग बाबा के समाधि स्थान (दरगाह) तक सुविधापूर्वक पहुच जाते है।

बाबा श्री हाजी मलग पहाडी पर थोडा चढ जाने से एक जगह श्री बावा मलग के अनुयायी बाबा श्री बख्तावर शाह की मजार (समाधि) है। इस पवित्र स्थान, जहा पर बाबा श्री बख्तावर शाह की समाधि है, को उस पहली मजिल के नाम से सबोधित किया जाता है।

बाबा श्री बख्तावर शाह की दरगाह से थोडी ऊँचाई पर बावा श्री हाजी मलग के दूसरे परम भक्त श्री सुल्तानशाह की समाधि है। इस पवित्र स्थान को दूसरी मजिल के नाम से पहचाना जाता है।

थाने डिस्ट्रिक्ट गजेटियर (1983) के अनुसार "बाबा हाजी मलंग की दरगाह, हाजी अब्दुल रहमान की समाधि है, जो एक सूफी संत थे। उनका देहान्त 800 वर्ष पहले हुआ था।" इस पहाडी मलगशा से राजा नल का नाम भी जुडा है, जो इस पहाड़ पर निवास करते थे। उनके शासनकाल मे ही हाजी अब्दुल रहमान अपने अनुयायियो के साथ इस पहाड पर आये। राजा नल ने हाजी अब्दुल रहमान की आध्यात्मिक परीक्षा के लिए अपनी रूपवती कन्या को भेजा। हाजी अब्दुल रहमान, राजा नल की रूपवती कन्या के प्रति जरा भी आसक्त नही हुए और इस तरह वे परीक्षा मे खरे उतरे। राजा नल हाजी अब्दुल रहमान की पवित्र विचारधारा और आचरण से बहुत प्रभावित हुए। उन्होने अपनी कन्या का विवाह हाजी अब्दुल रहमान से कर दिया। उनकी पत्नी की समाधि भी हाजी मलग की दरगाह के पास ही स्थित है।

थाने जिले के गजेटियर मे वर्णित है कि दरगाह के एक कोने मे पांच समाधिया (मजार) है। वे मजार, बाबा हाजी मलग के प्रिय भक्तो की है। सन् 1780 मे बम्बई के कर्नल हर्टले तथा कल्याण के कर्नल जैम्सन के नेतृत्व मे अग्रेजो ने मलगशा पहाड पर हमला किया और मराठो को पराजित कर इस पर अधिकार कर लिया। बाद मे दो साल के बाद अग्रेज इस स्थान को छोडकर चले गये और मलगशा पर मराठो का पुन. अधिकार हो गया। हाजी मलग के प्रति कृतज्ञता प्रकट करते हुए तत्कालीन पेशवा (मराठा शासक) ने सुनहरे किनारो वाली, मोतियो से जडी, हाजी मलग की दरगाह पर एक चादर चढाई थी। हाजी मलग की दरगाह पर यह चादर बडे समारोह के साथ कल्याण के ब्राह्मण, काशीनाथ पत केतकर की

देखरेख मे लाई गई थी। आज भी उसी परिवार से सबधित व्यक्ति, बाबा हाजी मलग की सेवा कर रहा है। केतकर को कुछ भक्तगण 'मुजावर' भी कहते है।

मलगशा की भव्य पहाडी पर, किसी भी कोने पर, पानी का नामोनिशान नही था। सारा पहाड छान मारने के बाद भी बाबा को पानी नही मिला। बाबा को बडा रज हुआ और क्रोध भी आया। उसी क्रोध मे आकर आपने एक चीज जो उनके हाथ मे थी, जमीन पर 'अल्लाह अकबर' कहते हुए बडे जोर से पटकी। गिरते ही वहा पानी की धारा बह निकली। जिसे आजकल चश्मा कहा जाता है। यह बडा पवित्र चश्मा है। इस चश्मे के जन्मदाता श्री हाजी मलग बाबा है।

अपने जीवन काल मे बाबा हाजी मलग जानवरो से बहुत प्यार करते थे। कितने ही शेर तथा जगली जानवर आपके पास आया करते थे। इनमे एक सिह था जो बाबा का बडा भक्त था। वह उन्हे छोडकर कही नही जाता था। कहा जाता है कि आज तक वह बनराज सिह बाबा हाजी मलग की दरगाह मे आता है और अपनी दुम से दरगाह मे झाड़ू लगाता है। जब वार्षिकोत्सव होता है और बाबा हाजी मलग का सदल निकलता है, उस वक्त वह बनराज 'बाबा हसार' पर से अपनी सलामी प्रकट करने के लिए जोर से गर्जना करता है। कहा जाता है कि इस बनराज के दर्शन किसी भाग्यशाली भक्त को ही होते है।

बाबा हसार पर जहा श्री बाबा हाजी मलग सैर करने जाया करते थे, उस जगह श्री बाबा ने इलायची खाकर उसके छिलके जमीन पर फेक दिये थे, वही पर इलायची के पेड उग आये। इलायची के पेडो की झाडिया आज तक़ है। बाबा मलग के हजारो भक्त इस इलायची को बाबा का प्रसाद मानकर खाते है। कहा जाता है कि बीमार आदमी, जिसे अजीर्ण रहता है, अगर श्री बाबा का नाम लेकर इस प्रसाद को खाये, तो उसका रोग ठीक हो जाता है। वह आदमी जिसे मिरगी की बीमारी है, अगर उस अनमोल प्रसाद को नित्य एक महीना और एक दिन सेवन करे तो उसकी बीमारी खत्म हो जाती है।

बाबा हाजी मलग की दरगाह पर वार्षिक उर्स का उत्सव बडे समारोह के साथ मनाया जाता है। उर्स के अवसर पर रात्रि को बाबा की पालकी की शोभा यात्रा होती है। बाबा की पालकी 40 किलोग्राम चादी से निर्मित है, जिसके किनारे चन्दन के पटरो से गढे हुए है। पालकी को सुसज्जित

करके आधी रात के समय शोभा यात्रा का समारोह होता है और कई घटो तक भक्तगणो के दर्शनार्थ एक जगह रख दी जाती है। पालकी से सबधित कर्मकाण्ड केतकर परिवार द्वारा सपन्न होते है। पालकी सजाने का काम खान परिवार करता है, चन्दन की सजावट का काम अत्तार परिवार करता है। पालकी को ढोने का कार्य कोली लोगो के माध्यम से किया जाता है। मिलाद के अवसर पर कुरान के पाठ का कार्य पटेल परिवार सपन्न करता है। इस समारोह मे एक हिजडे को भी सम्मान से सम्मिलित किया जाता है। इस तरह बाबा की पालकी समारोह मे भारतीय समाज के सभी समुदायो की भागीदारी होती है।

बाबा की दरगाह पर हिन्दू और मुसलमान दोनो अपनी आस्था के अनुसार चादर, नारियल और फूल समर्पित करते है।

बाबा हाजी मलग की पहाड पर चढाई करने से पहले एक भवन पर हिन्दी और उर्दू मे यह पद्य लिखा हुआ मिलता है जो बाबा मलग के आदर्श और उनके भक्तो की सहिष्णु भावना को अच्छी तरह व्यक्त करता है।

किसी दर्दमन्द के काम आ
किसी डूबते को उछाल दे।
ये निगाहे मस्त की मस्तिया
किसी बदनसीब पै डाल दे।।

बाबा हाजी मलग की दरगाह सूफी सस्कृति की अनुपम मिसाल है। दरगाह के ट्रस्टियो मे धर्म और जाति से ऊपर उठकर सभी समुदायो के लोग है। ❑

6. लुम्बिनी

भगवान बुद्ध, जिनका बचपन का नाम सिद्धार्थ था, का जन्म ईसा पूर्व 563 वर्ष मे लुम्बिनी मे हुआ था। लुम्बिनी को स्थानीय जनता द्वारा रूमनदेई भी कहा जाता है। बुद्ध का जन्म स्थान 'लुम्बिनी' उस समय शालवन था। लुम्बिनी वाराणसी के उत्तर मे 100 मील की दूरी पर स्थित है। यह राजबन देवदाहा

और कपिलवस्तु के बीच मे स्थित था।

लुम्बिनी बौद्धो का पवित्र तीर्थ स्थल और आस्था का केद्र है। लुम्बिनी आजकल नेपाल राज्य के अन्तर्गत स्थित है। लुम्बिनी की खोज प्रसिद्ध पुरातत्व वेत्ता जनरल अलेक्जेन्डर कनिघम ने सन् 1886 मे की थी।

लुम्बिनी मे जहा अशोक स्तम्भ स्थित है, वही भगवान बुद्ध का पवित्र जन्म स्थान है। अशोक स्तम्भ का स्थित होना, बुद्ध के जन्म स्थल का असंदिग्ध प्रमाण है।

सम्राट अशोक, बुद्ध धर्म से सबधित जिस किसी स्थान पर गये, वहा पर उन्होने अपना राजकीय ध्वज स्तभ भी स्थापित किया और सभी ध्वज स्तम्भो पर अपनी यात्रा के वर्णन के साथ–साथ राज्यादेश तथा धर्मोपदेश अकित कराये।

जब सम्राट अशोक ने लुम्बिनी के लिए प्रयाण किया तब बौद्ध धर्म के प्रसिद्ध तत्व वेत्ता तथा सलाहकार उपगुप्त भी उनके साथ थे। उन्होने ही भगवान बुद्ध के जन्म स्थल को सुनिश्चित किया था और वही पर सम्राट अशोक द्वारा ध्वज स्तम्भ स्थापित किया गया तथा ध्वज स्तम्भ मे राज्यादेश और धर्मोपदेश अकित कराये गये।

लुम्बिनी की यात्रा सम्राट अशोक की पहली तीर्थ यात्रा थी। भगवान बुद्ध के जन्म के पवित्र स्थल के प्रति अपना सम्मान प्रकट करने के लिए अपनी प्रथम तीर्थ यात्रा के प्रतीक के रूप मे ध्वज स्तम्भ का निर्माण कराया तथा राज्यादेश तथा धर्मोपदेश अकित कराये।

प्राचीन परपरा के अनुसार प्रथम प्रसव के उपलक्ष्य मे जब रानी महामाया अपने पितृ गृह देवदाही जा रही थी तो रास्ते मे राजकीय लुम्बिनी शालवन पडता था। पितृ गृह पहुचने के पहले ही रानी महामाया ने लुम्बिनी मे सिद्धार्थ गौतम (भगवान बुद्ध) को जन्म दिया।

लुम्बिनी के ऐतिहासिक महत्व को देखते हुए भारत की केद्रीय सरकार और नेपाल राज्य के माध्यम से अनेको सर्वेक्षण तथा खोजे कराई गई। ऐतिहासिक और पुरातत्व से सबधित अनेको वस्तुए मिली है और अभी बहुत पुरातात्विक खोज बाकी है।

लुम्बिनी की सुरक्षा और देखभाल का काम नेपाल सरकार कर रही है। लुम्बिनी मे खुदाई से प्राप्त पुरातात्विक अवशेषो के सरक्षण के लिए सग्रहालय की योजना को मूर्तरूप देने के लिए प्रयास जारी है। ☐

7. शंभुजय : पालीताणा

गुजरात

मुनियो के मुख्य पाच पर्वत पवित्र माने जाते है– कैलाश, शभुजय (सिद्धाचल), गिरनार, अर्वुदाचल (आवू) तथा सम्मेतशिखर (पारसनाथ)। इसमे सिद्धक्षेत्र शभुजय की विशेष मान्यता है।

यहा की बस्ती का नाम पालीताणा है, जो शभुज्जी नदी पर वसी हुई है। नदी से तीन किलोमीटर की दूरी पर शत्रुज्ज पहाडी है। पहाडी पर दो शिखर है। दोनो शिखरो पर जैन मुनियो के मन्दिर है। यह शत्रुज्जय गिरि निर्वाण क्षेत्र है। यहीं तीन पाडव, युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन तथा असख्य राजा मुक्त हुए थे।

श्वेताम्बर जैनियो मे शत्रुज्जय की मान्यता अन्य सभी तीर्थो से अधिक है। यह पहाड एक तरह से जैन मन्दिरो का गढ है। श्वेताम्बर समाज के लगभग 3500 मन्दिर और मदरिया है। जितने मन्दिर यहा है, उतने किसी तीर्थ मे नही है। साथ ही ये शिल्प कला की दृष्टि से भी उत्तम है।

पहाड की चोटियो पर 11वी शताब्दी मे मन्दिर समूहो का निर्माण शुरू हुआ और 900 वर्ष मे श्वेत संगमरमर के 873 मन्दिर बने है। इन मन्दिरो की स्थापत्य शैली व भित्ति चित्रो की उत्कृष्टता दर्शनीय है।

शभुजय के प्रथम शिखर पर कोई दिगम्बर मन्दिर नही है। दूसरे शिखर पर श्वेताम्बर मन्दिरो के केंद्र के परकोटे मे एक प्राचीन दिगम्बर जैन मन्दिर है। पालीताणा बस्ती मे भगवान विष्णु, भैरवनाथ और शांतिनाथ (जैन मुनि) के मन्दिर है। शंभुजय पहाडी के नीचे आदिनाथ का मन्दिर है। साथ ही कई चरण पादुकाये है।

इन दोनो शिखरो मे आदिनाथ, कुमारपाल, विमलशाह और चतुर्मुख के मन्दिर मुख्य है। पर्वत पर सीढिया बहुत अच्छी बनी हुई है। बच्चे, बूढे और महिलाये सभी सुगमता से चढ जाते है। यह पालीताणा जैन धर्म वालो का पवित्रतम तीर्थ है। जीवन मे एक बार पालीताणा आना जैनियो की सबसे बडी कामना होती है।

नगर से शभुजय पहाडी की तलहटी डेढ किलोमीटर है। पालीताणा भावनगर से 29 किलोमीटर है। बस सेवाये उपलब्ध है। रेल द्वारा सीहोर, पहुचकर, सीहोर पालीताणा ब्राच लाइन से पालीताणा पहुचते है। नगर मे धर्मशाला है तथा अन्य सभी सुविधाये उपलब्ध है। □

8. श्री अमरनाथ जी

यह यात्रा अत्यत ही दुष्कर व कष्टदायक है। प्राय सभी यात्रियो को पैदल चल कर ही इसे पूरा करना होता है। लगभग 14 हजार फुट ऊँची हिमाच्छादित चोटियो को पार करने के पश्चात ही अमरनाथ जी के दर्शन करना सभव है। यात्रा के मध्य मे यदि वर्षा हो जाये तो यात्रियो की कठिनाईया और अधिक बढ जाती है। ऐसी अवस्था मे प्राय. दुर्घटनाये भी हो जाती है। ऐसी विषम परिस्थितियो मे भी देश के विभिन्न भागो से हजारो यात्री प्रति वर्ष जिनमे बाल, वृद्ध व महिलाये भी शामिल होते है, अमरनाथ की यात्रा कर अपने को परम सौभाग्यशाली मानते है।

कश्मीर मे स्थित एक 60 फुट लम्बी, 25 से 30 फुट चौडी और 15 फुट ऊँची एक गुफा मे अमरनाथ विराजमान है। इस गुफा मे चार पाच फुट ऊँचा हिम निर्मित एक शिवलिग है जो अमरनाथ कहे जाते है। इसी गुफा मे पार्वती और गणेश के प्रतीक रूप दो छोटे–छोटे हिम विग्रह है। इस गुफा मे जहा–तहा बूद बूद जल टपकता रहता है। कहा जाता है कि गुफा के ऊपर राम कुड नामक एक जल कुड है, जिसके कारण जल टपकता है। गुफा के निकट एक स्थान से सफेद भस्म जैसी मिट्टी निकलती है, जिसको यात्रीगण प्रसादस्वरूप अपने साथ ले जाते है। इस गुफा से थोडी ही दूर पर अमर गगा एक जल प्रवाह है, जिसमे लोग स्नान करते है।

अमरनाथ की यात्रा ज्येष्ठ मास से लेकर श्रावण की पूर्णिमा तक की जाती है। इससे पहले हिम के कारण मार्ग अवरुद्ध रहते है और श्रावणी के पश्चात घनघोर वृष्टि के कारण मार्ग कट जाते है।

श्रीनगर से 96 किलोमीटर की दूरी पर लीदर और तानिन नदियो के सगम पर बसा हुआ प्राकृतिक सौन्दर्य युक्त एव स्वास्थ्यवर्धक पहलगाव स्थान है। सागर के जलस्तर से इस स्थान की ऊँचाई 2134 अर्थात् 7000 फुट है। अमरनाथ की यात्रा यही से प्रारम्भ होती है।

पहलगाव से 13 किलोमीटर की दूरी पर प्रथम पडाव चन्दनवाडी पडता है, जिसकी ऊँचाई 2902 मीटर अर्थात् 9500 फुट है। यहा से 11 किलोमीटर की दूरी पर द्वितीय पडाव शेषनाग है, जिसकी ऊँचाई 3590 मीटर अर्थात्

11730 फुट है। इससे आगे 14 किलोमीटर की दूरी पर तृतीय अथवा अतिम पडाव पचतरणी पडता है। यह इलाका प्राय. हिमाच्छादित रहता है। पचतरणी 4270 मीटर अर्थात् 14000 फुट की ऊँचाई पर स्थित है। यहा से पांच किलोमीटर की दूरी पर 3888 मीटर अर्थात् 12729 फुट की ऊँचाई पर अमरनाथ की गुफा है।

श्रावणी के अवसर पर कई सहस्र दर्शनार्थी जाते है। उस समय सरकारी प्रबन्ध रहता है। जहाँ तहा टूटे मार्ग भी ठीक करा दिये जाते है। इस यात्रा को छडी मुबारक कहते है। भीड के कारण बहुत से लोगो को बिना दर्शन के ही लौटना पडता है। भीड के कारण ऊँचे और दुर्गम पथ मे दुर्घटनाओ की संभावना अधिक रहती है।

शिव पुराण, विश्वेश्व संहिता, अध्याय 16 मे लिखा है कि श्रावण मास मे विष्णु का पूजन इष्टफल और आरोग्य देने वाला है। इसी अध्याय मे आगे लिखा है कि कृष्णपक्ष की चतुर्दशी रविवार आर्द्रा नक्षत्र मे शिव की पूजा विशेष फलदायक है। माघ कृष्ण चतुर्दशी को शिव पूजा सब मनोरथो को पूर्ण करने वाली, आयु बढाने वाली, मृत्यु हरने वाली एव सब सिद्धियो को देने वाली है। ज्येष्ठ कृष्ण चतुर्दशी, सूर्य सयुक्त आर्द्रा नक्षत्र मे अथवा मार्ग शीर्ष आर्द्रा नक्षत्र मे शिव की पूजा भोग और मोक्ष को देने वाली है। इसलिए यात्रियो को श्रावणी के पहले ही अमरनाथ की यात्रा के लिए प्रस्थान करना चाहिये। यात्रा अति दुष्कर होने के कारण जीवन मे एक बार ही यात्रा कर यात्री अपने को सौभाग्यशाली मानते है किन्तु कुछ ऐसे भी भक्तगण होते है जो एक बार से अधिक यात्रा करने का साहस करते है। धन्य है ऐसे साहसी भक्तजन। □

9. राजघाट : गांधी समाधि

लगभग डेढ सौ वर्षो की गुलामी के पश्चात 15 अगस्त, 1947 के दिन हिन्दुस्तान ब्रिटिश साम्राज्यवाद के चगुल से मुक्त हुआ था। किन्तु आजादी की इस लडाई की इस देश के वासियो को बहुत बडी कीमत चुकानी पडी। अग्रेजो की 'बाटो और

राज करो' की नीति के कारण हिन्दुस्तान दो हिस्सो मे विभाजित हुआ– भारत और पाकिस्तान। लाखो परिवार सदियो से सौहार्दपूर्वक इस देश मे रह रहे थे, वे भी विभाजित हुए। लाखो लोगो को भारत छोडकर पाकिस्तान जाना पडा और लाखो ही लोग जो पाकिस्तान मे रहते थे, वे भारत मे स्थानातरित होने के लिए विवश हुए। एक ही देश के नागरिक इतनी बडी सख्या मे स्थानातरित होगे, इसकी कभी कल्पना भी नही की जा सकती थी। इतिहास मे शायद यह पहला अवसर था कि इतने व्यापक स्तर पर लोगो को स्थानातरित होना पडा हो। लोग केवल स्थानातरित ही नही हुए बल्कि लाखो लोग मारे भी गये। हजारो लाखो मकान जला दिये गये और अरबो रुपये की सम्पति नष्ट हुई। इतनी बडी कीमत चुकाने के बाद ही यह देश अग्रेजो के चगुल से मुक्त हुआ था। भारत और पाकिस्तान के बहुत बडे भागो मे साप्रदायिक झगडे हुए जिस कारण महात्मा गाधी इतने क्षुब्ध थे कि जिस दिन देश आजाद हुआ और भारत की राजधानी, दिल्ली मे, आजादी के जश्न मनाये जा रहे थे, इस आजादी के जनक महात्मा गाधी, दिल्ली से दूर ही रहे। उनके लिए तो ये एक क्षोभ का दिन था, जिस देश को एक रखने के लिए उन्होने इतना सघर्ष किया, वह देश दो भागो मे बट गया।

गाधीजी, पाकिस्तान का वह भाग जिसको अब बगलादेश कहा जाता है और जहा हजारो हिन्दू परिवारो का बलपूर्वक धर्म बदला जा रहा था, वहा जाकर ऐसे परिवारो को सात्वना पहुचाना चाहते थे और इस उद्देश्य से वे कलकत्ता पहुचे तो वहा भयकर साप्रदायिक झगडे प्रारभ हो चुके थे। हजारो मुसलमान कलकत्ता छोड कर पूर्वी बगाल, जो पाकिस्तान का हिस्सा था, वहा शरण लेने के लिए भाग रहे थे। कलकत्ता के मुस्लिम नेताओ ने गाधीजी से निवेदन किया कि वे नोवाखाली जाने से पूर्व कलकत्ता मे शान्ति स्थापना का प्रयास करे। गाधीजी ने इस आग्रह को कबूल किया और वे कलकत्ता मे रुक गये। अंतत: गाधीजी को कलकत्ता मे शांति स्थापित करने के लिए आमरण उपवास भी रखना पडा जो चार दिनो तक चला और इस उपवास के कारण कलकत्ता मे पुनः चमत्कारिक रूप से शाति स्थापित हुई और इस महानगर के हिन्दू मुस्लिम एक–दूसरे के गले लगे और आपसी भाईचारा पुन स्थापित हुआ।

गाधीजी नोवाखाली जाने का कार्यक्रम स्थगित कर कलकत्ता से चलकर दिल्ली आये। वे दिल्ली पहुचकर पाकिस्तान जाना चाहते थे क्योकि वहा जो

भयकर साप्रदायिक मारकाट चल रही थी वे वहा जाकर उसे शात करने का प्रयास करना चाहते थे। सितबर 47 के दूसरे सप्ताह मे गाधीजी दिल्ली पहुचे तो दिल्ली की स्थिति भी भयकर रूप से इतनी ही बिगडी हुई थी जितनी कि कलकत्ता की थी। हजारो मुस्लिम परिवार दिल्ली छोडकर भाग रहे थे। कलकत्ता की तरह ही दिल्ली के मुस्लिम नेताओ ने भी गाधीजी से प्रार्थना की कि पाकिस्तान जाने से पहले वे दिल्ली मे शाति स्थापित करने का प्रयास करे।

इन मुस्लिम नेताओ के आग्रह को स्वीकार करते हुए गाधीजी दिल्ली मे ही रुक गये और वे तत्कालीन बिरला हाउस मे ठहरे और वहा से उन्होने दिल्ली मे शाति स्थापित करने का अपना कार्यक्रम चलाया। इस प्रयास मे उन्हे कुछ सफलता भी मिली किन्तु जैसी भाईचारे पर आधारित शाति गाधीजी स्थापित देखना चाहते थे, वैसी शाति स्थापित नही हो पा रही थी। अतत दिल्ली मे भी गाधीजी को जनवरी के दूसरे सप्ताह मे उपवास रखना पडा। दिल्ली मे शाति स्थापित करना तो इस उपवास का मुख्य उद्देश्य था ही, किन्तु साथ मे कुछ अनेक ऐसे मुद्दे भी जुड गये, जिसका सबध भारत और पाकिस्तान की सरकारो से था। अतत. सात दिन के पश्चात गाधीजी को अपना उपवास समाप्त करने के लिए राजी किया गया। जब तक गाधीजी बिरला हाउस मे रहे वे नित्य ही सायकालीन प्रार्थना मे सम्मिलित होते थे, जिसमे दिल्ली नगर के सैकडो लोग भी शामिल होते थे।

30 जनवरी, 1948 का दिन स्वतत्र भारत के इतिहास मे कितना अभागा था। यह दिवस जिस दिन गाधीजी सायकाल की प्रार्थना मे शामिल होने के लिए जब प्रार्थना स्थल की ओर बढ रहे थे तब रास्ते मे ही एक धर्मान्ध हिन्दू युवक ने उन पर पिस्तौल से तीन गोलिया चलाकर उनकी हत्या कर दी। गाधीजी के मुख से केवल 'हे राम' निकला, जिसके पश्चात उनका निर्जीव शरीर प्रार्थना स्थल पर ही गिर गया। यह समय ठीक साय सवा पाच बजे का था। गाधीजी के निधन का समाचार सारे विश्व मे आग की तरह फैल गया और सारा विश्व ही शोकमग्न हो गया।

राजनेताओ ने निर्णय लिया कि गाधीजी का अतिम सस्कार 31 जनवरी को राजघाट पर किया जाये और जिस स्थल पर गाधीजी को चिता पर रखा जाना था, उसकी व्यवस्था की गई। 31 तारीख की प्रात ग्यारह बजे राष्ट्रपिता महात्मा गाधी की शव यात्रा बिरला हाउस से प्रारभ हुई। शव

यात्रा मे लाखो शोकाकुल लोगो ने भाग लिया।

राष्ट्रपिता गाधीजी के प्रति अपने श्रद्धासुमन अर्पित करने के लिए लाखो लोग यहा आते है। विदेशो से जितने भी अतिथि भारत आते है सबसे पहले वे राजघाट पहुचकर गाधीजी के प्रति अपनी श्रद्धाजलि अर्पित करते हे। 30 जनवरी के दिन, देश की आजादी के लिए जिन्होने अपना बलिदान किया, उनके प्रति आभार व सम्मान व्यक्त करने के लिए तमाम देश मे ठीक ग्यारह बजे एक मिनट का मौन रखकर उन्हे श्रद्धाजलि अर्पित की जाती है। देश की राजधानी दिल्ली मे यह कार्य राजघाट पर ही सपन्न होता है। देश की सेना के तीनो अगो के सशस्त्र जवान 11 बजे गाधीजी की समाधि के निकट जमा होकर शहीदो के प्रति सम्मान प्रकट करते है। इस कार्यक्रम मे राष्ट्रपति, प्रधानमत्री और अन्य नेतागण उपस्थित रहकर अपनी श्रद्धाजलि अर्पित करते है। □

10. श्री अकाल तख्त

अमृतसर

हर मंदिर साहिब के बिल्कुल सामने दर्शनी ड्योढी के आगे सगमरमर का चौकोर चौक है। इसी के सामने पाच मजिली श्री अकाल तख्त की इमारत है। इसे सिखो का प्रमुख तख्त माना जाता है। इसे छठे गुरु, गुरु हरगोविन्दजी ने सन् 1609 मे बनाया था। इसे अकाल बुगा भी कहा जाता है अर्थात अकाल पुरुष का घर। यहा पर सिख गुरुओ के पवित्र शस्त्र रखे हुए है, जिनके दर्शन सगतो को, रोजाना शाम को बडे आदर और सत्कार के साथ कराये जाते है।

श्री अकाल तख्त सिखो का सबसे पवित्र स्थान है। इसका उपयोग विशेष कार्यो के लिए किया जाता है ताकि सिख धर्म और जत्थेबदी को नई दिशा दी जाये। छठे गुरु स्वय इस तख्त पर विराजमान होकर, सच्चे इन्साफ की कचेहरी लगाया करते थे। बहुत सारे श्रद्धालु अपनी मागे लेकर यहा आते और गुरु साहिब को उपहार भेट करते थे।

जिस स्थान पर आज अकाल तख्त है, वहा कभी खुला मैदान होता था, जहा पर गुरु साहिब स्वय बाल्यावस्था मे खेला करते थे। इस तख्त पर ही गुरु अर्जुनदेवजी की शहादत के बाद सन् 1606 मे छठे गुरुजी को गद्दी पर बिठाने की रस्म अदा की गई थी। इसी तख्त पर बैठकर गुरु अर्जुनदेवजी सिखो के लडाई के करतब देखा करते थे। वे उन्हे आगामी सघर्षो के लिए तैयार करते थे।

अकाल तख्त एक मजबूत पाच मजिली इमारत है, जो सगमरमर के चबूतरे पर खडी है। इसकी पहली मजिल सन् 1774 मे तैयार हो गई थी और शेष चार मजिले महाराजा रणजीत सिह के शासनकाल मे बनाई गई। मशहूर सुनहरे गुम्बद जाने माने सिख जरनेल, सरदार हरिसिह नलुवा ने बनवाये थे।

श्री अकाल तख्त से जारी किये गये हुक्मनामे सभी सिखो को मान्य होते है, यहा तक कि महाराजा रणजीतसिह को भी अकाल तख्त के जत्थेदार फूलासिह के हुक्म के आगे सिर झुकाना पडा था। दसवे गुरु, गुरु गोविन्दसिह के परम धाम सिधारने के बाद और महाराजा रणजीत सिह के शासनकाल के बीच के समय मे श्री अकाल तख्त से ही सरबत खालसा की ओर से देश की रक्षा के लिए गुरुमता जारी किया जाता था।

अग्रेजो के शासनकाल मे सिखो की ओर से गुरुद्वारो के प्रबन्ध के लिए शुरू किए गये आदोलन के समय यहीं से अहिसा की शपथ लेकर, जत्थे मोर्चे मे शामिल हुआ करते थे।

श्री अकाल तख्त द्वारा प्रदान किया गया सरोपा बहुत सम्मानजनक समझा जाता है। यह केवल उस व्यक्ति को प्रदान किया जाता है, जिसने सिख पथ की प्रशसनीय सेवा की हो। ❑

यहां पर इन मन्दिरो के अलावा दो मन्दिर और भी है। एक मे भगवान सूर्य की प्रतिमा है और दूसरे मे जैन मुनि की मूर्ति है।

उपरोक्त सभी मन्दिरो की निर्माणकला अद्वितीय है। विश्व मे ऐसे मन्दिर कही नही है। इसे देखने देश विदेश के यात्री आते है।

मन्दिर के घेरे के भीतर एक बडी जैन धर्मशाला है। धर्मशाला मे ही भोजनालय है।

यहा का निकटस्थ रेलवे स्टेशन फालना है जो अहमदाबाद, अजमेर वादी कुई दिल्ली रेलमार्ग पर आबू स्टेशन रोड से 99 किलोमीटर की दूरी पर है। ☐

4. चर्च सेन्ट थॉमस माउन्ट

भारतवर्ष मे अति ही महत्वपूर्ण और ऐतिहासिक ईसाई तीर्थ स्थल, सेन्ट थामस माउन्ट मद्रास है। यही पर ईसाई धर्म के प्रथम धर्मप्रचारक सेन्ट थामस का देहान्त हुआ था। यद्यपि यह स्थान भारतीय ईसाईयो के लिए अत्यत पवित्र स्थान है बल्कि विदेशो मे भी इसकी महत्ता है।

प्राचीन काल मे, यह ईसाईयो का गढ था। यहा पर अनेको शानदार गिरिजाघर तथा मठ थे। लेकिन मध्यकाल की राजनैतिक उथल–पुथल के कारण ईसाई समुदाय और तीर्थस्थल उजड गये। जब सोलहवी शताब्दी मे पुर्तगालियो ने मद्रास पर अपना अधिकार जमाया तो उन्हे शानदार गिरिजाघरो और मठो की जगह ध्वसावशेष ही मिले। फिर भी उन्होने सेन्ट टामस की समाधि (कब्र) को खोज निकाला। उनके अवशेष आज भी सुरक्षित है और उनमे कुछ अवशेष सेन्ट थॉमस कैथेड्रल, माइलापुर मे रखे हुए है।

आजकल पुर्तगाली शासन के काल मे निर्मित दो गिरिजाघर है, एक तो छोटी पहाडी पर है जहा पर सेन्ट थॉमस एकान्त मे प्रार्थना और ध्यान किया करते थे, दूसरा उस जगह है जहा उनका देहान्त हुआ था।

सेन्ट थॉमस से सबधित एक अति ही महत्वपूर्ण तीर्थ स्थल मलयपुर की पहाडी है जो मध्य केरल मे पश्चिमी घाट मे स्थित है। यहा पर यह दन्तकथा

प्रसिद्ध है कि वे इस घने जगल मे कभी–कभी आकर एकान्त सेवन करते थे। उनकी मृत्यु के अनेक वर्षो के उपरान्त जव एक शिकारी दल जंगल मे गया, तो उसे वहा पर एक क्रास, ईसाई धर्म का चिन्ह तथा वारहो महीनो जल देने वाला एक जलस्रोत मिला। इस पहाडी पर एक पूजा स्थल का निर्माण कराया गया और दक्षिण भारत का यह एक तीर्थ स्थल वन गया।

यहा पर हर रविवार को नजदीक के गिरिजाघर के पादरी द्वारा प्रार्थना सभा आयोजित की जाती है। ईस्टर के वाद पहले रविवार को एक वृह्द उत्सव का आयोजन किया जाता है, जिसमे केरल और तमिलनाडु के लोग बडे उत्साह के साथ शामिल होते है। सीरीयन कैथोलिक मे यह प्रथा है कि विवाह के बाद नव दपत्ति पहले ईस्टर के बाद, धार्मिक उत्सव में, वैवाहिक सुख और शाति की याचना के लिए यहा की यात्रा करते है।

पहले यह स्थान जगली हाथियो के द्वारा तोड फोड दिया जाता था, परिणामत कई बार पूजा स्थल निर्मित किया गया, लेकिन अव जगली हाथियो से मुक्ति मिल गई है और अव यह तीर्थ स्थान सवके लिए सुगम्य और सुलभ है। □

5. वैशाली

बिहार

वैशाली एक प्राचीन स्थान है। जहा पर आज बसावट है, वही पर वैशाली नगर स्थित था। कपिलवस्तु छोडने के बाद भगवान बुद्ध वैशाली आये थे और महावन मे स्थित एक बहुत बडे विशाल भवन मे ठहरे थे।

बुद्ध धर्म के अनुयायियो के लिए वैशाली एक अति ही पवित्र तथा महत्वपूर्ण स्थान है। वैशाली की महत्ता के निम्नाकित कारण है।

प्रजापति गौतमी, जिन्होने भगवान बुद्ध को पाला पोसा था, ने पाच सौ शाक्य वशीय नारियो के साथ वैशाली मे बुद्धधर्म की दीक्षा ली थी। यशोधरा (भगवान बुद्ध की पत्नी), जनपदा, कल्याणी, नन्दा, खेमा उप्पलवन्ना, भद्रा, कपिलानी, पताचारा, धर्मादिन्ना, सोना, सकुला, कुडला, केशा, श्रृगारिका,

केशा गौतमी के साथ अन्य तमाम शाक्य वशीय नारिया बुद्ध धर्म मे दीक्षित हुई।

भगवान बुद्ध के परिनिर्वाण (मृत्यु) के बाद, लिच्छिवियो ने यहा पर अपने हिस्से के बुद्धावशेषो के साथ एक बहुत बडे स्तूप का निर्माण कराया था।

वैशाली मे ही भगवान बुद्ध को वैशाली की नगरवधू, जो बाद मे बुद्ध धर्म मे दीक्षित होकर बुद्ध भिक्षुणी हो गई थी, आम्रपाली ने आम्रकुज प्रदान किया था।

वैशाली मे ही बौद्धो की द्वितीय परिषद सपन्न हुई। वैशाली मे ही बौद्ध वैचारिक रूप मे दो हिस्सो मे विभाजित हो गये, जिन्हे बाद मे महायान और थेरवाद के नाम से सबोधित किया गया।

सम्राट अशोक के समय मे वैशाली मे स्तभ और स्तूप निर्मित किये गये। वैशाली के पास ही एक स्तभ है, जिस पर कमल और सिह है, जिसका निर्माण अशोक स्तभ की तरह ही किया गया है।

चीनी यात्री फाह्यान और ह्वेनसाग ने वैशाली की यात्रा की थी। उनके कथनानुसार यहा पर अनेको देवस्थान और मन्दिर थे। तेरहवी सदी मे तिब्बती साधु धर्मस्वामी वैशाली आये थे। उनके अनुसार भगवती तारा की यहा बहुत ही सुदर प्रस्तर प्रतिमा थी।

वैशाली मे अनेको श्रेष्ठियो के नामो से अकित अनेको मिट्टी की मोहरे पाई गई थी। इससे स्पष्ट है कि प्राचीन काल मे वैशाली व्यापार का एक प्रमुख केन्द्र था।

वैशाली मे एक छोटा सा तालाब है, कहा जाता है कि वानरो ने भगवान बुद्ध के प्रयोग के लिए इसे खोदा था। यह भी बौद्धो के लिए एक तीर्थ स्थल है।

वैशाली निगठ पुत्र 24वे तीर्थकर भगवान महावीर की जन्म स्थली भी है। वैशाली मे ही भगवान बुद्ध ने इस बात की घोषणा की थी कि उनका परिनिर्वाण होने वाला है।

भगवान बुद्ध के समय ही यहा महामारी का प्रकोप हुआ था, तब भगवान बुद्ध ने उस समय रतन सुत्त का उपदेश दिया था।

वैशाली बौद्धो और जैनियो दोनो धर्मो के मानने वालो के लिए बहुत ही महत्वपूर्ण और पवित्र स्थान है। □

6. गयाजी

बिहार

ठं.

बिहार प्रदेश के दक्षिणी भाग मे फल्गु नदी के तट पर स्थित भारत वर्ष का प्रमुख पितृ तीर्थ गया है। पितर कामना करते है कि उनके वश मे ऐसा पुत्र हो जो गया जाकर उनका श्राद्ध करे। यहा पिण्ड दान करने से पितरो की अक्षय तृप्ति होती है।

गया का मुख्य मन्दिर विष्णुपद है। मन्दिर मे अष्ट कोण वेदी पर भगवान विष्णु का चरण चिन्ह बना हुआ है। मन्दिर के बाहर सभा मण्डप है तथा लोगो के श्राद्ध करने के लिए दो बडे मण्डप है। इन्दौर की महारानी अहिल्या बाई ने सन् 1787 मे इस मन्दिर का निर्माण कराया था। इसके निकट एक दूसरे मन्दिर मे गरुड प्रतिमा है। इस मन्दिर के घेरे मे जगन्नाथ जी और लक्ष्मी नारायण के भी मन्दिर है। थोडी दूर पर भगवान गदाधर का मन्दिर है जिसमे भगवान विष्णु का चतुर्भुज श्री विग्रह प्रतिष्ठित है। इसके प्रागण मे श्रीराम, लक्ष्मण, सीता जी तथा ब्रह्मा की मूर्तिया है। यहा एक प्राचीन बट वृक्ष है जिसे अक्षय बट कहते है। इस वृक्ष के नीचे अंतिम पिण्डदान किया जाता है।

यात्री के श्राद्ध कर्म सात दिन के है। इनमे से प्रथम दिन फल्गु नदी मे और फल्गु के तट पर ही स्नान किया जाता है। फल्गु नदी गया के पूर्व बहती है। अन्य ऋतुओ मे यह नदी सूखी रहती है किन्तु किसी भी स्थान पर एक हाथ गहरा गड्ढा खोदने पर स्वच्छ जल निकल आता है, इसीलिए इसको अन्तः सलिला कहा जाता है। इस नदी मे स्नान का महात्म्य है।

विष्णुपद मन्दिर से थोडा आगे मुड पृष्ठ देवी मन्दिर है। मन्दिर मे बारह भुजावाली मुडपृष्ठा देवी की प्रतिमा है। इसे गया देवी भी कहते है। इसके आस पास कई छोटे और भी मन्दिर है।

विष्णुपद मन्दिर से थोडी ही दूर पर सूर्यकुड है। इस सूर्यकुड के पश्चिम मे एक मन्दिर मे सूर्य नारायण की चतुर्भुज मूर्ति है जिसे दक्षिणाक्र कहते है।

विष्णुपद से थोडा आगे पश्चिम की ओर ब्रह्म सरोवर है। ब्रह्म सरोवर के पास 125 सीढी ऊपर एक पहाडी पर मगल गौरी का मन्दिर है। यहा देवी की बडी भव्य मूर्ति प्रतिष्ठित है। भारत के द्वादश प्रधान देवी विग्रहो मे यह एक है। यहा से पचास सीढियो के ऊपर अविमुक्तेश्वरनाथ का प्राचीन मन्दिर

आस्था स्थल चित्रों में

नोटः इस सूची में दर्शायी गई पृष्ठ संख्या चित्र-पृष्ठों पर अंकित संख्या है।

बापू कुटी, सेवाग्राम, वर्धा

गंगोत्री मन्दिर

श्री वेंकटेश्वर (वालाजी), तिरूपति मन्दिर
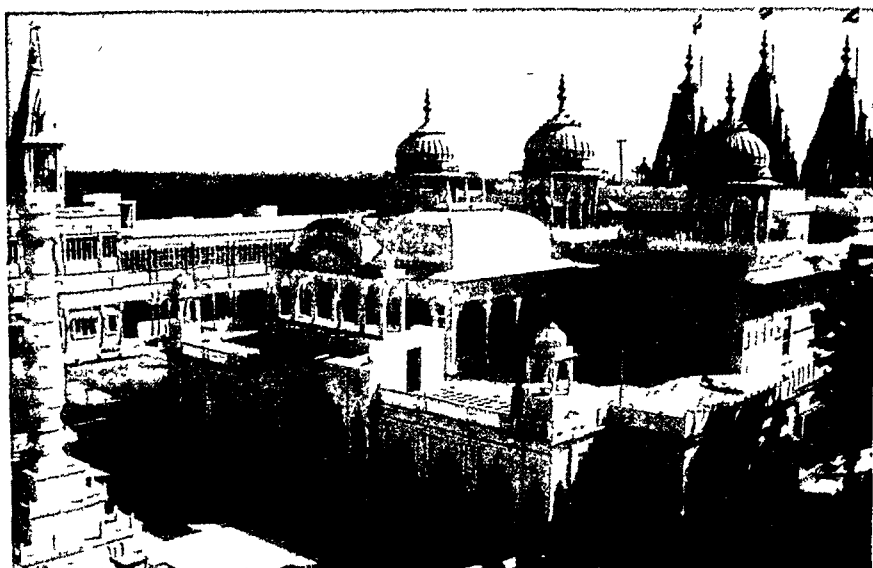
मन्दिर भगवान महावीर जी
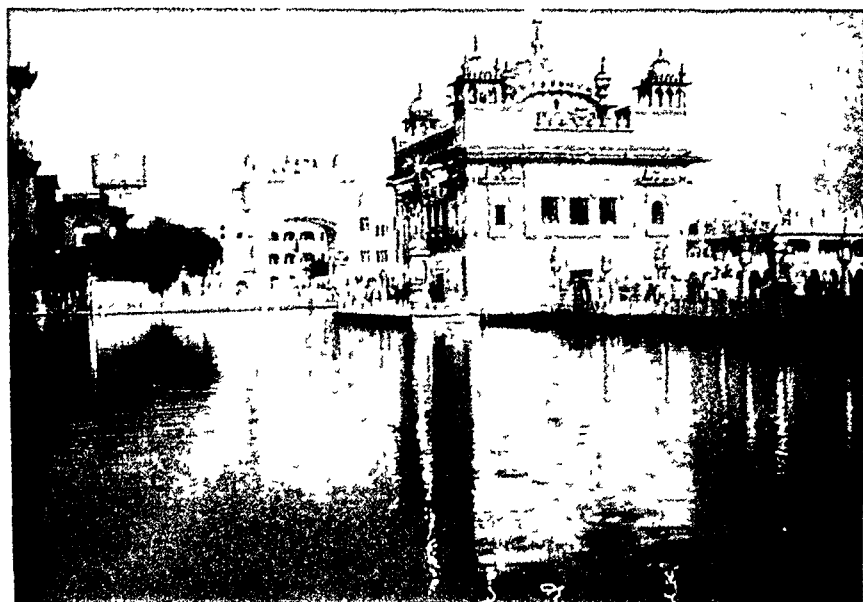
श्री हरमन्दिर साहिब, अमृतसर

महाबोधी मन्दिर,
बोध गया

मुख्य मजार,
दरगाह
गरीबनवाज़,
अजमेर शरीफ
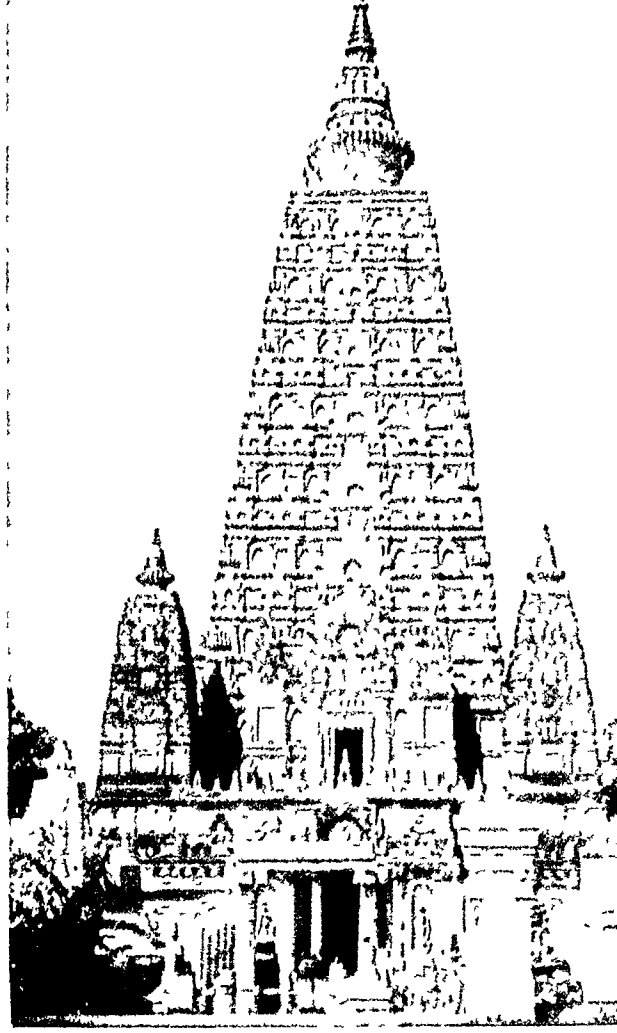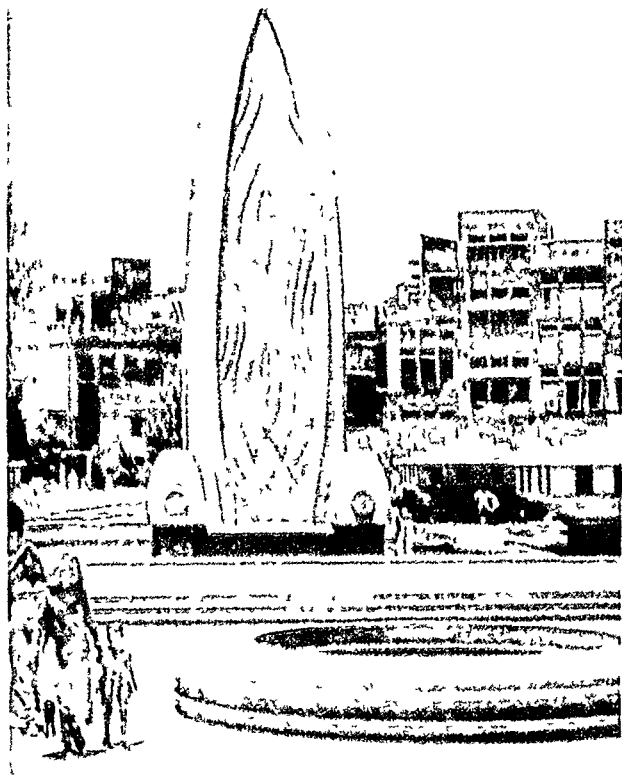
शहीद स्थल,
जलियॉवाला बाग,
अमृतसर

सेन्ट माइकेल चर्च,
शिमला
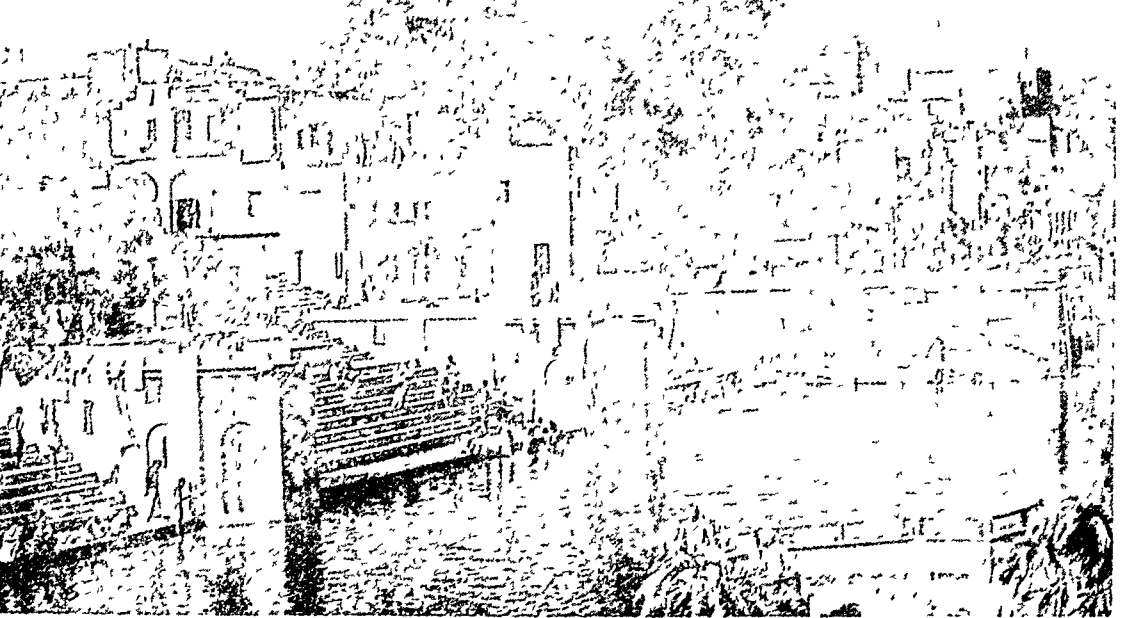
सरयू नदी पर घाट, अयोध्या

मन्दिर
श्री ब्रदीनाथ
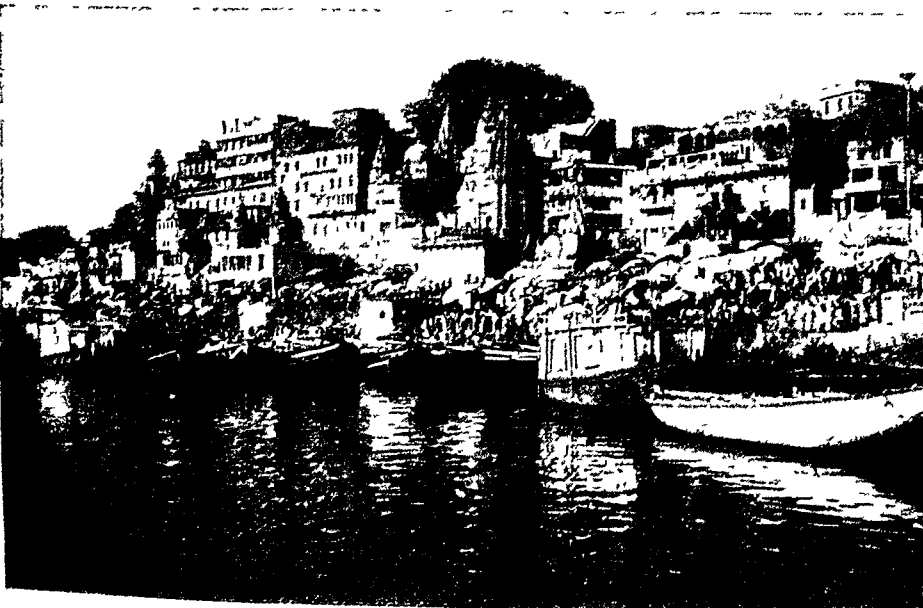
घाटों का
विहगम दृश्य,
वाराणसी
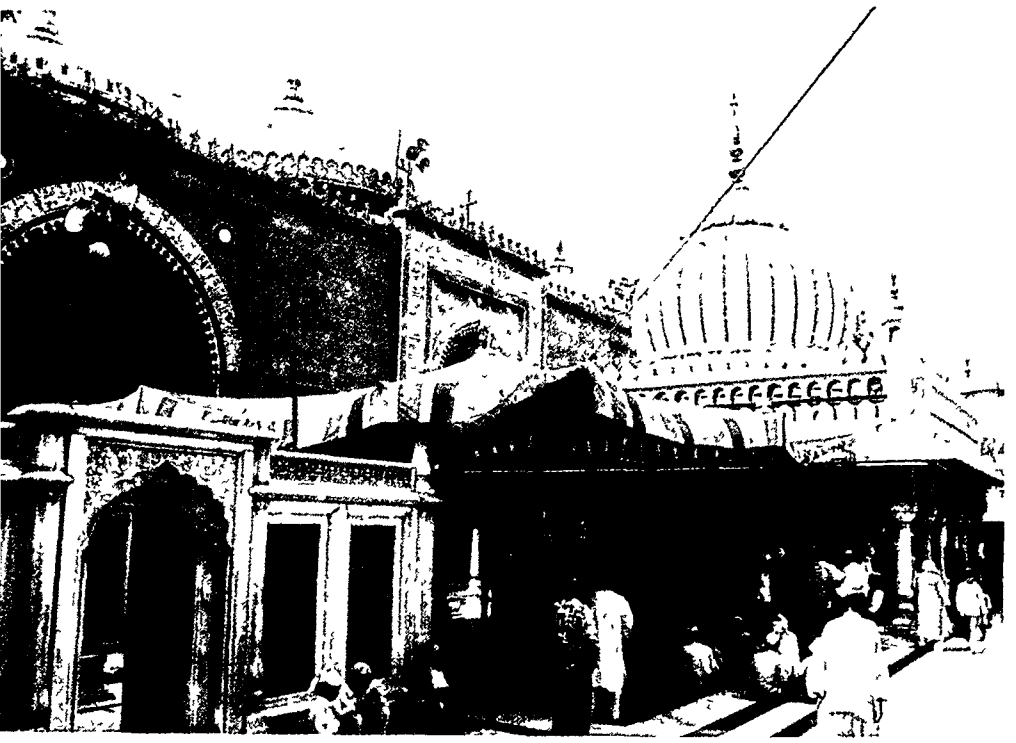
दरगाह हजरत निजामुद्दीन, दिल्ली
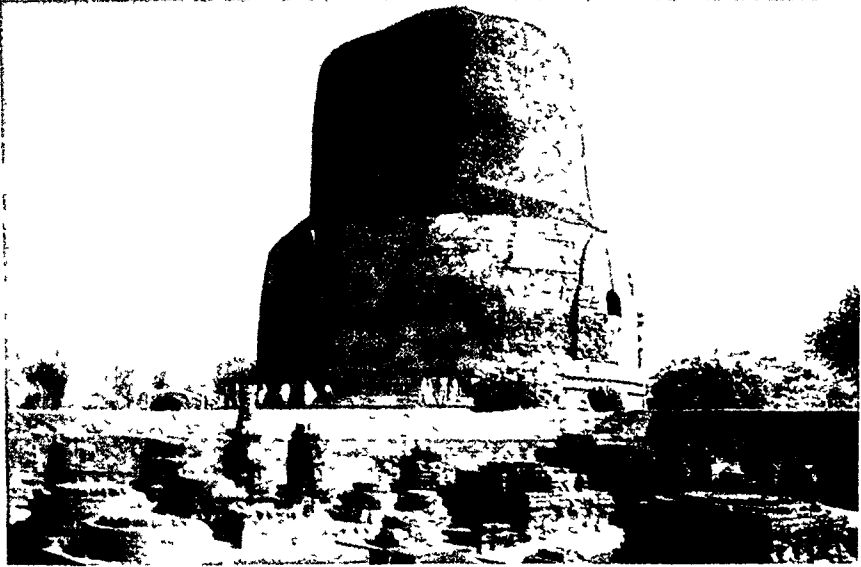
दमेख स्तूप, सारनाथ
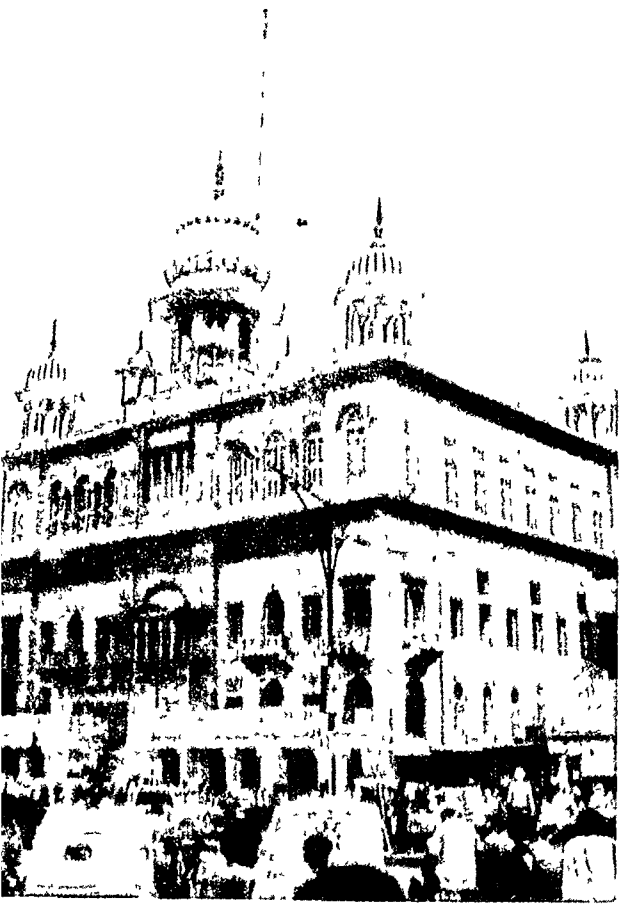
गुरुद्वारा सीसगज,
दिल्ली

अवर लेडी ऑफ माउन्ट चर्च,
बान्द्रा, मुम्बई
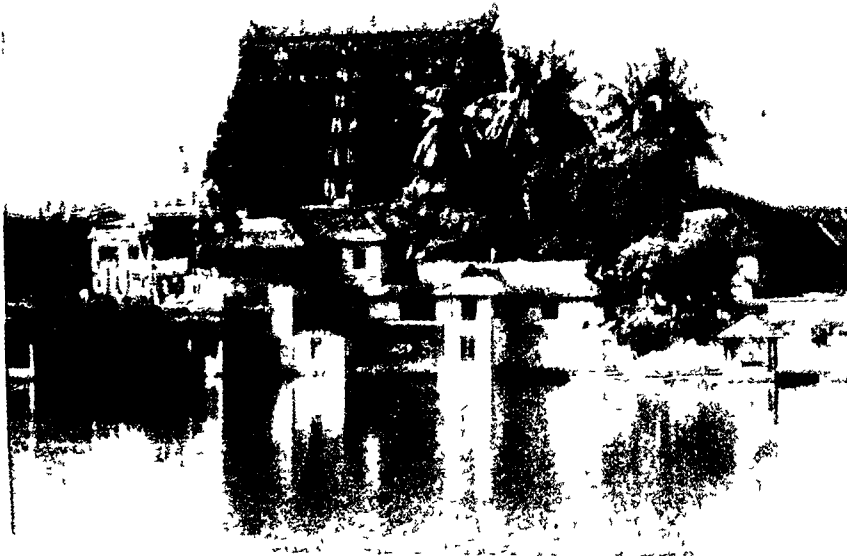
मन्दिर श्री
पद्मनाभस्वामी,
तिरुवनंतपुरम,
केरल

ज्वालामुखी मन्दिर, हिमाचल
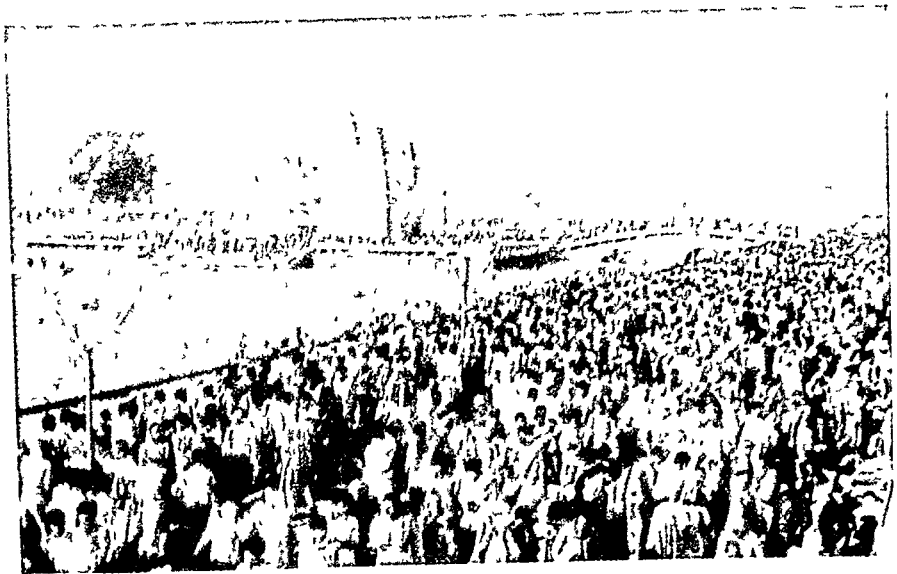
ब्रह्म सरोवर, कुरुक्षेत्र

श्री रामकृष्ण
परमहंस

श्री केदारनाथ,
उत्तराखण्ड

माता वैष्णो देवी
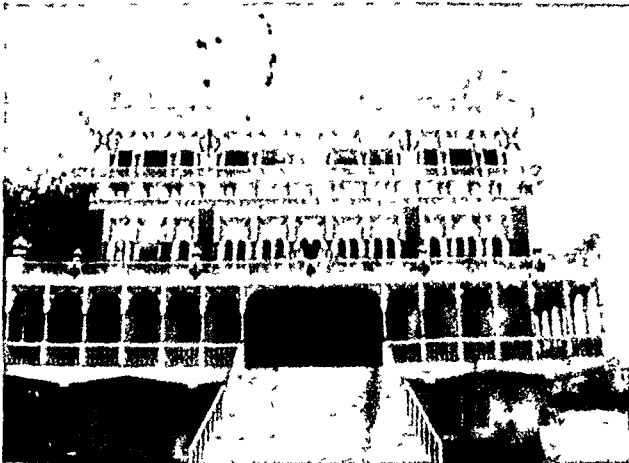
गुरुद्वारा
पटना साहिब

हर की पौडी, हरिद्वार

दरगाह हजरत बख्तियार काकी,
नई दिल्ली

सैक्रेड हार्ट कैथेड्रल चर्च, नई दिल्ली
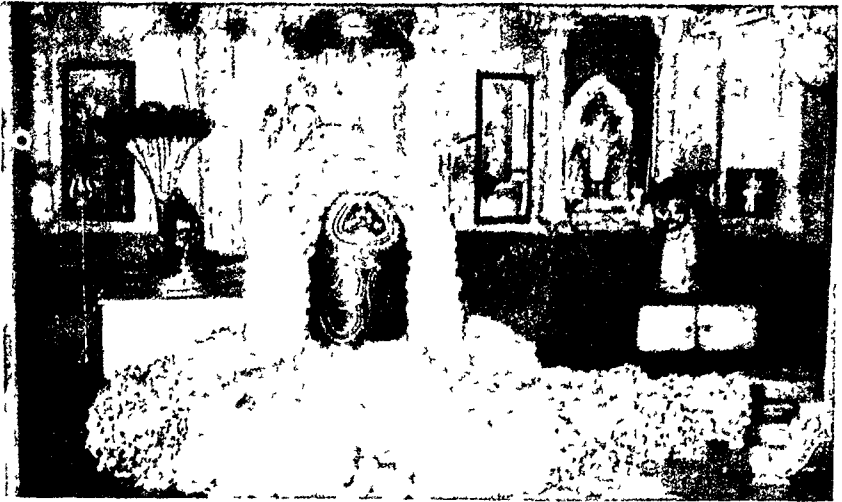
मन्दिर सोमनाथ, गुजरात
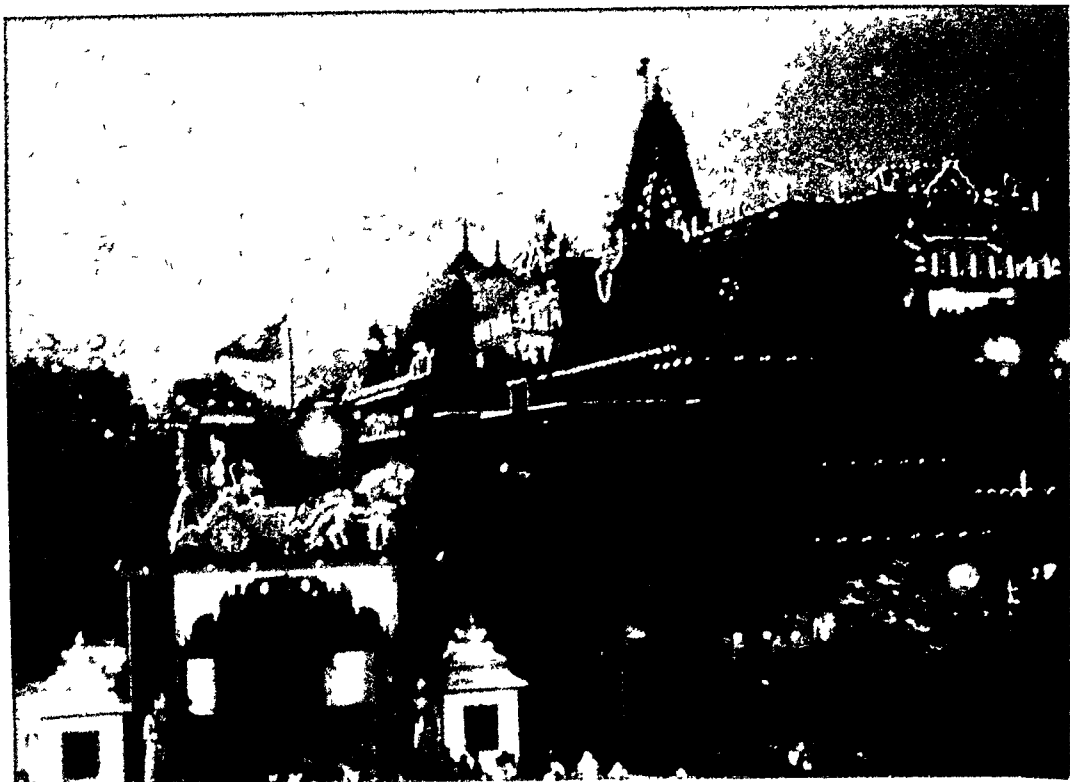
श्री कृष्ण जन्मभूमि, मथुरा
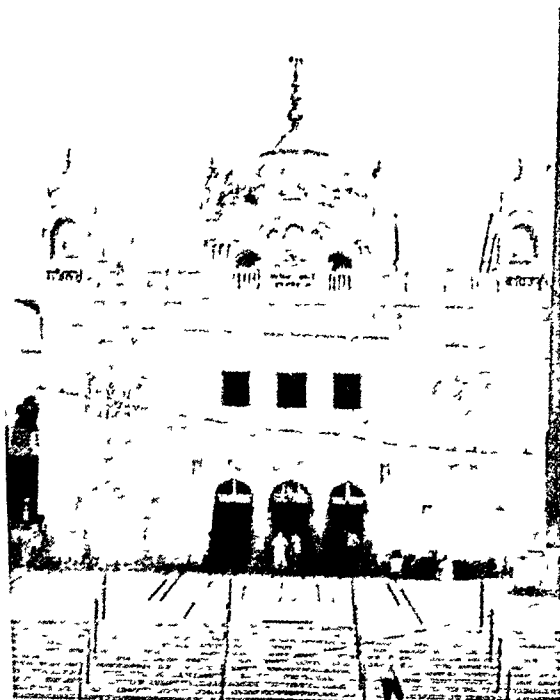
गुरुद्वारा सचखंड, महाराष्ट्र

पशुपतिनाथ मन्दिर, नेपाल
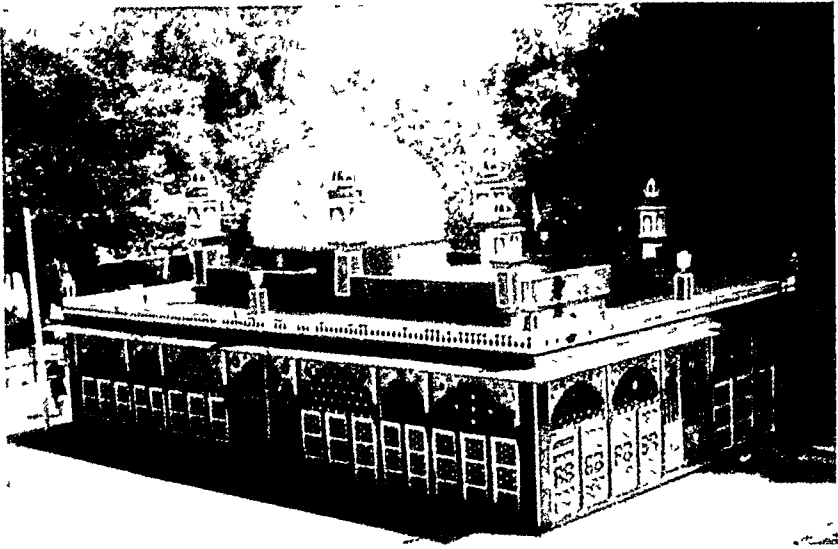
दरगाह हजरत साबिर कलियारी, उत्तर प्रदेश

सेन्ट जेम्स चर्च, दिल्ली
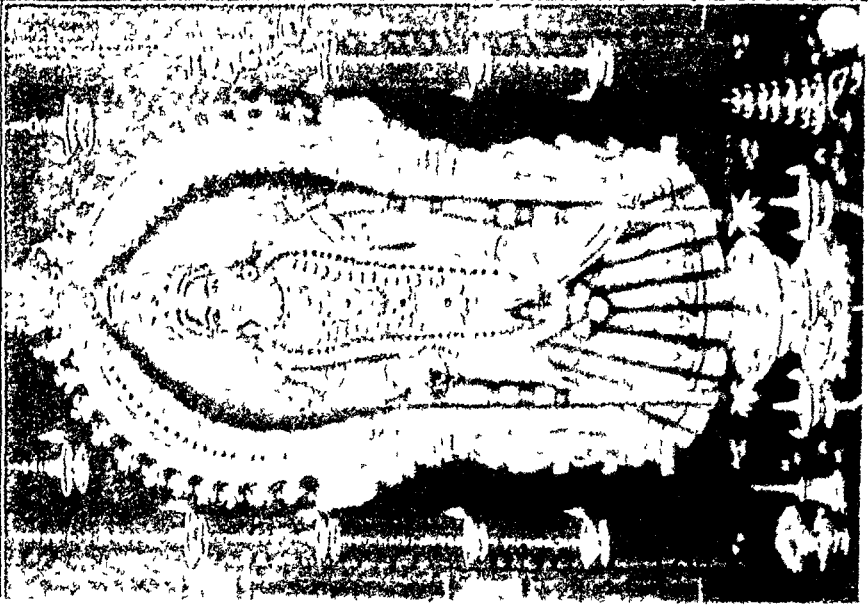
चित्रकूट धाम, मध्य प्रदेश

कन्याकुमारी, तमिलनाडु
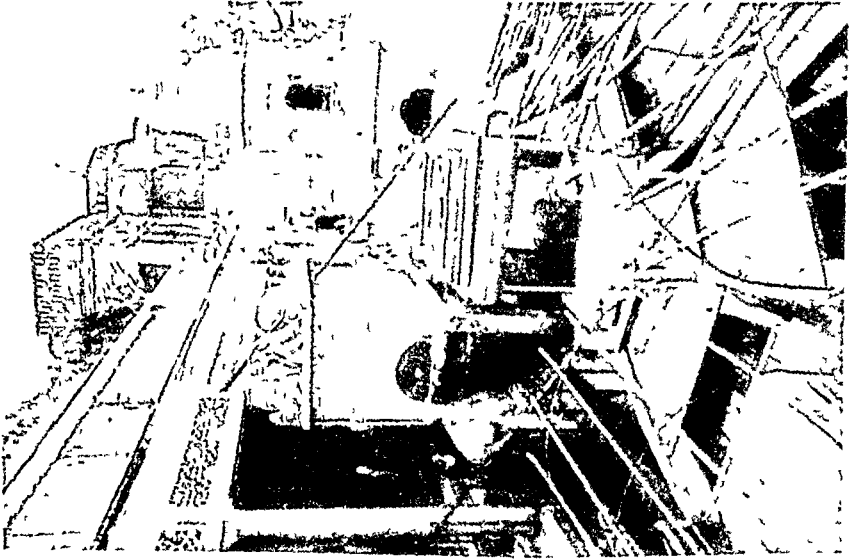
है जिसमे भगवान जनार्दन की चतुर्भुज मूर्ति स्थापित है। कहा जाता है कि जिस कुल मे कोई न हो, वह अपने लिए दही तिल मिला कर तीन पिण्ड भगवान के दाहिने हाथ मे दे जाये तो उस मनुष्य के लिए श्राद्ध करने की कोई आवश्यकता नही रहती। इससे थोडी दूर पर ब्रह्मयोनि नाम की पहाडी है। धरातल से 440 सीढियो के ऊपर सावित्री देवी और शिव के मन्दिर है। यहा एक प्राचीन बट वृक्ष है जिसके नीचे पिण्डदान किया जाता है।

ब्रह्मयोनि पहाडी के पास ही एक शिला है जिसके नीचे से लेटकर लोग निकलते है। जनश्रुति है कि इस शिला से निकलने वाला व्यक्ति मरने के बाद ब्रह्मयोनि को प्राप्त होता है।

गया स्टेशन से ही दो किलोमीटर की दूरी पर रामशिला नाम की एक पहाडी है। इसके शिखर पर राम और शिव के मन्दिर है। पर्वत के नीचे वागेश्वरी देवी और बगला देवी के मन्दिर है। इस पहाडी के आगे नदी तट पर प्रेत शिला पहाडी है। यहा पहाडी के शिखर पर पिण्डदान किया जाता है।

गया गय नामक असुर की तपस्थली है। वह दीर्घ काल तक निष्काम भाव से तपस्या करता रहा। गय नामक असुर की पूरी देह 10 मील विस्तृत है, परम पवित्र है। उस पर कही भी पिण्डदान करने से पितर प्रेतयोनि, नरक से छूट कर अक्षय तृप्ति प्राप्त करते है।

लाखो लोग प्रतिवर्ष गया जी की यात्रा कर और अपने पूर्वजो के प्रति श्रद्धापूर्वक पिण्डदान कर अपने को धन्य मानते है। ❑

7. गुरुद्वारा कीरतपुर साहिब

गुरुद्वारा कीरतपुर साहिब, पजाब प्रदेश के जिला रोपड मे स्थित है। कीरतपुर नगर को छठे गुरु हरगोविन्द ने बसाया था। गुरुद्वारो के अलावा गुरु हरगोविन्द ने कीरतपुर मे मन्दिरो और मस्जिदो का भी निर्माण कराया। कीरतपुर नगर सिखो के इतिहास का एक अति ही महत्वपूर्ण अग है।

कीरतपुर मे ही सातवे गुरु हरराय और आठवे गुरु हरकिशन जी का जन्म हुआ था।

जब गुरु तेग वहादुर का दिल्ली मे बलिदान हुआ तो उनके धड रहित सिर को लेकर जैता, पहले कीरतपुर पहुचा था। उस समय कीरतपुर मे गुरु गोविदसिह, मा नानकी और माता गूजरी आनन्दपुर से आये थे और वडे आदर के साथ पालकी मे गुरु तेग वहादुर के सिर को अपने अनुयायियो के साथ आनन्दपुर साहब ले गये थे।

यही अपने पुत्र के सिर को देखकर, गुरु तेग वहादुर की मा ने शोकाकुल होकर कहा था "मेरे प्यारे पुत्र, कितना अच्छा होता कि मै यह दिन देखने के लिए जीवित न रहती। हे भगवान! तेरी लीला अद्भुत है, मै कैसे तुम्हारे बिना रह पाऊँगी।" माता गूजरी, गुरु तेग वहादुर की पत्नी भी अपने पति के सिर को देखकर शोकाकुल हो गई, अपने पति के धड रहित सिर को शाति से प्रणाम किया और शात रही। यह बहुत दारुण और व्यथित करने वाला दृश्य था। गुरु गोविदसिह ने अपनी दादी, अपनी मा ओर अपने अनुयायियो को ढाढस बधाया और घोषणा की "अब हम आनन्दपुर मे रहेगे और शत्रु का नाश करेगे।" इस पर गुरु गोविदसिह की मा ने उन्हे चुप रहने को कहा ताकि सम्राट का कोई गुप्तचर यह बात न सुने। इस पर गुरु गोविदसिह ने यह उत्तर दिया कि अब चुप रहने और छिपाने का समय नही है।

कीरतपुर से जुलूस के रूप मे नौवे गुरु का शीश, सस्कार के लिए आनन्दपुर लाया गया, जहा बडे सम्मान के साथ शीश का अतिम सस्कार किया गया।

ज़हा पर जैता ने कीरतपुर मे शीश रखा था, वहा पर गुरुद्वारा ववानगढ बना हुआ है।

कीरतपुर मे पजाब सरकार की ओर से एक स्तम्भ स्थापित किया गया है। इस स्तम्भ पर गुरु तेगबहादुर की महान शहादत के बारे मे दशम गुरु, गुरु गोविदसिह का यह श्लोक अकित है।

तिलक जझू राखा, प्रभु ताका।
कीनो बडो, कलू महिमा का।।

❑

8. दरगाह देवा शरीफ

हजरत वारिसअली शाह ऐसे समय मे हिन्दू मुसलमानो को एक डोर मे बाधने लग गये जिस समय अग्रेज धर्म और जाति के नाम से हिन्दू और मुसलमानो के बीच नफरत की आग भडका रहे थे। और ऐसे दिनो मे हिन्दुस्तान के इस चमन को जब अग्रेज इसानियत के नाम पर अब तक की बनी हुई भाईचारा और आपसी मेल मिलाप की नीव को हर तरह से तोडने और कुचलने मे लग गये थे।

हजरत वारिसअली शाह के भक्तो मे हर धर्म के लोग शामिल थे। मुख्य तौर से हिन्दू और इस्लाम के मानने वाले थे। आप अपने अनुयाईयो को एक ही बात की शिक्षा देते रहे कि सभी धर्म के मानने वालो का एक ही ईश्वर है, इसलिए आपस मे प्रेम करो। इसान और इसान के बीच आपके प्रेम के सदेश को आपके अनुयाईयो ने दूर–दूर तक फैलाया। आपने अपने अनुयाईयो को ये शिक्षा दी कि विनम्र बनो, ऐसी बाते करो कि दूसरो को बुरा न लगे, दूसरे की सेवा करने का जज्बा पैदा करो, दूसरो के दु.ख का एहसास करो।

आपने अपने सदेश भारत मे उस समय बिखेरे, जिस समय अग्रेजो की साजिश से हिन्दू और मुसलमानो के बीच झगडे फसाद जोर पकड रहे थे। आप दोनो को दीन धरम समझाते, मनुष्य और मानवता की व्याख्या करते रहे और उसका नतीजा यह निकलता रहा कि हिन्दू और मुसलमान जब आपके सपर्क मे आते तो आपके मुरीद बन जाते। आप उनको यह शिक्षा देते कि एक ब्रह्म और खुदा के सब बन्दे है, इसलिए प्रेम की भावना को अख्तियार करे।

आपसे मुरीद होने वालो की सख्या बहुत बडी है। आपके मुरीदो मे बहुत ज्यादा पढे लिखे, कम पढे लिखे, न पढे लिखे, हर तरह के लोग है जो हाजी बाबा का दम भरते है, अपने को वारिसी कहते है।

वारिसी सिलसिले मे तीन तरह के लोग है। पहले वे जो अहराम पोश, जो पूरी तरह से फकीरी लेकर दुनिया को तर्क कर चुके है। दूसरे, अध्यापोश जो दुनिया को तर्क करने की कोशिश मे लगे है और तीसरे वो जो सिर्फ मुरीद है परतु नेक बनने की कोशिश करते है। वारिसी सिलसिले मे पीरी मुरीदी का सिलसिला यह है कि हाजी बाबा की मजार पर जाकर अपने मुरीद होने का ऐलान करते थे।

ज्ञातव्य है कि आपने अपना सज्जादा किसी को नही बनाया था और मुरीद होने का हक भी किसी को नही दिया था। हाजी साहब के जीवन वृतान्त के बारे मे काफी पुस्तके लिखी जा चुकी है जिनमे आपके कई बार हज करने का जिक्र और दुनिया के अन्य भागो से आपके मुरीद होने का जिक्र मिलता है। आपकी दरगाह बारबकी जिले से थोडी दूर पर है जो कि पूरे विश्व मे देवा शरीफ के नाम से जानी जाती है। साल मे तीन बार काफी धूमधाम से लोग आपकी मजार पर दर्शन करने और नजराने चढाने के लिए आते है। पहली नजर आपके स्वर्गवास की सफर के महीने मे चाद रात को होती है, दूसरी नयाज चैत के महीने मे और तीसरी नयाज कार्तिक मास मे होती है। इन मौको पर देश के कोने–कोने से हिन्दू मुसलमान तो इकट्ठे होते ही है, विदेशो से भी श्रद्धालु आपकी मजार पर दर्शन के लिए आते है। आपकी मुख्य शिक्षा मे एक शिक्षा ऐसी थी कि सूफियो को, संतो को, शक्ति होते हुए भी उसको इस्तेमाल नही करना चाहिए, तभी उनकी असलियत का पता चलता है और अदाजा होता है, इसान दुनियादारी से दूर है और उसी के साथ सूफी और सत होने का सही हक अदा कर रहा है। साथ ही साथ दुनिया के इसानो का ख्याल भी रहता है। उनके सुख दु ख मे काम आता है और उन्हे किसी तरह का दु.ख नही पहुचाता है।

हालाकि आपके भक्तो और चाहने वालो मे हिन्दू और मुसलमान थे, परतु आपने कभी भी गैर मुसलमानो को मुस्लिम धर्म मे दीक्षित करने की बात सोची ही नही और हमेशा मनुष्य से मनुष्य के प्रेम की भावना जगाते रहे। वह ऐसे मुसलमानो को भी आडे हाथो लेते जो इस्लाम धर्म पर पूरे ईमान से अमल नही करते। हाजी साहब के खास मुरीद ठाकुर पचम सिह ने बहुत प्रसन्नतापूर्वक मिन्नत की कि हुजूर मुझे मुसलमान बना लीजिये। ठाकुर साहब की यह बात सुनकर आपके माथे पर सिकन आ गयी और गुस्से के साथ कहा "ठाकुर दुबारा यह बात मत कहना यानि कि तुमने अब तक ये समझा ही नही कि तुमको क्या बनना चाहिए।"

आपके आदरणीय पिता सैय्यद कुरान अली शाह देवा, जिला बाराबकी के धनवान बुजुर्ग एव रईस थे। आप अपने माता के गर्भ मे ही थे कि आपके पिता का स्वर्गवास हो गया। पिता के निधन के बाद आपका जन्म सन् 1817 ई. मे हुआ। आपने होश ही सभाला था कि आपकी माता मोहतरमा की छत्र छाया भी सिर से उठ गयी। हजरत की शिक्षा दीक्षा पाच वर्ष की आयु से

शुरू हुई। प्रकृति ने आपके मन मे जो ईमान की ज्योति प्रकाशमान कर रखी थी, उसी के आधार पर आपने कुछ सालो मे ही आश्चर्यजनक रूप से शिक्षा ग्रहण कर ली। इल्म के साथ–साथ आपके आध्यात्मिक गुण भी उभरने लगे और आपकी यह हालत हो गई कि रातो के सन्नाटे मे जगल की ओर निकल जाते और ईश्वर की याद मे जुट जाते।

हजरत सैय्यद वारिस अली शाह को लगता है कि अपनी मृत्यु के समय की भी जानकारी थी। इन्तकाल से एक दिन पहले आपने एक मुरीद से फरमाया कि "हम कल सुबह चार बजे चलेगे।"

आपके यह कहने के बाद आपके विश्वास पात्रो ने यह समझ लिया था कि यह अतिम यात्रा की खबर है और यह फरमाने के दूसरे दिन ही तीस मोर्हरमुल हराम 1323 हिजरी (सन् 1904 ई) को चार बजकर पन्द्रह मिनट पर आपने इस दुनिया को हमेशा के लिए अलविदा कहा। □

9. साबरमती आश्रम

गुजरात

सत्याग्रह के सफल प्रयोग के पश्चात दक्षिण अफ्रीका से वापस लौटने पर गाधीजी ने 1915 मे भारत मे अपना पहला आश्रम कोचरब अहमदाबाद मे स्थापित किया। 1917 मे इस आश्रम को साबरमती नदी के किनारे खुले स्थान पर ले जाया गया। इसे पहले 'सत्याग्रह आश्रम' तथा बाद मे 'हरिजन आश्रम' के नाम से पुकारा जाता था, मगर ज्यादातर लोग इसे साबरमती आश्रम के नाम से जानते है। "दे दी हमे आजादी बिना खड्ग बिना ढाल, साबरमती के सत तूने कर दिया कमाल।"

12 मार्च, 1930 के दिन नमक की चुटकी से अग्रेज साम्राज्यवाद की जडे खोखली करने वाला 'नमक सत्याग्रह' अर्थात् ऐतिहासिक 'दाडी मार्च' साबरमती आश्रम से ही गाधीजी ने अपने साथियो के साथ प्रारम्भ किया था। 1930 तक गाधीजी का यही निवास स्थान रहा। यहा से चलते समय बापू ने घोषणा की "जब तक आजादी नही मिलेगी, इस आश्रम मे वापस नही

आऊगा।" नमक जैसी एक साधारण चीज़ से असाधारण, अद्वितीय एव क्रातिकारी आदोलन का प्रारम्भ स्थान यही आश्रम था।

अग्रेज वायसराय और सरकारी अधिकारी ही नही अनेक भारतीय नेता भी प्रारम्भ मे नमक सत्याग्रह की हसी उडा रहे थे। वे कह रहे थे "इससे क्या होगा"। नमक और आजादी की लडाई का सबध नही ढूंढ पा रहे थे, मगर जब 'दाडी मार्च' प्रारम्भ हुआ, तब इस देश के लोगो का नमक सामने आया। इस धरती के नमक की सुगन्ध लोगो तक पहुंची तो "मै तो अकेला ही चला जानीबे मजिल मगर, लोग साथ आते गए और कारवा बनता गया" की सत्यता सामने उमड पडी। वायसराय, अधिकारी और नेता सभी दग रह गये। उनकी दृष्टि मे एक 'नाचीज' तूफान बन चुकी थी। जनता का सैलाब 'नमक' के लिए टूट पडा। सरकार अचम्भे मे थी। जनता पर अत्याचार शुरू हुए, मगर लोग हर चौराहे पर नमक बना रहे थे। अपने नमक की कीमत चुकाने के लिए लोग आते जा रहे थे। जेले भरी जाने लगी। इस देशव्यापी आदोलन मे जन–जन की भागीदारी से सरकार चकित थी।

12 मार्च, 1930 को प्रात साढे छह बजे आश्रम की बहनो ने तिलक लगाकर यात्रियो को विदाई दी। काका कालेलकर ने 'अनासक्तियोग' पुस्तक जो तभी छपकर आई थी, उसकी एक–एक प्रति सभी यात्रियो को भेट दी। गाव–गाव मे नमक सत्याग्रह का महत्व समझाते हुए गाधीजी अपने साथियो के साथ आगे बढते रहे। जन समुदाय उत्साहपूर्वक कार्यक्रमो मे भाग ले रहा था। लोग यात्रियो के स्वागत एवं विदाई के लिए बडी सख्या मे एकत्र हो रहे थे। हर पडाव पर देश के चुने हुए नेता भी गाधीजी से मिलने आ रहे थे। गाधीजी के कदम दाडी की तरफ बढ रहे थे और अग्रेज सरकार की चूले हिल रही थी। देश का वातावरण गरमा रहा था। लोग सडको पर निकल पडे थे। बापू ने स्पष्ट रूप से कहा "गोरे लोगो ने हमारे करोडो कधो पर बोझ लाद रखा है, हमे उससे मुक्त होना है। यदि कोई यह कहे कि नमक कर उठ जाने पर सरकार नहीं चलेगी तो मै उन लोगो से कहूगा कि वे नमकहराम है। कर छूट जाने पर नमक की खपत बढ जायेगी। इस कर के कारण गरीबो पर अधिकतम भार पडता है।"

दाडी के बारे मे बापू ने कहा– "इस कार्य के लिए दाडी का चुनाव मनुष्य का नही, ईश्वर का किया हुआ है। जहा अनाज न मिलता हो, जहा पानी के अभाव का डर हो, वहा हजारो लोग असुविधा सहकर ही पहुच सकते हो, जहा पहुचने के लिए स्टेशन से दस मील चलना पडता हो, ऐसी दूरवर्ती जगह

को सत्याग्रह के लिए चुना गया, इसका भला इसके सिवा क्या कारण हो सकता है? सच तो यह है कि हमारी यह लडाई कष्ट सहने की ही लडाई है।" अमेरिका को भेजे एक सदेश मे गाधीजी ने कहा "हमे विश्व की सहानुभूति चाहिए। हमारी लडाई शक्ति के विरुद्ध न्याय की लडाई है।"

6 अप्रैल को गाधीजी ने दाडी पहुचकर समुद्र तट पर एक मुट्ठी नमक उठाकर 'नमक कानून' भग किया। इसके बाद बापू लोगो को जागृत करते हुए कार्यक्रम चलाते रहे। 5 मई की रात को बापू की गिरफ्तारी की गई। यह आदोलन एक वर्ष चला और बाद मे एक सधि द्वारा आदोलन समाप्त हुआ। इसमे लगभग 60 हजार लोग जेलो मे गए। विजय जनता की हुई।

अहमदाबाद मे ही बापू ने कपडा मिल मजदूरो की हडताल का नेतृत्व कर इसे सफल बनाया। सत्य, अहिसा के दम पर अपनी लडाई कैसे लडी जाती है, इसका सफल प्रयोग इसी धरती पर हुआ। बापू का आश्रम 'प्रयोग स्थली', 'प्रयोगशाला' रही, जहा विभिन्न प्रकार के प्रयोग समाज, राष्ट्र एव मानव निर्माण के चलते थे।

साबरमती आश्रम मे बापू के निवास कुटीर को 'हृदय कुज' के नाम से जाना जाता है। यही से आश्रम की शुरूआत हुई। साबरमती के किनारे, अहमदाबाद शहर से बाहर इस आश्रम की स्थापना की गई थी। आजकल आश्रम मे सग्रहालय एव पुस्तकालय भी है। ध्वनि प्रकाश का कार्यक्रम भी दिखाया जाता है। अब यह स्थान शहर का एक हिस्सा बन गया है। इसके चारो ओर बस्ती फैल गई है। जैसी गाधीजी ने घोषणा की थी, वे इस आश्रम मे वापस नही लौटे। अब यहा का सचालन एक ट्रस्ट द्वारा किया जा रहा है।

❑ *रमेश शर्मा*

10. श्रीनाथजी : नाथद्वारा

नाथद्वारा भारत के पच नाथो मे प्रमुख है। यह स्थान बल्लभ सम्प्रदाय का प्रधान पीठ है। यहा श्रीनाथ के नाम से भगवान श्रीकृष्ण विराजमान है। राजस्थान का यह प्रमख तीर्थ है।

इस प्रसिद्ध तीर्थ स्थल मे जितने अधिक यात्रियो का आगमन होता है, उतना अन्यत्र नही। बनास नदी के तट पर यह मन्दिर स्थित है।

पुरी के जगन्नाथ मन्दिर से भी अधिक मात्रा मे यहा नैवेद्य लगाने की प्रथा है। यहा जितने अधिक परिमाण मे भोग लगाया जाता है, उतना भारत के किसी अन्य मन्दिर मे नही लगता। यहा का महाप्रसाद परम पवित्र और स्पर्शदोष से मुक्त माना जाता है। यहा का महाप्रसाद अधिक दिनो तक बिगडता नहीं है। मन्दिर की ओर से प्रसाद बेचने का नियम नही है। भगवान के निमित्त जो धन जमा होता है, उसके फलस्वरूप मन्दिर की ओर से नि.शुल्क प्रसाद मिलता है। मन्दिर के सहस्राधिक सेवको को नित्य प्रसाद यही से मिलता है।

नाथद्वारा मन्दिर एक विशाल भवन मे स्थित है। कई द्वारो के भीतर मुख्य मन्दिर है जिसमे श्रीनाथजी की मूर्ति प्रतिष्ठित है। इसका दर्शन समय–समय पर आठ बार होता है। प्रत्येक दर्शन का भिन्न–भिन्न श्रृगार होता है और उसी प्रकार की धुन से सगीत चलता रहता है। कहा जाता है कि इस मूर्ति को मीराबाई मथुरा से लाई थी। श्रीनाथजी की मूर्ति में एक बहुमूल्य हीरा भी उसके मुख पर जडा हुआ है जो अत्यत ही प्रकाशमय है। यह मूर्ति इतनी आकर्षित है कि दर्शक मुग्ध होकर टकटकी लगाये लगातार देखते रहते है और उन्हे मूर्ति के सामने से मन्दिर के सेवको को धक्का देकर हटाना पडता है।

इस मन्दिर के निकट नवनीतलाल, विट्ठलनाथ, कल्याणराय, मदनमोहन और बनमाली जी के मन्दिर है तथा महाप्रभु हरिराम जी की बैठक है। मीराबाई का भी यहा एक मन्दिर है। नवनीतलाल और विट्ठलनाथ की गणना बल्लभ सम्प्रदाय के सात पीठो मे है।

कहा जाता है कि एक बार मूर्ति भजन के उद्देश्य से औरगजेब यहां आया। प्रवेशद्वार के निकट सीढियो के निकट पहुंचते ही वह अंधा होकर गिर पडा और भगवान की प्रार्थना कर विलाप करने लगा। पुजारी के निर्देश के अनुसार उसने प्रायश्चित कार्य किया तो भगवान की कृपा से उसकी ज्योति पुन उसे मिल गई। वह अपने सैनिको के साथ लौट गया। यह भी कहा जाता है कि इस दुर्दशा के पश्चात औरगजेब ने मन्दिरो के तोडने का काम बद करा दिया।

नाथद्वारा जाने के लिए मारवाड जक्शन और अजमेर जक्शन दोनो स्टेशनो से रेलगाडिया मिलती है। नाथद्वारा मे कई धर्मशालाये है।

भक्त शिरोमणि मीराबाई

यह भी एक जनश्रुति राजस्थान के घर–घर मे प्रचलित है कि इस मन्दिर की स्थापना का सबध भक्त शिरोमणि मीराबाई से है जो श्रीकृष्ण के प्रति अपने बाल्यकाल से ही सर्वस्व रूप मे समर्पित थी। मीराबाई उस सीमा तक समर्पित थी कि वह श्रीकृष्ण से बतयाती रहती थी। यद्यपि मीराबाई का विवाह चित्तौड के राणा से बाल्यावस्था मे ही हो गया था किन्तु मीराबाई ने यही घोषित किया कि उनका विवाह श्रीकृष्ण से पहले ही हो गया है। वे तो चित्तौड की गली गली, डगर डगर मे गाती घूमती थी "मेरे तो गिरधर गोपाल दूसरो ना कोई, जिसके सर मोर मुकुट मेरो पति सोई।"

कृष्ण को अनेक नामो से पुकारा जाता था। कोई उन्हे माखनचोर कहता तो कोई छलिया कहता था। एक बार मीरा ने कृष्ण से अपने घर चलने का आग्रह किया। कृष्ण ने इस आग्रह को स्वीकार किया और कहा, "तुम आगे आगे चलो, मै पीछे पीछे चलूगा।" एक शर्त यह भी लगाई कि पीछे मुडकर मत देखना अन्यथा मै अन्तर्ध्यान हो जाऊगा। मीरा आगे आगे चली और कृष्ण पीछे पीछे। बहुत दूर चलने के उपरान्त मीरा को शक हुआ कि कही कृष्ण उन्हे छोडकर तो नही भाग गए, और उसने पीछे मुडकर देखा। कृष्ण ने मीरा से कहा मेरी शर्त भग हो गई है, इसलिए अब आगे नही जाऊगा और वही अन्तर्ध्यान हो गए। इससे मीरा को बहुत पछतावा हुआ। ऐसा माना जाता है कि नाथद्वारे का मन्दिर उसी जगह बना है जहा से कृष्ण अन्तर्ध्यान हुए थे। ❑

अध्याय आठ

1 मीनाक्षी मन्दिर, मदुरै

मीनाक्षी मन्दिर मदुरे मे स्थित है। इस मन्दिर मे युगल पूजा गृह है। जो सुन्दरेश्वर तथा उसकी पत्नी मीनाक्षी को समर्पित है। दक्षिण भारत के मन्दिरो मे एक ही घेरे के भीतर देवियो और देवताओ के दो पृथक–पृथक मन्दिर होते है, जिनमे देव मन्दिरो की अपेक्षा, देवी मन्दिर छोटा होता है। मीनाक्षी मन्दिर का पूर्व द्वार अशुभ माना जाता है। इसके पार्श्व मे एक नया द्वार बना है, जिससे लोग भीतर आते जाते है।

मदुरै के मीनाक्षी मन्दिर मे सब मिलाकर लगभग 2000 स्तभ हे ओर कुल ग्यारह गोपुरम है। उनमे सबसे बडा तथा सबसे सुदर गोपुरम दक्षिण द्वार मार्ग पर है। यह अकेला ही मीनाक्षी मन्दिर से संबंधित समस्त इमारतो मे सबसे प्रभावशाली है। इसकी कुल ऊचाई लगभग साठ मीटर है। इसकी चोटी पर ढोलाकार छत है। इसका धरातल सर्वत्र देवताओ तथा अर्ध देवी रूपो की आकृतियो से ढका हुआ है। इन आकृतियो को पौराणिक कथाओ के अनत भडार से मुक्त रूप से लिया गया है।

मीनाक्षी मन्दिर मे देवी की खडी मूर्ति है। इसके सम्मुख स्वर्ण पुष्करिणी नामक एक सरोवर है। जिसके तट पर ओसारा है, जिसमे भित्तिचित्र बने हैं।

सुन्दरेश्वर मन्दिर मे शिवलिग विग्रह स्थापित है। मन्दिर के बाहर जो मडप है, उसकी शिल्पकला विश्व विख्यात है। इसे देखने देश विदेश के लोग आते है। इसके अतिरिक्त कई मडप है, जिसमे सहस्र स्तभ मंडप, मीनाक्षी, कल्याण मडप, वृदु मडप तथा बसन्त मडप प्रमुख एव दर्शनीय है।

मीनाक्षी मन्दिर से एक किलोमीटर की दूरी पर सुन्दरराज पेरुमाल मन्दिर है। इस मन्दिर मे भगवान विष्णु की चतुर्भुज श्री मूर्ति है। इसे कुडल अवगर और सुन्दरबाहु भी कहते है। इस मन्दिर मे रामायणी कथा प्रसगो के तिरगे

भित्तिचित्र बने है। मन्दिर के शिखर भाग मे सूर्य नारायण और भगवान नृसिह की श्री मूर्तिया है। ऊपर जाने के लिए सीढिया बनी है। शिखर के ऊपर स्वर्ण कलश है। मन्दिर के घेरे मे लक्ष्मीजी का एक पृथक मन्दिर है, जो कसौटी पत्थर का है। इसमे लक्ष्मीजी की बडी भव्य मूर्ति प्रतिष्ठित है। यहा लक्ष्मीजी का नाम मधुबल्ली है।

यहा पर 305 मीटर लम्बा तथा इतना ही चौडा एक विस्तृत सरोवर है, जिसे बडियूर मरियम्मन तेप्पकुलम कहा जाता है। इसके मध्य मे एक छोटा सा मन्दिर भी है। उत्सव के अवसर पर भगवान की चलमूर्ति यहा लाई जाती है और भगवान को जल विहार कराया जाता है।

दक्षिण रेलवे के तिरुच्चिरापल्लि–मदुरै–माना मदुरै–रामेश्वरम रेलमार्ग पर, तिरुच्चिरापल्लि से 155 किलोमीटर दूर मदुरै स्टेशन है। स्टेशन से एक किलोमीटर की दूरी पर मीनाक्षी का प्रसिद्ध मन्दिर है। दक्षिण भारत के समस्त नगरो से मोटर व बसो द्वारा यहा आना जाना हो सकता है। पास मे एक मारवाडी धर्मशाला भी है। ❑

2. उज्जैन

उज्जैन को उज्जयिनी अथवा अवन्तिका भी कहते है। उज्जैन नगर सिप्रा नदी के तट पर बसा है। कहा जाता है कि महाराजा बिक्रमादित्य के समय उज्जयिनी भारत की राजधानी थी। सप्तपुरियो मे इसकी गणना की जाती है। द्वादश ज्योतिर्लिगो मे यहा एक महाकाल नामक ज्योतिर्लिग है। प्रति बारहवे वर्ष, जब वृहस्पति सिह राशि मे आते है, यहा वैशाख मास मे कुभ स्नान का मेला लगता है। द्वापर मे यही पर श्रीकृष्ण, बलराम और सुदामा महर्षि सादीपन के आश्रम मे विद्याध्ययन करते थे। इस क्षेत्र को पृथ्वी की नाभि कहा जाता है।

महाकालेश्वर मन्दिर

इस क्षेत्र का प्रधान मन्दिर महाकाल शिव मन्दिर है। यह मन्दिर एक

विस्तृत आगन मे स्थित है, जिसमे महाकाल ज्योतिर्लिंग प्रतिष्ठित है। यह मन्दिर दो खडो मे है। ऊपर के खड मे जो धरातल के बराबर है, ओकारेश्वर शिवलिग स्थापित है। नीचे का खड तलगृह के समान है। धरातल से दस सीढिया उतरने पर महाकाल ज्योतिर्लिंग का दर्शन होता है। इसके माहात्म्य के सबध मे शिव पुराण मे लिखा है "इस शिव के दर्शन करने से स्वप्न मे भी कोई दु ख को प्राप्त नहीं होता। जो मनुष्य जिस जिस कामना को लेकर इस शिवलिग की आराधना करता है, वह उस मनोरथ को प्राप्त होता है।" इस मन्दिर मे पार्वती, गणेश और स्वामी कार्तिक के भी श्री विग्रह हैं। मन्दिर के एक ओर सभा मडप और कोटि तीर्थ सरोवर है। आगन के एक ओर जूना महाकाल का विशाल मन्दिर है। सभा मडप के एक कोण पर अवंतिका देवी का प्रसिद्ध और प्राचीन मन्दिर है। ये इस नगर की रक्षिकादेवी कही जाती है। महाकाल मन्दिर के आसपास कई छोटे–छोटे और भी मन्दिर है।

उज्जैन के व्यापारिक केद्रो मे अति विशाल और प्राचीन गोपाल मन्दिर है। इसमे राधा कृष्ण की बडी ही मनोहर युगल मूर्तिया है। इस मन्दिर के आसपास बडी–बडी दुकाने है। महाकाल मन्दिर से गोपाल मन्दिर जाते समय बीच मे चौबीस खभो का एक ओसारा मिलता है, जो किसी प्राचीन भवन का भग्नावशेष प्रतीत होता है। इस ओसारे के एक ओर भद्रकाली की मूर्ति है।

नगर से डेढ किलोमीटर की दूरी पर एक मन्दिर मे महाकाली की विशाल मूर्ति है। कहा जाता है कि इन्ही देवी की आराधना से कालिदास महाकवि हुए। मन्दिर से आधा किलोमीटर उत्तर की ओर सिप्रा नदी के तट पर एक बडी गुफा है जिसको भृतहरि की गुफा कहते है। इसी गुफा के निकट एक अन्य शिव मन्दिर है।

नगर से लगभग पाच किलोमीटर की दूरी पर अकपाद बस्ती है। यही सादीपनि आश्रम है, जिसमे कृष्ण, बलराम और सुदामा महर्षि सादीपनि से विद्याध्ययन करते थे। यहा महर्षि सादीपनि की गद्दी एव कृष्ण, बलराम और सुदामा के मन्दिर है। स्वामी बल्लभाचार्य की 84 बैठको मे यहा 73वी बैठक है। यहा एक पीपल के वृक्ष के नीचे स्वामी बल्लभाचार्य ने श्रीमद्भागवत का पारायण किया था।

सादीपनि आश्रम से कुछ दूरी पर सिप्रा नदी के तट पर एक ऊचा टीला है, जिसके ऊपर मगलनाथ का प्रसिद्ध मन्दिर है। पृथ्वीपुत्र मगलग्रह की उत्पत्ति यही हुई मानी जाती है। यहा प्रत्येक मगलवार को दर्शनार्थियो की अधिक भीड होती है।

उज्जैन की वेधशाला भी दर्शनीय है। यहा के निवासी इसे यत्र महल कहते है। यहा आकाशीय ग्रहो एव नक्षत्रो के अवलोकन के लिए पाच यत्र है। यहा से हर सिद्धिदेवी का मन्दिर एक किलोमीटर दूर है।

गोपाल मन्दिर से लगभग आठ किलोमीटर की दूरी पर चिन्तामणि गणेश मन्दिर है। उज्जैन आने वाले प्राय सभी यात्री इन गणपति का दर्शन करते है। यहा जो मनौती मागी जाती है, अवश्य पूर्ण होती है। इसीलिए ये सिद्धि गणपति कहे जाते है।

उज्जैन से इन्दौर 80 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। स्टेशन के निकट एव नगर मे कई धर्मशालाये है।

पावन क्षिप्रा नदी

क्षिप्रा उज्जैन सभाग एव मालवा क्षेत्र एव भारत की एक प्रसिद्ध धार्मिक एव ऐतिहासिक पवित्र नदी है। इसको कई नामो से पुकारा जाता है जैसे क्षिप्रा, शिप्रा या अवती नदी या क्षिप्रा मोक्षदायिनी आदि। स्कद पुराण के अवति खड के मतानुसार क्षिप्रा का उद्गम स्थल भगवान विष्णु से है और यह भारत की महान पवित्रम् नदियो मे गिनी जाती है।

क्षिप्रा नदी इन्दौर शहर से 19 किलोमीटर दक्षिण पूर्व मे बसे गाव उज्जैनी के पास स्थित कोठरी, बरडी नामक पहाडी से निकलती है। यह अपने उद्गम स्थल से 87 किलोमीटर की दूरी तय कर भारत मे सबसे प्राचीन धार्मिक एव ऐतिहासिक नगर उज्जैन पहुचती है। उज्जैन मे क्षिप्रा के किनारे अनेक घाट एव मन्दिर बने हुए है, जिसकी महत्ता की यशोगाथा अनेक प्रसिद्ध भारतीय ग्रथो मे मिलती है। कालिदास ने भी क्षिप्रा के किनारे की शीतल मद समीर का वर्णन अपनी प्रसिद्ध कृति मेघदूत मे किया है जो निम्नानुसार है

"दीर्घ्थी कुर्वन्यतु मदकूल, कुजित सारसानाम।
प्रत्येषेक्षु स्फुटित कललोद मैत्री कषाय।
यत्र स्त्रीणा हरति सुरत गलानि मगानुकूल ।
क्षिप्रा बात प्रिययत इव प्रार्थना चाटुकार ।।

(मेघदूत श्लोक 31)

उज्जैन नगर का प्रसिद्ध कालियादह महल का निर्माण भी इसी क्षिप्रा नदी के प्रवाह मार्ग के बीच स्थित द्वीप पर उज्जैन से छह किलोमीटर दूर हुआ है। सामान्यतया नदी का पाट सकरा रहता है किन्तु वर्षा ऋतु मे यह काफी

विस्तृत रूप धारण कर निकटवर्ती क्षेत्रो मे काफी नुकसान का कारण बनता है। किन्तु ग्रीष्म ऋतु समाप्त होते ही नदी का प्रवाह सकरा पाट रह जाता है। क्षिप्रा की मुख्य सहायक नदिया खान एव गभीर है।

उज्जैन मे शिप्रा के जन उपयोग घाटो मे त्रिवेणी घाट, नृसिह घाट, रामघाट, सत शिरोमणि रविदास घाट, मौलाना मौज घाट, सुनहरी घाट, चक्रतीक्र घाट, ऋणमुक्तेश्वर घाट, भृतहरि गुफा घाट, राजागोपीचद पीरमच्छदनाथ, उकलेश्वर घाट, विक्रात भैरव घाट, कालभैरव घाट, गगा घाट, मगलनाथ घाट एव सिद्धनाथ घाट प्रसिद्ध है, जहा धार्मिक पर्वो पर लाखो की सख्या मे नर नारी स्नान करते है एव मन्दिरो मे दर्शन करते है।

प्रति 12 वर्ष के पश्चात उज्जैन मे महाकुम्भ के विशाल मेले का आयोजन होता है। इस अवसर पर सारे भारत से 50 लाख से अधिक नर नारी यहा एकत्रित होते है और शिप्रा नदी मे स्नान कर अपने को धन्य मानते है। इस नदी के दोनो ओर अनेक मन्दिर तथा आश्रम बने हुए है जहा हजारो की सख्या मे सत व साधु निवास करते है। इन आश्रमो को अखाडे भी कहा जाता है। इन सभी अखाडो का सचालन गुरु शिष्य परपरा के अनुसार किया जाता है। ❑

3. दरगाह हज़रत बन्दानवाज़

तुगलक वश के राज्य की स्थापना के एक साल बाद हजरत ख्वाजा बन्दानवाज का जन्म हुआ था। उनका जन्म 30 जुलाई, सन् 1321 को हुआ। उनके पिता का नाम सैय्यद यूसुफ हुसैनी तथा उनका नाम सैय्यद महमूद–उल–हुसैनी था। वे गेसुदराज के नाम से भी मशहूर थे। कहा जाता है कि लम्बे बालो के कारण उनके पूर्वज, गेसूदराज कहलाते थे, इसलिए उनका भी उपनाम गेसूदराज मशहूर हो गया।

जब मुहम्मद बिन तुगलक ने सन् 1327 मे दिल्ली छोडकर दौलताबाद को राजधानी बनाने का निर्णय लिया तो दिल्ली की आबादी के साथ उनके परिवार को भी दिल्ली छोडकर दक्षिण मे दौलताबाद जाना पडा। उस समय

भक्त था। वह उनके सपर्क मे निरतर रहता था और प्रतिदिन उनके दर्शनार्थ दरगाह जाता था। फिरोजशाह की मृत्यु के बाद अहमदशाह वाली बहमनी राज्य का सुल्तान बना।

असलियत तो यह है कि अहमदशाह वाली ही गेसूदराज उर्फ बन्दानवाज की नई दरगाह का निर्माता था। उसने ही उनकी कब्र का शानदार ढग से निर्माण कराया।

बन्दानवाज केवल सूफी साधक और आध्यात्मिक व्यक्ति ही नही थे, बल्कि एक विद्वान व्यक्ति थे। अरबी और फारसी मे विद्वान होने के साथ–साथ सस्कृत भाषा के भी अच्छे ज्ञाता थे। समय–समय पर भारतीय योगी उनसे मिलकर अपनी आध्यात्मिक जिज्ञासाओ को शात करते थे। उनके प्रति मुसलमानो और हिन्दुओ की सभी की समान श्रद्धा थी। उनके लिखे गये ग्रन्थ मुख्यत. फारसी भाषा मे है, कुछ अरबी भाषा मे भी है। उन्होने कुछ पुस्तके, उस समय प्रचलित, पुरानी उर्दू भाषा, जिसे दखिनी कहते थे, मे भी लिखी हैं। उस समय दक्षिणी भारत मे प्रचलित पुरानी उर्दू का उन्हे आदि लेखक माना जाता है। □

4. श्री वैद्यनाथधाम

बिहार

श्री वैद्यनाथ द्वादश ज्योतिर्लिगो मे एक है और वैद्यनाथ 51 शक्ति पीठो मे एक पीठ भी है। सती के देह से उनका हृदय यहा गिरा था। वैद्यनाथधाम का एक नाम देवधर भी है। वैद्यनाथ देवधर दक्षिण बिहार मे स्थित है।

वैद्यनाथधाम का मुख्य मन्दिर श्री वैद्यनाथ मन्दिर ही है। मन्दिर के घेरे मे ही पुष्पादि तथा अन्ये तीर्थो का जल भी बिकता है।

श्री वैद्यनाथ जी के सम्मुख ही गौरी मन्दिर है। यही यहा का शक्ति पीठ है। इसमे एक ही सिहासन पर श्री जय दुर्गा तथा त्रिपुर सुदरी की दो मूर्तिया विद्यमान है।

परिक्रमा मे चलने पर दूसरा मन्दिर कार्तिकेय मन्दिर आता है। इसमे मदनमोहनजी तथा कार्तिकेय की मूर्तिया है।

श्री वैद्यनाथ शिवलिग रावण द्वारा कैलाश से लाया गया था। लिग ऊँचाई

मुस्लिम धर्म के अध्ययन मे बडी सहायता मिली।

उनके बन्दानवाज नाम के बारे मे भी एक रोचक तथ्य है। कहा जाता है कि उनको जो कुछ भी प्राप्त होता था वह उसे गरीब लोगो मे बाट देते थे। वे दूसरो को सुख पहुंचाने मे ही आनदित होते थे। इसलिए उनके सरक्षक तथा अन्य सभी उन्हे बन्दानवाज कहने लगे।

जब वे दिल्ली लौटे, तो शेख नसीरुद्दीन महमूद के सरक्षण मे औपचारिक शिक्षा प्राप्त की। अरबी, फारसी और सस्कृत भाषा के वे विद्वान थे। मुस्लिम धर्म और सूफी समुदाय से सबधित उनकी विद्वता बहुत ही अधिक थी। कहा जाता है कि अपनी आध्यात्मिक साधना के दौरान उन्होने दिल्ली से सटे जगलो मे दस साल का एकान्तवास भी किया था।

दिल्ली मे 40–42 साल गुजारने के बाद 80 साल की उम्र मे उन्होने अपने परिवार तथा अनुयायियो के साथ दौलताबाद के लिए प्रस्थान किया। दौलताबाद पहुचने मे उन्हे कई साल लग गये। रास्ते मे कई जगह उन्होने पडाव डाला। दौलताबाद पहुचने पर उन्होने अपने पिता की कब्र पर जाकर अपना सम्मान और श्रद्धा प्रकट की तथा वही पर निवास करने का मन बना लिया।

उस समय दक्षिण मे बहमनी का स्वतत्र राज्य था। इस राज्य का बादशाह फिरोजशाह था, जिसकी राजधानी गुलबर्गा थी। जब उसने बन्दानवाज के आगमन का समाचार पाया तो उनसे गुलबर्गा आने और गुलबर्गा मे ही निवास करने की प्रार्थना की। फिरोजशाह ने किले की दीवार के बाहर उनके लिए एक दरगाह का निर्माण कराया। लेकिन दर्शनार्थियो की भीड के कारण सुल्तान की सुरक्षा का खतरा महसूस हुआ। अत उन्होने सुल्तान की सहमति से अपना निवास स्थान उस जगह बनाया, जहा उनकी कब्र बनी हुई थी।

बन्दानवाज ने गुलबर्गा मे 22 साल तक निवास किया और लगभग 105 साल की आयु मे 1 नवबर, 1422 को उनका देहात हो गया।

बहमनी मे शाही परिवार से उनके सबध मे भी एक गाथा है। पहले तो फिरोजशाह उनकी बडी इज्जत करता था, लेकिन कट्टरपथियो के उकसावे मे आकर उसने उनके प्रति सम्मान मे कमी कर दी। इसके बावजूद जब वह शिकार तथा किसी अभियान के लिए सफर करता था तो उनकी दरगाह मे जाकर उनका आशीर्वाद अवश्य लेता था।

सुल्तान फिरोजशाह का भाई, अहमदशाह वाली बन्दानवाज का बहुत बडा

भक्त था। वह उनके सपर्क मे निरतर रहता था और प्रतिदिन उनके दर्शनार्थ दरगाह जाता था। फिरोजशाह की मृत्यु के बाद अहमदशाह वाली बहमनी राज्य का सुल्तान बना।

असलियत तो यह है कि अहमदशाह वाली ही गेसूदराज उर्फ बन्दानवाज की नई दरगाह का निर्माता था। उसने ही उनकी कब्र का शानदार ढग से निर्माण कराया।

बन्दानवाज केवल सूफी साधक और आध्यात्मिक व्यक्ति ही नही थे, बल्कि एक विद्वान व्यक्ति थे। अरबी और फारसी मे विद्वान होने के साथ–साथ सस्कृत भाषा के भी अच्छे ज्ञाता थे। समय–समय पर भारतीय योगी उनसे मिलकर अपनी आध्यात्मिक जिज्ञासाओ को शात करते थे। उनके प्रति मुसलमानो और हिन्दुओ की सभी की समान श्रद्धा थी। उनके लिखे गये ग्रन्थ मुख्यत फारसी भाषा मे है, कुछ अरबी भाषा मे भी है। उन्होने कुछ पुस्तके, उस समय प्रचलित, पुरानी उर्दू भाषा, जिसे दखिनी कहते थे, मे भी लिखी हैं। उस समय दक्षिणी भारत मे प्रचलित पुरानी उर्दू का उन्हे आदि लेखक माना जाता है। ☐

4. श्री वैद्यनाथधाम

बिहार

श्री वैद्यनाथ द्वादश ज्योतिर्लिगो मे एक है और वैद्यनाथ 51 शक्ति पीठो मे एक पीठ भी है। सती के देह से उनका हृदय यहा गिरा था। वैद्यनाथधाम का एक नाम देवधर भी है। वैद्यनाथ देवधर दक्षिण बिहार मे स्थित है।

वैद्यनाथधाम का मुख्य मन्दिर श्री वैद्यनाथ मन्दिर ही है। मन्दिर के घेरे मे ही पुष्पादि तथा अन्य तीर्थो का जल भी बिकता है।

श्री वैद्यनाथ जी के सम्मुख ही गौरी मन्दिर है। यही यहा का शक्ति पीठ है। इसमे एक ही सिहासन पर श्री जय दुर्गा तथा त्रिपुर सुदरी की दो मूर्तिया विद्यमान है।

परिक्रमा मे चलने पर दूसरा मन्दिर कार्तिकेय मन्दिर आता है। इसमे मदनमोहनजी तथा कार्तिकेय की मूर्तिया है।

श्री वैद्यनाथ शिवलिग रावण द्वारा कैलाश से लाया गया था। लिग ऊँचाई

मे बहुत छोटा है। आधार पीठ से उसका उभार थोडा ही है। श्री वैद्यनाथ के मन्दिर के घेरे मे परिक्रमा मे अन्य मन्दिर मिलते हे। क्रमशः ये मन्दिर हैं.

गणपति मन्दिर, ब्रह्मा जी का मन्दिर, सध्यादेवी का मन्दिर, काल भैरव का मन्दिर, हनुमान मन्दिर, मनसा देवी का मन्दिर, सरस्वती मन्दिर, सूर्य मन्दिर, वगलादेवी का मन्दिर, श्रीराम मन्दिर, आनन्द भैरव मन्दिर, गगा मन्दिर, मानिक चौक चबूतरा, हर गौरी मन्दिर, कालिका मन्दिर, अन्नपूर्णा मन्दिर, चन्द्रकूप, लक्ष्मी नारायण मन्दिर, नीलकण्ठ महादेव मन्दिर।

कहा जाता है कि रावण ने जल की आवश्यकता होने पर पदाघात से सरोवर उत्पन्न किया था। मन्दिर के पास ही यह सरोवर है। इसे शिवगंगा सरोवर कहते है। यात्री पहले इस सरोवर मे स्नान करते हे वाद मे दर्शन करने जाते है।

वैद्यनाथ (देवघर) से चार मील पूर्व एक पर्वत पर तपोवन है। यहा शिखर पर एक शिव मन्दिर है और शूलकुण्ड नामक एक कुण्ड है। स्थानीय लोग इसे महर्षि बाल्मिकी का तपोवन कहते है।

तपोवन से 6 मील (वैद्यनाथ से 10 मील) की दूरी पर त्रिकूट पर्वत है। इस पर त्रिकुटेश्वर शिव मन्दिर है। इस पर्वत से मयूराक्षी नदी निकलती है।

वैद्यनाथ से उत्तर पूर्व हरिला जोडी एक ग्राम है। कहा जाता है कि यहीं एक हरड के वृक्ष के नीचे रावण ने वैद्यनाथलिंग ब्राह्मण वेशधारी श्री नारायण के हाथ मे दिया था। अव यहा काली मन्दिर है।

वैद्यनाथ मन्दिर से कुछ दूर पश्चिम मे दोल मंच है। दोल पूर्णिमा (फाल्गुन) शुक्ल पूर्णिमा को यहां श्री राधा कृष्ण का झूला महोत्सव होता है। दोलमंच से कुछ दूरी पर बैजू भील की समाधि है जिसे बैजू मन्दिर कहा जाता है। बैजू भील ही श्री वैद्यनाथ का प्रथम पूजक था। पास ही नदन पर्वत है जिस पर छिन्न मस्तादेवी का मन्दिर है। पर्वत के नीचे काली मन्दिर है।

कहा जाता है कि रावण की तपस्या से प्रसन्न होकर शंकर ने वैद्यनाथ ज्योतिर्लिंग प्रदान करके आज्ञा दी कि वह इसे लका मे स्थापित करे। किन्तु शकर ने सावधान किया कि मार्ग मे कही पृथ्वी पर वह मूर्ति रखेगा तो फिर उठा नही सकेगा। लघुशका से परेशान रावण ने वह मूर्ति ब्राह्मण वेशधारी श्री नारायण विष्णु भगवान के हाथ मे दी। अधिक देर के कारण उन्होने मूर्ति पृथ्वी पर रख दी। रावण मूर्ति उठा नही सका। रावण के जाने के बाद बैजू भील ने इसं मूर्ति को देखा अेर उसी ने उसका प्रथम पूजन किया।

अनेक यात्री यहा पूजन व मुडन भी करवाते है। इस कारण पावन स्थली

मे उचित सफाई की व्यवस्था नही है। सफाई की ओर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। □

5. श्रावस्ती

उत्तर प्रदेश

भगवान बुद्ध के समय श्रावस्ती शक्तिशाली कौशल राज्य की राजधानी थी। श्रावस्ती बलरामपुर से 10 मील की दूरी पर उत्तर प्रदेश मे स्थित है।

श्रावस्ती मे ही भगवान बुद्ध ने सहस्र कमल दल पर बैठकर, अपने चमत्कार का प्रदर्शन किया था। इस दृश्य को देखने वालो मे कौशल का राजा भी था। यही पर भगवान बुद्ध ने अपने को विभिन्न रूपो मे प्रदर्शित किया।

बुद्ध धर्मावलम्बियो के लिए श्रावस्ती एक अति ही पवित्र तथा महत्वपूर्ण स्थान है।

श्रावस्ती मे अनाथ पिण्डक ने, जिसका पारिवारिक नाम सुदत्र था, जेतवन विहार का निर्माण कराया था। अनाथ पिण्डक श्रावस्ती का सर्वाधिक धनी व्यक्ति था जो बाद मे कौशल राज्य का मत्री भी नियुक्त किया गया।

अनाथ पिण्डक राजगृह गया था, वहा पर उसने भगवान बुद्ध के उपदेश सुने। भगवान बुद्ध के उपदेशो से प्रभावित होकर, वह बौद्ध हो गया और उसने भगवान बुद्ध को श्रावस्ती आने के लिए निमत्रण दिया।

इतिहास मे यह प्रसिद्ध है कि अनाथ पिण्डक ने भव्य बुद्ध विहार बनवाने के लिए जगह खरीदी और उस जगह को खरीदने के लिए जितनी स्वर्ण मुद्राये उस जगह को घेर सकती थी, मूल्य के रूप मे चुकायी। वहा पर एक भव्य सतखडा विहार बनवाया। भगवान बुद्ध ने चौबीस वर्षाकाल इसी विहार मे व्यतीत किये।

श्रावस्ती मे ही भगवान बुद्ध से मगलसुत्त तथा करनीय भित्त सुत्त के उपदेश सुने।

आनन्द पच्चीस वर्ष तक भगवान बुद्ध की सेवा सुश्रूषा मे रहे। वे श्रावस्ती मे ही भगवान बुद्ध की सेवा सुश्रूषा के लिए उनसे लडे।

श्रावस्ती मे ही एक स्त्री अपने पेट मे लकडी कटोरा (कढौता) बांध कर, भगवान बुद्ध पर मिथ्या आरोप लगाने आई थी कि उसके पेट मे भगवान बुद्ध की सन्तान है। उस समय आंधी आई और उसका वस्त्र उड गया, जिससे सत्य का उद्घाटन हुआ। धरती से आग की एक लपट उठी और वह उसी मे समा गई।

श्रावस्ती मे ही एक स्त्री, अपने मृत पुत्र का जीवन दान मागने आई थी। भगवान बुद्ध ने उससे कहा कि जिस घर मे कोई न मरा हो उस घर से कुछ सरसो के दाने ले आये तो उसका पुत्र जीवित हो जायेगा। उस स्त्री को कोई ऐसा घर न मिला, जहा पर किसी की मृत्यु न हुई हो। गृह स्वामियो ने उससे कहा कि जीने वालो की सख्या तो कम है पर मरने वालो की संख्या बहुत ही ज्यादा है। बाद मे भगवान बुद्ध के उपदेश से उसको बोध हुआ।

श्रावस्ती मे ही, उपाली, जो एक निम्न नाई जाति से सबंधित था, आनन्द और पाच अन्य लोगो के साथ आया था जिसे बौद्ध धर्म मे दीक्षित किया गया। बाद मे यही उपाली महान बौद्ध शिक्षक हुए। राजगृह मे उपाली ही ने विनय पिटक का उच्चारण किया था।

श्रावस्ती के पास ही अगुलिमाल नाम का कुख्यात डाकू रहता था। वह लोगो की हत्या करके, उनकी अगुलियो की माला गले मे पहना करता था। इसलिए उसका नाम अगुलिमाल हो गया था। बाद मे वह भी भगवान बुद्ध की शरण मे आकर बौद्ध धर्म का अनुयायी बना।

श्रावस्ती के एक अति ही धनी श्रेष्ठी की पत्नी विशाखा ने पूर्वाराम नाम का एक अति ही भव्य विहार बनवाया था, जो श्रावस्ती के पूर्व मे स्थित था। कहा जाता है कि विहार बनवाने के लिए उसने अपना गले का हार बेचना चाहा, वह हार इतना कीमती था कि कोई भी श्रावस्ती का धनी व्यक्ति उसे खरीदने मे असमर्थ था। तब उसने विहार बनवाने की कीमत पर स्वय हार को बेचा। श्रावस्ती मे जेतवन विहार के बाद पूर्वाराम विहार की श्रावस्ती मे भव्य विहार था।

सम्राट अशोक भी श्रावस्ती मे जेतवन विहार के दर्शनार्थ आया था। वहा पर उसने स्तूपो की पूजा तथा अभ्यर्चना की। इस स्थान पर चीनी यात्री ह्वेनसाग ने दो अशोक स्तभ देखे थे। उसने ऐसे स्तूप भी देखे थे, जिसमे भगवान बुद्ध के अवशेष रखे हुए थे।

आज भी जेतवन मे अवशेष स्थित है। स्तूप और मन्दिर कुषाण और गुप्त काल के है।

आजकल श्रावस्ती मे दो विहार, छह मन्दिर और पाच स्तूप है।

श्रावस्ती प्राचीन भारत का सर्वाधिक धनी तथा महान नगर था। जिसके अवशेष अब पुरातत्व विभाग की देख रेख मे है।

श्रावस्ती पहुचने के लिए बलरामपुर रेलवे स्टेशन से बस से जाना पडता है। □

6. देलवाड़ा : आबू

यह पर्वतीय तीर्थ है। इसका प्राचीन नाम अर्बुदाचल है। इसे हिमालय का पुत्र कहते है। सागर के जलस्तर से आबू पर्वत के शिखर की ऊँचाई 1219 मीटर अर्थात् 4000 फुट है। यह पर्वत सनातन से तपोभूमि रहा है। यहा कई ऋषियो ने तपस्या की थी। इस पर्वत के महत्व को देखकर यहा जैनियो ने मन्दिर बनवाये। यह जैनियो के पाच पर्वतो मे एक है। अत. यहा सनातन धर्म और जैन धर्म दोनो सप्रदायो के प्रमुख मन्दिर है।

आबू पहाड से तीन किमी. देलवाडा है। देलवाडा मे आदिनाथ, नेमिनाथ, महावीर, ऋषभदेव और पार्श्वनाथ पाच मन्दिर है। देलवाडा आबू शहर से चार किलोमीटर दूर आम्रकुजो के मध्य मे स्थित है। मन्दिर मे प्रवेश अवाध्य है। मन्दिर मे चमडे की वस्तुओ को ले जाने की मनाही है। मन्दिर परिसर मे धूम्रपान, छाता खोलना भी निषिद्ध है।

देलवाडा श्वेताबर मन्दिरो का समूह है। आदिनाथ या विपलबसाही एव नेमिनाथ या लूनबसाही तथा तेजपाल मन्दिर विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इनके नाम इनके निर्माताओ पर है। गुजरात के प्रथम सोलकी राजा भीमदेव के मत्री विमलशाह ने सन् 1031 मे 18 करोड, 53 लाख रुपये खर्च कर विमलबसाही का निर्माण कराया था। वास्तुपाल और तेजपाल नामक दो भाईयो ने सन् 1251 मे 12 करोड, 53 लाख रुपये व्यय कर, तेजपाल मन्दिर का निर्माण कराया था। विमलबसाही मे प्रथम जैन तीर्थकर आदिनाथ है। कहा जाता है कि विमलबसाही के कारीगरो को तराशे गये पत्थर के वजन

के बराबर चांदी पारिश्रमिक के रूप मे दी गई और तेजपाल ने सोना दिया था।

सोलकी शैली मे श्वेत पत्थरो से निर्मित इन मन्दिरो की कलात्मकता अभूतपूर्व है। फलफूल, जीव जन्तुओ से शोभित, अष्टभुजाकार गुम्बद, 48 स्तम्भो सहित अलिन्द की अनूठी कलात्मक स्थापत्य शैली देवताओ सहित 52 देव कुटीर सगमरमरी पत्थरो पर नक्काशी, छत की नक्काशी अति ही आकर्षक है।

तेजपाल मे भी पत्थरो की अलौकिक नक्काशी है। नक्काशी भरे स्तभ छत पर नृत्य की विभिन्न भगिमाये, पद्म, तोरण, अति ही अनूठे है। तेजपाल मे 22वे जैन तीर्थकर, नेमिनाथ की प्रतिमा है। मूल मन्दिर के दोनो ओर देवरानी, जेठानी के मन्दिर है। सगमरमर के ये मन्दिर इतनी बारीक कारीगरी से युक्त है जिन्हे देखने के लिए दूर–दूर से यात्री आते है।

देलवाडा के मन्दिर, विमलबसाही, नेमिनाथ मन्दिर, लूणबसाही, खरतरबसाही के नाम से जाने जाते है। पहाड पर देलवाडा मे पाच जैन मन्दिर है। यहां मध्य मे चौमुख मन्दिर है, उसमे आदिनाथ भगवान की चतुर्मुख मूर्ति है। यह मन्दिर तीन मजिला है। उसके उत्तर मे आदिनाथ का एक मन्दिर और है। पश्चिम मे विमलशाह का बनवाया मन्दिर है। उसके पास वास्तुपाल और तेजपाल का बनवाया मन्दिर है जिसमे नेमिनाथ की मूर्ति है। विमलशाह के मन्दिर मे पार्श्वनाथ की मूर्ति है। विमलबसाही मे 52 और लूणबसाही मे 48 देहरिया है। इसके सामने भगवान कुथुनाथ का दिगम्बर जैन मन्दिर है।

देलवाडा से 6 किलोमीटर पर अचलगढ है। अचलगढ की चढाई मे कुथुनाथ मन्दिर, ॠषभदेव मन्दिर और फिर सीढिया चढकर आदिनाथ का मन्दिर आता है। भगवान आदिनाथ की प्रतिमा अष्टधातु की है और 500 वर्ष पुरानी बताई जाती है। इसका वजन 1544 मन तोला जाता है।

पश्चिम रेलवे के अहमदाबाद अजमेर बादीकुई दिल्ली रेलमार्ग पर आबू रोड स्टेशन है। आबू रोड स्टेशन से 29 किलोमीटर आबू पहाड है। माउंट आबू के बस अड्डे से 3 किलोमीटर पर आबू पहाड है। यहा सडक के एक ओर दिगम्बर जैन धर्मशाला है जिसमे सब प्रकार की सुविधाओ का उचित प्रबन्ध है। ❑

7. गुरुद्वारा ननकाना साहिब

पाकिस्तान

गुरुद्वारा ननकाना साहिब सिखो का सबसे पवित्र धार्मिक स्थान है, जो लाहौर से 64 किलोमीटर की दूरी पर जिला शेखुपुरा मे है। यहा पर सिख धर्म के प्रवर्तक गुरु नानक देवजी का जन्म सन् 1469 मे हुआ था। उस समय इस स्थान का नाम तलवडी था। बाद मे यह स्थान ननकाना साहब के नाम से जाना जाने लगा। यहा पर गुरु साहिब के जीवन से सबधित कई धार्मिक स्थल है।

गुरुद्वारा जन्म स्थान

इस स्थान पर गुरुजी का जन्म हुआ था। मौजूदा इमारत सन् 1819–1820 की बनी हुई है। सन् 1921 मे सिखो ने कुर्बानिया देकर उदासी महतो से इस गुरुद्वारे पर कब्जा किया। यहा पर गुरुवाणी का पाठ कर रहे सिखो पर महत के अनुयायियो ने हमला करके उनको बहुत बेरहमी से मार डाला था। लगभग 80 सिख मारे गए थे। लाहौर से अग्रेज फौज ने आकर स्थिति पर काबू पाया और गुरुद्वारे को ताला लगा दिया था। अगले दिन सिख प्रतिनिधियो को ही गुरुद्वारा सौपा गया।

गुरुद्वारा बाल लीला

गुरुद्वारा जन्म स्थान से 250 मीटर की दूरी पर दक्षिण उत्तर की ओर गुरुद्वारा बाल लीला है, जो गुरुजी के बाल्यकाल से सबधित है। यह गुरुद्वारा 1820 मे बनवाया गया था। इसके साथ ही एक सरोवर है जिसका निर्माण 1945–46 मे कराया गया था।

गुरुद्वारा मालजी साहिब

गुरुद्वारा जन्म स्थान से डेढ किलोमीटर की दूरी पर रेलवे स्टेशन के सामने गुरुद्वारा मालजी साहिब है। जहा पर गुरुजी पशु चराते थे। एक दिन गुरुजी दोपहर मे आराम कर रहे थे, तभी एक सर्प अपना फन फैला कर उनके सिर पर छाया कर रहा था।

गुरुद्वारा कियारा साहिब

एक दिन तलवडी गांव के हाकिम रामबुलार के सामने एक किसान ने शिकायत की कि नानक के पशुओ ने उसकी खेती उजाड दी है। हाकिम ने मौके पर जाकर जाच की तो देखा कि खेत बिल्कुल ठीक है और फसल को कोई नुकसान नहीं हुआ है। इसी स्थान पर गुरुजी की याद मे गुरुद्वारा कियारा साहिब बना हुआ है। यह गुरुद्वारा मालजी साहिब से 400 मीटर के फासले पर पूर्व दिशा मे स्थित है।

गुरुद्वारा तम्बू साहिब

यह गुरुद्वारा जन्म स्थान से 400 मीटर पूर्व की दिशा मे है। अभी गुरुजी अपनी किशोरावस्था मे ही थे कि उनके पिता ने उन्हे व्यापार करने के लिए बीस रुपये दिये ताकि वह सौदा बेचकर लाभ कमा सके। परतु गुरुजी ने भूखे साधुओ को भोजन खिलाकर सारे रुपये खर्च कर दिये। उनका विचार था कि यही सच्चा सौदा है। गाव लौट कर घर से बाहर एक पेड के नीचे बैठ गये। उनके पिता जी उन पर काफी नाराज हुए। इस जगह पर पेड की शाखाये तम्बू की तरह बनी हुई है और अभी तक यह पेड कायम है।

गुरुद्वारा पंजा साहिब

गुरुद्वारा पजा साहिब रावलपिडी से कुछ दूरी पर ही है और हसन अब्दाल रेलवे स्टेशन से थोडे फासले पर है। गुरुजी के प्रारभिक जीवन की एक घटना के साथ पजा साहिब का विशेष सबध है।

इस स्थान पर गुरु नानकजी अपने साथी मरदाने के साथ पहुचे। पहाडी के ऊपर एक मुसलमान पीर बलीकंधारी रहता था। उसकी झोपडी के पास झरना बहता था। गुरुजी के साथी मरदाने को बहुत प्यास लग रही थी। गुरुजी ने मरदाने से कधारी के पास जाकर पानी लेने के लिए कहा। किन्तु बलीकधारी ने पानी देने से मना कर दिया। गुरुजी चमत्कार कर चश्मे के पानी को पहाडी के नीचे अपने पास ले आये। बलीकधारी ने गुस्से मे आकर एक बडा पत्थर पहाडी से गुरुजी की ओर लुढका दिया, परतु गुरुजी ने अपने पजे से उस पत्थर को रोक लिया। गुरुजी के पजे का निशान पत्थर पर

अकित हो गया। इसी स्थान पर एक गुरुद्वारा बना है जिसे गुरुद्वारा पजा साहिब कहते है।

चश्मे का पानी सगमरमर के तालाब मे एकत्र होता है जिसके किनारे तीन मजिली इमारत बनी है। गुरुद्वारे की इमारत और सरोवर का निर्माण प्रसिद्ध सिख सेनानायक हरिसिह नलवा ने इस इलाके पर पहली बार विजय प्राप्त कर महाराणा रणजीत सिह के शासनकाल मे करवाया था।

उपरोक्त सभी गुरुद्वारे पाकिस्तान मे स्थित है। भारत से हजारो श्रद्धालु प्रति वर्ष पाकिस्तान जाकर, इन गुरुद्वारो मे हाजिरी देकर गुरुनानक के प्रति अपने श्रद्धा सुमन अर्पित करते है। □

8. शिरडी के साईबाबा

साईबाबा के जन्म और जीवन की एक अद्‌भुत गाथा है। विचित्र सयोगो से युक्त साईबाबा का जीवन मनुष्य जाति के लिए एक अमर सदेश है।

साईबाबा के पिता का नाम गगा भावडिया था। मा का नाम देवगिरि यम्मा था। साईबाबा के माता पिता मल्लाह जाति से सबधित थे और बिल्कुल अनपढ थे। उनको स्वप्न मे भी यह विश्वास नही था कि उनका पुत्र एक दिन महान सत और चमत्कारिक व्यक्ति होगा।

साईबाबा के मा बाप शिरडी के रहने वाले थे और मेहनत मजदूरी करके अपनी जिदगी गुजारते थे। साईबाबा के पिता श्री गगा भावडिया भगवद्‌भक्ति मे इतने तल्लीन हो गये कि वे घर छोडकर पास के जगल मे एक नदी के तट पर झोपडी बना कर रहने लगे। भगवान के प्रति अपने पति के भक्तिभाव को देखकर, उनकी पत्नी श्रीमती देवगिरि यम्मा अपने दो पुत्रो को अपनी सास के पास छोडकर अपने पति के साथ जगल मे झोपडी मे रहने लगी। उस समय देवगिरि यम्मा गर्भवती थी उनके गर्भ मे साईबाबा पल रहे थे।

प्रभु भक्ति मे भावडिया को इतना वैराग्य हो गया कि उसने घर बार के साथ–साथ पत्नी को सोता हुआ छोडकर अदृश्य की खोज मे कही चला गया। सुबह जब यम्मा ने उठकर देखा, तो अपने पति को झोपडी मे न पाकर

बहुत ही दुखी हुई। नदी तट पर खोजने के बाद जब वह नहीं मिला तो इसे भाग्य का खेल समझकर शिशु के जन्म का इतजार करने लगी।

धीरे–धीरे समय बीता और देवगिरि यम्मा ने साईबाबा को जन्म दिया। घने जगल मे कोई भी उसकी मदद करने वाला नही था। स्वय ही हिम्मत करके बच्चे को उठाया और पत्थर लेकर ऊपर और नीचे रखकर बच्चे की नाल काट दी और स्वय ही बच्चे को उठाकर नदी पर बच्चे को स्नान कराने चल पडी।

बच्चे को किसी तरह कमजोर हाथो से नहला कर तथा स्वय नहा धोकर एक चट्टान पर धूप सेकने बैठ गई। कुछ ही देर मे बच्चा भूख से बिलख बिलख कर रोने लगा। मजबूर मा ने उसे चुप कराने के लिए अपनी छाती से लगा लिया। परतु कमजोरी के कारण उसे चक्कर आ गया और बच्चा उसके हाथ से छूटकर चट्टान के उस पार गिरा, जहां रास्ते की बैलगाडियां गुजरती थी। मा भी चट्टान मे गिर कर बेहोश हो चुकी थी। बच्चा मा से बिछुड गया था और मां बच्चे से बिछुड गई थी।

दैववशात एक बैलगाडी उधर से जा रही थी। रास्ते मे नवजात शिशु को देखकर बैलगाडी वाले ने बैलो की रस्सी खीचकर बैलो को रोक लिया और गाडी से उतर कर बच्चे को गोद मे उठाकर अपनी धर्म पत्नी की गोद मे डाल दिया। बच्चे को देखकर उसके मन मे ममता जाग उठी। उनका विवाह हुए काफी समय हो गया था, परंतु उनको अभी तक सन्तान का सुख नही मिला था। उन्होने बच्चे को भगवान का प्रसाद मानकर स्वीकार कर लिया।

साईंबाबा के नये पिता ने उनका नाम बाबू रखा। कुछ समय बाद उनके धर्म पिता का देहात हो गया। अब बाबू को ही अपना सहारा मानकर उनकी धर्ममाता उनका पालन पोषण करने लगी। वह दिन भर मेहनत करती तब कही मा बेटे का पेट भरता था। उसके पति द्वारा छोडे गये खेत ही एकमात्र उसकी पूंजी थे।

साईबाबा (बाबू) कुछ बडे हुए और बाल क्रीडाये करने लगे। वह बच्चो के साथ गोलिया खेलते और उनकी सब गोलिया जीत कर भगा देते। उनके साथ खेलने वालो मे एक सेठ का बेटा भी था। एक दिन बाबू ने उसकी सारी गोलियां जीत ली। जब सेठ के लड़के ने धमका कर अपनी गोलियां वापस मागी, तो बाबू ने यह कहकर गोलियां देने से इनकार कर दिया कि जीती हुई चीज पर उसी का हक है और गोलिया नही लौटायेगा।

अगले दिन सेठ का बेटा अपने घर मे पूजा स्थल पर रखा हुआ शालिग्राम उठा लाया, उसे भी वह हार गया। सेठ की पत्नी ने पूजा स्थल पर देखा तो शालिग्राम वहा नही था। वह अपने बेटे को लेकर बाबू के पास आई और शालिग्राम वापस मागा तो बाबू ने यही कहा कि जीती हुई चीज वापस नही होती। वह शालिग्राम लेकर भाग खडा हुआ।

इसके बाद बाबू की मा (धर्ममाता) और सेठ की पत्नी ने बाबू को पकड लिया। तलाशी लिए जाने के भय से बाबू ने शालिग्राम मुख मे रख लिया था। सेठ की पत्नी ने बाबू की धर्ममाता की उपस्थिति मे बाबू का मुह खुलवाने का प्रयत्न किया, पर वह असफल रही। तभी सेठ की पत्नी ने बाबू के मुंह पर थप्पड जड दिया। इस पर जब बाबू ने मुह खोला तो उनको बाबू के मुह मे सारी सृष्टि दिखाई पडी, ऐसा कहा जाता है।

शाम होते–होते यह बात पूरे गाव मे फैल गई। परिणामस्वरूप ग्राम के बच्चो की सभी माताओ ने अपने बच्चो को बाबू के साथ खेलने से मना कर दिया। अब बाबू नितान्त अकेला रहने लगा।

कुछ दिन बाद बाबू की मा बैकुश सन्यासी के आश्रम मे उसे छोड आई। यहीं से बाबू के जीवन मे नया मोड आ गया और वह शिक्षा ग्रहण करने लगा। हिन्दू मुस्लिम धर्म की बराबर की शिक्षा ने उसे काफी सहनशील बना दिया। हिन्दुओ और मुसलमानो के प्रति समदृष्टि के कारण बाबू को बहुत कष्ट उठाने पडे और एक दिन उसकी हत्या का असफल प्रयत्न किया गया।

कुछ दिन बाद बैकुश जी स्वर्ग सिधार गये और बाबू आश्रम को अतिम प्रणाम कर जहा पर उसकी हत्या का प्रयत्न किया था, उस जगह की मिट्टी और एक पत्थर लेकर जीवन की अगली यात्रा के लिए निकल पडा। इस बीच सब धर्मो के प्रति समदृष्टि के कारण बाबू की चर्चा होने लगी थी और कुछ हद तक वह मशहूर हो चुका था।

आश्रम को छोडकर बाबू, जो बाद मे साईबाबा के नाम से प्रसिद्ध हुए, सन् 1758 मे 16 साल की अवस्था मे शिरडी आ गये। एक टूटे मन्दिर के पास आसन लगाकर बैठ गये। इसके बाद साईबाबा की चमत्कारो से भरी सार्वजनिक आध्यात्मिक यात्रा आरभ हो गई।

शिरडी के साईबाबा, जो अभी बालक ही थे, का प्रभाव जनमानस पर बहुत अधिक पड रहा था। जो कोई उन्हे एक बार देख लेता उनका भक्त बन जाता था। कोई तो साधु बालक को ईश्वरीय शक्ति से सपन्न मानता था तो कोई उसे पागल भी करार देता था।

दोपहर को बालक साधु नीम के पेड के नीचे से उठा और मन्दिर के पास जाकर एक मकान के पास खडा हो गया और आवाज दी, माई क्या रोटी मिलेगी, तभी अदर से आवाज आई। उसकी थाली मे रोटिया और सब्जी रखी थी। सब्जी रोटी पर रखकर बालक वहा से चल दिया। बालक जब नीम के पेड के नीचे आया तो पास ही मडरा रहे पाच छह कुत्तो के झुड की भूखी नजर रोटियो पर पड गई। बालक ने कुत्तो को पास बुला लिया। एक टुकडा रोटी का खुद खाता, एक कुत्तो को डालता। इस तरह एक एक टुकडा सभी कुत्तो को खिलाता।

खाने के बाद उसने पानी पिया और कुत्तो को भी पिलाया। कुत्तो को आदेश दिया अब सो जाओ। सभी कुत्ते उसका आदेश मानकर सो गये।

सुबह होते–होते यह बात पूरे गाव मे फैल गई कि वह बालक अद्‌भुत है। उसमे अलौकिक शक्ति है। इसान तो क्या जानवर भी उसका कहना मानते है।

लेकिन साईबाबा की हिन्दुओ और मुसलमानो के प्रति समदृष्टि दोनो सम्प्रदाय के लोगो से बर्दाश्त नही हुई और सबने साईबाबा को गाव से निकाल दिया।

साईबाबा के एक परम भक्त गोविन्दराव रघुनाथ दमोलकर, साईबाबा को अपने गाव लिवा ले गये। वहा पर जाकर साईबाबा ने द्वारिकामाई मस्जिद मे डेरा डाला। द्वारिकामाई मस्जिद को एक हिन्दू परिवार ने बनवाया था, क्योकि गाव के मुसलमानो के पास इतना धन नही था कि वे मस्जिद बनवा सकते। बाद मे मुसलमानो ने एक अन्य मस्जिद बना ली थी और द्वारिकामाई मस्जिद खडहर मे परिवर्तित होकर वीरान पडी थी।

दमोलकर ने मस्जिद की सफाई करवा दी। मस्जिद की मरम्मत करा दी गई। साईबाबा ने मस्जिद के कोने मे अपना आसन लगा दिया और सिर के नीचे वह पत्थर रखकर लेट गये जिसे उनके शिक्षण काल मे एक विद्यार्थी ने मारा था। मस्जिद के एक कोने पर विशाल काले पत्थर का शिवलिग स्थापित कर दिया गया। उस पर प्रतिदिन कच्चा दूध, फल, फूल चढाये जाने लगे। जो भी श्रद्धालु आता, वह साईबाबा के शिवलिग के प्रति अपना सम्मान प्रकट करके ही आगे जाता था। धीरे–धीरे साईबाबा की ख्याति चारो ओर फैल गई। दूर–दूर से लोग उनके दर्शनो के लिए आने लगे।

साईबाबा की वेशभूषा बहुत ही साधारण थी। वह तीन कपडे ही धारण करते थे। सिर पर छोटा सा कपडा, कमर मे धोती और अगरखा। बाबा के

लिए वस्त्रो के रग का कोई महत्व नही था, पर प्राय वे भगवे रग के वस्त्र ही धारण करते थे। कभी–कभी सफेद वस्त्रो मे भी नजर आ जाते थे।

एकात मे वह अधिकाधिक समय योग साधना मे ही व्यतीत करते थे। बाबा के पास जो भी दान आता था, वह सध्या काल तक सभी भक्तो को बाट देते थे। बाबा ने अपने असीम भक्त पाटिल (श्री पाटिल मुसलमान थे) द्वारा विभिन्न हिन्दू मन्दिरो का जीर्णोद्धार कराया।

वे अपने भक्तो से प्राय कहा करते थे– मन, बुद्धि तथा अहकार को बस मे करने वाला मनुष्य ही ब्रह्म ज्ञान का मार्ग प्राप्त कर सकता है। उनका मानना था कि ब्रह्मज्ञानी वही हो सकता है, जिसमे निम्नाकित गुण हो

1 पाप से घृणा, 2. ईश्वर से प्रेम, 3 मोहमाया का त्याग, 4 शुद्ध आचरण, 5 इन्द्रियो पर वश, 6 लोभ का त्याग, 7 गुरु ज्ञान, 8 मुक्ति की इच्छा, 9. गुरु सेवा, 10 प्रभु कृपा और 11 त्याग की भावना।

साईबाबा हिन्दू–मुस्लिम एकता के प्रतीक थे। बाबा हिन्दू और मुसलमान त्योहारो को बडी श्रद्धा और निष्ठा के साथ मनाते थे। साईबाबा को गोकुल अष्टमी, रामनवमी, चन्द्रोत्सव व ईद, सबसे अधिक प्रिय त्यौहार थे। ईद के दिन बाबा मस्जिद मे सबको नमाज पढवाते थे और रामनवमी के दिन वेद पाठ करते थे।

साईबाबा के प्रयाण का समय आ गया था। 28 सितबर को मामूली ज्वर आना शुरू हो गया। तीन दिन बाद बाबा ने भोजन पूरी तरह से त्याग दिया। 15 अक्तूबर को दो बजकर तीस मिनट पर उनका देहान्त हो गया। साईबाबा इसानियत की प्रतिमूर्ति थे। मर कर भी वे अमर है। □

9. मन्दिर रामेश्वरम्

लंका को भारत से पृथक करने वाले हिन्द महासागर तट के निकट स्थित रामेश्वरम् का प्रसिद्ध मन्दिर है। लका के राक्षस राजा को पराजित करने वाले वीर राम के साथ इस स्थान का पौराणिक सबध है। रामचन्द्रजी ने लका पर चढाई करने से पूर्व यहा पर शिवजी की आराधना की थी। अत इस कारण यह स्थान

पवित्र माना जाता है। यह भगवान शंकर के द्वादश ज्योतिर्लिंगो मे विशिष्ट रूप से समाहित है। इस मन्दिर के चारो ओर ऊँचा परकोटा बना है और चारो दिशाओ मे एक–एक गोपुर है। मन्दिर के बडे परिक्रमा मार्ग की लवाई एक किलोमीटर है। इस परिक्रमा मार्ग के ऊपर छत है। परिक्रमा मार्ग के दोनो ओर ओसोर बने हुए है। इनमे स्तम्भो की शिल्पकला अति उत्तम है।

रामेश्वर मन्दिर, इस धाम का प्रधान मन्दिर है। इसमे बालुका निर्मित शिवलिग विग्रह प्रतिष्ठित है। यह मन्दिर कई घेरो के भीतर है। इसका मुख्य द्वार पूर्व की ओर है। प्रायः लोग पश्चिम के गोपुर से प्रवेश करते है।

इस मन्दिर के पूर्व की ओर माधव तीर्थ सरोवर और सेतुमाधव का मन्दिर है। उत्तर की ओर रामलिगम प्रतिष्ठा का मन्दिर है। पास ही राजा सेतुपति और उनके परिवार की मूर्तिया उत्कीर्ण है तथा पूर्व की ओर पूर्व गोपुर, हनुमान मन्दिर और सागर तट पर जाने का मार्ग है।

पश्चिम मार्ग से मन्दिर मे प्रवेश किया जाता है। यहा से मन्दिर की ओर जाते समय सर्वप्रथम स्वर्ण मडित स्तम्भ और वृषभ की विशाल मूर्ति मिलती है। यहां एक द्वार है जिसके भीतर दूसरा द्वार मिलता है। इस द्वार के दोनो ओर गणेश और सुब्रमण्यम के मन्दिर है। इसी द्वार वाले परिसर मे रामेश्वरम्, काशी विश्वनाथ आदि कई देव मन्दिर है।

रामेश्वरम् मन्दिर से सटा हुआ उत्तर की ओर काशी विश्वनाथ मन्दिर है। कहा जाता है कि जो मनुष्य पहले काशी विश्वनाथ का दर्शन नही करेगा, उसे रामेश्वर दर्शन का कोई पुण्य फल नही प्राप्त होगा। इसे हनुमदीश्वर मन्दिर भी कहते है।

रामेश्वर मन्दिर के दक्षिण की ओर पार्वतीजी का मन्दिर है जिसमे पार्वती जी की बडी भव्य मूर्ति प्रतिष्ठित है। इस मन्दिर के पीछे भी कई मन्दिर है।

इस धाम मे चौबीस तीर्थ है, जिसमे स्नान करने का विधान है। इनमे से एक अग्नितीर्थ अर्थात् सागर, दो सरोवर, दो वावली और उन्नीस कूप है। सबसे श्रेष्ठ कूप है, जिसका जल अति पवित्र माना जाता है।

इसके अतिरिक्त इस धाम मे कई अन्य दर्शनीय स्थान और मन्दिर है, जिनमे गन्धमादन अर्थात् राम झरोखा, साक्षी विनायक, जरातीर्थ, रामकुण्ड, लक्ष्मणकुण्ड, सीताकुण्ड, एकान्त राम मन्दिर, नवनायकी अम्मन, कोदड रामस्वामी, विल्लू मणि तीर्थ एव भैरव तीर्थ प्रसिद्ध है। ये समस्त तीर्थ लगभग एक किलोमीटर की परिधि मे मिलते है।

अनेक यात्री रामेश्वरम् से जल ले जाकर सुदूर हिमालय मे स्थित श्री

बदरीनाथ मन्दिर मे इस जल द्वारा श्री बदरी विशाल की मूर्ति का अभिषेक कर सतोष का अनुभव करते है। इन दोनो पवित्र स्थानो का फासला लगभग दो हजार मील है। मदुरै से रामेश्वर तक सीधे रेलगाडिया जाती है। यही मार्ग सुलभ है। ❑

10. गांधी स्मृति

नई दिल्ली

बिरला हाउस, जिसे अब गाधी स्मृति के नाम से जाना जाता है, प्रसिद्ध उद्योगपति बिरला परिवार का निवास स्थान था। इसका निर्माण उनके द्वारा सन् 1929–30 मे हुआ था। यह एक अत्यत ही भव्य भवन है और अत्यत आधुनिक सुविधाओ से युक्त है। बिरला परिवार एक बडा सयुक्त परिवार था और इसी कारण लगभग 5 एकड भूखण्ड मे इस भवन का निर्माण किया गया जिसमे अनेक बडे बडे कमरो के अतिरिक्त एक बडी वाटिका व विशाल सरोवर भी है। लाखो रुपये प्रतिवर्ष बिरला परिवार द्वारा इस भवन के समुचित रखरखाव पर खर्च होता था। महात्मा गाधी निधन के उपरात अब यह भवन भारत सरकार ने अपने अधिकार मे ले लिया है और इसको गाधीजी की स्मृति मे परिवर्तित कर इसका नाम अब 'गाधी स्मृति' रखा गया है। अब इस भवन की देखरेख तथा यहा की गतिविधियो के सुचारु रूप से सचालन हेतु 'गाधी स्मृति समिति' नाम की सस्था का गठन किया गया है जिसके पदेन अध्यक्ष प्रधानमत्री होते है तथा उनकी सहायता के लिए समिति के अन्य सदस्यो को भारत सरकार द्वारा ही मनोनीत किया जाता है।

बिरला परिवार विशेष रूप से सेठ घनश्यामदास बिरला, महात्मा गाधी के बहुत निकटस्थ व्यक्तियो मे थे। उन्होने गाधीजी की रचनात्मक गतिविधियो को चलाने के लिए समय समय पर लाखो करोडो रुपये से उनकी सहायता की थी। जब कभी जितनी भी धन की आवश्यकता गाधीजी को होती थी, बिरला परिवार उसकी नि सकोच व्यवस्था करता था। यही कारण था कि जब कभी गाधीजी दिल्ली आते तो यदा कदा इस भवन मे ही उनके निवास की व्यवस्था की जाती थी। गाधीजी 15 मार्च, 1939 को जब राजकोट से

दिल्ली आये थे तब वे पहली बार इसी भवन मे ठहरे थे। कारण तत्कालीन वायसराय लार्ड लिनलिथगो से उन्हे भेट करनी थी। छ. दिन के निवास के बाद वे यहा से इलाहाबाद चले गये थे, इसके उपरात उन्होने 14 बार पुन इस भवन मे निवास किया और उनका अतिम निवास 9 सितबर, 1947 से प्रारभ होकर और उनके निधन अर्थात् 30 जनवरी, 1948 तक रहा। अपने समस्त सार्वजनिक जीवन मे महात्मा गाधी का यह सबसे लम्बा निवास दिल्ली मे था। आखिरी बार वे दिल्ली मे कलकत्ता से आये थे और उनका यहा एक दो दिन ठहरकर पाकिस्तान जाने का कार्यक्रम था। किन्तु नियति को यह स्वीकार नही था और उन्हे यहा चार महीने इक्कीस दिन रहना पडा और उनके निधन के उपरात इस भवन से उनकी शव यात्रा निकली। गाधीजी का इतने लम्बे समय दिल्ली मे ठहरने का अपना एक इतिहास है जो सक्षिप्त मे निम्न अनुसार है

लगभग 150 वर्षो की गुलामी के पश्चात हिन्दुस्तान 15 अगस्त, 1947 को स्वतत्र हुआ किन्तु इस स्वतत्रता की बहुत बडी कीमत यहा के निवासियो को चुकानी पडी थी। अग्रेजी हुकूमत की 'बाटो और राज करो' की नीति के कारण यह देश दो भागो मे विभाजित हुआ – भारत और पाकिस्तान। किसी ने कल्पना भी नही की थी कि इस प्राचीन देश का बटवारा होगा और बटवारे के उपरात लाखो परिवारो को भारत छोडकर पाकिस्तान जाना होगा और ऐसे ही लाखो परिवारो को विवश होकर पाकिस्तान छोडकर भारत मे आना पडेगा। इतना ही नही इस अदला बदली मे लाखो लोग मरेगे, लाखो मकान जला दिए जायेगे और अरबो खरबो रुपये की सपत्ति नष्ट हो जायेगी। मगर यह सब कुछ हुआ। शायद यह भी नियति थी या इस देश के तत्कालीन नेताओ का उतावलापन। इतिहास को इस सदर्भ मे अपना निर्णय अभी भी देना शेष है। महात्मा गाधी जी केवल एक ऐसे व्यक्ति थे जिन्होने इस देश के बटवारे का विरोध किया और यही कारण था कि जब नयी दिल्ली मे आजादी के जश्न मनाये जा रहे थे, तब गाधीजी ने दिल्ली से दूर रहना ही उचित समझा।

देश के बटवारे के फलस्वरूप भारत और पाकिस्तान दोनो देशो के अनेक भागो मे भयकर साप्रदायिक उत्तेजना के कारण लाखो लोग जिनमे महिलाए तथा बच्चे भी शामिल थे, कत्ल किए जा रहे थे। उस समय कलकत्ता महानगर की भी ऐसी ही विकट स्थिति थी। गाधीजी उस समय जब कलकत्ता पहुचे तो उन्हे वहा से नौवाखाली, जो पूर्वी पाकिस्तान का एक

भाग था, जाना था क्योकि नौवाखाली मे वहा के हिन्दू परिवारो का जबरदस्ती धर्म परिवर्तन किया जा रहा था जिसे गाधीजी वहा जाकर रोकना चाहते थे। कलकत्ता मे जब वे पहुचे तो वहा के मुस्लिम नेताओ ने उनसे विनती की कि नौवाखाली जाने से पहले उन्हे कलकत्ता मे लगी इस साप्रदायिक आग को बुझाने का प्रयास करना चाहिए। गाधीजी ने उनके आग्रह को स्वीकार किया और वे कलकत्ता मे रुक गये। अतत इस साप्रदायिक पागलपन को शात करने मे गाधीजी को उपवास भी करना पडा, जिसके फलस्वरूप कलकत्ता मे साप्रदायिक सौहार्द की भावना फैली और हिन्दू मुस्लिम गले मिले और आपसी भाईचारे की भावना का उदय हुआ।

गाधीजी ने नौवाखाली जाने के अपने कार्यक्रम को स्थगित किया और उन्होने पाकिस्तान जाने के लिए दिल्ली के लिए प्रस्थान किया और जहा वे 9 सितबर, 1947 की प्रात पहुच कर बिरला हाऊस मे ठहरे।

गाधीजी के दिल्ली पहुचने की खबर जब दिल्ली के मुस्लिम नेताओ को लगी तो वे तुरत गाधीजी से भेट करने बिरला हाऊस आये और उन्होने बताया कि दिल्ली मे भी वैसी ही मारकाट चल रही है जैसी कलकत्ता मे चल रही थी। अत उन्हे पाकिस्तान जाने से पहले दिल्ली के साप्रदायिक उन्माद को शात करने का प्रयास करना चाहिए। गाधीजी ने पुन मुस्लिम नेताओ का आग्रह स्वीकार कर बिरला हाऊस मे रह कर ही इस परिस्थिति के निराकरण का प्रयास जारी किया, किन्तु पाकिस्तान मे जारी मारकाट की प्रतिक्रियास्वरूप परिस्थिति काबू से बाहर हो रही थी और गाधीजी ने अपने प्रयासो की विफलता को देखकर पुन उपवास का निर्णय लिया। यह उपवास जनवरी 1948 के दूसरे सप्ताह मे प्रारभ हुआ और जो सात दिनो के उपरात समाप्त हुआ। इस उपवास के कारण दिल्ली के नागरिको मे शाति का वातावरण निर्माण करने मे सहायता मिली।

तीस जनवरी के दिन गाधीजी अत्यत ही व्यस्त रहे। प्रधानमत्री पडित जवाहरलालजी एव गृहमत्री सरदार पटेल के मध्य प्रशासन सबधित कुछ मतभेद चल रहे थे। जिनके कारण गाधीजी बहुत चितित थे। सायकाल प्रार्थना से पूर्व उन्होने सरदार पटेल से एक घटे से अधिक बातचीत की तथा प्रार्थना के बाद जवाहरलालजी उनसे मिलने आने वाले थे।

गाधीजी नित्यप्रति बिरला हाऊस के परिसर मे ही अपनी सायकाल की प्रार्थना मे उपस्थित रहते थे। 30 जनवरी के दिन जब गाधीजी सायकालीन प्रार्थना मे भाग लेने के लिए प्रार्थना स्थल की ओर बढ रहे थे तब एक धर्मान्ध

हिन्दू युवक ने बीच मे ही उन्हे रोक कर पिस्तौल से तीन गोलियां चलाकर उनकी हत्या कर दी। उनके मुह से केवल 'हे राम' ही निकला और वे प्रार्थना स्थल पर निर्जीव गिर गये। इस दुखद घटना से सारा विश्व स्तब्ध रह गया और सारे विश्व मे शोक की लहर दौड गई।

गाधीजी की मृत्यु का समाचार सुनकर तुरत तत्कालीन गवर्नर जनरल लार्ड माउटबेटन, प्रधानमत्री पडित जवाहरलाल नेहरू, गृहमत्री सरदार बल्लभभाई पटेल और अन्य नेतागण बिरला हाऊस पहुच गये तथा बिरला हाऊस के बाहर हजारो शोकाकुल लोगो की भीड जमा हो गई। इन नेताओ ने निर्णय लिया कि गाधीजी का दाह सस्कार अगले दिन अर्थात् 31 जनवरी को राजघाट पर किया जाये।

31 तारीख की प्रातः 11 बजे बिरला हाऊस से गाधीजी की शव यात्रा प्रारभ हुई जो सायं चार बजे राजघाट पहुची जहा अपार जनसमूह की उपस्थिति मे गाधीजी का दाह सस्कार पूरे शासकीय सम्मान के साथ किया गया।

जैसा उपरोक्त वर्णन किया गया है तत्कालीन बिरला हाऊस का अधिग्रहण भारत सरकार द्वारा सातवे दशक मे किया गया था और जिसको अब 'गाधी स्मृति' के नाम से संबधित किया जाता है। जिस स्थान पर गाधी स्मृति स्थित है, उस मार्ग का नाम भी बदल कर '30 जनवरी मार्ग' कर दिया गया है। जिस स्थल पर गांधीजी को गोली लगी थी, उस स्थान पर एक स्तम्भ का निर्माण किया गया है जिसके दर्शनार्थ हजारो लोग प्रतिदिन यहा आकर उनके प्रति अपनी श्रद्धाजलि अर्पित करते है।

❑ *बाबूलाल शर्मा*

अध्याय नौ

1. कनखल

उत्तर प्रदेश

हरिद्वार के निकट ही कनखल नामक एक छोटा–सा पौराणिक नगर है। कहा जाता है कि कनखल मे दक्ष प्रजापति का राज्य था और उनकी पुत्री का नाम उमा (पार्वती) था। पार्वती एक बार हिमाचल मे भ्रमण करते हुए शिवजी से मिली। पार्वतीजी ने शिवजी से विवाह का प्रस्ताव रखा जिसे उन्होने स्वीकार नही किया। कहा जाता है कि अपने मनोनुकूल शिवजी से विवाह करने के लिए पार्वतीजी ने घोर तपस्या प्रारम्भ की जिससे प्रसन्न होकर शिवजी विवाह करने के लिए सहमत हो गये। पार्वतीजी ने अपने पिता दक्ष प्रजापति से शिवजी के साथ विवाह करने के लिए आग्रह किया, किन्तु दक्ष प्रजापति पहले तो सहमत नही हुए किन्तु पार्वती के बार–बार आग्रह करने पर अत मे उन्हे सहमति प्रदान की। कहा जाता है कि शिवजी जब बैल पर चढकर बारात की शक्ल मे दक्ष प्रजापति के निवास पर आये तो वे नग धडग, गले मे सापो की माला पहने हुए एव एक हाथ मे डमरू तथा दूसरे मे त्रिशूल थामे हुए थे और उनके साथ असख्य भूत पिशाच बाराती थे। इस बेतुके हजूम को देखकर दक्ष प्रजापति कुछ विचलित अवश्य हुए किन्तु पार्वती का विवाह शिवजी के साथ कनखल मे सपन्न हो गया।

शिव पार्वती विवाह के उपरान्त कैलाश पर्वत पर निवास हेतु चले गये। शिव पार्वती के दो पुत्र गणेश व कार्तिकेय उत्पन्न हुए। कुछ समय पश्चात दक्ष प्रजापति ने एक बहुत विशाल यज्ञ का आयोजन किया जिसमे भारत वर्ष के सभी राजाओ को आमत्रित किया गया किन्तु शिव पार्वती को आमन्त्रित नही किया। इस यज्ञ की पार्वतीजी को सूचना मिली तो उन्होने शिवजी से यज्ञ मे भाग लेने हेतु चलने का आग्रह किया किन्तु शिवजी ने आमत्रण न मिलने के कारण इनकार कर दिया और पार्वतीजी को भी सलाह दी कि बिना बुलाये यज्ञ मे जाना अनुचित है। किन्तु पार्वतीजी अकेले ही अपने पिता

दक्ष प्रजापति द्वारा आहूत यज्ञ मे भाग लेने कनखल के लिए प्रस्थान कर गयी। यज्ञ के स्थान पर सब गणमान्य व्यक्तियो के बैठने हेतु अनुकूल आसन की व्यवस्था की गयी थी, लेकिन शिवजी के लिए किसी प्रकार की व्यवस्था न देखकर पार्वतीजी क्रुद्ध होकर यज्ञकुण्ड मे कूद कर भस्म हो गयी। जब शिवजी को पार्वती के भस्म होने की सूचना मिली तो वे अत्यत क्रोधित होकर अपने ससुर दक्ष के पास पहुचे। शिवजी के क्रोध से चारो दिशाए कम्पायमान हो उठी और कहा जाता है कि इसी स्थान पर शिवजी ने 'ताण्डव नृत्य' द्वारा सभी देवी देवताओ के आसन हिला दिए। शिवजी ने पार्वतीजी का पार्थिव शरीर अग्नि से बाहर निकाला और उस मृत शरीर को लेकर चारो दिशाओ मे घूमे और जहा जहा वे गये, वही शिव पार्वती के मन्दिरो की स्थापना की गयी है।

भारतवर्ष मे अनेक स्थानो पर शिव पार्वती के हजारो विशाल मन्दिर स्थापित है जहा श्रद्धापूर्वक उनकी पूजा अर्चना की जाती है। जिस स्थान पर दक्ष प्रजापति ने यज्ञ किया था और यज्ञकुण्ड मे सती (पार्वती) भस्म हुई थी, उस जगह पर उनकी स्मृति मे एक विशाल मन्दिर बना हुआ है तथा यज्ञकुण्ड मे सदैव अग्नि प्रज्जवलित रखी जाती है। समय–समय पर कनखल मे स्थित 'दक्ष प्रजापति मन्दिर' मे विशेष पूजा अर्चना तथा मेलो का आयोजन किया जाता है। जो व्यक्ति हरिद्वार की यात्रा करते है, वे कनखल जाकर इस मन्दिर के दर्शन भी अवश्य करते है। कनखल मे ही साधू सतो के अनेक आश्रम स्थापित है जिन्हे अखाडो की उपमा दी गई है। □

2. ओंकारेश्वर

मध्य प्रदेश

ओंकारेश्वर की गणना द्वादश ज्योतिर्लिगो मे होती है। यहा की विशेषता है कि यहा दो ज्योतिर्लिग हैं। एक ओकारेश्वर और दूसरे परमेश्वर जिनको ममलेश्वर अथवा अमलेश्वर भी कहते है। लेकिन द्वादश ज्योतिर्लिगो मे दोनो एक ही गिने जाते है।

ओकारेश्वर मन्दिर से थोडा पहले नर्मदा नदी दो धाराओ मे प्रवाहित होती है, कुछ दूर जाकर एक हो जाती है। इन दोनो धाराओ मे एक

को नर्मदा और दूसरी को कावेरी कहते है। इन धाराओ के बीच एक शैलद्वीप बन गया है। कहा जाता है कि इसी द्वीप पर महाराजा मान्धाता ने भगवान शकर की आराधना की थी। अत उन्ही के नाम से इस शैलद्वीप का नाम मान्धाता पडा, जिसका क्षेत्र लगभग डेढ वर्ग किलोमीटर का है।

यहा की बस्ती तीन भागो मे बटी हुई है, पहले भाग को ब्रह्मपुरी, दूसरे भाग को विष्णुपुरी और मान्धाता द्वीप को शिवपुरी कहते है। सरकारी कागजो मे इन तीनो पुरियो का नाम मान्धाता है। अत स्थानीय निवासी इस सम्पूर्ण क्षेत्र को मान्धाता कहते है।

मान्धाता द्वीप पर एक विशाल मन्दिर है जिसको ओकारेश्वर शिव का मन्दिर कहते है। यह मन्दिर पाच खडो का है। प्रत्येक खड मे एक–एक शिव मन्दिर है। सबसे नीचे ओकारेश्वर का शिवलिग है। इसके चारो ओर जल भरा रहता है। शिवलिग के दक्षिण की ओर आद्यशक्ति पार्वती की मूर्ति स्थापित है। परिक्रमा मार्ग मे कई अन्य छोटे–छोटे मन्दिर है। दस सीढियो के ऊपर गणेश मन्दिर है और यहा से थोडा ऊपर वृषभ की मूर्ति है।

शिव पुराण की कथा के अनुसार ओकारेश्वर ज्योतिर्लिंग को परमेश्वर ज्योतिर्लिंग के निकट होना चाहिए। परमेश्वर मन्दिर के निकट कई मदिर है परतु वहा के निवासी उनको दूसरे नामो से पुकारते है।

परमेश्वर मन्दिर (अमलेश्वर अथवा ममलेश्वर मन्दिर) ब्रह्मपुरी बस्ती के एक ओर स्थित है, इसमे परमेश्वर नाम का ज्योतिर्लिंग है। यह मन्दिर अति प्राचीन और शिल्पकला से युक्त है। पुराण कथा के अनुसार इस ज्योतिर्लिंग का दर्शन, पूजा करना अति आवश्यक है अन्यथा श्रद्धालु भक्त की ओकारेश्वर यात्रा पूर्ण नही होती और उसे यहा की यात्रा का कोई पुण्यफल प्राप्त नही होता। परमेश्वर मन्दिर की परिक्रमा मे कई मन्दिर है। इसी के निकट ब्रह्मेश्वर मन्दिर है जिसमे ब्रह्मेश्वर शिवलिग प्रतिष्ठित है।

नर्मदा के तट के मार्ग पर विष्णु मन्दिर है, जिसमे भगवान विष्णु की चतुर्भुज खडी मूर्ति है। मान्धाता शैलद्वीप के सर्वोच्च शिखर पर गौरी सोमनाथ मन्दिर है। इस मन्दिर तक पहुचने के लिए नर्मदा तट से 350 सीढिया चढनी पडती है। मन्दिर मे मनुष्य की ऊँचाई से भी ऊँचा एक शिवलिग है, जिसका व्यास चार मीटर का है। इसी शिखर पर सिद्धनाथ, ऋणमुक्तेश्वर आदि कई दूसरे मन्दिर भी है।

ओकारेश्वर मन्दिर सरकारी नियत्रण मे है। इसका चढावा मन्दिर और जनकल्याण के उपयोग मे आता है। विष्णु मन्दिर और एक अन्य मन्दिर एक

मठ के अधिकार मे है। इनके अतिरिक्त परमेश्वर ज्योतिर्लिंग का मन्दिर, ब्रह्मेश्वर मन्दिर, गौरी सोमनाथ मन्दिर आदि जितने भी यहा मन्दिर है, वे सब 'खासगी' ट्रस्ट के अधिकार मे है जो महारानी अहिल्याबाई होल्कर की सम्पत्ति की देखभाल के लिए नियुक्त है।

सप्त पुण्य नदियो मे नर्मदा अधिक पुण्यमयी मानी जाती है। इसके दर्शन और इसमे स्नान करना अति ही पुण्यप्रद माना जाता है। नर्मदा के दोनो तटो पर घाट बने हुए है। मान्धाता द्वीप के घाट पर स्नान करने का अधिक महात्म्य माना जाता है। पुण्यमयी नर्मदा के प्रत्येक शिलाखड को शिवलिंग माना जाता है।

इस नदी के दोनो तटो पर असंख्य मन्दिर है जिनके दर्शन केवल नर्मदा परिक्रमा करते समय ही हो सकते है। अतः अनेक भक्त और महिलाये इस नदी की परिक्रमा करते है। परिक्रमा करने वालो की सुविधा के लिए मार्ग मे पडने वाले प्रत्येक ग्राम के निवासियो ने क्षेत्र स्थापित किए है, जहा से परिक्रमा करने वालो को नि शुल्क खाद्य पदार्थ मिलते हैं। यह परिक्रमा नर्मदा तट से किसी प्रमुख तीर्थ से आरम्भ कर अत मे उसी तीर्थ मे पूर्ण करनी पडती है।

ओकारेश्वर से एक किलोमीटर की दूरी पर जहा कावेरी नदी नर्मदा से पृथक हुई है, चौबीस अवतारो और पशुपतिनाथ के मन्दिर है। यहा से कुछ दूरी पर कई जैन मन्दिर है, जिनके निकट रावण की लेटी हुई एक मूर्ति है।

नर्मदा कावेरी नदी के संगम तट पर रणछोड़ जी और ऋणमुक्तेश्वर शिव के प्राचीन मन्दिर हैं। इस सगम को त्रिवेणी कहते है। यहा स्नान का विशेष महत्व है। ओकारेश्वर से यह तीर्थ एक किलोमीटर दूर है। यहा से साढे छह किलोमीटर की दूरी पर च्यवन ऋषि का आश्रम है।

चौबीस अवतार से लगभग ग्यारह किलोमीटर की दूरी पर सीता वाटिका है। कहा जाता है कि यही बाल्मीकि आश्रम था, जहा सीता जी ने निवास किया था। यहा 64 योगिनियो एव 52 भैरवो की विशाल मूर्तिया है। इसी के निकट सीताकुण्ड, रामकुण्ड और लक्ष्मणकुण्ड नाम के तीन कुण्ड भी है।

मान्धाता द्वीप से लगभग पन्द्रह किलोमीटर पूर्व की ओर नर्मदा का सबसे बडा प्रपात है, जिसके नीचे कई विस्तृत और गहरे कुण्ड है, जिन्हे धावडी कुण्ड कहते हैं। इस कुण्ड से वाणलिग अर्थात् नर्मदेश्वर लिग प्राप्त होते है। कभी–कभी बहुत सुदर नर्मदेश्वर लिग मिल जाते है।

पश्चिम रेलवे खडवा, रतलाम, अजमेर रेलमार्ग पर खडवा से साठ

किलोमीटर दूर ओकारेश्वर रोड स्टेशन है। यहा से बारह किलोमीटर की दूरी पर मान्धाता है। मोटर बसो का निरतर आवागमन होता रहता है। विष्णुपुरी और मान्धाता मे यात्रियो के ठहरने के लिए कई धर्मशालाये भी है।

3. गुरुद्वारा पौंटा साहिब

जब गुरु तेगबहादुर का दिल्ली मे बलिदान हुआ, उस समय गुरु गोविन्दसिह आनन्दपुर मे रहते थे। उस समय गुरु गोविन्दसिह केवल 9 वर्ष के थे। उस समय सबसे बडी चिता थी, गुरु गोविन्दसिह की सुरक्षा की। क्योकि कभी भी मुगल शासक आनन्दपुर पर हमला करके गुरु गोविन्दसिह को बदी बना सकते थे। इस स्थिति को देखते हुए, सिखो के अग्रणी नेता गुरु गोविन्दसिह को आनन्दपुर से हटा कर पौटा ले गये।

पावटा अम्बाला शहर से 120 किलोमीटर दूर, यमुना नदी के किनारे हिमाचल प्रदेश मे स्थित है। यहा पर गुरु गोविन्दसिह की याद मे ऐतिहासिक गुरुद्वारा पौटा साहिब बना हुआ है।

यहा पर गुरु गोविन्दसिह ने हिन्दी, सस्कृत, पजाबी और फारसी मे मनोयोग से अध्ययन करके दक्षता प्राप्त की। पौंटा मे निवास करते हुए उन्होने सस्कृत के सारे वाङमय का अध्ययन किया। यहा पर ही उन्होने कविता लिखना प्रारम्भ किया और कुछ काव्य रचनाये भी की।

यहा दसवे गुरु ने अपने जीवन काल का खुशी से भरपूर समय बिताया था। वह साथ वाले जगल मे शिकार खेला करते थे। इसके लिए उन्हे काफी समय मिल जाता था। गुरुजी ने स्वय लिखा है कि मै यमुना के किनारे दिल लुभाने वाले दृश्य देखा करता था।

गुरुजी ने पौटा साहिब को सुदर बनाने के लिए कई प्रयत्न किये। गुरुजी ने यमुना के किनारे एक किला भी बनवाया। यहा उनके दरबार मे 52 कवि हाजिर रहते थे, जिन्हे प्रमुखतया कवि दरबार मे बुलाया जाता था।

यहा पर मुसलमान सूफी सत फकीर बुद्धशाह रडोरे वाले गुरुजी के दर्शनो के लिए आये और काफी समय तक विचार–विमर्श करने के बाद गुरुजी की

आध्यात्मिक शक्ति से प्रभावित होकर वह उनके शिष्य बन गये।

पौटा साहिब मे एक और गुरुद्वारा है, जिसे गुरुद्वारा तलब वेतन साहिब कहते है। यहा बैठकर गुरुजी सिपाहियो को वेतन बाटते थे।

हिमाचल प्रदेश मे पौटा साहिब के नजदीक जिला नाहन मे मगानी की प्रसिद्ध घाटी मे मगानी साहिब गुरुद्वारा है। यहा पर गुरुजी व राजपूती राजाओ के वीच घमासान युद्ध हुआ था। यह निर्णायक युद्ध गुरुजी ने जीता था। जिस जगह यह युद्ध हुआ था, वहा यादगार के तौर पर यह गुरुद्वारा बना हुआ है।

पौटा साहिब मे हजारो श्रद्धालु होले मोहल्ले के अवसर पर यात्रा के लिए आते है। इस अवसर पर गुरुद्वारा कमेटी की ओर से कवि दरबार का भी आयोजन करवाया जाता है, जिसमे प्रसिद्ध कवि भाग लेते है। यह कवि दरबार ठीक उसी जगह होता है, जहा गुरु साहिव अपने बावन कवियो के साथ दीवान सजाया करते थे। यात्रियो की सुविधा के लिए पौटा साहब की ओर से रहने और खाने का प्रबन्ध किया जाता है। ❑

4. दरगाह शेख सलीम चिश्ती

हजरत शेख सलीम चिश्ती रहमत उल्लाह अलैह अपने जमाने के एक मशहूर सूफी हुए है। इनकी मजार फतेहपुर सीकरी जिला आगरा मे है। हजरत शेख सलीम चिश्ती बाबा फरीद गजेशकर, जिनकी मजार पाकपट्टम पाकिस्तान मे है की सातवी पीढी मे थे।

सूफी हजरत का हिन्दुस्तान के इतिहास मे एक विशेष स्थान रहा है। इन हजरत का खास मिशन लोगो को अच्छे व्यवहार, भाईचारा और मोहब्बत का सबक देना था। इनके पास हिन्दू मुसलमान किसी मे कोई फर्क नही था। हर मजहब और मिल्लत के लोग बगैर किसी हिचकिचाहट इनके पास आते और अपनी परेशानिया सुनाते और आपकी दुवाओ से अपनी मुरादे पाते और खुशी–खुशी वापस जाते।

आज हजरत ही की तालीम और उद्देश्यो का यह नतीजा था कि अंग्रेजो की गुलामी से पहले हिन्दुस्तान मे एक दूसरे के मजहब के खिलाफ कभी नफरत नही देखी गयी बल्कि दोनो धर्मो के लोग प्रेम और भाईचारे से रहते थे। और हर कोई बिना किसी भेदभाव इन सूफियो के पास आता और फैज हासिल करता और आज भी उनके मजारो और दरगाहो पर जाति और धर्म के भेदभाव के बिना लोग आते है और अपनी मुरादे पूरी करके जाते है और अगर देखा जाये तो असली कौमी एकता इन सूफियो की मजारो पर ही नजर आती है। हजरत शेख सलीम चिश्ती की पैदाइश दिल्ली मे 882 हिजरी मे हुई थी। अभी आपकी उम्र 9 साल ही की थी कि माता–पिता का देहात हो गया। इसके बाद आपके बडे भाई शेख मूसा आपको लेकर सीकरी आ गये और वही उनकी परवरिश हुई।

शुरू से ही आपकी आदत थी कि आम बच्चो की तरह खेलकूद मे वक्त नही गुजारते थे बल्कि सीकरी के करीब एक पहाड था उस पर जाकर अल्लाह की इबादत किया करते थे। जब हजरत शेख सलीम चिश्ती की उम्र 14 साल की हुई तो आपके दिल मे तवाफ काबा (हज) और जियारत रोजा मुकद्दसा मदीना शरीफ का शौक पैदा हुआ। आपने अपने बडे भाई शेख मूसा से इजाजत चाही मगर उन्होने कहा कि मेरी कोई औलाद नही है और मैने तुमको अपने बेटे की तरह पाला है, मै तुम्हारी जुदाई किसी तरह बर्दाश्त नही कर सकूगा। हा अगर मेरे कोई औलाद हो जाये तो फिर मुझे तुम्हे इजाजत देने मे कोई परेशानी नहीं होगी। कुदरत खुदा की कि आपकी दुआ से अल्लाह ताला ने दो बेटे प्रदान किए। भाई से इजाजत लेकर आप हिजाज मुकद्दस के लिए रवाना हुए और आपने वहा चार साल कयाम किया और चार हज अदा किए। दुबारा आप फिर हिजाज मुकद्दस गये और बीस साल कयाम फरमाया और बीस हज अदा किए। इस तरह आपने कुल 24 हज अदा किए। 944 हिजरी मे आप वतन वापस आये और सीकरी के पहाड पर जो अब फतेहपुर के नाम से मशहूर है, कयाम किया और इबादत इलाही के लिए एक गार मे ठहर गये। शाम के समय एक व्यक्ति जो पहाड पर पत्थर तोडता था आपके पास आया और बोला कि हजरत करीब ही एक गाव है आप वहा चले चलिए। रात मे शेर वगैरह आपको नुकसान नही पहुचा सकते है। आपने उससे कहा कि तुम मेरी चिता मत करो। फकीर को कोई तकलीफ नही पहुचा सकता। और न फकीर को अल्लाह के सिवा किसी का डर है।

वगैर हुक्मे खुदा पत्ता भी नही हिलता, जिन्दगी और मौत दोनो मे उसका ही हुक्म चलता है। अत वह सगतराश वापस चला गया। सुबह जब पहाड पर वापस आया तो सोच रहा था कि न मालूम उन बुजुर्ग का क्या हाल होगा, मगर जब आपके पास आया तो देखा कि दो शेर हजरत शेख के दाए–बाए बैठे है। सगतराश को देखकर हजरत ने शेरो को इशारा किया और वह चले गये। पहाड पर काम करने वाले लोगो ने आपके लिए एक मस्जिद और हुजरा बनाया जिसको मस्जिद सगतराश कहते है और जो आज भी लाल पत्थर की शानदार मस्जिदो मे मानी जाती है। हजरत ने अपनी जिदगी मे बडे करिश्मे किए। सर्दी के मौसम मे एक बारीक कुर्ता और मलमल की चादर के सिवा कुछ और नहीं इस्तेमाल करते थे। हर रोज दो बार स्नान करते थे। चिल्ले मे रोजा रखते और सिर्फ आधा तरबूज या उससे भी कम से गुजारा कर लेते।

आपकी बहुत सी करामात मशहूर हो चुकी थी। अकबर बादशाह के कोई औलाद नहीं थी और वह बहुत परेशान रहते थे। वह आपकी शौहरत सुनकर आपकी खिदमत मे हाजिर हुआ। आपसे दर्खास्त की कि आप उसके वारिस के लिए दुआ फरमाए। आपने फरमाया अल्लाह तुमको तीन लडके अता करेगा। पहला लडका शहजादा सलीम जब पैदा होने वाला था तो अकबर बादशाह ने हजरत शेख सलीम की मस्जिद सगतराश के करीब एक भव्य महल बनवाकर अपनी बेगम को वहा भेज दिया जो आज भी रगमहल के नाम से मौजूद है। इसी महल मे जहागीर की पैदाइश हुई। अकबर बादशाह ने नवजात शहजादे को हजरत शेख़ सलीम की खिदमत मे पेश किया। आपने उसका नाम सलीम रखा और अपनी शाहबजादी का दूध उसको पिलवाया। अकबर बादशाह ने फतेहपुर सीकरी को अपनी राजधानी बनाया और वहा बहुत शानदार महल और भव्य इमारते बनाई जिनका जवाब दुनिया मे नही है।

अकबर बादशाह ने हजरत शेख सलीम चिश्ती से कहा कि हजरत फरमाये कि हजरत का फैज व करम कब तक रहेगा यानि आपकी वफात़ कब होगी। हजरत ने फरमाया यह तो अल्लाह ही को मालूम है मगर जब अकबर ने बहुत ज्यादा जिद की तो आपने फरमाया कि जब शहजादा सलीम इतना बडा हो जायेगा कि मुझे आकर कोई शेर सुनाए उस वक्त मै पर्दा कर जाऊगा। अत बादशाह ने ताकीद कर दी कि शहजादे के सामने कोई शेर

न पढा जाये। मगर एक दिन एक बुढिया ने आकर शहजादा सलीम के सामने एक शेर पढा और इस शेर को याद करके शहजादा हजरत शेख के पास गया और वह शेर उनको सुनाया। लोग बादशाह अकबर के पास गये और उसको यह खबर सुनाई। बादशाह खिदमत मे हाजिर हुआ। आपने पूछा, जो बात तुमने मुझसे पूछी थी उसके पूरा होने का वक्त आ गया है। उसी रोज आपको बुखार आया और फिर आप रमजान माह के आखिरी हफ्ते मे 779 हिजरी 1557 सन् मे अपने हकीकी मालिक से जा मिले। अब भी आपका सालाना उर्स मुबारक बडे शानदार तरीके से 21 रमजान से 28 रमजान मुबारक तक दरगाह शरीफ मे मनाया जाता है जिसमे हर जाति धर्म के लोग शिरकत करते है।

आपका मजार अकबर बादशाह ने लाल पत्थर का बनवाया था। मगर बाद मे जहागीर ने उसे सफेद सगमरमर का बनाया है जिसके बाहर चारो तरफ बहुत बारीक सफेद पत्थर की बनी हुई जालिया लगी है और मजार के ऊपर शीप की मीनाकारी की बहुत शानदार छतरी बनी है, जिसका दुनिया मे कोई जवाब नही है। कहा जाता है कि जहागीर के जमाने मे इसकी छतरी की लागत 7 लाख रुपये आयी थी। मजार शरीफ के अदर चार दरवाजे है जिनमे तीन दरवाजो मे सगमरमर की जाली लगी हुई है। इन जालियो मे प्रतिदिन हजारो आदमी आकर अपनी मन्नत के धागे बाधते है और अल्लाह ताला हजरत शेख की दुआ से उनकी मनोकामनाए पूर्ण करता है। हजरत शेख की मजार पर सबसे पुराना लकडी का दरवाजा भी है। यह लगभग 400 साल पुराना और आबनूस की लकडी का बना है। इसी दरगाह का एक दरवाजा बुलन्द दरवाजे के नाम से भी मशहूर है जो दुनिया के ऊँचे दरवाजो मे से एक है और जिसकी ऊँचाई 176 फुट है।

हजरत शेख की दरगाह की जामा मस्जिद भी बहुत शानदार बनी है जिसका शुमार दुनिया की हसीन तरीन और विशाल मस्जिदो मे होता है।

दरगाह हजरत शेख सलीम का शुमार राष्ट्रीय स्मारक के अलावा विश्वदाय स्मारको मे होता है। दरगाह शरीफ की मरम्मत आदि भारतीय पुरातत्व विभाग द्वारा की जाती है और धार्मिक स्थलो रस्मो निवाज जनाव खुरशीद सलीम चिश्ती द्वारा अदा किए जाते है जो कि हजरत शेख सलीम चिश्ती की सातवी पीढी मे है और वही दरगाह का सारा इतजाम भी करते है। □

5. अम्बाजी

गुजरात

गुजरात की पूर्वोत्तर सीमा पर अरासुर ग्राम है। इसी ग्राम मे अम्बाजी का प्रसिद्ध एव प्राचीन मन्दिर है। इधर के निवासियो मे इन देवी की वडी मान्यता है। निरतर भक्तो की भीड लगी रहती है। अव यह साधारण ग्राम न होकर आधुनिक उपकरणो से युक्त एक सुदर वस्ती हो गई है। आवू आने वाले सभी हिन्दू भक्त इन देवी का दर्शन करते है। यात्री को व्रह्मचर्यपूर्वक रहना पडता है। कहते है कि व्रह्मचर्य का नियम भग करने से अनिष्ट होता है।

मन्दिर को ही केद्र कर बसा है, पहाडी शहर अम्वाजी। अतीत के मदिर के मूल स्थान पर ही श्वेत सगमरमरी पत्थरो से नया भव्य मदिर बना है। यहा की अराध्या दुर्गा है। देवी दूसरे तल्ले पर है। वैसे देवी की यहा कोई प्रतिमा नही है। केवल गर्भ गृह के एक आले पर इस ढग से श्रृगार किया जाता है कि सिह बैठी भवानी के दर्शन होते है। चायर अर्थात नट मदिर मे एक विशाल कडाहे मे अनादि काल से एक दीप शिखा प्रज्वलित हो रही है। भक्तो के दल देवी के लिए घी भी देते है।

मन्दिर के पीछे मानसरोवर अर्थात् देवी कुण्ड है। कुण्ड के जल से स्नान के बाद देवी दर्शन की प्रथा है।

मन्दिर से पाच किलोमीटर दूर आरण्यक पहाडी डगर पर देवी का मुख्य पीठ गहवर है। मनोरम व नयनाभिराम नैसर्गिक सुषमा के मध्य चक्राकार एक पहाडी टीले पर देवी दुर्गा ने हजार वर्षो तक शिव के लिए उपासना की थी। जनश्रुति है यहा देवी के वाये पैर की अगुली गिरी थी। 52 शक्ति पीठो मे यह भी एक पीठ है। मदिर छोटा है, देवी यहा भी दुर्गा अर्थात् अम्वाजी है। सीधी खडी सीढिया है। सीढी के मार्ग मे वीच मे देवी का झूला है। कहा जाता है कि पहाडी दरार से आज भी कान लगाकर सुनने मे हर पार्वती की वातचीत सुनाई पडती है। अम्वाजी का मूल स्थान यही माना जाता है।

अरासुर से लगभग सात किलोमीटर की दूरी पर कोटेश्वर महादेव का प्राचीन मन्दिर है। मन्दिर से सटा सरस्वती कुण्ड है। पहाड से धारा नीचे कुण्ड मे गिरती है। कुण्ड मे सचित सलिल से ही सरस्वती नदी की धारा आगे जाती है।

पास मे ही बाल्मीकि का तपोवन है। जनश्रुति है कि बाल्मीकि जी ने रामायण लिखने के पूर्व आश्रम बनाकर देवी सरस्वती से कृपा याचना की थी। उसी स्मृति मे यहा राम सीता का मन्दिर भी बना है।

कोटेश्वर आते समय मार्ग मे कुम्मारिया पहाड के टीले पर जैन मन्दिरो की श्रृखलाये है। नैसर्गिक सुषमा के बीच देलवाडा के सृष्टा विमलबसाहि द्वारा निर्मित उत्कृष्ट नक्काशीवाला कुम्भियार जी जैन मन्दिर बहुत ही आकर्षक है। यहा पाच जैन मन्दिर है।

पश्चिम रेलवे के अहमदाबाद, अजमेर, बादीकुई, दिल्ली रेलमार्ग पर आबू रोड स्टेशन है। स्टेशन के बाहर बस स्टैण्ड है। यहा से बाईस किलोमीटर की दूरी पर अम्बाजी का मन्दिर है। मोटर बसो का अच्छा प्रबन्ध है। यहा पर कई अच्छी धर्मशालाये भी है। □

6. सांकास्या

उत्तर प्रदेश

सांकास्या जिसे आजकल सकिसा कहा जाता है, उत्तर प्रदेश के फर्रूखाबाद जिले मे स्थित है। प्राचीन काल मे यह स्थान वैरजा और सहजाति के बीच मे यात्रियो के लिए पडाव के लिए मशहूर था।

यह कहा जाता है कि भगवान बुद्ध ज्ञान प्राप्ति के बाद सातवे वर्ष श्रावस्ती से सकिसा गये और सातवा वर्षाकाल सकिसा मे ही व्यतीत किया था।

सकिसा मे ही भगवान बुद्ध ने अभिधर्म का उपदेश दिया था। परम्परा के अनुसार यह विश्वास है कि अपनी मा के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करने के लिए, जो तुषिता मे पुन. जन्मी थी, अभिधर्म का उपदेश दिया था, जिसे देवो ने भी सुना।

अभिधर्म के सभी विषय, सारिपुत्र को भगवान बुद्ध ने अच्छी तरह समझाये थे, बाद मे सारिपुत्र ने उन्हे विस्तार के साथ प्रस्तुत करके अभिधर्म पिटक का रूप दिया।

अभिधर्म के अनुसार सभी वस्तुए चेतन या जड, नाम और रूप के ही विस्तार है। जिसमे आत्मा के लिए कोई स्थान नही है। अनात्मा का सिद्धात ही बुद्ध धर्म का सार है। बुद्ध धर्म के विशेषज्ञो का मत है, बुद्ध धर्म को अच्छी तरह समझने के लिए अभिधर्म का ज्ञान होना बहुत जरूरी है।

चीनी यात्री फाह्यान और ह्वेनसाग सांकास्या आये थे और उन्होने साकास्या के सबध मे बहुत ही आकर्षक वर्णन किया।

सकिसा मे अशोक स्तम्भ है। विशारदेवी का मन्दिर, जो कभी बुद्ध मन्दिर था, सकिसा मे विद्यमान है। इसके चारो ओर विशारदेवी के भक्तो ने अनेको मन्दिर निर्माण कराये है। यहा पर एक बुद्ध विहार भी है।

आश्विन पूर्णिमा के दिन, विश्वभर के बौद्ध सकिसा मे भगवान बुद्ध के प्रति अपनी आस्था और सम्मान प्रकट करने के लिए एकत्रित होते है। □

7. पुष्करजी

पुष्कर, कुरुक्षेत्र, गया, गगाजी और प्रयाग ये पच तीर्थ है। मानसरोवर (हिमालय), पुष्कर, बिन्दु सरोवर (सिद्धपुर), नारायण सरोवर (कच्छ) और पम्पा सरोवर (हम्पी) ये पंच सरोवर है। पुष्कर की गणना पच तीर्थो और पच सरोवरो मे है। भारत के आठ तीर्थो में भगवान विष्णु के विग्रह स्वयं प्रकट हुए है, जिन्हे अष्ट वैकुंठ कहते है उनमे एक पुष्कर भी है। पुष्कर तीर्थो के गुरु एव प्रयाग तीर्थो के राजा है। समस्त तीर्थो का भ्रमण करने वाला यदि पुष्कर और प्रयाग की यात्रा नही करता तो उसे किसी तीर्थ का पुण्य फल प्राप्त नही होता।

यहां कार्तिकी पूर्णिमा को स्नान का मेला लगता है। शिव पुराण मे कहा गया है कि कोई मनुष्य सौ वर्षो तक लगातार अग्निहोत्र की उपासना करे अथवा कार्तिकी पूर्णिमा की एक रात्रि पुष्कर मे वास करे तो दोनों का फल समान है।

यहां तीन पुष्कर सरोवर है। ज्येष्ठ पुष्कर इस क्षेत्र का प्रधान, पवित्र और विशाल सरोवर है। इसी के तट पर यहा की बस्ती, बाजार, धर्मशालाये और

मन्दिर है। इस सरोवर से सरस्वती नाम की एक छोटी नदी का उद्‌गम है जिसे आगे जाने पर लूनी कहा जाता है। इस सरोवर के देवता ब्रह्मा है। सरोवर मे तीन ओर पक्के घाट बने हुए है। यहा से पाच किलोमीटर की दूरी पर मध्य पुष्कर है, इसके देवता विष्णु हैं। तीनो सरोवरो मे यह सबसे विशाल और गहरा है। इसी के निकट सबसे छोटा कनिष्ठ पुष्कर है, जिसके देवता रुद्र है।

पुष्कर बस्ती की पश्चिमी सीमा पर एक विस्तृत आगन मे ब्रह्मा जी का मन्दिर है। भारत मे यही एक तीर्थ है, जहा ब्रह्मा जी का विशाल मन्दिर है। सभवत अन्य किसी तीर्थ मे ब्रह्मा जी का इतना विशाल मन्दिर नही है। मन्दिर मे पहुंचने के लिए धरातल से पचास सीढिया चढनी पडती है। यहा ब्रह्मा जी की चतुर्भुज मूर्ति स्थापित है और पार्श्व मे गायत्री देवी की मूर्ति है। इसी आगन मे पातालेश्वर, महादेव, नारद जी एव अन्य देवी देवताओ के मन्दिर है।

नगर के मध्य मे श्रीरग मन्दिर है, जिसमे भगवान विष्णु की एक खडी और दूसरी शेषशायी मूर्ति है। यहा से थोडी दूर पर धरातल से 38 सीढियो के ऊपर बाराह मन्दिर है, जिसमे बाराह भगवान की मूर्ति स्थापित है।

यहा पर आत्मेश्वर अथवा अटपरेश्वर महादेव का अति प्राचीन मन्दिर है। इससे थोडी दूर पर रमा वैकुठ मन्दिर है, जिसमे भगवान श्रीकृष्ण का श्री विग्रह है। मन्दिर के घेरे मे कई अन्य देवताओ के मन्दिर है।

पुष्कर सरोवर से तीन किलोमीटर दूर एक पहाडी के शिखर पर सावित्री देवी का मन्दिर है। एक दूसरी पहाडी के शिखर पर गायत्री देवी का मन्दिर है। पुष्कर सरोवर से चार किलोमीटर की दूरी पर यज्ञ पर्वत है। इसकी तराई मे अगस्त ऋषि का आश्रम एव अगस्त्य कुण्ड है। कहा जाता है कि पुष्कर स्नान के बाद् इस कुण्ड से ही पुष्कर यात्रा पूर्ण होती है। यज्ञ पर्वत पर गोमुख है, जिससे जलधारा निरंतर प्रवाहित होकर अगस्त्य कुण्ड मे गिरती है। पुष्कर अजमेर से 11 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। ❑

8. वृहदीश्वर मन्दिर

चोल राजाओ ने भारत को दो शानदार मन्दिर प्रदान किए उनमे एक तजौर मे है। तजौर कावेरी नदी के तट पर बसा हुआ एक समृद्धशाली नगर है, जो शिव मन्दिर के लिए विख्यात है।

इस नगर मे एक दुर्ग है, जिसके भीतर यह मन्दिर है जिसे वृहदीश्वर मन्दिर कहा जाता है। दक्षिण भारत के सभी मन्दिरो मे यह सबसे विशाल और ऊँचा है। इस मन्दिर मे विमान (वुर्जवाला गर्भ गृह), अर्ध मण्डप (गर्भ गृह के सामने का कक्ष), महा मण्डप (मुख्य मन्दिर के सामने उससे सलग्न विशाल सभा भवन) और सामने नदी मडप नामक बडा मडप है। ये सब क्रमश 152 मीटर लम्बी तथा 76 मीटर चौडी दीवार से घिरे अहाते के बीच पक्तिबद्ध है। पूर्व मे मन्दिर का मुख्यद्वार गोपुरम है। घेरने वाली दीवार के साथ–साथ अदर की ओर स्तभो वाला एक गलियारा है जो कुछ अतरालो पर और प्रमुख स्थापनो पर बने अनेक छोटे–छोटे पूजा गृहो को जोडता है।

इस मन्दिर की सबसे असाधारण विशेषता इसका भव्य विमान है, जो 58 मीटर की कुल ऊँचाई तक क्रमश पतला होता चला गया है। सबसे ऊपर की पक्ति मे एक गुबज है, जिसका आकार और डिजाइन बहुत ही अच्छा लगता है। यह स्थापत्य कला का महान सौदर्य है। जिससे बढकर दक्षिण भारत का कोई दूसरा मन्दिर नही है।

इस मन्दिर मे चार मीटर ऊँचा अति विशाल नर्मदेश्वर लिग प्रतिष्ठित है। इस मन्दिर के सम्मुख वृषभ मडप है जिसमे वृषभ की एक विशाल मूर्ति है। यह वृषभ मूर्ति एक ही शिलाखड की बनी हुई है, जो पाच मीटर लम्बी, चार मीटर ऊँची और तीन मीटर मोटी है। इतनी बडी वृषभ मूर्ति शायद भारत के किसी अन्य नगर मे नही है। मन्दिर के पीछे दोनो कोणो पर गणेश और स्वामी कार्तिक के पृथक–पृथक मन्दिर है।

वृषभ मडप के उत्तर की ओर पार्वती मन्दिर है। दुर्ग के चारो ओर परकोटे मे बरामदा बना हुआ है जिसमे शिवलिग की पक्तिया बैठाई गई है। दुर्ग से लगभग आधा किलोमीटर की दूरी पर एक स्थान पर भगवान विष्णु, राजगोपाल, रामचन्द्र, नृसिह और कामाक्षी देवी का मन्दिर है।
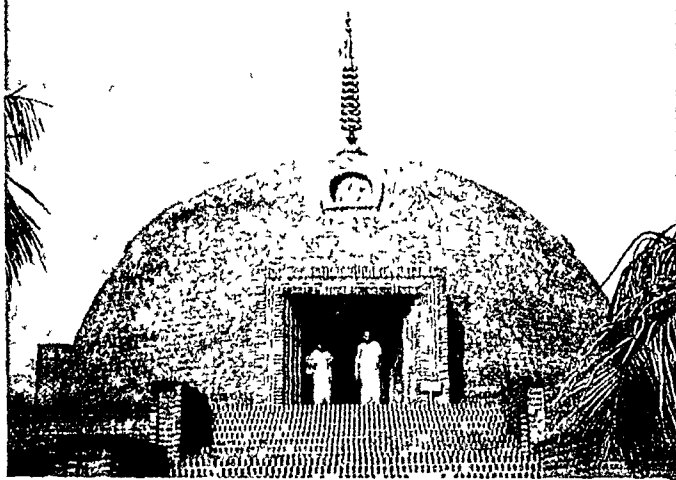
बौध केन्द्र,
कुशीनगर
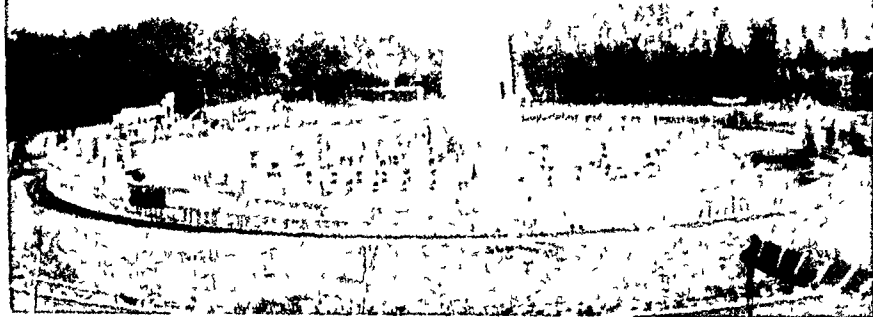
जम्बूदीप, हस्तिनापुर

संगम स्थल,
प्रयागराज,
उत्तर प्रदेश
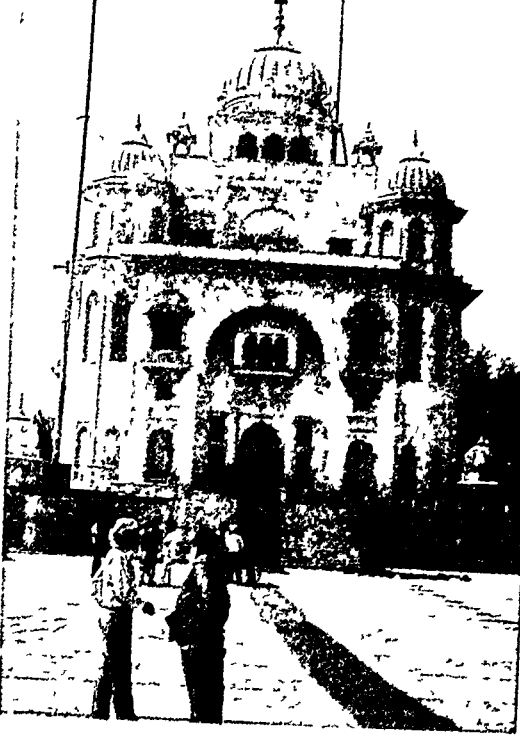
गुरुद्वारा रकावगज साहिव, नई दिल्ली
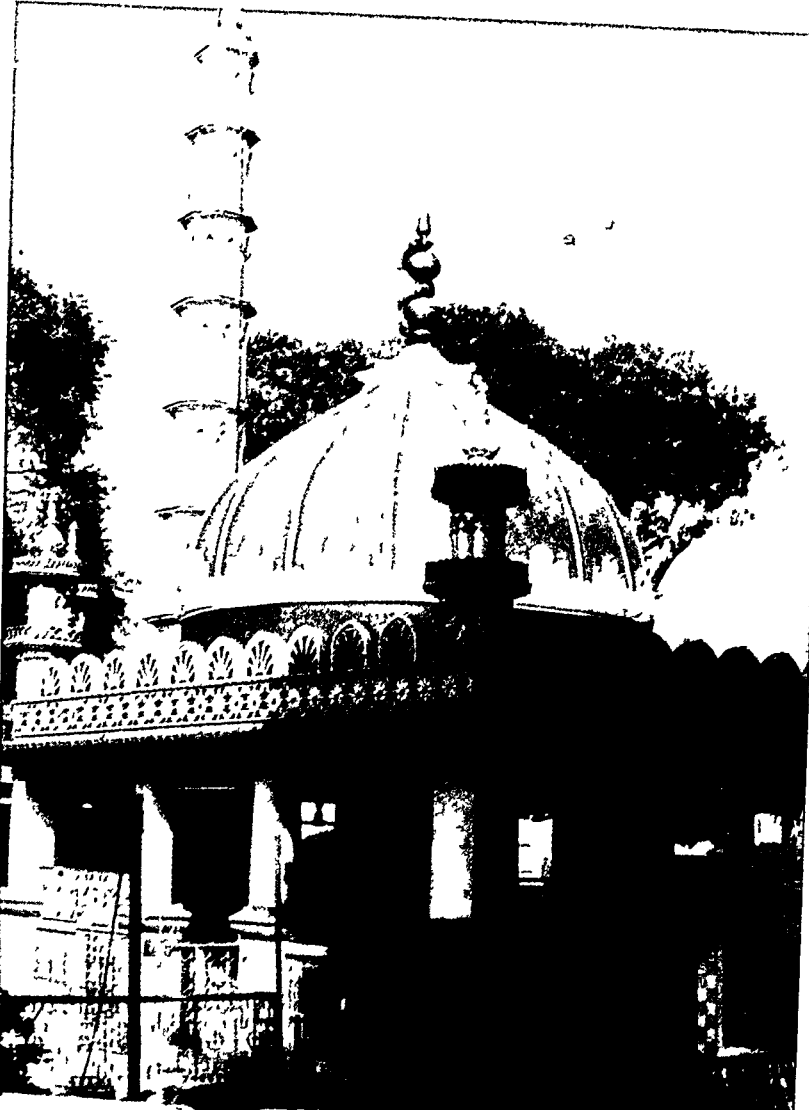
दरगाह विहार शरीफ, पटना

मन्दिर कामाख्या
देवी,
गुवाहाटी

सेन्ट मेरी चर्च,
सरधना,
उत्तर प्रदेश
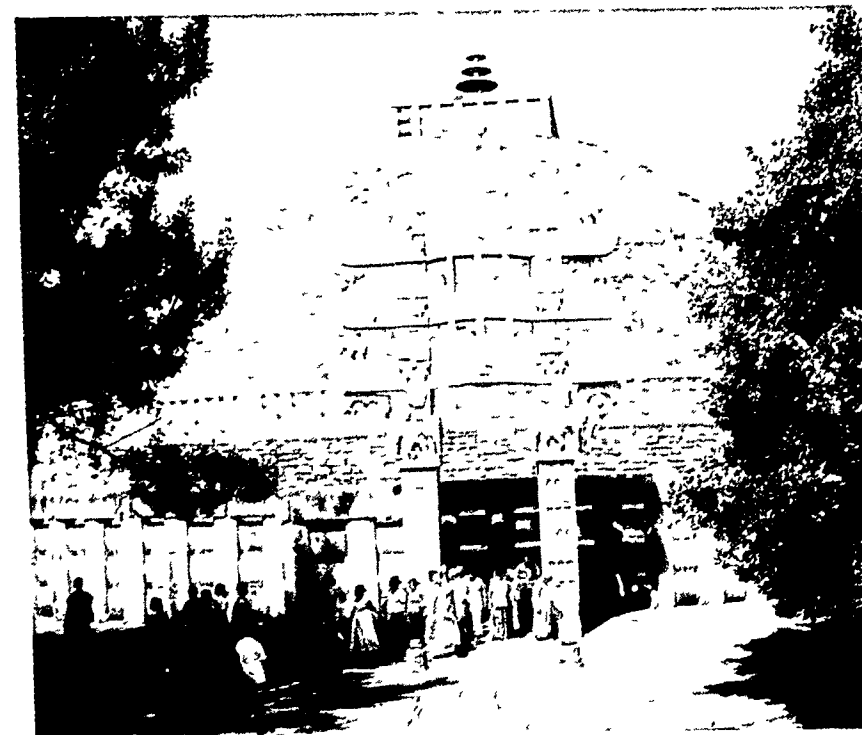
बौद्ध स्तूप,
सांची
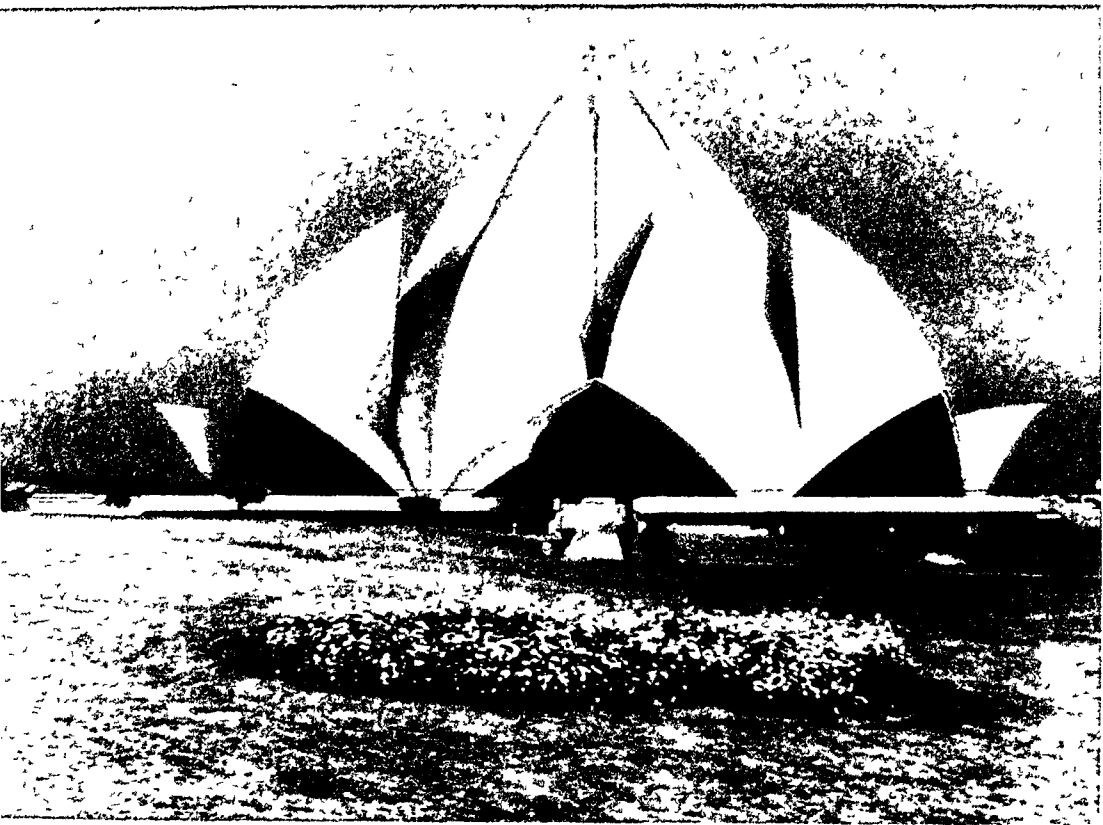
बहाई कमल मन्दिर, नई दिल्ली
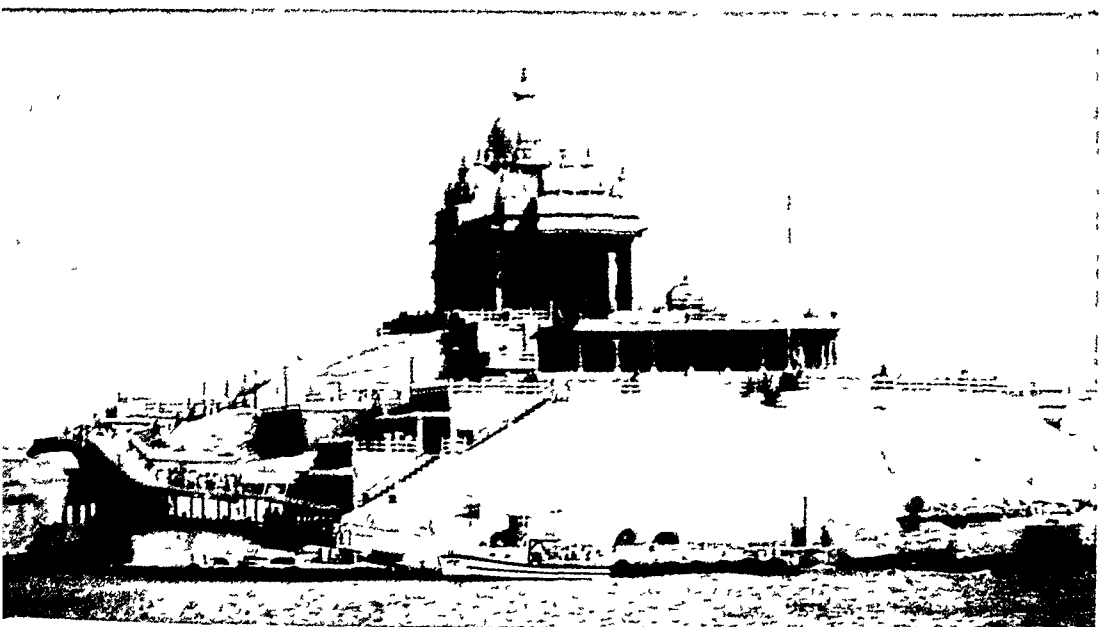
विवेकानन्द स्मृति मन्दिर, कन्याकुमारी

पचवटी, नासिक
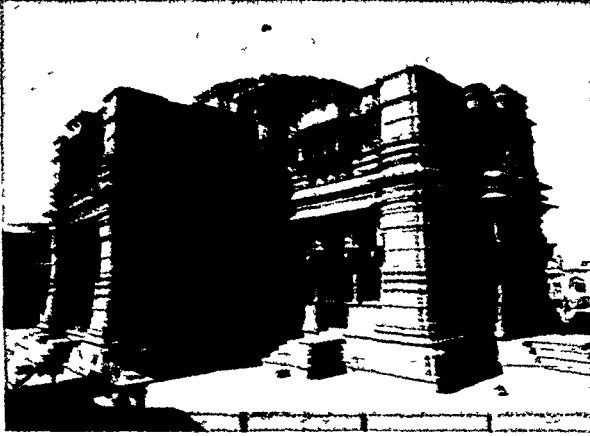
गोविददेव मन्दिर,
वृदावन, मथुरा

गुरुद्वारा आनंदपुर साहिब, पजाब
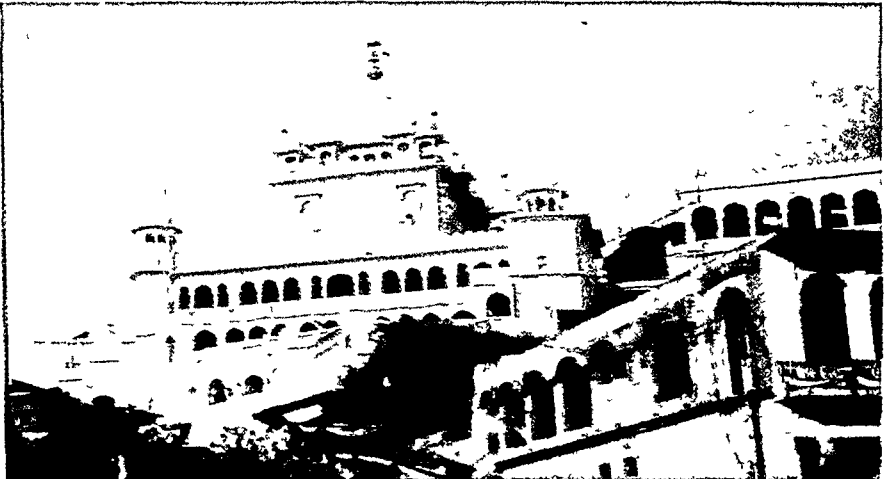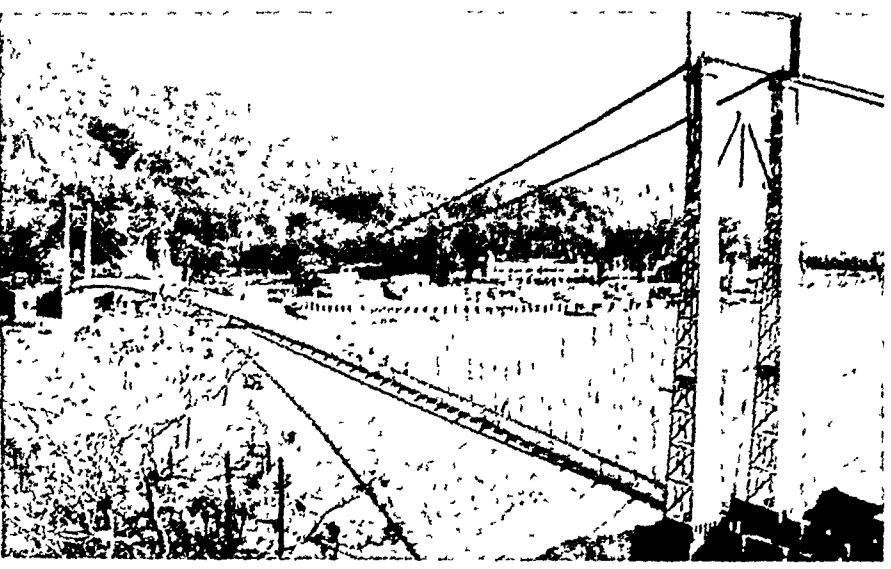
शिवानन्द झूला, स्वर्ग आश्रम, ऋषिकेश
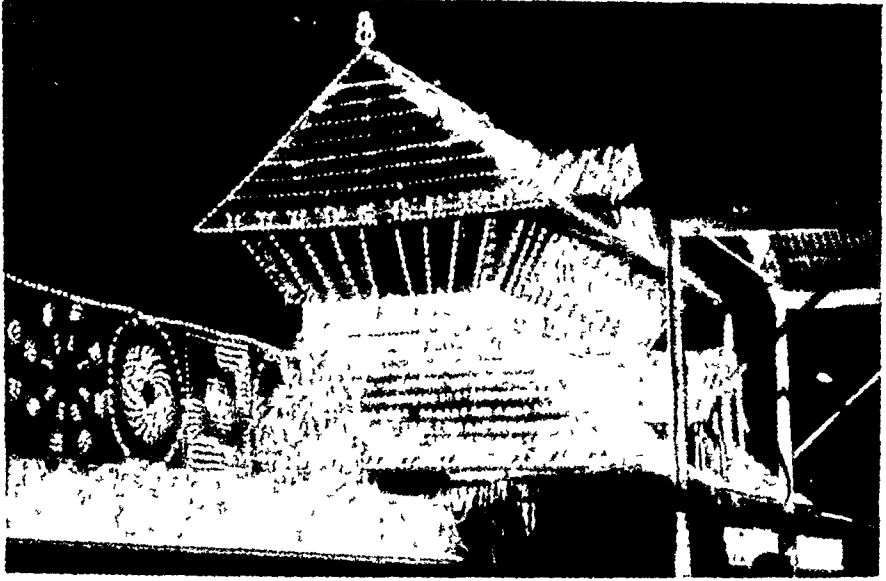
गुरुवायूर मन्दिर, केरल

रणकपुर, राजस्थान

अनुयायियो को बलपूर्वक मुसलमान वना दिया जायेगा। शिष्यो ने यह सूचना महाप्रभु को दी। उसी सध्या को अपने शिष्यो के साथ कीर्तन करते हुए महाप्रभु चाद काजी के यहा पहुचे, वहा देर तक काजी को उपदेश दिया। अतत हृदय मे वैष्णव धर्म के प्रति अनुराग जागा और वह महाप्रभु का शिष्य बनकर उनकी कीर्तन मडली मे सम्मिलित हो गया। उसी काजी की यह समाधि है।

नवद्वीप का एक और आकर्षण यहां का रास उत्सव है। नवद्वीप मे कार्तिक आगमन मे रास होता है। रासोत्सव काल मे नवद्वीप मे पूजन विधि मे विविधता दिखाई पडती है। इस अवधि मे शक्ति मतानुसार पूजा अर्चना भी उल्लेखनीय है। विभिन्न रूपो मे विराटाकार शाक्तादेवी दुर्गा, काली आदि सहित अन्यान्य देव–देविया पूजित होती है।

पूर्व रेलवे के हावडा धूलियन गगा बरहटवा (वी. ए. के. लूप लाइन) के रेलमार्ग पर हावडा से 110 किलोमीटर की दूरी पर नवद्वीप धाम रेलवे स्टेशन है। वहा से नगर डेढ किलोमीटर है। साइकिल रिक्शे पर्याप्त मिलते है। नगर मे धर्मशालाये भी है। □

2. भगवान महावीर जन्म स्थली : वैशाली

बिहार

जैन वाडमय मे भगवान महावीर का जन्म विदेह मे स्थित कुडग्राम बताया जाता है। कुछ समय तक नालदा का प्राचीन भाग, कुडलपुर को भगवान महावीर की जन्म स्थली माना जाता था। श्वेताम्बर मान्यता के अनुसार भगवान महावीर का जन्म स्थल लिच्छुआड और क्षत्रिय कुड को माना जाता था। इतिहासज्ञो के मत से कुडग्राम वैशाली नगर का उपनगर था। अब भगवान महावीर के जन्म स्थान का गौरव वैशाली को दिया जाता है।

आज वैशाली के स्थान पर वसाड नामक गाव है। यह स्थान मुजफ्फरपुर से 35 किलोमीटर पक्की सडक पर है।

किसी समय वैशाली अत्यत समृद्ध नगरी थी। बौद्ध ग्रथ 'विनय पिटक' के अनुसार इस नगरी मे 7777 प्रसाद, इतने ही कूटागार, इतने ही आश्रम और इतनी ही पुष्करणिया थी। तिब्बत से प्राप्त कुछ ग्रथो के अनुसार यहा सोने के कलश वाले 7000, चादी के कलश वाले 14000 और ताबे के कलश वाले 21,000 महल थे।

वैशाली मे भगवान महावीर के प्रति अगाध धार्मिक श्रद्धा थी। वहा पर महात्मा बुद्ध कई बार गये थे। उनके प्रति भी वहा पूर्ण सम्मान प्रकट किया गया। महात्मा बुद्ध ने अनेक स्थलो पर वैशाली का प्रशसात्मक वर्णन किया है।

सन् 1951 मे जैनियो ने वैशाली कुडपुर तीर्थ प्रबधक समिति की स्थापना की। यह समिति दिगम्बर जैन समाज की ओर से तीर्थ सबधी व्यवस्था करती है। इस समिति ने जैन विहार नाम से धर्मशाला बनवाई है।

जैन विहार से लगभग 5 किलोमीटर की दूरी पर भगवान महावीर की जन्म स्थली है। यह पवित्र स्थान है और सदा से पूज्य रहा है। यहा लगभग 2 बीघे का एक क्षेत्र है। इस पर कभी हल नही चलाया गया। इसके पास के खेतो मे खेती होती है। यहा के निवासी श्रद्धापूर्वक इस स्थान की सुरक्षा किए हुए है। कुछ दिन पूर्व उन्होने भगवान महावीर का स्मारक बनाने के लिए यह भूमि बिहार सरकार को दान कर दी है। स्थानीय तीर्थ क्षेत्र कमेटी ने इस जगह की हदबन्दी कर दी है। एक चौकोर कुंड बनाया गया है और उसमे पक्का कमलपुष्प बनवाकर शिलापट्ट लगाया गया है। इस शिलापट्ट का अनावरण सन् 1956 मे (भगवान महावीर के जन्म से 2555 वर्ष बाद) तत्कालीन राष्ट्रपति स्वर्गीय राजेन्द्र प्रसाद ने किया था।

उदारचेता मनस्वी विद्वानो ने वैशाली के पुनरुद्वार की ओर ध्यान दिया। 31 मार्च, 1945 को वैशाली सघ नामक सगठन की स्थापना हुई। वैशाली सघ के प्रयत्न से 21 अप्रैल, 1948 को महावीर जयंती मनाई गई। तब जैन समाज का भी ध्यान इस ओर आकर्षित हुआ।

सन् 1955 मे वैशाली रिसर्च इस्टीट्यूट ऑफ प्राकृत, जैनोलाजी एन्ड अहिसा की स्थापना हुई। इस सस्थान की स्थापना मे स्वर्गीय साहू शान्ति प्रसाद जैन का भारी योगदान रहा।

यहा पर अशोक स्तभ है तथा राजकीय सग्रहालय है। सग्रहालय के पास का सरोवर प्राचीन काल मे मगल पुष्करिणी अथवा अभिषेक पुष्करिणी कहलाता था। यहा पर वामन पोखर है, जहा जैन मदिर है।

इससे पहले नालदा से बडगाव नामक गाव जो तीन किलोमीटर दूर है, वहा एक जैन मदिर है। यही स्थान भगवान महावीर की जन्म भूमि कुडलपुर माना जाता रहा है। किन्तु अब यह श्रेय, वैशाली के कुडग्राम को प्राप्त हो गया है। बिहार शरीफ से नालदा तीन किलोमीटर है। □

3. गोमुख

उत्तराखण्ड

गंगोत्री से गोमुख की दूरी 19 किलोमीटर है। भगीरथी पहाड की तलहटी मे 4255 मीटर की ऊचाई पर स्थित है। यहा दो पर्वतो के मध्य मे गगा की धारा बडे वेग से गिरती है। इस प्रपात तक लोग जा सकते है। इसके ऊपर जाना असभव है। इसलिए लोग इसी को गगा का उद्गम मानकर स्नान, दर्शन और पूजन करते है।

गगोत्री से गोमुख तक पैदल ही जाना पडता है। रास्ता बहुत ही ऊबड खाबड है। रास्ते की प्राकृतिक शोभा अति ही रमणीय है। चारो ओर बर्फ को देखकर ऐसा आभास होता है मानो सारी धरती ही बर्फमय हो गई है। ऐसे मे पीछे पलट कर देखने का मौका ही नही मिलता क्योकि रुकते ही पाव भारी हो जाते है और फिर आगे की यात्रा मुश्किल हो जाती है। यात्रा मे पीने के पानी का अभाव रहता है। अत· गगोत्री से ही कुछ पेयजल, खाद्य सामग्री व रात्रि मे ओढने के लिए कम्बल आदि साथ ले जाना चाहिए।

दस किलोमीटर जाते ही बडे–बडे बिखरे हुए शिलाखड मिलेगे। गोमुख से तीन किलोमीटर पहले भोजवासा चट्टी है। यही रात्रि व्यतीत की जाती है। यहा अगले दिन अरणोदय के समय ही गोमुख जाकर, स्नान, दर्शन के पश्चात शीघ्र लौट आना चाहिए अन्यथा धूप के चढने से हिम की बडी–बडी चट्टाने पिघल कर गिरने लगती है। भोजवासा से गोमुख डेढ घटे का रास्ता है। गगोत्री से गोमुख तक पूरा मार्ग सफेद निशानो से चिन्हित है, फिर भी भटक जाने की सभावना रहती है।

गोमुख मे ही हिमधारा (ग्लेशियर) के नीचे से गगाजी की धारा प्रकट होती है। इस स्थान की शोभा अतुलनीय है। यहा भगवती भगीरथी के दर्शन

करके लगता है कि जीवन धन्य हो गया। गगाजी के इस उद्गम मे स्नान कर पाना मनुष्य का अहोभाग्य है।

गोमुख मे इतना शीत है कि जल मे हाथ डालते ही हाथ शून्य हो जाता है। अग्नि जलाकर ही यहा यात्री स्नान करते है। लोटे से जल लेकर स्नान करना चाहिये।

स्थानीय निवासियो एव गोमुख के निकट निवास करने वाले सन्यासियो का कहना है कि गोमुख बराबर पीछे हटता जा रहा है। बीस–पच्चीस वर्षो मे लगभग एक किलो मीटर पीछे हट गया है। सौ वर्ष पूर्व गोमुख इतना निकट था कि प्रात जाकर सध्या तक गगोत्री लौट जाया जा सकता था। लोगो का कहना है कि गगावतरण के समय गोमुख का प्रपात गगोत्री के निकट रहा होगा, जैसा यमुनोत्री मे यमुना का प्रपात है। □

4. लिंगराज मन्दिर

यह महानगर उडीसा प्रदेश की राजधानी मे स्थित है। काशी के समान यह नगर भी शिव मन्दिरो का नगर है। कहा जाता है कि यहा कई सहस्त्र मन्दिर थे। अब भी मन्दिरो की सख्या कई सौ है। इस महानगर के दो भाग है। एक प्राचीन, जिसमे मन्दिर और धर्मशालाये आदि है, दूसरा नवीन, जिसमे सरकारी भवन, कार्यालय आदि है।

पुरी के समान यहा भी महाप्रसाद की माहात्म्य माना जाता है। किन्तु मन्दिर के कोर के भीतर ही महाप्रसाद मे स्पर्शादि दोष नही मानते। मन्दिर की परिधि के बाहर प्रसाद को स्पर्श दोष से बचाने का ध्यान रखा जाता है।

उत्कल के इस नगर को यहा के निवासी वाराणसी और गुप्त काशी भी कहते है। किन्तु पुराणो मे इसे एकाग्र क्षेत्र कहा गया है। भगवान शकर ने इस क्षेत्र को प्रकट किया, इससे यह शाभव क्षेत्र भी कहलाता है।

लिंगराज मन्दिर— इस क्षेत्र का यही प्रधान मन्दिर है जो 158 मीटर लम्बा और 142 मीटर चौडा है। मन्दिर एक विशाल भूखण्ड मे बना है। इसके चारो ओर ऊँचा परकोटा है। परकोटे के चारो ओर चार द्वार है।

मुख्य द्वार को सिह द्वार कहा जाता है। श्री लिगराज का ही नाम भुवनेश्वर है।

सिह द्वार से प्रवेश करने पर गणेश जी का मन्दिर मिलता है। आगे नन्दि स्तभ है। उसके आगे भोग मडप है। इसी मडप मे हरि हर मत्र से लिगराज जी को भोग लगाया जाता है।

भोग मडप के आगे नाट्य मन्दिर (जग मोहन) है। आगे मुखशाला है, जिसमे दक्षिण की ओर द्वार है। यहा से आगे विमान (श्री मन्दिर) है। यही लिगराज का निज मन्दिर है। इसकी निर्माण कला उत्कृष्ट है। इसके बाहरी भाग मे मनोरम शिल्प सौन्दर्य है। भीतर का अश भी मनोहर है।

श्री लिगराज जी के मन्दिर मे चपटा अगठित विग्रह है। यह वस्तुतः बुद बुद लिग है। शिला मे बुद् बुदाकार उठे हुए अकुर भागो को बुद् बुद लिग कहा जाता है। यह चक्राकार होने से हरिहरात्मक लिग माना जाता है और हरिहरात्मक मानकर हरिहर मत्र से इसकी पूजा होती है। कुछ लोग त्रिभुजाकार होने से इन्हे हर गौयत्मिक तथा दीर्घ होने से काल रुद्रात्मक भी मानते है। यात्री भीतर जाकर स्वय इनकी पूजा कर सकते है। हरिहरात्मक लिग होने से यहा त्रिशूल मुख्यायुध नही माना जाता, पिनाक (धनुष) ही मुख्यायुध माना जाता है।

इस मन्दिर मे तीन भागो मे तीन मन्दिर है। मन्दिर के दक्षिण वाले भाग मे गणेशजी की मूर्ति है, उस भाग को निशा कहते है। लिगराज मन्दिर के पीछे भाग मे पार्वती मन्दिर है। यह मूर्ति खण्डित होने पर भी बहुत सुदर है। उत्तर भाग मे स्वामी कार्तिकेय का मन्दिर है। इन तीनो मन्दिरो के अतिरिक्त श्री लिगराज मन्दिर के उर्ध्वभाग मे कीर्तिमुख, नाट्येश्वर, दस दिग्पाल आदि की मूर्तिया अकित है।

मुख्य लिगराज मन्दिर के अतिरिक्त परकोटे के भीतर बहुत से देव देवियो के मन्दिर है। उनमे महा कालेश्वर, लक्ष्मी, नृसिह, यमेश्वर, विश्व कर्मा, भुवनेश्वरी, गोपालिनी (पार्वती) जी के मुख्य मन्दिर है। इनमे भुवनेश्वरी मन्दिर के समीप ही नन्दी मदिर है, जिसमे विशाल नन्दी की मूर्ति है।

भुवनेश्वर मे इतने अधिक मन्दिर है कि उनकी नामावली भी देना सभव नही। यहा के सभी मन्दिरो के सम्मुख भोग मन्दिर है और उसके पीछे उच्च श्री मन्दिर (विमान या निज मन्दिर) है। मन्दिरो का ढाचा प्राय एक जैसा है किन्तु प्रत्येक मन्दिर कला मे अपनी विशेषता रखता है।

भुवनेश्वर जाने के लिए सभी सुविधाए उपलब्ध है। दक्षिण पूर्व रेलवे के हावडा वाल्तेयर रेलमार्ग पर, हावडा से 437 किलोमीटर तथा जाजपुर क्योझर रोड स्टेशन से एक सौ मीटर पर भुवनेश्वर स्टेशन है। पुरी, यागपुर आदि नगरो से निरतर मोटर बसे यहा आती जाती रहती है, जो सीधी लिगराज मन्दिर तक पहुचती है। भुवनेश्वर उडीसा की राजधानी होने के कारण सभी प्रकार की सुविधाओ से सपन्न है। ☐

5. गुरुद्वारा दमदमा साहिब

पंजाब

ऐतिहासिक गुरुद्वारा दमदमा साहिब जिला भटिडा के प्रसिद्ध कस्बे, तलवडी साबो मे स्थित है। सिखो के पाच तख्तो मे यह भी एक तख्त है। इसे गुरु की काशी भी कहते है।

मुगलो के घेरे से आजाद होकर, गुरु गोविदसिह जी तलवड साबा मे 20, 21 जनवरी 1706 को पधारे थे। उन्होने गाव के बाहर अपना डेरा लगाया था। उसी स्थान पर आज गुरुद्वारा दमदमा साहिब है। इस स्थान पर गुरुजी ने काफी समय निवास किया।

इस इलाके का चौधरी भाईउले गुरुजी का परम भक्त था। उसने बडी श्रद्धा के साथ गुरुजी की सेवा की। चौधरी उले ने नवाब वजीर खा के गुरुजी को गिरफ्तार करने के आदेश को मानने से इनकार कर दिया था।

तलवडी साबो मे माता सुदरी और माता साहबकौर भाई मनीसिह के साथ दिल्ली से गुरुजी से मिलने आये थे। यही से ही भाई दयासिह और भाई धरमसिह औरगजेब के पास जवाबी पत्र (जफर नामा) लेकर गये और फिर उत्तर लेकर आये।

तलवडी साबो मे ही फल वश के महाराजाओ के बुजुर्ग चौधरी तरलोका और चौधरी रामा ने गुरू गोविदसिह के पवित्र कर कमलो से अमृतपान किया था। इन चौधरियो के वश से ही पटियाला, नाभा और जींद के महाराजा हुए है।

गुरु गोविदसिह ने यहा पर लगभग एक साल बिताया। गुरुजी ने

दमदमा के स्थान पर ग्रन्थ साहब को फिर से लिखवाया और इसमें अपने पिता गुरू तेग बहादुर जी की वाणी भी अकित करायी।

कई लोगो का विचार है कि दशम ग्रन्थ का विशेष नाम भी इसी स्थान पर तैयार हआ। 'वचित नाटक' की रचना गुरुजी ने इसी स्थान पर की थी और दशम ग्रन्थ को सम्पूर्ण किया।

गुरुजी यहा धर्म प्रचार करते रहे, जिसके कारण तलवडी साबो का वातावरण धर्म और ज्ञान गवेषणा का केद्र बन गया। इसीलिए इसको गुरु की काशी कहा जाने लगा।

दमदमा साहिब मे दसवे गुरु के जिन पवित्र वस्तुओ के दर्शन कराये जाते है, उनमे गुरु महाराज की तलवार, बन्दूक और एक शीशे के अतिरिक्त बाबा दीपसिह जी की लिखी हुई पुस्तक भी शामिल है। बाबा दीपसिह जी की तलवार और एक ईरानी तलवार भी गुरुद्वारा दमदमा साहिब मे रखी हुई है।

तलवडी साबो मे और भी ऐतिहासिक गुरुद्वारे है, जैसे जडसाहिब, टिबीसाहिब, लिखनसर और गुरुसर। इसके अतिरिक्त नौवें गुरु तेग बहादुर जी की याद मे बने हुए दो गुरुद्वारे है, जिनके नाम है गुरुद्वारा बड़ा साहिब और गुरुद्वारा गुरुसर।

इस स्थान पर पजाब सरकार ने एक स्तंभ बनाया है जिस पर गुरुजी के ये वचन अकित है।

खालसा मेरो रूप है खास।
खालसे मे हौ करो निवास।।
खालसा मेरो मुख है अंग।
खालसे के हो सद सद संग।। □

6. दरगाह हज़रत शाह कलंदर

हजरत शेख बूअली शाह कलदर के जन्म दिन के बारे मे मतभेद है लेकिन अधिकतर लोगो का यह मानना है कि आपका जन्म 606 हिजरी (1200 ई.) मे कुतुबुदीन ऐबक के शासनकाल

मे हुआ। आपके पिता शेख फकरुद्दीन ईराकी बहुत बड़े ज्ञानी और दुर्वेश थे। शेख ईराकी के हिन्दुस्तान आने पर पानीपत मे बस जाने के बाद आपके यहा बूअली शाह कलदर का जन्म हुआ और नाम सरफुद्दीन रखा। जन्म के तीन दिन तक न तो दूध पिया और न ही आखे खोली। बस दिनरात तीन दिन तक रोते रहे। तीन दिन बाद उनके पिता घर से बाहर निकले तो देखा कि दरवाजे पर एक मस्त कलदर चमडा ओढे बैठा है। शेख बूअली कलदर के पिता ने दरवाजे पर बैठे कलदर को सलाम किया तो सलाम का जवाब देते हुए कहा "ऐ शेख तुझे बेटा मुबारक हो, मुझे तेरे इस बेटे को देखने की ख्वाहिश है, जो तीन दिन से तेरे घर मे आया हुआ है।"

लडके को देखकर उस कलदर ने माथे का चुबन लिया और कान मे धीरे से एक आयत पढी। इस आयत को सुनते ही आपने आखे खोल दी और दूध भी पीने लगे। आपके पिता भी एक आलिम थे। इसलिए उनकी देखरेख मे हजरत ने बालपन मे ही पूरा ज्ञान प्राप्त कर लिया था। यहा तक कहा जाता है कि आप 11 वर्ष की आयु मे ही इतने महान ज्ञानी बन गये कि आपके ज्ञान और तर्क के सामने बडे–बडे ज्ञानी ठहर नही पाते थे।

आपके निधन का किस्सा भी अजीब है। आपका स्वर्गवास 9 रमजानुल मुबारक 724 हिज़री (1229 ई.) को 122 वर्ष की आयु मे हो गया। इधर करनाल वाले कफन दफन मे लगे हुए थे, उधर पानीपत के एक बुजुर्ग मौलाना सिराजुद्दीन को नीद मे हजरत बूअली शाह कलदर ने कहा कि हम दुनिया से विदा हो गये है। हमे करनाल वालो से छुडाओ। हम पानीपत मे अपने दोस्त शाह मुबारक के पहलू मे रहना चाहते है। ज्ञातव्य है कि सुल्तान ग्यासुद्दीन का बेटा शहजादा मुंबारक खान हजरत के मुरीदो मे हो गया था। आप अपने इस मुरीद को बहुत प्यार करते थे। जब हजरत के इस महबूब मुरीद की मृत्यु का समय करीब आया तो हजरत को पहले ही पता चल गया था और शहजादा मुबारक खान की छतरी और गुम्बद के बगल मे उन्होने गुम्बद बनवा लिया था। अलाउद्दीन को हुक्म देकर अपने लिए भी एक छतरी और गुम्बद बनवा लिया था। हजरत को दफन करने का मामला करनाल और पानीपत के बीच निपट नही पा रहा था तो मौलाना मक्की ने कहा कि सबसे अच्छा यह है कि हजरत के पार्थिव शरीर से ही पूछ लिया जाए, जो भी जैसा भी जवाब मिलेगा वैसा ही किया जायेगा। आपके पार्थिव शरीर से आवाज आयी कि करनाल और पानीपत

से हमारा रिश्ता रहा और रहेगा, लेकिन हम पानीपत मे ही कायम रहना चाहते है। करनाल वाले तब भी नही मान रहे थे आखिर मे मौलाना मक्की ने तग आकर कह दिया कि अच्छा तो लाश को उठाकर ले जाओ। करनाल वालो ने पवित्र लाश को बहुत उठाना चाहा, परतु पवित्र लाश उठा भी न सके जिससे करनाल वाले मजबूर हो गये। जब पानीपत वालो ने जनाजे को उठाया तो फूल से भी हल्का था और इस प्रकार हजरत बूअली शाह की इच्छा और हुक्म के मुताबिक पानीपत लाकर उसी गुम्बद मे दफन किया गया, जिसके लिए हजरत की तमन्ना थी।

इनकी मजार पर हर धर्म के लोग एकत्रित होकर इनके प्रति अपने श्रद्धासुमन अर्पित करते है। □

7. द्वारिकाधाम

गुजरात

द्वारिका भारत के पश्चिम गुजरात (सौराष्ट्र) प्रात के पश्चिमोत्तर सागर तट पर स्थित है। भारत के चारो धामो मे द्वारिका एक प्रसिद्ध धाम है। सप्तपुरियो मे द्वारिका की भी गणना की जाती है। आद्य शकराचार्य द्वारा स्थापित चार प्रधान पीठो मे यहां के पीठ का नाम शारदा पीठ है। श्री बल्लभाचार्य की 84 बैठको में से यहा भी एक बैठक है।

श्रीकृष्ण के समय की द्वारिका तो समुद्र मे समा गई। उस समय के द्वारिकाधीश का विग्रह केरल प्रात मे स्थित गुरुवायूर मे प्रतिष्ठित है।

इस क्षेत्र का प्रधान मन्दिर श्री द्वारिकाधीश मन्दिर है, जिसमे भगवान श्री रणछोडराय की मानवाकार खडी मूर्ति प्रतिष्ठित है। इन्ही को द्वारिकाधीश कहा जाता है। यह मन्दिर शिखर से युक्त सात खडो का है। इसके शिखर पर पूरे थान की ध्वजा फहराई जाती है। ससार की यह सबसे बडी ध्वजा है। इस मन्दिर कोट के भीतर कई देवी देवताओ के मन्दिर है जिसमे कुलेश्वर शिव का मन्दिर प्रमुख है। इसी कोट मे शकराचार्य का मठ है, जिसमे कई देवी देवताओ के मन्दिर है। कुछ दूरी पर स्थित सावित्रीकुण्ड है। कहा जाता है कि इस कुण्ड का प्राचीन नाम वर्द्धिनी वावली था और इसी से वर्तमान

द्वारिकाधीश की मूर्ति प्रकट हुई थी।

द्वारिकाधीश मन्दिर से कुछ दूरी पर रुक्मिणी देवी का मन्दिर है। इसमे श्रीकृष्ण की पत्नी रुक्मिणी देवी की मूर्ति स्थापित है। मन्दिर की शिल्पकला उत्तम है। सागर के तट पर एक भारकेश्वर शिव मन्दिर है, ज्वार आने पर इसका गर्भगृह सागर मे डूब जाता है।

द्वारिकाधीश मन्दिर के नीचे सागर की एक लम्बी खाडी है जिसको गोमती सरोवर कहते है। इसके तट पर पक्के घाट बने है। प्रत्येक घाट पर कई छोटे–छोटे मन्दिर है।

जरासध को अनेक बार पराजित करने के पश्चात श्रीकृष्ण ने मथुरा छोड कर द्वारिका नगरी का निर्माण किया और अपने जीवन पर्यत यही निवास किया। उनके समय की द्वारिका तो अब समुद्र मे समा गई है। भारत सरकार के पुरातत्व विभाग द्वारा पुरानी नगरी के खोज का कार्य चल रहा है और समुद्र के तल पर 40 फुट की गहराई मे प्राचीन नगरी के कुछ अवशेष प्राप्त हुए है जो सिद्ध करते है कि किसी समय यहा कुछ भवन इत्यादि रहे होगे। ❑

8. महादेवी मां मरियम चर्च

बिहार

महात्मा ईसा, जिनकी पूजा एव आराधना सम्पूर्ण विश्व मे, समस्त ईसानुयाई, भगवान के रूप मे करते है, की माता का नाम 'मरियम' था। ईसाइयो के पवित्र धर्मग्रन्थ 'बाइबिल' के अनुसार मरियम आजन्म ब्रह्मचारिणी, निष्कलक एव कुवारी थी। यद्यपि एक कुवारी द्वारा ईसा को जन्म देना एक विचित्र बात सी प्रतीत होती है किन्तु सर्वशक्तिमान परमात्मा के लिए कुछ भी असभव नहीं है।

प्रभुवर ईसा के पश्चात, जिस नारी की एक महानतम देवी के रूप मे ईसानुयाइयो द्वारा श्रद्धा एव भक्ति की जाती है, वह ईसा की माता मरियम ही है। ईसाई मतानुसार मरियम मरणोपरात सदेह स्वर्ग मे आरोहित कर ली गई है जैसे प्रभुवर ईसा ने स्वयमेव को स्वर्गारोहित कर लिया है। समस्त

ईसानुयाइयो का विश्वास है कि मानव द्वारा यदि पूर्ण विश्वास, भक्ति एव श्रद्धा के साथ जिस किसी भी वरदानो के लिए ईश्वर से मा मरियम को मध्यस्थ बनाकर अर्चना की जाये, तो उसकी पूर्ति अवश्यमेव होती है। यही कारण है कि आज विश्व के प्रत्येक गिरिजाघर मे मा मरियम की प्रतिमा प्रतिष्ठापित रहती है।

भारत के अलावा, विश्व के अनेक स्थलो पर भी मां मरियम के तीर्थधाम बने हुए है जिनमे लूर्द एवं फातिमा का तीर्थधाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। लूर्द (फ्रास का एक स्थान) मे मा मरियम ने एक ग्रामीण बाला को साक्षात दर्शन दिया था। वहा जिस चट्टान पर मा मरियम खडी हुई थी, एक जलस्रोत फूट निकला था जो आज भी प्रवाहित हो रहा है। उस जलस्रोत से अनेको भक्त अनेक असाध्य रोगो से मुक्त होते रहते है। इसी प्रकार ही फातिमा है। तीर्थधाम मे तीन बालक बालिकाओ को मा मरियम के दर्शनो का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। वहा भी सार्वजनिक रूप से एक महान चमत्कार हुआ था। वहा अकस्मात बिना मौसम, घनघोर वर्षा हुई थी। तत्पश्चात सूर्य अपने विभिन्न मिश्रित रगो को बिखेरता हुआ एवं एक चक्र के सदृश्य ही नृत्य करता हुआ, क्षितिज को छोडकर जमीन की ओर लुढकता हुआ चला आया था। वहा उपस्थित अपार जनसमूह के भीगे वस्त्रो एवं जमीन को क्षणमात्र मे सुखा डाला था।

ऐसे ही तीर्थधामो के सदृश्य अनेक धर्म स्थलो के बीच मोकामा मे भी एक ऐसा तीर्थधाम है जिसकी ख्याति न सिर्फ भारत के ईसाई समुदायो मे बल्कि विश्व के सपूर्ण ईसाई समुदायो में भी फैली हुई है। यह तीर्थधाम है ईसाई मिशनरियो द्वारा मा मरियम को समर्पित एक ईश मदिर। इस मदिर का निर्माण कार्य अग्रेजी शासनकाल मे वर्ष 1943 ई मे प्रारभ हुआ था जो वर्ष 1947 ई. मे पूर्णरूप से तैयार हो गया। यह मदिर देखने मे अत्यत ही लघु है, क्योकि इसमे मुश्किल से पाच सौ व्यक्ति स्थान ग्रहण कर सकेगे, किन्तु इसकी आकृति इतनी अनूठी एव कलात्मक है जिसे विविध स्थापत्य कलाओ का अप्रतिम सौंदर्य का मूर्तरूप कहे तो कोई अतिश्योक्ति नही होगी। इसकी आकृति मे हिन्दू, मुस्लिम, सिख एव ईसाई मदिरो की कलाकृतियो का अपूर्व सगम दृष्टिगोचर होता है।

इस मदिर के निर्माण मे भवदीय थोमस लेसली मार्टिन ने जो एक सभ्रात एव धार्मिक अमेरिकी ईसानुयायी थे तथा जिनके नाम से भारत मे

अनेक स्थानो मे 'मार्टिन लाइट रेलवे' चलती थी, पूर्ण रूप से आर्थिक सहयोग प्रदान किया था। मदिर निर्माण मे एक अमेरिकी पादरी श्रद्धेय एम आर वैटसन का नाम भी उल्लेखनीय है जिन्होने स्वप्न मे मा मरियम से प्रेरणा पाकर मदिर की नीव डलवायी। मदिर के भीतर मुख्य वेदी पर मा मरियम की एक भव्य आकर्षक एव नैसर्गिक आभा से विभूषित प्रतिमा है जिसे एक रूसी मूर्तिकार ने भारतीय नारी की रूपरेखा मे काष्ठ से निर्मित कर मानो प्रतिमा मे प्राणो का सचार कर दिया है। प्रतिमा की आखे शीशे की है जो बिल्कुल ही सजीव आखे जैसी प्रतीत होती है। यही वह अनुपम प्रतिमा है जिसकी आभा से पराभूत होकर, ईसाइनुयाइयो के साथ–साथ अन्य धर्मावलम्बियो के व्यक्ति भी दूर–दूर से दर्शन करने तथा अभीष्ठ वरदानो एव कृपादानो के लिए अनवरत रूप से आगमन करते रहते है, क्योकि इस प्रतिमा के सामने उपस्थित होकर पूजा अर्चना करने पर मानसिक एव आध्यात्मिक शाति के अलावा शारीरिक व्याधियो एव कष्टो से भी पूर्ण निवारण प्राप्त होता है।

मदिर मे स्थापित ईसा की माता मा मरियम की प्रतिमा विशेष रूप से महिलाओ को अनायास ही आकर्षित कर लेती है, क्योकि मा मरियम की गोद मे नवजात ईसा की मनोहारी प्रतिमा होने से लोगो के मनोमस्तिष्क मे एक बडी ही ममतामयी मा की छवि अकित हो जाती है।

महिलाओ के बीच मा मरियम 'गिरजा महारानी' के नाम से विख्यात है। यह किवदती नही, बल्कि यथार्थ है कि कई नि सतान महिलाओ को इस 'महारानी' की अक्षय कृपा से सतान प्राप्त हुई है। एक आजन्म गूगे बालक को वाणी मिली है। कई व्यक्ति असाध्य रोगो से मुक्त हुए है तथा कई अपाहिज स्वास्थ्य लाभ प्राप्त कर कृतार्थ हो चुके है।

इन्ही गरिमाओ एव चमत्कारो को दृष्टिगत करते हुए, इस मदिर को सतत् महिमान्वित रखने के लिए सत पिता (रोम के पोप) ने इस मदिर को एक तीर्थधाम के रूप मे प्रतिष्ठा प्रदान कर दी है। यही कारण है कि इस मदिर की स्थापना का समारोह प्रतिवर्ष एक निश्चित तिथि पर बडे ही उमग, धूमधाम एव सहर्षोल्लास के साथ सपन्न किया जाता है जिसमे हजारो की सख्या मे श्रद्धालु भक्तगण सम्मिलत होकर, ईसा की माता, मा मरियम के प्रति अपनी भक्ति श्रद्धा एव प्रेम को प्रदर्शित करते है। ❑

9. कलकत्ता के प्रमुख तीर्थ

पश्चिम बंगाल

विश्व के चार महानतम महानगरो मे से एक कलकत्ता भी है। अन्य तीन न्यूयार्क, लदन व टोक्यो है। सन् 1912 तक यह हिन्दुस्तान की राजधानी रहा। तदोपरात राजधानी यहा से स्थानातरित कर दिल्ली ले जायी गई। ब्रिटिश सरकार की 'बांटो और राज करो' की नीति का अनुसरण करते हुए तत्कालीन गवर्नर जनरल लार्ड कर्जन ने बगाल को दो भागो मे बांटने की घोषणा की और जिसे 'बंगभंग' की संज्ञा दी गई। बगला निवासियो की ओर से इस राष्ट्रघातक घोषणा का तीव्र विरोध हुआ और कलकत्ता क्रांतिकारी गतिविधियो का एक प्रमुख केद्र बन गया। अततः इस विरोध के फलस्वरूप ब्रिटिश सरकार को अपनी घोषणा वापस लेने के लिए विवश होना पडा और उसने राजधानी यहा से हटाकर दिल्ली ले जाना ही उचित समझा। देश की राजनीतिक, सामाजिक व सांस्कृतिक चेतना मे इस नगर के योगदान को स्वर्णाक्षरो मे लिखा जायेगा।

कलकत्ता का काली मन्दिर

कलकत्ता मे रहने वालो का विश्वास है कि यहां रहने वाला देश के किसी भी कोने से यहां पहुंचा हो, मा काली उसकी केवल रक्षा ही नहीं करतीं, उसकी श्री वृद्धि भी करती है। बाहर से आकर यहां बसे हुए अनेक व्यापारियो का यह दृढ़ विश्वास है कि मा काली के आशीर्वाद के कारण ही व्यापार मे उनकी श्री वृद्धि हुई है। इसीलिए अनेक अवसरो पर उन्हे आप काली मन्दिर मे पूजा अर्चना करते हुए देखेगे। मां काली के इस मन्दिर की शक्ति पीठ के रूप मे भारत भर मे मान्यता है। मां के इक्यावन शक्ति पीठ माने जाते हैं, उनमे इसकी प्रसिद्धि सबसे अधिक है। काले पत्थर से निर्मित मां की प्रतिमा का विशेष आकर्षण है। चमकते खडग और मुण्डमाल से सज्जित देवी की प्रतिमा श्रद्धालुओ के लिए पूरी तरह से जीवंत है।

पारसनाथ जैन मन्दिर

केवल जैन धर्मावलम्बियो के लिए ही नही, सभी कलकत्ता निवासियो के

लिए यह मन्दिर श्रद्धा का केद्र है। कुछ लोग इसके आध्यात्मिक वातावरण से यहा खिचे चले आते है तो कुछ इसे जैन तीर्थकर शीतलनाथजी का स्थान समझकर उनका आशीर्वाद प्राप्त करने यहा पहुचते है। बद्रीदास टेम्पल स्ट्रीट पर स्थित जैन धर्मावलम्बियो का यह पूजा स्थल सबको अपने स्थापत्य के कारण आकर्षित करता है।

सेन्ट पाल कैथेड्रल

यह ईसाई धर्मावलम्बियो का एक शानदार गिर्जाघर है। इसके निर्माण का श्रेय कलकत्ता के पाचवे बिशप डेनियल विल्सन को दिया जाता है। 8 अक्टूबर, 1829 के दिन बगाल के तत्कालीन गवर्नर श्री राबर्टसन तथा अन्य महत्वपूर्ण व्यक्तियो की उपस्थिति मे इस गिर्जाघर की नीव रखी गई। भारतीय तथा गोथिक शैली के मिश्रित आधार पर निर्मित इस गिरजाघर का स्थापत्य सभी को आकर्षित करने की सामर्थ्य रखता है। इसकी दीवारो पर अकित भित्ति चित्र, खिडकियो पर जडे हुए रगीन काच तथा फ्रेस्को सभी अद्वितीय है।

सेन्ट जान चर्च

इसका निर्माण चुनार से लाए गए पत्थरो से किया गया। सभवत: उन्ही पत्थरो के कारण इसका नाम 'पत्थर गिरजा' पड गया। इसके निर्माण का कार्य 1787 मे सपन्न हुआ था और इसके निर्माण मे तीन वर्ष का समय लगा था। इसी गिरजाघर मे कलाकार जोफानी की वह महान कलाकृति भी रखी हुई है जिसे अतिम भोजन या 'लास्ट सपर' भी कहते है।

दक्षिणेश्वर मन्दिर

हुगली नदी के तट पर, एक विशाल परिसर मे विख्यात दक्षिणेश्वर मन्दिर है। यह रानी रासमणि का बनवाया हुआ काली मन्दिर है। यहा परमहस रामकृष्णदेव, महाकाली की आराधना किया करते थे। घेरे के भीतर ही हुगली नदी के तट पर बाराह शिव मन्दिर और परमहस का आवास गृह है। इसमे परमहस की वस्तुएं सुरक्षित रखी है। घेरे के बाहर एक वट वृक्ष है, जिसके नीचे परमहस ध्यान किया करते थे। परमहस की पत्नी शारदा देवी तथा रानी रासमणि की समाधिया भी यही स्थित है।

बेलूर मठ

दक्षिणेश्वर मन्दिर के सम्मुख हुगली नदी के उस पार नदी तट पर बेलूर मठ स्थित है। इस मठ की स्थापना स्वामी विवेकानन्द ने की थीं। यहा का रामकृष्ण मन्दिर प्रसिद्ध तथा दर्शनीय है। रामकृष्ण मिशन का प्रधान कार्यालय भी यही है।

वन्दे मातरम

भारत की आजादी के सघर्ष मे 'वन्दे मातरम' उद्‌घोष का अत्यत ही महत्वपूर्ण स्थान रहा है। यह उद्‌घोष भारत की चारो दिशाओ मे गूजा और अनेक देशभक्त इसका उद्‌घोष करते हुए फासी के फन्दो पर झूल गये। आजादी के इस महामत्र का जन्म स्थान बगाल ही है। जिसका विस्तृत वर्णन विख्यात उपन्यासकार बकिमचन्द्र चटर्जी ने अपने प्रख्यात उपन्यास 'आनन्द मठ' मे किया है।

10. 'अग्नि मंदिर'

पारसियो का धर्मग्रथ 'अवेस्ता या जेन्दावेस्ता' है जिसकी रचना इस धर्म के सस्थापक जरथुस्त्र ने की थी, जिनका जन्म अब से लगभग 3000 वर्ष पूर्व ईरान मे हुआ था जिसे परसिया भी कहा जाता था। इस धर्म के अनुयायियो को पारसी कहा जाता है, क्योकि वे परसिया के रहने वाले थे। पारसी अग्नि को सबसे पवित्र मानते है और वे केवल अग्नि व सूर्य की ही पूजा करते है, किसी अन्य पदार्थ व व्यक्ति विशेष की नही। इनका विश्वास है कि अग्नि व सूर्य की ऊष्णता से सभी अपवित्र वस्तुए नष्ट हो जाती है, इसलिए ये ही पूजा के योग्य है। इनके पूजा स्थलो व मदिरो मे केवल अग्नि की ही प्रतिष्ठा की जाती है जहा अग्नि सदैव प्रज्वलित रहती है, जो कभी बुझती नही है। कही कही अग्नि प्रज्वलित रखने के लिए चदन भी उपयोग मे लाया जाता है।

जब ईरान मे इस्लाम का प्रादुर्भाव बढा तो वहा पारसियो का रहना

मुश्किल हो गया, क्योकि ये अग्नि की पूजा करते थे और इस्लाम मे किसी भी तरह की पूजा की सख्त मनाही है। कुछ पारसी ईरान छोडकर भारत मे आकर आबाद हो गये, क्योकि वे भारत मे अपनी धार्मिक मान्यताओ के अनुकूल अपना जीवन व्यतीत करने के लिए पूर्णतया स्वतत्र थे। पारसी समुदाय के लोग अधिकतर बम्बई नगर और गुजरात मे बसे हुए है जहा वे व्यापार करते है या विभिन्न उद्योग चलाते है। पारसी समुदाय अत्यत ही सीमित समुदाय है और इनकी सख्या निरतर घटती जा रही है। वर्तमान मे इनकी कुल सख्या एक लाख से कम है। ये अपने समुदाय मे अन्य धर्मावलम्बियो को शामिल नही करते हैं। इनकी ब्याह शादिया भी इसी समुदाय मे ही होती है, समुदाय के बाहर नही। पारसियो मे पूरी साक्षरता है। बाल विवाह पूर्णतया बद है। बडी आयु मे शादी होने के कारण परिवार सीमित रहते है। यही कारण है कि इनकी सख्या निरतर कम होती जा रही है। यह समुदाय शातिप्रिय है और ये वाद विवादो से दूर ही रहते है।

पारसियो का भारत की आजादी से निकट का सबध रहा है। दादाभाई नौरोजी, सर फिरोजशाह मेहता एव सर दिनशावाचा इडियन नेशनल काग्रेस के अध्यक्ष रहे है। मैडम भीकाजी कामा पहली पारसी महिला थी, जिन्होने विदेशो मे जाकर भारत की आजादी के लिए आवाज उठाई थी और राष्ट्रीय झण्डा फहराया था। इस समुदाय के अनेक गणमान्य व्यक्ति आजादी की लडाई मे जेलो मे गये थे।

पारसी समुदाय का भारत के औद्योगिक विकास मे महत्वपूर्ण योगदान रहा है। टाटा व गोदरेज परिवारो ने इस देश मे औद्योगिक क्राति का बीज बोया, जिसके कारण चारो ओर इस क्षेत्र मे विकास हुआ है। टाटा औद्योगिक समूह की ख्याति विश्व स्तरीय है। टाटा परिवार ने सामाजिक विकास के अन्य क्षेत्रो मे भी अपना योगदान किया है। शिक्षा व स्वास्थ्य के क्षेत्रो मे इसका योगदान अनुकरणीय है। अनेक अस्पतालो व शिक्षा सस्थाओ की स्थापना की है। अनेक विद्यार्थियो को उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए छात्रवृत्तिया दी जा रही है। जिस कार्य मे भी टाटा की छाप लग जाती है, वह विश्वसनीय मान ली जाती है। पारसी समुदाय ने ही देश की सुरक्षा के क्षेत्र मे फील्ड मार्शल मानिकशाह, विज्ञान के क्षेत्र मे डॉ होमी भाभा, डॉ. वाडिया इत्यादि ख्यातिप्राप्त व्यक्तियो को जन्म दिया है जिन पर भारत को गर्व है। दिल्ली मे ही आखो की बीमारियो के इलाज के लिए 'शर्राफ आई चैरिटेबल अस्पताल' की स्थापना डॉ एस पी शर्राफ द्वारा अब से 70 वर्ष

पूर्व की गई थी जो उस समय अपनी किस्म का समस्त उत्तर भारत मे पहला अस्पताल था। यद्यपि सारे देश की जनसख्या के लिहाज से इस समुदाय की सख्या नगण्य के समान है तथापि देश के विकास के मार्ग मे पारसी समुदाय का योगदान बहुत गुना अधिक है जो समाज के अन्य वर्गो के लिए अनुकरणीय है।

पारसी 'अग्नि मदिर' को अगियारी नाम से सबोधित करते है। नई दिल्ली मे एक 'अग्नि मदिर' दिल्ली गेट के बाहर एक विशाल भूखण्ड मे स्थापित है जिसका निर्माण लगभग 50 वर्ष पूर्व किया गया। इसी परिसर मे 'दिल्ली पारसी अजुमन' नाम की सस्था का कार्यालय है। यह सस्था दिल्ली मे पारसी समुदाय की धार्मिक व सामाजिक गतिविधियो का संचालन करती है। इसी परिसर मे 'अग्नि मदिर' के अतिरिक्त एक धर्मशाला का निर्माण हुआ है जिसमे अनेक स्थानीय पारसी परिवार निवास करते है तथा दिल्ली के बाहर से आने वाले व्यक्तियो के निवास तथा भोजन इत्यादि की व्यवस्था की जाती है। उस परिसर की सफाई तथा रख–रखाव की व्यवस्था अनुकरणीय है।

ऐसे ही 'अग्नि मदिर' बम्बई तथा गुजरात के नगरो – सुरत व नवसारी मे भी बने हुए है। नौरोज के वार्षिक उत्सव के अवसर पर सभी पारसी परिवार एक ही स्थान पर इकट्ठे होकर यह त्योहार सद्भावनापूर्ण वातावरण मे मनाते है। एक–दूसरे के गले मिलते है और अपनी त्रुटियो के लिए क्षमा याचना मागकर नववर्ष का सहर्ष अभिवादन करते है। यह त्योहार प्रतिवर्ष 21 मार्च को मनाया जाता है। ❑

अध्याय बारह

1. कैलाश-मानसरोवर

कैलाश भारत चीन सीमा से तिब्बत क्षेत्र मे लगभग 30 मील की दूरी पर स्थित है। कई पर्वतो के मध्य मे शिवलिग के आकार का गोलाकार लिए हुए एक हिमशिखर है, जिसको कैलाश कहा जाता है। सागर के जलस्तर से इस हिमशिखर की ऊँचाई 6174 मीटर अर्थात् 22022 फुट है।

पूरे कैलाश की आकृति एक विराट शिवलिग जैसी है, जो पर्वतो से बने एक षोडशदल कमल के मध्य रखा है। ये कमलाकार श्रृग वाले पर्वत भी इस प्रकार है कि वे उस शिवलिग के लिए ऊर्धा जान पडते है। उनके चौदह श्रृग तो गिने जा सकते है किन्तु सम्मुख के दो श्रृग झुक कर लम्बे हो गये है और उन्हे ध्यान देने पर ही लक्षित किया जा सकता है। उनका यह झुका हुआ भाग ऐसा हो गया है जैसे आगे ऊर्धे का लम्बा भाग। इसी भाग से कैलाश का जल गौरी कुण्ड मे गिरता है।

शिवलिगाकार पर्वत के आसपास के समस्त शिखरो से ऊँचा है। यह कसौटी के ठोस काले पत्थर का है और ऊपर से नीचे तक सदा दुग्धोज्वल बर्फ से ढका रहता है, किन्तु उससे लगे वे पर्वत जिनके शिखर कमलाकार हो रहे है, कच्चे मटमैले पत्थर के है। कैलाश अकेला ही वहा ठोस काले पत्थर का शिखर है, कमलाकार शिखर क्योकि कच्चे पत्थर के है, उनके शिखर गिरते रहते है।

तिब्बत के लोगो मे कैलाश के प्रति अपार श्रद्धा है। अनेक तिब्बतीय श्रद्धालु पूरे कैलाश की परिक्रमा दण्डवत प्रणिपात करते हुए पूरी करते है।

भगवान शकर का दिव्य धाम कैलाश यही है या और कोई यह विवाद ही व्यर्थ है। यह कैलाश तो दिव्यधाम है। इस कैलाश के दर्शन करते ही यह बात स्पष्ट हृदय मे आ जाती है कि यह असामान्य पर्वत है। देखे हुए समस्त हिमशिखरो से सर्वथा भिन्न और दिव्य। इस पर्वत का शिरो भाग दरचन से ही दिखाई पडने लगता है। दरचन और कैलाश के मध्य मे जो

पर्वत है उन पर छह सात सौ मीटर ऊपर चढकर लगभग 6 किलोमीटर दूर तक जाने पर कैलाश पर्वत और अधिक स्पष्ट दिखायी पडने लगता है।

अनेक लोग कैलाश की परिक्रमा भी करते है, किन्तु कैलाश पर्वत के चारो ओर कोई मार्ग अथवा पगडडी नही है। अत. उसके चारो ओर जो पर्वत है उनके बाहर से अर्थात् उन पर्वतो को लेते हुए परिक्रमा करनी पडती है। इस परिक्रमा मार्ग की परिधि 48 किलोमीटर की है, जिसमे तीन दिनो का समय लगता है। इस मार्ग मे क्रम से न्याडी गुफा, दिरा फुक, दोल्मा घाटी, गौरी कुण्ड और जुन्थुल फुक स्थान पडते है। दोल्मा घाटी की ऊँचाई 18600 फुट है, जो इस यात्रा का सबसे ऊँचा स्थान है। विदेश मत्रालय के माध्यम से जाने वाले यात्रियो को समयाभाव के कारण परिक्रमा करने मे शीघ्रता करनी पडती है। कई लोग परिक्रमा करते है और कई लोग दरचन से ही कैलाश के दर्शन करके लौट जाते है।

कैलाश मानसरोवर तीर्थ उत्तर प्रदेश की उत्तरी सीमा के निकट चीन शासित तिब्बत देश के पर्वतीय अचल मे है। तिब्बत पर चीन के अधिकार के पहले कैलाश मानसरोवर जाने के लिए कई मार्ग थे। कैलाश मानसरोवर के यात्री को चाहे वह जिस किसी भी मार्ग से जाता था, उसे कोई पास या परमिट नही लेना पडता था। जब चीन ने तिब्बत पर अधिकार कर लिया तो इन तीर्थो की यात्रा बद हो गई थी। परतु भारत और चीन के सहयोग से सन् 1981 से पुन प्रारम्भ हुई। प्रत्येक वर्ष अब विदेश मत्रालय के माध्यम से कैलाश मानसरोवर के यात्रियो की टोलिया भेजी जाती है। विदेश मत्रालय यात्रा और सुरक्षा का पूरा प्रबध करता है। अत विदेश मत्रालय के माध्यम से ही कैलाश मानसरोवर की यात्रा करनी पडती है। विदेश मत्रालय यात्रियो की सुरक्षा के अलावा यात्रियो के लिए पारपत्र (पासपोर्ट) और वीसा की व्यवस्था करता है। विदेश मत्रालय के अनुसार यात्रा के पूर्व अपने स्वास्थ्य का प्रमाण पत्र और इडेम्निटी बाड लिखकर देना पडता है, जिसमे यह उल्लेख करना होता है –"इस कठिन एव भयप्रद मार्ग की यात्रा का उत्तरदायित्व मै स्वय उठा रहा हू।" इन दोनो पत्रो को देने के पश्चात विदेश मत्रालय वाले जब पूर्णतया सतुष्ट हो जाते है, तभी वे इस यात्रा की अनुमति देते है। यह यात्रा दिल्ली से प्रारभ होकर पुन दिल्ली मे ही समाप्त होती है। विदेश मत्रालय द्वारा आयोजित यात्रा मे केवल 26 दिनो का समय लगता है। इस यात्रा के इच्छुको को भारत सरकार के विदेश मत्रालय से सपर्क स्थापित करना चाहिए।

तिब्बत के धर्मगुरु दलाई लामा के शासनकाल मे भारतीयो पर इस यात्रा पर जाने मे कोई प्रतिबंध नही था, तब लोग अल्मोडा से यात्रा प्रारभ करते थे। किन्तु अब विदेश मत्रालय के माध्यम से यात्रा दिल्ली से प्रारभ की जाती है। दिल्ली से धारचुला और धारचुला से 105 किलोमीटर जाने के पश्चात लिपुलेख घाटी मिलती है, जो भारत की अतिम सीमा है। धारचुला से पैदल चलकर यात्री आठ दिनो मे यहा पहुच जाते है। पूर्व सूचना के अनुसार तिब्बती सैनिक यहां आकर यात्रियो की सुरक्षा का भार अपने ऊपर ले लेते है। लिपुलेख घाटी से 14 किलोमीटर करनाली नदी के पार तक तकलाकोट की बस्ती है। यहा पर चीन देश के सीमा शुल्क अधिकारी का कार्यालय और सीमा चौकी है। यहा वीसा की जाच होती है और अपने साथ ले जाने वाली समस्त वस्तुओ की सूची बनाकर देनी पडती है। निरीक्षण के बाद चीनी अधिकारी एक परिचय पत्र देते है जिसे अपने पास रखना पडता है। यहा भारतीय मुद्रा देकर चीनी मुद्रा ली जाती है।

तकलाकोट से मोटर, ट्रक अथवा जीप से आगे का साधन है जिसका प्रबध चीनी सैनिक करते है। ये वाहन कैलाश के दक्षिण की ओर तारचेन अर्थात् दरचन तक पहुचा देते है, जो तकलाकोट से 110 किलोमीटर दूर एव 4575 मीटर की ऊँचाई पर स्थित है। यहा चीनी सैनिक यात्रियो के परिचय पत्र का निरीक्षण करते है। इसी मार्ग मे 14900 फुट की ऊँचाई पर एव मानसरोवर से लगभग आठ किलोमीटर पश्चिम की ओर राक्षसताल नाम का विस्तृत सरोवर है। जिसका जल गहरा नीला है।

इस यात्रा मे साधारणत 14000 फुट से लेकर 18600 फुट तक के ऊँचे पर्वतो को पैदल चलकर ही पार करना पडता है। ऊबड खाबड पत्थरो और कही कही एक एक दो दो किलोमीटर दूर तक हिम के ऊपर जाना पडता है तथा अचानक मौसम खराब हो जाने के कारण दुर्घटनाए भी हो जाती है। मार्ग मे ठहरने के कोई उचित् स्थान भी नही होते, निरतर हिमानी वायु के झोके शरीर मे सुई की तरह चुभते है। केवल उसी तम्बू मे शरण लेनी पडती है, जो लोग अपने साथ ले जाते है। यह यात्रा अत्यत ही कष्टदायक है फिर भी अनेक व्यक्ति इसे श्रद्धापूवर्क सपन्न करते है।

सभी विघ्न बाधाओ के होते हुए भी सैकडो लोग प्रति वर्ष कैलाश–मानसरोवर की यात्रा कर अपनी मनोकामना पूर्ण करते है।

हिमालय की पर्वतीय यात्राओ मे मानसरोवर कैलाश यात्रा ही सबसे कठिन है और इसकी कठिनाई की तुलना केवल बदरीनाथ से आगे

स्वर्गावरोहण या मुक्तिनाथ की यात्रा से ही कुछ की जा सकती है। केवल यही एक यात्रा है जिसमे हिमालय को पूरा पार करना पडता है। दूसरी यात्राओ मे तो हिमालय के केवल पृष्ठाश के ही दर्शन संभव है।

पूरे हिमालय को पार करके तिब्बती पठार मे लगभग चालीस पैंतालीस किलोमीटर जाने पर पर्वतो से घिरे दो महान सरोवर मिलते हं। मनुष्य के दोनो नेत्रो के समान वे स्थित है। उनके मध्य मे नासिका के समान उठी हुई पर्वतीय भूमि है, जो दोनो को पृथक करती हे। इनमे से एक है राक्षसताल और दूसरा है मानसरोवर। राक्षसताल विस्तार मे वहुत वडा है, वह गोल या चौकोर नही है। इसकी कई भुजाये मीलो दूर तक टेढी मेढी होकर पर्वतो मे चली गई है। कहा जाता है कि किसी समय राक्षसराज रावण ने यही खडे होकर भगवान शंकर की आराधना की थी।

दूसरा है सुप्रसिद्ध मानसरोवर। उसका जल अत्यत स्वच्छ और अद्भुत नीला है। उसका आकार लगभग गोल अण्डाकार है। उसका वाहरी घेरा 81 किलोमीटर और गहराई एक सौ मीटर की है। इसकी गहराई को चीनी अधिकारियो ने सर्वेक्षण कर प्रमाणित कर दिया है। मानसरोवर, सागर से 4558 मीटर अर्थात् 14950 फुट की ऊँचाई पर स्थित है। मानसरोवर 51 शक्तिपीठो मे एक है। सती की दाहिनी हथेली इसी स्थान पर गिरी थी।

कहा जाता है कि मानसरोवर मे हंस वहुत है। राजहंस भी है और सामान्य हस भी। सामान्य हंसो की दो जातियां है, एक मटमैले सफेद रंग के और दूसरे बादामी रग के। ये आकार मे बत्तखो से वहुत मिलते है। इनकी चोचे बत्तखो से पतली है। पेट का भाग भी पतला है और वे पर्याप्त ऊँचाई पर दूर तक उड सकते है।

मानसरोवर मे मोती है या नही, पता नही। किन्तु तट पर उनके होने का कोई चिन्ह नही। कमल फूल मानसरोवर मे बिल्कुल ही नही है। किसी समय मानसरोवर का जल राक्षसताल मे जाता था। जलधारा का वह स्थान तो अब ऊँचा हो गया है। प्रत्यक्ष मे मानसरोवर से कोई नदी या झरना भी नही निकलता है। किन्तु मानसरोवर पर्याप्त उच्च प्रदेश मे है। कुछ अन्वेषक अग्रेज विद्वानो का मत है कि कई नदिया मानसरोवर से ही निकलती हैं। जिनमे सरयू और ब्रह्मपुत्र के नाम उल्लेखनीय है। मानसरोवर का जल भूमि के भीतर के भागो से मीलो दूर जाकर उन नदियो के स्रोत के रूप मे व्यक्त होता है।

वामन पुराण मे लिखा है कि इस सरोवर का निर्माण ब्रह्माजी ने कराया है और यह भारत के पच सरोवरो मे माना जाता है। यह अति पवित्र सरोवर है और इसमे स्नान का माहात्म्य है। तीव्र वायु वेग के कारण इसका जल सागर के समान हिलोरे लेता रहता है। शीतल जल और तीव्र वायु के कारण सावधानीपूर्वक शीघ्रातिशीघ्र स्नान करके बाहर आ जाना चाहिये अन्यथा रक्त के जम जाने का डर रहता है। मानसरोवर के आसपास या कैलाश पर कोई वृक्ष नही, कोई पुष्प नही। सच तो यह है कि इस क्षेत्र मे छोटी घास और अधिक से अधिक फुट सवा फुट तक ऊँची उठने वाली एक कटीली झाडी को छोडकर और कोई पौधा नही होता। मानसरोवर के तट पर रग–बिरगे पत्थर और कभी–कभी स्फटिक के भी छोटे टुकडे पाये जाते है।

भारत तिब्बत सीमा पर लिपुलेख घाटी पार करने के उपरात तीन दिनो की यात्रा के पश्चात पहले मानसरोवर आता है और वहा से दो–तीन दिनो की पैदल यात्रा के पश्चात कैलाश पर्वत पहुचा जा सकता है। कैलाश–मानसरोवर की पूरी यात्रा अत्यत ही कष्टदायक है। इस कारण यह यात्रा केवल थोडे से ही व्यक्ति जो शारीरिक रूप से सक्षम है, कर पाते है। ❑

2. दरगाह हज़रत मियां मीर लाहौरी

पाकिस्तान

हजरत शाह मिया मीर लाहौरी का जन्म 938 हिजरी मे हुआ। आप कादिरिया सिलसिले के हजरत खिब्र नाम के एक बुजुर्ग के मुरीद थे। मुरीद होने के बाद आप कुछ दिन तक अपने पीर के साथ रहे। फिर आपके पीर ने आपको विदा देते हुए आदेश दिया कि अब मेरे पास रहने की आवश्यकता नही है, जहा जी चाहे जाओ और जहा जी चाहे वहा रहो। आपका व्यक्तित्व पजाब और पजाब के बाहर फकीरो मे एक खास स्थान रखता है। हजरत मिया जी का तरीका यह था कि प्रतिदिन लाहौर के महात्माओ और बुजुर्गो की कब्रो का दर्शन किया करते थे। फिर जगल और बागो मे जाकर ख्याल को भटकने से बचाने के लिए

और मन को स्थिर रखने के लिए ईश्वर की प्रार्थना मे लीन हो जाया करते थे। वह अपनी प्रार्थना के लिए ऐसे ही स्थान का चुनाव करते थे जहा आने जाने वाले से किसी प्रकार का विघ्न न होता हो। उनके शिष्य जो उनके साथ होते वो भी सुनसान जगहो पर जगलो मे अलग अलग पेडो के नीचे बैठकर ईश्वर की प्रार्थना मे तल्लीन हो जाते।

आपके जीवन वृतात के बारे मे बादशाह दारा शिकोह ने अपनी किताब 'शकीनतुल औलिया' मे आपका उल्लेख किया है। हजरत मिया कई साल न दिन को खाते और न रात को सोते। दारा शिकोह ने लिखा है कि मैने शुख कुतुब से सुना है कि हजरत मिया जी को नीद नही आती थी। एक विद्वान का कहना है कि हजरत मियां जी कई साल तक एक सास मे रात गुजारते थे। फिर जब आपकी उम्र अस्सी साल से अधिक हुई तो चार सासो मे रात गुजारने लगे।

सरहिन्द मे आपने साल भर इस तरह गुजारा कि आपके बारे मे और आपकी हालत के बारे मे किसी को खबर न हुई। सरहिन्द से आप लाहौर वापस आये और जीवन के आखिरी दिनो तक यही रहे। हजरत मिया जी से जब कोई मुरीद होने की आशा से आता और अपना मजबूत इरादा जाहिर करता तो उसे कम खाने, कम सोने और कम बोलने की शिक्षा देते। हजरत मिया अक्सर ईश्वर के ध्यान मे मग्न रहते, दिन व रात मे बहुत कम खाते और जो थोडा बहुत खाते तो उसकी भी खबर न हो पाती कि क्या खाया। आप ईश्वर की याद मे अपने को इस तरह खो देते थे कि जिसका बयान करना मुश्किल है, उन्हे तो दिन तारीख और महीना भी याद नही रहता था। अगर उनके शिष्य या चाहने वाले कोई नजराना लेकर आते तो उस नजराने का कुछ हिस्सा अपने ऊपर खर्च करते और बाकी जरूरतमदो को दे देते।

सरहिन्द मे आप बीमार पडे, घुटनो के दर्द की आपको शिकायत हुई। बीमारी की हालत मे आप एक दिन हजरत बडे पीर दश्तगीर के पास पहुचे। हजरत बडे पीर ने आपका हालचाल पूछा तो आपने उनसे अपने स्वास्थ्य की प्रार्थना की। हजरत बडे पीर ने अपना हाथ आपके शरीर पर फेरा और पानी का एक प्याला देकर उसे पीने के लिए कहा, आपकी बीमारी उसी समय दूर हो गई। आपका स्वर्गवास 17 रबीउल औव्वल, 1045 हिजरी को हुआ। आपकी मजार लाहौर मे है, जो अब पाकिस्तान मे है। □

3. महाबलिपुरम

तमिलनाडु

महाबलिपुरम, जिसे मामल्लापुरम भी कहा जाता है, मद्रास महानगर से दक्षिण की ओर साठ किलोमीटर दूर सागर तट पर स्थित है। इसके आसपास रेत ही रेत है और केवल चट्टान से कटे तथा पत्थर से बने पूजागृहो के अलावा उसके प्राचीन वैभव का कोई चिन्ह आज तक दिखाई नही पडा। समुद्र के किनारे रेत की सतह पर ग्रेनाइट का एक विशाल पर्वत था, जो लगभग एक किलोमीटर लम्बा, आधा किलोमीटर चौडा और लगभग 30 मीटर ऊँचा था। इसके दक्षिण मे लगभग 75 मीटर लम्बा, 15 मीटर ऊँचा एक दूसरा पर्वत था। इन दोनो ग्रेनाइट के पर्वतो की चट्टानो को काटकर ये प्रसिद्ध स्मारक बनाये गये थे।

मामल्लापुरम मे समस्त स्मारक समूह प्राचीन स्थापत्य कला का एक उत्कृष्ट उदाहरण है। इनमे एकाश्य रथो के, जिन्हे सप्त मेरू मन्दिर भी कहते है, आसपास खुदे हुए दस मडप, वृहद कक्ष है। मडपो की ऊँचाई 5 या 6 मीटर से अधिक नही है। मडपो के स्तभ जो मडपो के सामने भाग पर है, दुर्गा तथा बराह को समर्पित है। इन मडपो के नाम क्रमश धर्मराज, कोटिकल, महिषासुर, कृष्ण, पाडव, बराह, रामानुज और शिव है। ये मडप उच्च कोटि के माने जाते है। महिषासुर मडप मे शेषशायी भगवान विष्णु और महिष मर्दिनी (दुर्गा) की मूर्तिया है। कृष्ण मडप मे गोवर्धनधारी भगवान कृष्ण की मूर्ति और बराह मडप मे भगवान बराह और भगवान वामन की मूर्तिया उत्कीर्णित है।

थोडी ही दूर पर द्रविण शैली के बने हुए आठ रथ है, जो चट्टान काटकर बनाये गये है। इनमे उत्तर की ओर एक गणेश रथ है। दक्षिण की ओर द्रौपदी, अर्जुन, भीम, धर्मराज और सहदेव नाम के पाच रथ है। रथो की बनावट और गढाई सुदर है।

एक विशाल मन्दिर मे शेषशायी भगवान विष्णु की विशाल मूर्ति है। मन्दिर के पीछे लक्ष्मीजी की मूर्ति है। सागर तट पर भी शिव और विष्णु मन्दिर है। थोडी ही दूर पर, 27 मीटर लम्बी और 9 मीटर ऊँची एक विशाल

गुफा है जिसमे गगावतरण, अर्जुन की तपस्या का दृश्य, पचतत्र और पशुओ के उभरे हुए चित्र अकित है।

यहा का निकटस्थ रेलवे स्टेशन चेगलपट्ट है। यहा यात्री विश्राम गृह और कई होटल भी है। □

4. मन्दिर चिन्तपुर्णी

माता चिन्तपुर्णी का मन्दिर हिमाचल प्रदेश के ऊना जिले मे स्थित है। कहा जाता है कि माता चिन्तपुर्णी माता ज्वालामुखी जी का ही एक अन्य रूप है। उनकी पवित्र ज्वालाओ से स्पर्श करवाकर पिण्डी को किसी भक्त के द्वारा यहा पर स्थापित किया गया।

चिन्तपुर्णी के बारे मे एक दतकथा इस प्रकार है– माईदास नामक दुर्गामाता के एक श्रद्धालु भक्त ने इस स्थान की खोज की थी। माईदास के पिता अठूर नामी गाव (रियासत पटियाला) के निवासी थे। उनके तीन पुत्र थे। देवीदास, दुर्गादास और सबसे छोटे माईदास। अपने पिता की भाति ही माईदास का अधिकतर समय देवी के पूजा–पाठ मे व्यतीत होता था। इस कारण वह अपने बडे भाईयो के साथ व्यापार आदि मे पूरा समय न दे पाते थे। इसी बात को लेकर उनके भाईयो ने उन्हे घर से अलग कर दिया। परंतु माईदास ने फिर भी भक्ति व दिनचर्या मे कोई कमी न आने दी। एक बार अपनी ससुराल जाते समय माईदास जी मार्ग मे घने जगल मे वटवृक्ष के नीचे आराम करने बैठ गए। संयोगवश माईदास जी की आख लग गई और स्वप्न मे उन्हे दिव्य तेज से युक्त एक कन्या दिखाई दी, जिसने उन्हे आदेश दिया कि तुम इसी स्थान पर रहकर मेरी सेवा करो, इसी मे तुम्हारा कल्याण है। तन्द्रा टूटने पर वह फिर ससुराल की ओर चल दिए, परतु मस्तिष्क मे बार–बार यह ध्वनि गूजती रही: "इस स्थान पर रहकर मेरी सेवा करो, इसी मे तुम्हारा कल्याण है।" ससुराल से वापस आकर मार्ग

मे माईदास के कदम फिर यहा ठिठक गए। घबराहट मे वह फिर उसी वटवृक्ष की छाया मे बैठ गये और भगवती की स्तुति करने लगे। उन्होने मन ही मन प्रार्थना की, "हे माता! यदि मैने शुद्ध हृदय से आपकी उपासना की है तो प्रत्यक्ष दर्शन देकर मुझे आदेश दे, जिससे मेरा सशय दूर हो।" बार–बार स्तुति करने पर उन्हे सिहवाहिनी दुर्गा के चतुर्भुजी के रूप मे साक्षात दर्शन हुए। देवी ने कहा कि मै इस वृक्ष के नीचे चिरकाल से विराजमान हू। यवनो के आक्रमण तथा अत्याचारो के कारण लोग मुझे भूल गए है। मै इस वृक्ष के नीचे पिण्डी के रूप मे स्थित हू। तुम मेरे परम भक्त हो, अत यहा रहकर मेरी आराधना और सेवा करो। मै छिन्नमस्तिका के नाम से पुकारी जाती हू। तुम्हारी चिता दूर करने के कारण अब मै चिन्तपुर्णी के नाम से प्रसिद्ध हो जाऊगी।

माईदास जी ने नतमस्तक होकर निवेदन किया– हे जगजननी! भगवती। मै अल्पबुद्धि व अशक्त जीव हू। इस भयानक जगल मे अकेला किस प्रकार रहूगा? न यहा पानी, न ही रोटी और न ही कोई रहने के लिए स्थान बना है। यहा तो दिन मे ही डर लगता है, रात्रि कैसे कटेगी? माता ने कहा कि मै तुमको अभयदान देती हू। मेरे नाम का जाप करो, जिससे तुम्हारा भय दूर होगा। नीचे जाके तुम किसी बडे पत्थर को उखाडो, वहा जल मिलेगा, उसी से तुम मेरी पूजा करना। जिन भक्तो की मै चिन्ता दूर करूगी, वे स्वय ही मेरा मन्दिर बनवा देगे। जो चढावा चढेगा, उससे तुम्हारा गुजारा हो जायेगा। सूतक पातक का विचार न करना, मेरी पूजा का अधिकार तुम्हारे वश को ही होगा। ऐसा कहकर माता पिण्डी के रूप मे लोप हो गई।

भक्त माईदास की चिन्ता का निवारण हुआ। उन्होने पहाडी से नीचे उतर कर एक पत्थर हटाया तो वहा काफी मात्रा मे जल निकल आया। माईदास की खुशी की सीमा न रही। उन्होने वही अपनी झोपडी बना ली। उसी जल से नित्य पिण्डी की पूजा करनी शुरू कर दी। आज भी वह बडा पत्थर जिसे माईदास जी ने उखाडा था, चिन्तपुर्णी मन्दिर मे रखा है। जिस स्थान से जल लाकर माता का अभिषेक किया जाता है, वहा अब सुदर तालाब बनवा दिया गया है। इस स्थान से जल लाकर माता का अभिषेक किया जाता है। इस तरह चिन्तामुक्त होने के कारण इस स्थान का नाम चिन्तपुर्णी पडा। जो भी यात्री चिन्तपुर्णी आता है वह ज्वालामुखी और कागडा मन्दिर भी अवश्य जाता है।

इस स्थान पर अब एक भव्य मन्दिर का निर्माण हुआ है और प्रति वर्ष हिमाचल प्रदेश के कोने–कोने से लाखो यात्री यहा आकर माता की प्रार्थना करते है और श्रद्धा अनुसार भेट चढा कर अपने को धन्य मानते है। प्राय. प्रतिदिन ही अनेक नव विवाहित दम्पति सुखमय जीवन के लिए माता का आशीर्वाद प्राप्त करने हेतु यहा आकर माता के चरणो मे माथा टेककर प्रसाद स्वीकार करते है। □

5. सावन कृपाल रूहानी मिशन

दिल्ली

सावन कृपाल रूहानी मिशन आध्यात्मिकता, शान्ति एवं मानव सेवा के प्रति समर्पित है। यह सस्था जिसकी स्थापना सत दर्शनसिंह जी महाराज (1921–1989) ने की थी, अब सत राजिदरसिह जी महाराज के निरीक्षण मे कार्य कर रही है। जो कार्य हुजूर बाबा सावनसिह जी महाराज (1858–1948) तथा सत कृपालसिह जी महाराज (1884–1974) ने प्रारभ किया था उसको इन्होने निरतर जारी रखा है। इसका अतर्राष्ट्रीय प्रमुख कार्यालय दिल्ली मे है। 40 देशो मे 750 केद्रो की स्थापना हुई है। यह विश्व के कोने–कोने से आए हुए लोगो को शान्ति और आनन्द प्रदान करता है, जो आध्यात्मिक शान्ति प्राप्त करने मे समर्थ है। इस आध्यात्मिक विज्ञान को पूर्ण गुरु साधारण शब्दो तथा बडे प्राकृतिक ढग से व्यक्त करते है, जो कि मानव की आतरिक एव बाह्य शान्ति के लिए आवश्यक है। इस अभ्यास को 'सुरत शब्द योग', संत मत या अतरीय प्रकाश और शब्द को सुनने की कला कहते है।

भजन ध्यान आदि की कला सीखने पर मानव, मानव के उच्च मूल्य के सिद्धातो को कैसे विकसित करे तथा जीवन मे अधिक धनी बने और विश्व को अपना योगदान देने मे सफल हो सके, यह इस मिशन की शिक्षा का उद्देश्य है।

केन्द्र

आध्यात्म विज्ञान के 750 केन्द्र विश्व के विभिन्न भागो मे स्थापित है। यहा जाकर जिज्ञासु, आध्यात्किता के विषय मे अनुसधान कर सकते है तथा ध्यान की कला को सीख सकते है। केद्र मे सत्सग, वीडियो तथा ऑडियो टेपो के द्वारा आध्यात्मिक पहलुओ पर विचार–विमर्श, बच्चो का सत्सग, उनका चारित्रिक विकास, सामूहिक भजन सिमरन तथा बातचीत करके रुचियो का, गुणो का पता लगता है।

अभ्यास केन्द्र

अभ्यास केद्र बहुत से देशो मे स्थित है, जहा ध्यान शिविर विशेष रूप से लगाए जाते है ताकि भजन सिमरन मे उन्नति हो सके। मुख्य अभ्यास केद्र और अतर्राष्ट्रीय कार्यालय कृपाल आश्रम, दिल्ली मे स्थित है जहा सत राजिदरसिह जी बहुत सा समय व्यतीत करते है। केन्द्रो मे प्रमुख 'साइस ऑफ स्पिरिचुअलिटि' केन्द्र नेपर विला इलीनास, 'सावन कृपाल मेडीटेशन सेटर' बाइलिग ग्रीन विर्जनीया, 'सावन कृपाल मेडीटेशन सेटर' पेसीफिक नार्थवेस्ट ब्रिच बे, वाशिगटन मे है।

विश्व से लोग कृपाल आश्रम, विजय नगर दिल्ली मे भजन, अभ्यास, सत्सग और सम्मेलनो मे भाग लेने के लिए आते है। आश्रम मे अतिथियो के लिए कमरे, अभ्यास गृह, पुस्तकालय जहा सभी धर्मो की पुस्तके उपलब्ध है, और धर्मो का तुलनात्मक अध्ययन भी किया जा सकता है। प्रतीक्षालय तथा सभा गृह भी है। लगर (भोजनालय) नि शुल्क है जहा प्रतिदिन 200 व्यक्ति, 10,000 के लगभग प्रति इतवार, 50,000 से भी ऊपर सम्मेलनो के दिनो मे जो 3 से 10 दिन तक चलते है, भोजन करते है। आश्रम मे नि शुल्क होम्योपैथिक, एलोपैथिक और आयुर्वेदिक दवाखाना है। आखो की जाच भी नि.शुल्क की जाती है तथ लोगो को चश्मे भी दिए जाते है।

'साइस ऑफ स्पिरिचुअलिटि' केन्द्र नेपर विला, इलीनास वेस्ट, सवर्ब शिकागो मे स्थित है जो कि आध्यात्मिक विज्ञान का, पश्चिमी देशो का मुख्य कार्यालय है। यहा पर सत राजिदरसिह जी महाराज नियमित रूप से साप्ताहिक सत्सग देते है। यह कृपाल पब्लिकेशन का मुख्य केद्र तथा वितरण केद्र भी है जहा से पुस्तको, वीडियो तथा आडियो टेपो को बनाया

तथा वितरित किया जाता है। साप्ताहिक सत्संगो पर नि.शुल्क खाना दिया जाता है। प्रशिक्षण शिविर भी लगते रहते है।

सेवा योजनाएं

मानवता की सेवा करना आध्यात्मिक विज्ञान केद्र का प्रमुख उद्देश्य है जैसे दैवी प्रकोप, भूचाल आना, बाढ आना, महामारी फैलना आदि के समय यह धन तथा औषधिया भेजकर सहायता करता है। कोलविया मे ज्वालामुखी का फूटना, मैक्सिको मे भूचाल, हरियाणा, पजाव, उत्तर प्रदेश तथा दिल्ली मे बाढ, इथोपिया मे अकाल और मैमी तथा फ्लोरिडा मे चक्रवात, देशो तथा विदेशो मे खाने पीने का तथा दवाइया, सामान भेजा जाता है। आध्यात्मिक गुरु अपना वहुमूल्य समय वीमारो को उनके घरो मे देखने जाने या अस्पतालो मे, वृद्धो की सहायता करने, नि.सहायो को विशेष रूप से सहायता देने मे विताते है। विद्यार्थियो को पढने में सहायता तथा प्रोत्साहन देना ताकि वे संसार मे एक विशिष्ट स्थान वना सके और अच्छे नागरिक वन सके।

वातावरण को शुद्ध वनाना तथा वच्चो को पर्यावरण के विषय मे समझाना, जीवन के हर क्षेत्र मे उन्हे शिक्षित करना, अहिसा, पशु पक्षियो के प्रति प्यार रखना इत्यादि आध्यात्मिकता का मूलभूत आधार है।

महान बपौती

इस आध्यात्म विज्ञान के जितने भी महान गुरु हुए है उन्होने महान सूफी सन्तो तथा सभी धर्मो के प्रमुख महापुरुषो की शिक्षाओ को ग्रहण किया है। पाश्चात्य देशो मे यह शिक्षा हुजूर वावा सावनसिह (1858–1948) जी महाराज के द्वारा दी गई। यूरोप और अमेरिका के शिष्यो ने ध्यान की कला हुजूर द्वारा स्थापित केन्द्रो के माध्यम से प्राप्त की। हुजूर के उत्तराधिकारी संत कृपालसिंह जी महाराज (1894–1974) ने तीन विश्व यात्राए की तथा यह शिक्षा जिज्ञासुओ के लिए और भी सुलभ कर दी। उत्तरी और दक्षिणी अमेरिका, यूरोप, एशिया, अफ्रीका और आस्ट्रेलिया मे केन्द्रो की स्थापना हो गई। सत दर्शनसिह जी महाराज (1921–1989) ने चार विश्व यात्राए की तथा आध्यात्मिक पुस्तके तथा साहित्य 50 भाषाओ मे प्रकाशित करवाया।

उन्होने बताया कि आज के आधुनिक युग मे आध्यात्मिकता का कैसे अभ्यास किया जाए। सत राजिदरसिह जी महाराज, वर्तमान सत्गुरु ने, नए

केन्द्रो की स्थापना की जो अब 750 तक पहुच गए है। इन्होने एशिया, यूरोप, उत्तरी अमेरिका, आस्ट्रेलिया तथा मध्यवर्ती भागो मे अनेक दौरे किए। शिविरो मे हजारो लोगो को तुरत ही भजन सिमरन मे लाभ प्राप्त हुआ। इस शिविर का कार्यक्रम ध्यान, भजन सिमरन, सत्सग, लोगो से मिलना, बच्चो का कार्यक्रम और युवको को भी आध्यात्मिकता के विषय मे बताना है। ☐

6. मनीकर्ण-कुल्लू

सम्पूर्ण हिमालय जिसे गिरिराज भी कहते है, भगवान शिव और पार्वती की साधना और तप की स्थली माना जाता है। यही कारण है कि समस्त हिमालय क्षेत्र मे स्थान–स्थान पर शिवालय मौजूद है।

मणिकर्ण कुल्लूघाटी के अतर्गत आता है। इस स्थान पर एक विशाल गुरुद्वारा है, जिसमे एक समय मे पाच छ सौ व्यक्ति ठहर सकते है और इस जगह हर समय गुरु का लगर चलता रहता है। यहा शुद्ध गाय के घी से बनाया हुआ भोजन व चाय इत्यादि यात्रियो को परोसी जाती है।

यह गुरुद्वारा जिसे हरिद्वार मन्दिर भी कहा जाता है, बाबा हरि नारायण के प्रयत्नो का सुफल है। वे पजाब के रहने वाले थे और 1939 मे कुल्लू से दुर्गम पहाडी रास्तो पर चल कर इस स्थान पर पहुचे थे। पीठ पर सामान बाधे हुए, प्राचीन शिव मदिर के पास जहा उबलते हुए पानी के कुण्ड है, अपनी धर्मपत्नी और लडकियो के साथ आए और यहा डेरा जमा लिया। यात्रियो को वे उस समय अपने हाथ से तैयार किया हुआ खाना खिलाते रहे। उनकी घोर तपस्या से आज इस प्राचीन शिव मदिर के निकट पाच मजिला एक शानदार गुरुद्वारा बन कर खडा हो गया है।

मनीकर्ण पार्वती नदी के दाए किनारे पर स्थित है। यहा पर प्राचीन शिव मन्दिर के अतिरिक्त राम मन्दिर भी है।

कहते है कि इस स्थान पर भगवान शिव ने पार्वती के साथ निवास किया था। इस तीर्थ का एक नाम चिन्तामणि भी है। ब्रह्माण्ड पुराण मे इसका

दूसरा नाम हरिहर है। इसका एक नाम अर्द्धनारीश्वर भी है।

दन्तकथा के अनुसार पार्वती के पास समस्त इच्छाओ को पूरा करने के लिए एक 'चिन्तामणि' थी, जो पार्वती के स्नान करते समय गिर पडी और सीधे पाताल मे शेषनाग के पास पहुची। कहते है कि भगवान शकर ने अपने गणो को आज्ञा दी कि इस मणि की तलाश करो, लेकिन मणि नही मिल सकी। इस पर भगवान शिव क्रोधित हो गये और उन्होने अपना तीसरा नेत्र खोला, जिससे पूरी पृथ्वी कापने लगी। कहते है कि भगवान शकर के नेत्रो से नैनादेवी प्रकट हुई। इसलिए मनीकर्ण नैनादेवी का जन्म स्थान कहलाता है। पाताल मे शेषनाग सोचने लगे कि भगवान शिव के क्रोध का कारण क्या है, क्योकि अभी प्रलय का समय तो आया नही। फिर विचार किया कि मणि के खो जाने के कारण ही यह धरती काप रही है। नैनादेवी ने शेषनाग से कहा कि अगर उनके पास मणि है तो दे दे। शेषनाग ने फुकार मार कर मणि भेट कर दी। इस कारण इस स्थान का नाम मनीकर्ण पडा।

पश्चिमी हिमालय क्षेत्र का यह बडा पुराना तीर्थ स्थान है। पहले लोग बडी मुश्किल से इस दुर्गम तीर्थ स्थान पर पहुचते थे, लेकिन अब मनीकर्ण तक बसे आती जाती है और रहने की सुविधा भी इस गुरुद्वारे मे है।

इस गुरुद्वारे की सबसे बडी विशेषता यह है कि यहा हर धर्म और सम्प्रदाय के प्रवर्तको के चित्र या चिन्ह मौजूद है।

किसी भी धर्म पर किसी प्रकार का कटाक्ष नही किया जाता। सर्वधर्म समभाव की बात की जाती है। प्रतिदिन प्रातः और रात्रि समय गुरुग्रन्थ साहिब की वाणी पढी जाती है और रात्रि समय सगतो के सन्मुख भगवान शंकर से शुरू करके गुरुनानकदेव तक की कथा सुनाई जाती है।

मनीकर्ण एक बडा रमणीक और प्राकृतिक दृश्यो से भरपूर स्थान है, पार्वती नदी का पानी इतना ठण्डा कि हाथ लगाना भी मुश्किल और गर्म पानी के कुण्डो मे इतना गर्म कि उसमें खाना तो पकता ही है लेकिन अगर गलती से उसमे हाथ या पाव लग जाए तो जल जाते है। इस गर्म पानी मे गधक की बू बास नही है। वैज्ञानिको के अनुसार मनीकर्ण के गर्म चश्मो मे रेडियम मौजूद है और इस कारण ही पानी उबलता रहता है। यदि गधक हो तो पानी केवल गर्म होता है, उबलता नही।

कहते है कि गुरुनानक देव 1575 ई. मे इस जगह आए थे। जिस स्थान पर उन्होने तपस्या की वह शिव मन्दिर और बावडी के निकट एक गुफा है।

यह गुफा आज भी मौजूद है। इस जगह पन्द्रह बीस मिनट बैठने पर शरीर से खूब पसीना आने लगता है। गुरुनानक देव जी इस उबलते गर्म पानी की बावडी मे खाना पका कर खाते रहे। अब इसी स्थान पर यह गुरुद्वारा स्थित है।

बाबा नारायण हरिजी सत्य, प्रेम और त्याग की साक्षात् मूर्ति थे। वे कडी मेहनत करके यात्रियो के लिए खाना बनाते और परोसते थे। वहा वे पत्थर तोड तोड कर खून पसीना बहा कर ही भोजन करते थे। इनकी वाणी से सदा प्रेम और मोहब्बत की ही वर्षा होती थी। सत्य, अहिसा और करुणा का प्रचार करना इनका उद्देश्य रहा। सन्त नारायण हरिहर जी ने सभी धर्मो की मौलिक एकता दृढ करने के लिए सभी को अपनी इष्ट धर्म की पूजा बदगी की स्वतत्रता का आदर्श प्रस्तुत किया। सभी धर्मो की वाणिया सत्सग मे सुनाया करते थे जो आज भी सुनाई जाती है। आप सत्सग मे सदा अपने मीठे स्वर मे कहते रहे कि 'जिनी मुहबता लाइया मुहबता दिला दिया' तथा 'ओम हरे राम हरे श्री राम–राम हरे' की ध्वनि लगाते तो समस्त वातावरण प्रेम और एकता की स्वच्छता से भर कर आकाश गूज उठता। जब आप निराकार परमेश्वर की प्रेम पूजा मे साकार आरती करते थे, तो देवी देवता शखो, साजो का अनहद नाद बजा कर दरबार साहिब के कण–कण को सगीतमय बना दते थे। यह दृश्य बहुत मनमोहक और आनन्द से भरपूर होता था।

इन्होने 22 फरवरी, 1989 को मनीकर्ण के सत सरोवर मे जल समाधि लेकर अपने आपको अमर कर लिया। आज भी इस गुरुद्वारे की वही परपरा है जो सत नारायण हरिहर जी के समय मे थी। बिना किसी भेदभाव के कोई भी यात्री यहा ठहर सकता है और गुरुद्वारे का प्रसाद छक सकता है। इस जगह अब लगभग छ सात सौ लोग प्रतिदिन आते है। सर्दियो मे यह तादाद कम हो जाती है। लेकिन यहा बारह महीने यात्री पूरे देश से आते रहते है। मनीकर्ण पहुचने के लिए कुल्लू से हर आधे घटे के बाद बसे मिलती है। भून्तर कुल्लू का हवाई अड्डा है। मनीकर्ण एकान्त, शान्त और रमणीक स्थान है। जो एक बार यहा आता है उसका बार–वार यहा आने को मन करता है। यहा आकर यात्रियो को आध्यात्मिक व मानसिक शाति प्राप्त होती है। ❑

7. गुरुद्वारा हेमकुंट साहिब

हिमालय पर्वत मे स्थित सिखो का बहुत ही पवित्र स्थान गुरुद्वारा हेमकुट साहिब है। यही पर गुरु गोविदसिह ने अपने पूर्वजन्म मे तपस्या की थी। गुरु गोविदसिह द्वारा रचित 'बचित्र नाटक' मे हेमकुट का वर्णन किया गया है, जो निम्नाकित है

अब मै अपनी कथा बखानो। तप साधव जिह विधि मोहि जानो।
हेमकुट पर्वत है जहां। सपत श्रृग शोभित है तहा।।
तह हम अधिक तपस्या साधी। महाकाल कालका आराधी।
एहि विधि करत तपस्या मयो। दो ते एक रूप हो गयो।
तात मात मुर अलख अराधा। बहुत विधि जोग साधना साधा।
तिन जो करी अलख की सेवा। ता ते भये प्रसन्न गुरु देवा।
तिन प्रभु जब आइस मुहि दिया। तब हम जन्म कलु महि लीया।
चित न भयो हमरो आवन कह। चुभी रही सूर्ति प्रभु चरन न यहँ।
जियो जियो प्रभु हम को समझायो। इमि कहि के एक लोक पठायो।

(बचित्र नाटक)

यह है साक्षी हेमकुट की तपोभूमि की, जिसे गुरु गोविदसिह जी ने अपने पूर्वजन्म मे तपस्या के लिए चुना था।

गुरुजी के श्रद्धालुओ के मन मे गुरुजी की तपोभूमि के दर्शन की इच्छा प्रबल थी। लेकिन इस बारे मे कोई जानकारी नही थी कि हेमकुट का यह पावन स्थान कौन सा है और कहा है। इसका वर्णन किसी पुरातन ग्रन्थ मे भी नही मिलता था। इसलिए जब सिख विद्वानो ने हेमकुंट की खोज आरभ की, तो गुरुजी की कृति 'बचित्र नाटक' मे लिखा निम्नाकित सकेत ही उनकी खोज का आधार बना।

"सपत श्रृग तिहु नाम कहावा।
पड राज जह जोग कमावा।।"

इसी सकेत के आधार पर हिमालय पर्वत के उन स्थानो की छानबीन की

गई, जिनका पाडवो से सबध था। ऐसे बहुत से स्थान थे। अत मे 1936 मे बद्रीनाथ के समीप 'पाडुकेश्वर' नामक तीर्थ स्थान के आसपास खोज करते हुए मौजूदा हेमकुट का पता चला। यह स्थान पाडुकेश्वर से लगभग 17 किलोमीटर दूर बर्फीले पहाडो से घिरा हुआ एक रमणीक सरोवर है जिसके आसपास सात पर्वत शिखर भी देखे जा सकते है।

पडित तारा सिह जैसे सिख विद्वानो ने इस खोज को प्रामाणिक मान लिया और धीरे-धीरे सिख समुदाय मे इस खोज को, हेमकुट को पावन तीर्थ मानने की धारणा परिपक्व हो गई। गुरु गोविदसिह की तपोभूमि होने के कारण हेमकुट के प्रति आस्था और श्रद्धा दृढ होती गई। परिणामत अनेक कठिनाइयो का सामना करते हुए भी हजारो यात्री इस पर्वतीय तीर्थ स्थल हेमकुट आते है और अपने को कृत कृत्य समझते है।

हेमकुट गुरुद्वारे की इमारत बनाने के लिए सिख सगतो की ओर से एक ट्रस्ट बनाया गया था। इस ट्रस्ट ने समुद्र की सतह से 15000 फुट ऊचाई पर सरोवर के किनारे एक भव्य गुरुद्वारे का निर्माण कराया है। इसके अलावा हेमकुट ट्रस्ट ने रास्ते मे कई पडावो पर भी गुरुद्वारो का निर्माण कराया है, जैसे– हरिद्वार, ऋषिकेश, श्री नगर (गढवाल), जोशीमठ, गोविदघाट और गोविद धाम। इन सभी स्थानो पर यात्रियो के ठहरने और रहने का पूरा इतजाम किया गया है।

यात्रा का पहला पडाव ऋषिकेश है। यहां से बस के द्वारा पहाडी यात्रा प्रारभ हो जाती है। गोविन्दघाट पहुचने पर, पैदल यात्रा शुरू होती है। गोविन्दघाट से लगभग 12 किलोमीटर की दूरी पर, गुरुद्वारा गोविन्दधाम है। कठिन चढाई करने पर भी यात्री को कठिनाई महसूस नही होती, क्योकि सारा मार्ग रमणीक प्राकृतिक दृश्यो से भरपूर है। गोविन्दधाम पहुच कर यात्री एक रात आराम करते है। अगले दिन सवेरे हेमकुट की यात्रा प्रारभ होती है। यहा से हेमकुट पाच किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। यह पाच किलोमीटर की यात्रा बहुत कठिन है। लेकिन श्रद्धालु यात्री कठिनाई की परवाह न करते हुए अपने लक्ष्य की प्राप्ति के लिए आगे बढते जाते है।

हेमकुट सरोवर के बर्फीले पानी मे स्नान करके श्रद्धालु यात्री आत्मिक सतोष का अनुभव करते है और अपने को धन्य समझते है। ❑

8. जुडा ह्याम सिनगॉग

दिल्ली मे द्वितीय विश्व युद्ध के पहले यहूदियो की सख्या कम थी। दिल्ली मे व्यापार करने वाले अफगानी, फ्रासीसी, रूसी और कुछ यहूदी व्यापारी थे जो चमडे के निर्यात का व्यापार करत थे। यह सब और कुछ भारतीय यहूदी, एक यहूदी के घर मे जो सदर बाजार बारा टूटी मे था, प्रार्थना किया करते थे। विश्व युद्ध के समय और उसके बाद, वे यहूदी जो विदेशी राजदूतावासो मे काम करते थे तथा और अधिक भारतीय यहूदी दिल्ली आये। ये सब लोग मिलकर यहूदी धर्म से सबधित पवित्र अवसरो पर स्वर्गीय श्री बारूच बी बेजामिन के घर मे प्रार्थना सभा का आयोजन करने लगे। स्वर्गीय श्री बारूच बी बेजामिन ज्यूविश वेलफेयर एसोसिएशन, नई दिल्ली के प्रथम अध्यक्ष थे। भारत सरकार की सेवा से निवृत्त हुए तो उन्होने दिल्ली छोड दी। उसके बाद यहूदी प्रार्थना सभाओ का आयोजन, डाक्टर मिस रियूवेन और उनकी बहन स्वर्गीय मिस लूना रिडवेन के कनाट प्लेस स्थित आवासी भवनो मे किया जाने लगा।

दिल्ली के आसपास यहूदी समुदाय की धार्मिक, सामाजिक और सास्कृतिक आवश्यकताओ को ध्यान मे रखते हुए सन् 1949 मे स्वर्गीय एजरा कोलेट, श्री बेजामिन जैकब तथा श्री जे एम. बेजामिन की पहल पर ज्यूविश वेलफेयर एसोसिएशन का सगठन किया गया। इस सुगठित सगठन ने यह महसूस किया कि दिल्ली के यहूदियो का अपना प्रार्थना सभाकक्ष तथा सामुदायिक भवन बहुत आवश्यक है।

सन् 1954–55 मे स्वर्गीय डॉ. रेचल जूडा ने चार हजार रुपये, इस कार्य के लिए अपने पिता की स्मृति मे दान मे दिए। उनके पिता खान बहादुर डॉ जूडा हाईम पूना के एक मशहूर शिक्षाविद् तथा सामाजिक कार्यकर्ता थे। उनका देहात सन् 1935 मे हो गया। इस तरह दिल्ली स्थित सिनगॉग का निर्माण तथा स्थापना हुई।

यह सभा कक्ष दिल्ली के यहूदियो के केद्र होने के अलावा विभिन्न धर्मो के अध्ययन का भी केद्र है। इस कार्य के लिए एक नया सभा कक्ष का निर्माण

करके 26 दिसबर, 1979 को यहूदी सिनगॉग को समर्पित किया गया। इस केद्र से एसोसिएशन की तरफ से 'ओर' नामक बुलेटिन प्रकाशित किया जाता है, जिसमे यहूदी धर्म और अन्य धर्मो की एकता पर बल दिया जाता है। इस केद्र मे सभी धर्मो से पुस्तको का एक अच्छा भडार और पुस्तकालय है। सभी धर्मो के लोगो के लिए यह पुस्तकालय और पुस्तके उपलब्ध रहती है। इसमे अलावा रविवार के दिन सुबह हिब्रू भाषा का शिक्षण प्रदान होता है।

जुडा हाईम हाल की रजत जयती 7 फरवरी, 1982 को मनाई गई थी। जिसमे सभी धर्मो के लोगो ने भाग लिया था। यह सिनगॉग 2 हुमायूँ रोड, ताज महल होटल के पास नई दिल्ली–110003 मे स्थित है।

परदेसी सिनगॉग,
कोचीन-केरल

इस सिनगॉग का निर्माण सैम्यूअल कैस्टिअल, डेविड बेलिला इफ्राहीम साला तथा जोसेफ लेवी, जो स्पेन, डच और अन्य यूरोपीय यहूदियो के वशज थे, ने सन् 1668 मे कराया था। यह सिनगॉग महाराजा कोचीन के महल के पास मे बना हुआ है। पास मे ही एक हिन्दू धर्म से सबधित मन्दिर भी है। इस तथ्य से ही यह प्रकट होता है कि यहूदियो के केरलवासियो से बहुत ही घनिष्ठ और हार्दिक सबध थे।

इस सिनगॉग का प्रवचन मच पीतल का बना हुआ है। इसमे चीन से लाये उत्कृष्ट नक्काशीदार टाइल लगे हुए है। ये टाइल सन् 1750 मे चीन से लाये गये थे। इस सिनगॉग का चौकोर घटा घर है। घटा घर की बडी धडी के डायल मे हिब्रू, मलयालम और रोमन मे सख्या अकित है। इस सिनगॉग का बहुत ही सुदर मेहराव है, जिसमे नौरात चादी के सुदर स्वर्ण मडित अक्षरो मे अकित की गई है।

ट्रावनकोर के महाराजा ने सन् 1805 मे अपना एक मुकुट इस सिनगॉग को दान मे दिया था।

यह दुनिया का सबसे पहला सिनगॉग है जो किसी राष्ट्रमडलीय देश मे स्थापित किया गया है। भारत सरकार ने इस सिनगॉग को ऐतिहासिक स्मारक घोषित किया है तथा इसे एक पर्यटन केद्र भी घोषित किया है।

भारत की प्रधानमत्री श्रीमती इदिरा गाधी इस सिनगॉग की चौथाई

शताब्दी के समारोह के आयोजन मे पधारी थी। उस समय भारत सरकार की ओर से इस सिनगॉग के स्मरणार्थ सम्मान मे एक डाक टिकट भी जारी किया था। यह सिनगॉग ज्यू टाउन, मट्टनचेरी, कोचीन मे स्थित है।

गेट ऑफ मरसी सिनगॉग, मुम्बई
शार-हा-रहामीम सिनगॉग

सन् 1896 तक यह सिनगॉग सामानी, हासानी सिनगॉग या जूनी मस्जिद के नाम से जाना जाता था। इस सिनगॉग का दिलचस्प इतिहास है। यह सिनगॉग सन् 1796 मे बेन इजरायल सिनगॉग के रूप मे स्थापित किया गया था। इसे सामाजी हासाजी ने निर्माण कराके धर्मार्थ दान मे दे दिया था। सैम्यूअल इजेकियल दिवेकर (सामाजी हासाजी दिवेकर) ने महाराष्ट्र सेना मे सूबेदार मेजर के पद से निवृत्त होने के बाद इस सिनगॉग का निर्माण कराया। सामाजी हासाजी दिवेकर पाच भाई थे। सभी बम्बई की सेना मे अधिकारी थे, जो बाद मे बम्बई आ बसे थे। बम्बई मे आने वाला उनका परिवार मशहूर परिवार था। बेन इजरायलियो का विश्वास है कि उन्होने अन्य बेन इजरायलियो के साथ मैसूर के टीपू सुल्तान के सामने सन् 1783 मे वेदनूर मे दूसरे मैसूर युद्ध के समय आत्मसमर्पण कर दिया था। जब उन्होने बताया कि वे बेन इजरायली है तो उन्हे प्राण दण्ड से मुक्त कर दिया गया था। टीपू की मा ने बेन इजरायलियो का पक्ष लिया और उन्हे प्राण दण्ड से मुक्त कराया। उसने यह सब इसलिए किया क्योकि कुरान मे, बेन इजरायलियो के प्रति अच्छी राय जाहिर की गई है। ऐसा विश्वास किया जाता है कि उस समय दिवेकर ने यह निश्चय किया था कि वे यदि छूट गये तो कृतज्ञता प्रकट करने के लिए धन्यवाद स्वरूप वे बम्बई मे एक सिनगॉग का निर्माण करायेगे। युद्ध की समाप्ति पर सन् 1784 मे युद्ध बदी छोड दिए गए। जब दिवेकर सेना से निवृत्त हुए तो उन्होने बम्बई मे सिनगॉग का निर्माण कराया। श्री दिवेकर सन् 1797 मे वे कोचीन मे नौरात (मूसा–सहिता) लेने गये, लेकिन उनका वहा देहात हो गया।

जिस सडक पर सिनगॉग स्थित है, उस सडक का नाम सामाजी हासाजी दिवेकर के प्रति सम्मान प्रकट करने के लिए सामाजी स्ट्रीट रख दिया गया है। बम्बई के मस्जिद बदर स्टेशन का नाम सिनगॉग के आधार पर किया

गया। सन् 1896 मे इस सिनगॉग के सौ साल पूरे होने पर शताब्दी समारोह आयोजित किया गया। उसी अवसर पर इसका नाम बदल कर 'शार–हा–रहमीम' कर दिया गया। इस सिनगॉग का 198वा स्थापना दिवस समारोह 6 दिसबर, 1994 को आयोजित किया गया। 1996 मे इसके द्वितीय शताब्दी समारोह का आयोजन किया गया था।

यह सिनगॉग 254 सैम्यूअल स्ट्रीट (इजरायल मोहल्ला) पाडवी, बम्बई–400003 मे स्थित है। □

9. ब्रज क्षेत्र

श्रीकृष्ण का जन्म अर्द्धरात्रि के समय मथुरा मे कस के कारावास मे हुआ था, किन्तु चमत्कारिक रूप मे उन्हे जन्म के तुरत पश्चात गोकुल मे नन्द के निवास स्थान पर पहुचा दिया गया। गोकुल मे ठीक उसी समय नन्द की पत्नी यशोदा ने एक पुत्री को जन्म दिया। इस नवजात बालिका को तुरत ही जन्म के पश्चात मथुरा मे उसी कारागार मे पहुचा दिया गया, जहा देवकी की कोख से कृष्ण ने जन्म लिया था। इन दोनो चमत्कारिक घटनाओ का किसी को भी पता नही लगा।

जब कस को सूचना मिली कि उसकी बहन देवकी ने एक पुत्री को जन्म दिया, तो वह तुरत कारागार मे आया और उसने नवजात बालिका की हत्या कर दी। उसी समय कस को सबोधित करते हुए देववाणी हुई कि तूने जिस बालिका की हत्या की है, वह तो निर्दोष है। तुझे मारने वाला बालक गोकुल मे जन्म ले चुका है।

यद्यपि कृष्ण का जन्म मथुरा मे कस के कारागार मे हुआ था, लेकिन उनका लालन पालन गोकुल मे नन्द और उनकी पत्नी यशोदा के घर मे हुआ। कस ने कृष्ण को मारने के लिए अनेको उपाय क़िए, किन्तु इस प्रयत्न मे वह विफल रहा। कृष्ण को मारने के लिए पूतना राक्षसी को भेजा, लेकिन बाल कृष्ण ने दूध पीते हुए उसको भी मार डाला। जो भी प्रयत्न कस ने कृष्ण को मारने के लिए किए, उन सबको कृष्ण ने विफल कर दिया।

तदन्तर कुछ समय और बीत जाने पर बलराम और कृष्ण गोकुल मे पल बढकर सयाने हो गये। उन्होने अनेक प्रकार की बाल क्रीडाये गोकुल मे कीं। कृष्ण गोकुल मे रहते हुए बासुरी बजाकर गोकुलवासियो को मोहित करते रहे। यमुना नदी मे खेल खेल मे एक भयकर सर्प को मारा, जिसकी वजह से गोकुलवासी परेशान थे। कस के द्वारा उनको मारने के लिए, सभी प्रयत्नो को कृष्ण ने अपनी बाल लीला के माध्यम से विफल कर दिया।

गोकुल मे रहते हुए कृष्ण ने ग्वालबालो के साथ गाये चराईं। उस समय वे वन मे गुजा और तापिच्छ के आभूषण धारण करते थे। वे ग्वालबालो के साथ खेलते और विभिन्न बाल क्रीडाये करते थे।

बचपन मे श्रीकृष्ण बहुत ही नटखट और शरारती थे। प्राय. ककड मारकर गोपियो के जल से भरे घडे फोड देते थे। उनको मक्खन खाने का बडा शौक था, इसलिए वे अपने बाल सखाओ के साथ, मक्खन चुरा कर खा जाते थे। इस कार्य मे उनके बाल सखा भी शामिल होते थे। इसलिए कृष्ण को 'माखन चोर' भी कहा जाता है। गोपिया कृष्ण की शरारतो से तग आकर यशोदा मैया से शिकायत करती तो कृष्ण कहते कि ये सब झूठ बोल रही है।

गोकुल मे उनके बाल क्रीडा के स्थान आज उनके भक्तो के लिए तीर्थ स्थल बन गये है। भगवान के अवतार माने जाने वाले तथा महाभारत के वास्तविक नायक, श्रीकृष्ण का बाल जीवन बहुत साधारण ढग से बीता, किन्तु उन्होने अपने बाल जीवन मे ही गोकुलवासियो को यह अहसास करा दिया था कि वे भविष्य मे एक असाधारण व्यक्तित्व के धनी होगे। इसलिए सभी नर नारी और बाल, वृद्ध उनकी बाल लीलाओ मे भविष्य मे उनके महान कृतित्व का दर्शन करते थे। इस प्रकार बलराम और श्रीकृष्ण दीर्घकाल तक गोकुल मे नाना प्रकार की लीलाये करते रहे।

गोकुल तथा गोकुलवासियो का श्रीकृष्ण से निकट का सबध था। गोकुल मे रहते हुए उन्होने अपना बालपन बिताया और मथुरा मे आकर कस का वध किया। इसके बाद भगवान श्रीकृष्ण का विराट व्यक्तित्व प्रकट होता है, जिसे बाद मे भगवान के अवतार की सज्ञा मिली। गोकुलवासी, जो साधारण गोप थे, सोच भी नहीं सकते होगे कि उनके बीच मे शरारती, नटखट और माखन चुराकर खाने वाला बालक भारत का महान व्यक्ति होगा। □

श्रवणबेलगोल, कर्नाटक

ब्रजेश्वरी देवी मन्दिर, कांगड़ा (हिमाचल)
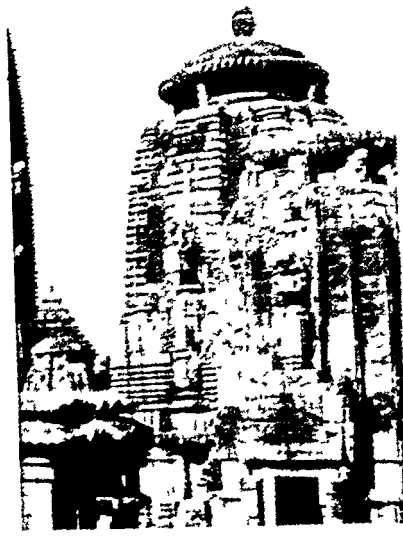
लिंगराज मन्दिर, भुवनेश्वर

कैलाश मानसरोवर, तिब्बत
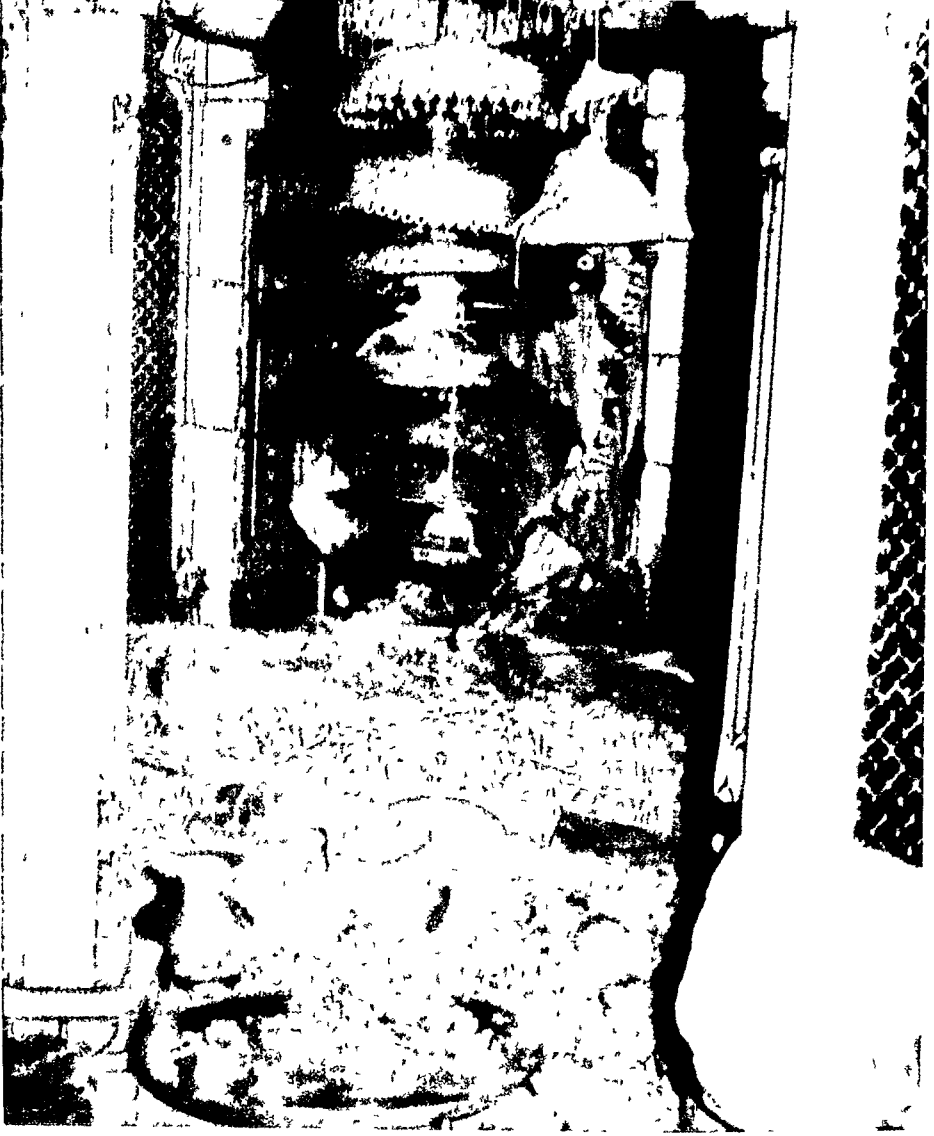
मन्दिर चिन्तपुर्णी, हिमाचल

मनीकर्ण-कुल्लू, हिमाचल
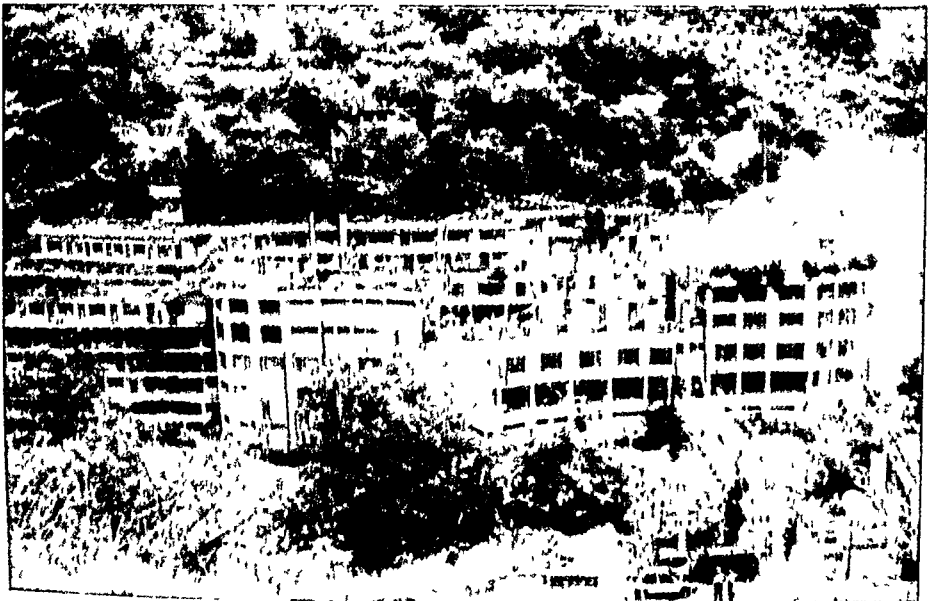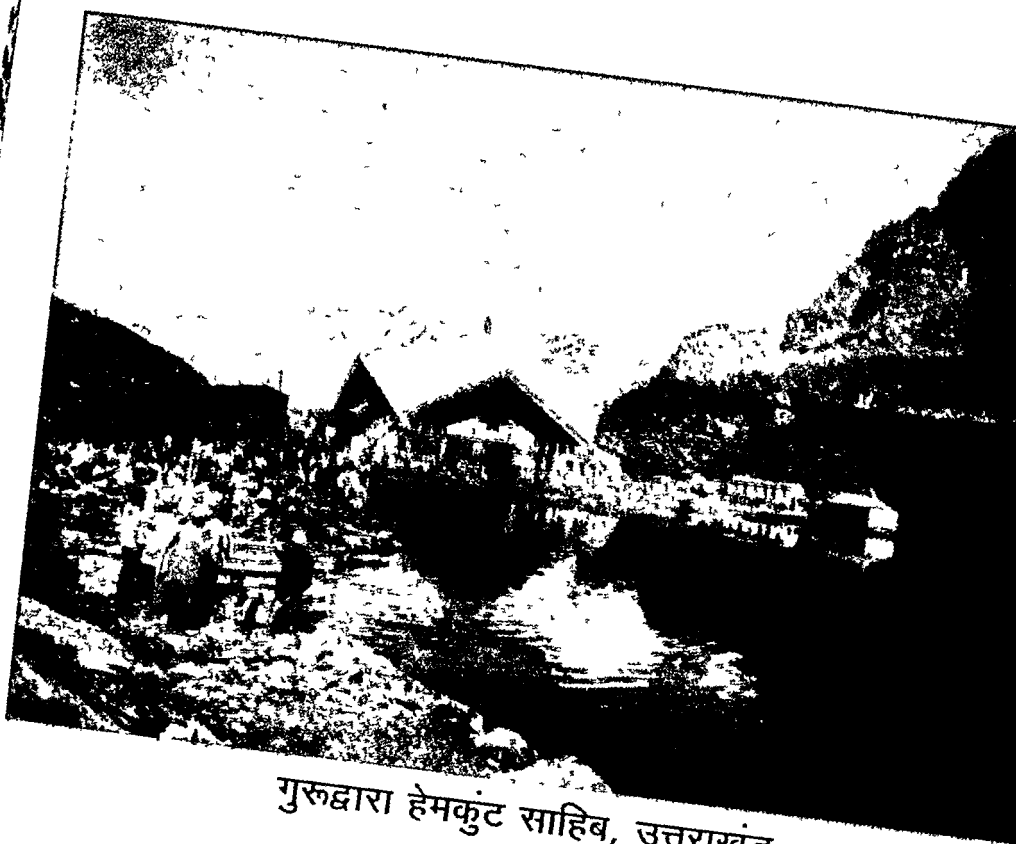
गुरुद्वारा हेमकुंट साहिब, उत्तराखंड

जुडा ह्याम सिनगॉग (यहूदी मन्दिर), नई दिल्ली

मुख्यालय, प्रजापिता ब्रह्मकुमारी
ईश्वरीय विश्वविद्यालय
माउन्ट आबू, राजस्थान

ऋषभदेव : केशरिया जी,
राजस्थान

दरगाह हाजी अली, मुम्बई

विन्ध्यावासिनी, उत्तर प्रदेश

हायसलेश्वर मन्दिर, कर्नाटक

मुक्तिनाथ मन्दिर, नेपाल

बौद्ध स्मृति मन्दिर, कैन्डी (श्रीलंका)

बौद्ध संग्रहालय, अनुराधापुर (श्रीलंका)
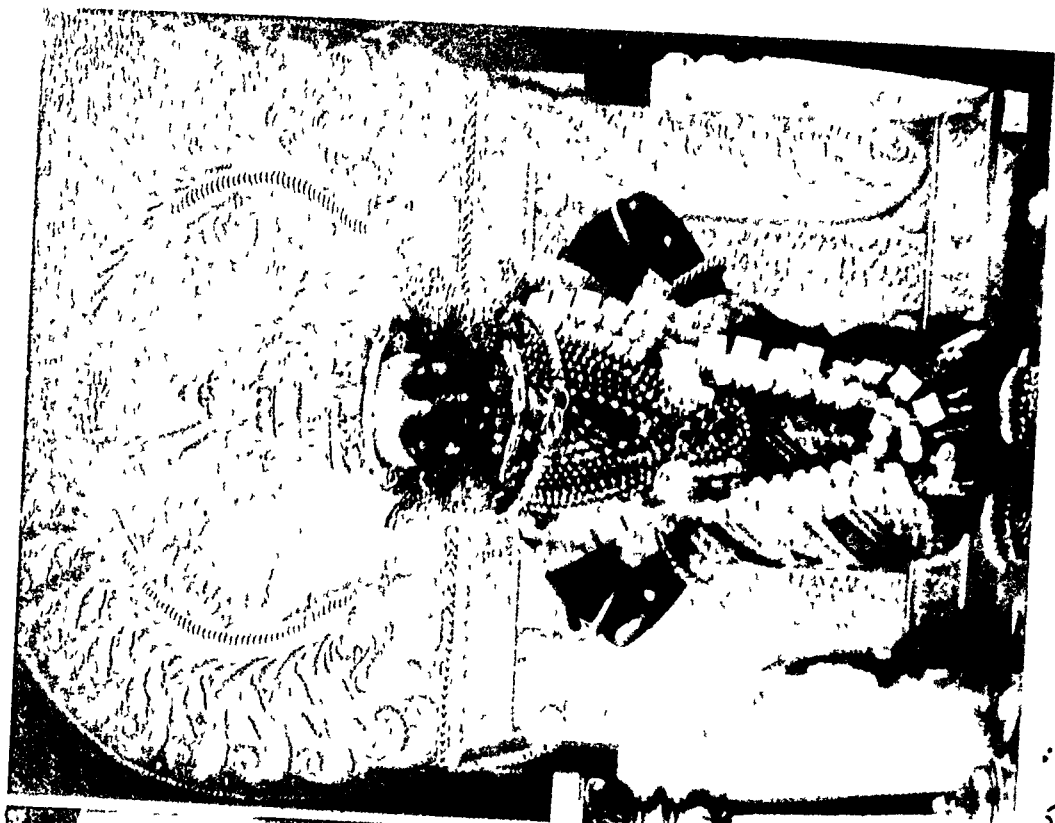
विट्ठल मन्दिर (मुख्य मूर्तियाँ), पंढरपुर (महाराष्ट्र)
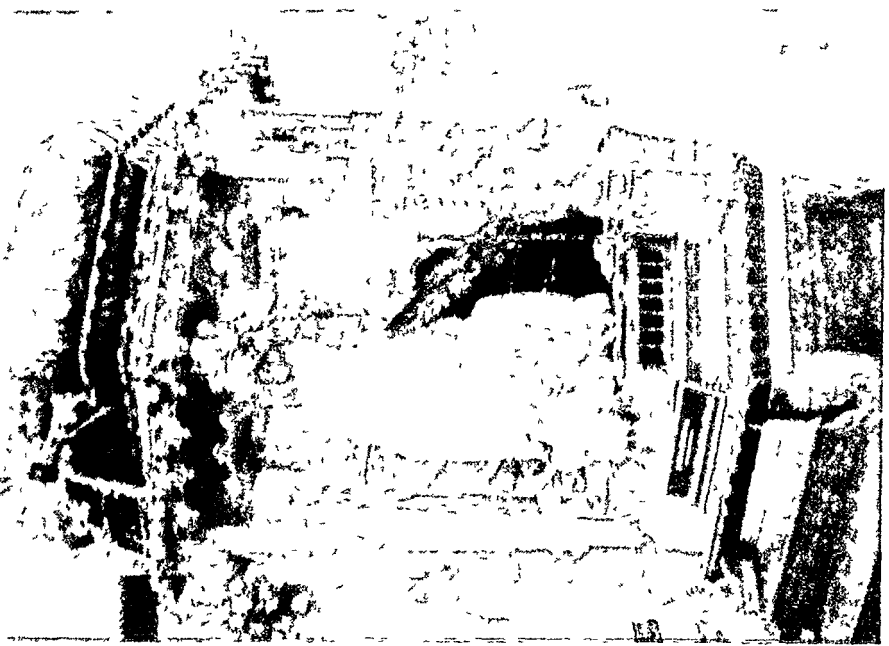
श्रीकृष्ण 'इस्कॉन' मन्दिर, नई दिल्ली
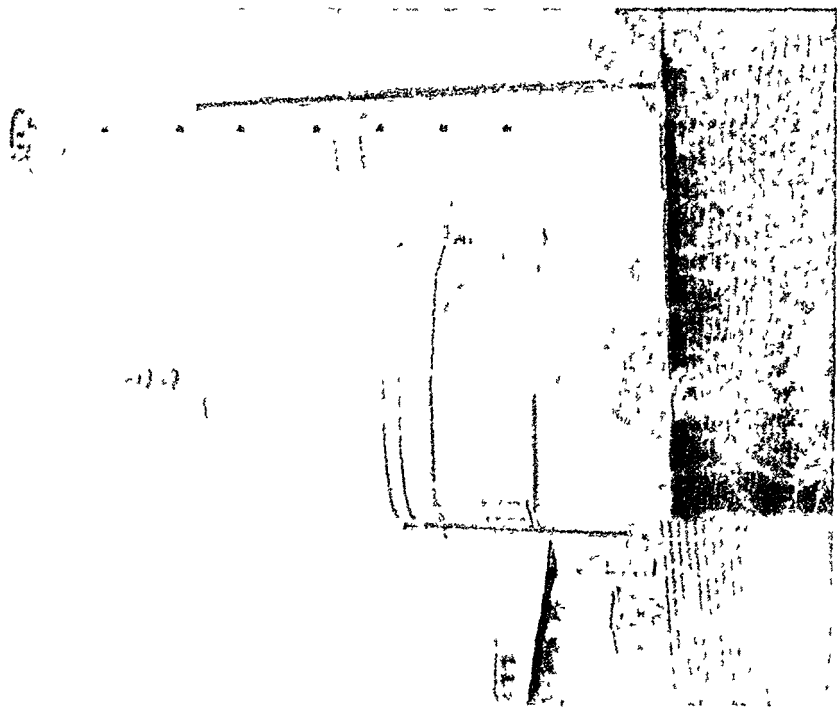
दरगाह हजरत बल, श्रीनगर
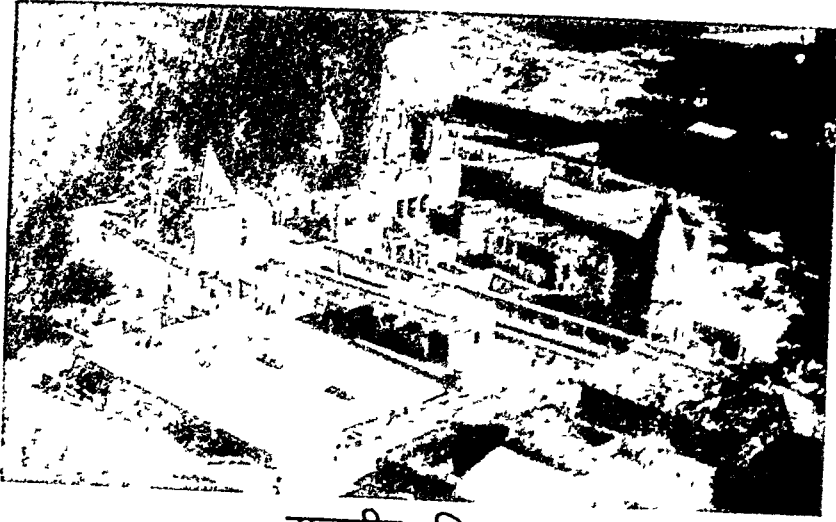
राजगीर, बिहार
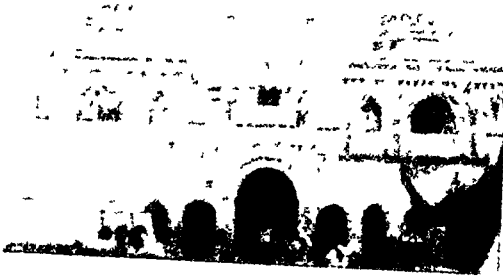
दिगम्बर जैन मन्दिर
पावापुरी, बिहार
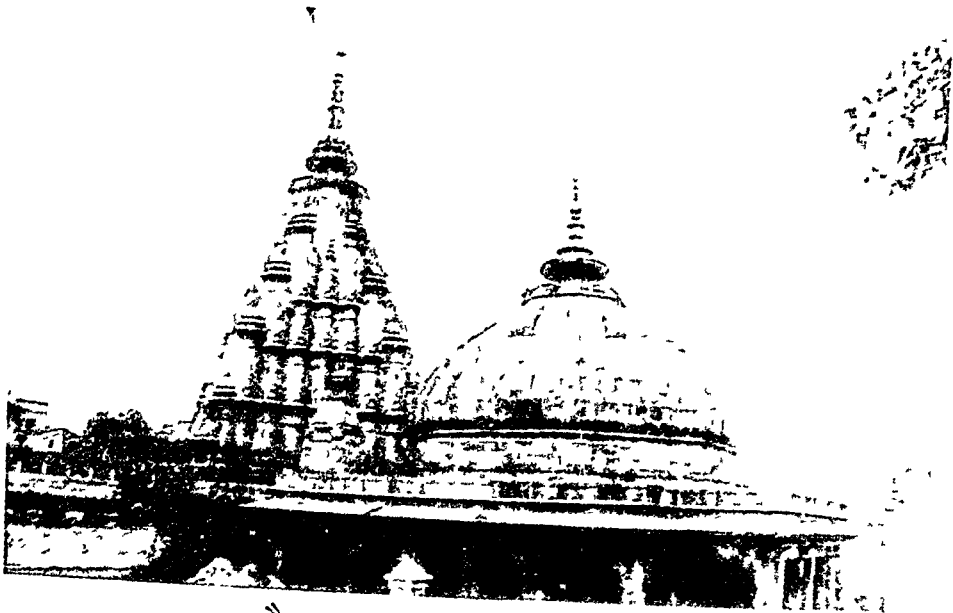
वैद्यनाथ धाम मन्दिर, बिहार
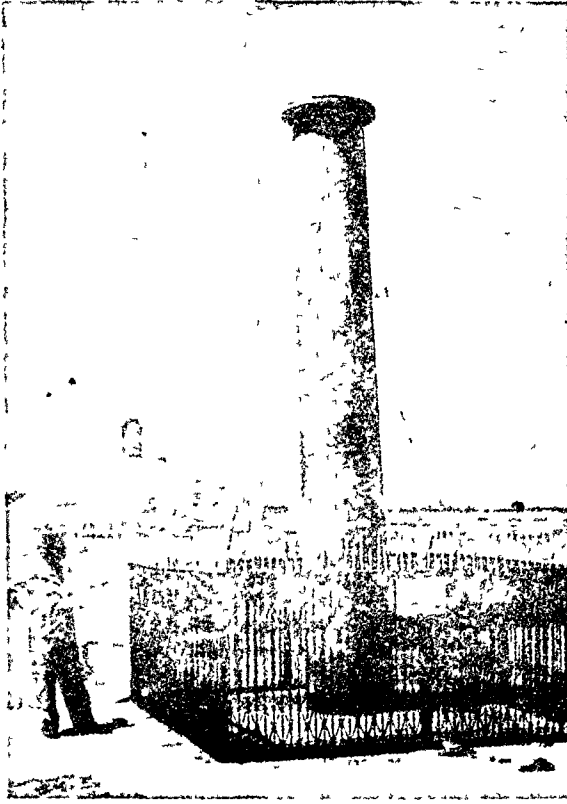
अशोक स्तम्भ,
लुम्बिनी (नेपाल)
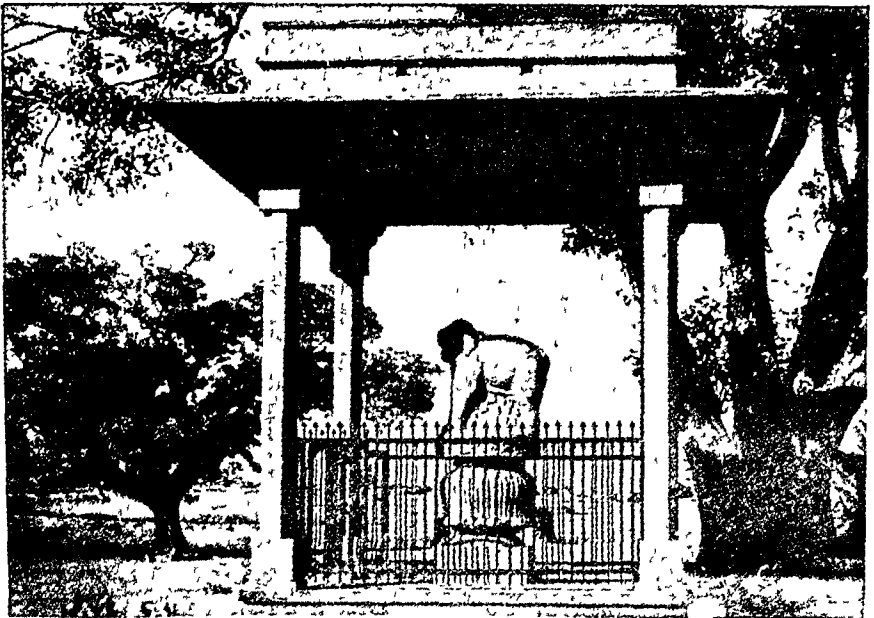
सांकास्या (उत्तर प्रदेश)

सिंह स्तम्भ,
वैशाली (बिहार)
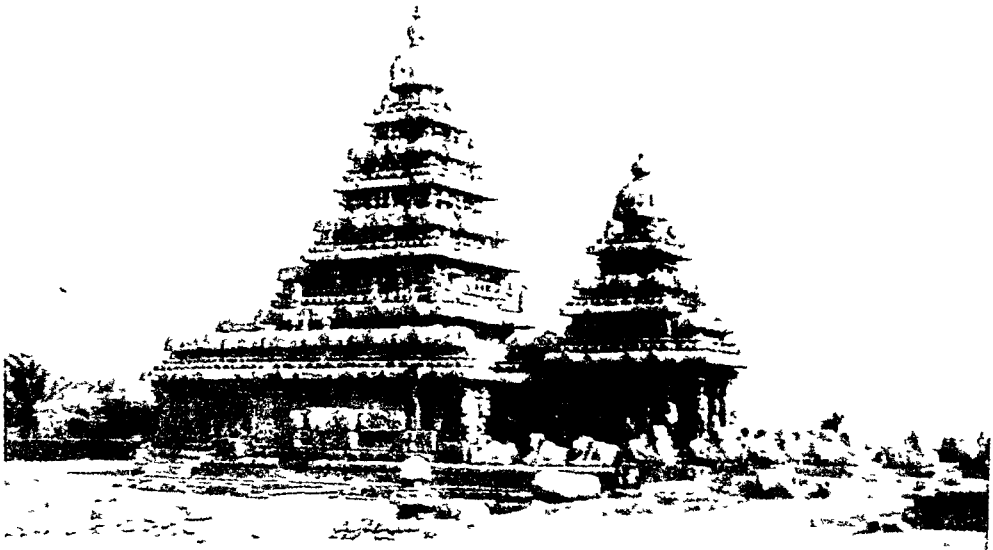
महाबलिपुरम मन्दिर, तमिलनाडु
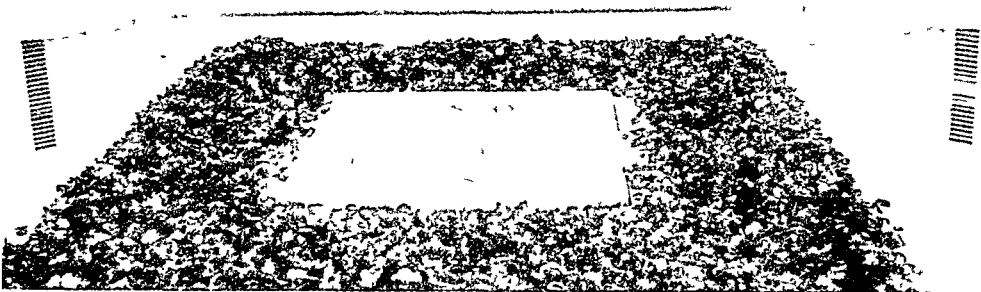
रजनीश आश्रम, पुणे (महाराष्ट्र)
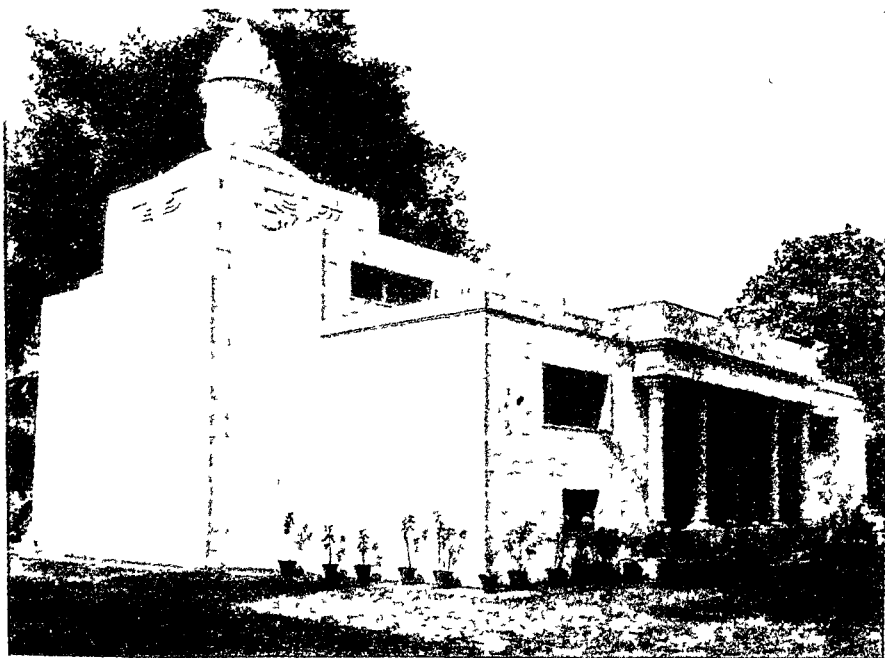
पारसी अग्नि मन्दिर, नई दिल्ली
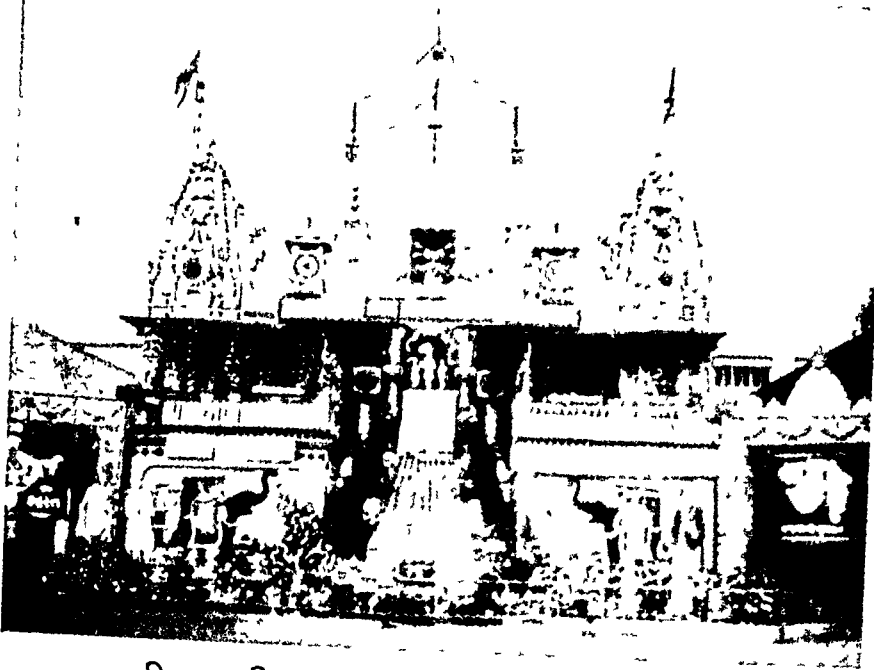
श्री स्वामीनारायण गादी मन्दिर, गुजरात

'निर्मल हृदय'
मदर टेरेसा

10. भगवान बुद्ध के अवशेष

यद्यपि भगवान बुद्ध का जन्म तथा महानिर्वाण भारत मे ही हुआ, पर बौद्ध धर्म इस देश की सीमाओ को लाघ कर द्रुत गति से सुदूरपूर्व के अनेक देशो तक फैल गया। इसने हिमालय को पार कर तिब्बत मे अपना प्रभाव जमाया। एक समय था जब इसकी जडे अफगानिस्तान, श्रीलका, बर्मा, चीन, कम्बोडिया, वियतनाम, थाईलैड, जापान, मगोलिया, जावा, सुमात्रा आदि देशो मे गहराई से फैल गई थी। आज भी यह सूदूरपूर्व के अनेक देशो की जनता को प्रभावित कर रहा है। इन देशो की बहुसख्यक जनता आज भी बौद्ध धर्मावलम्बी है।

आज भी श्रीलका मे अनेक बौद्ध मदिरो तथा स्तूपो मे बुद्ध भगवान के पवित्र शारीरिक अवशेष प्रतिष्ठित है जहा उस देश के बौद्ध भी बडी सख्या मे पहुचते है और उनके दर्शन कर अहोभाग्य समझते है।

कहा जाता है कि भगवान बुद्ध के महानिर्वाण के पश्चात उनके अवशेषो को तीन भागो मे बाटा गया और उनमे से एक भाग को श्रीलका भेजा गया था। स्वय सम्राट अशोक ने अपनी पुत्री सघमित्रा को बौद्ध धर्म के प्रचार तथा प्रसार के लिए श्रीलका भेजा था। बोधगया मे भगवान बुद्ध ने जिस बोधि वृक्ष के नीचे तपस्या कर पूर्ण ज्ञान प्राप्त किया, उस वृक्ष की एक टहनी सघमित्रा अपने साथ श्रीलका ले गई थी। यह टहनी लोहामहापाया नाम के स्थान पर अर्पित की गई। जिस स्थान पर यह टहनी अर्पित की गई थी, वहा पर आज एक विशाल वृक्ष है। इस वृक्ष को बोधि वृक्ष जैसा ही पवित्र माना जाता है और श्रीलका के बौद्ध इसका पूजन बडी श्रद्धा से करते है। भगवान बुद्ध के शारीरिक अवशेष जिन स्थानो मे प्रतिष्ठित किए गए थे, वे स्थान अब श्रीलका के बौद्ध धर्मावलम्बियो के तीर्थ स्थल बन गए है। कहा जाता है कि स्वय भगवान बुद्ध ने श्रीलका की बारह बार यात्रा की थी। उन्होने विभिन्न अवसरो पर अपने बाल, कमरबन्द इत्यादि श्रद्धालुओ को प्रदान किए ताकि उनकी अनुपस्थिति मे इन वस्तुओ की पूजा अर्चना की जाती रहे।

कैन्डी नगर श्रीलका की राजधानी कोलम्बो से 129 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। यह बौद्ध धर्मावलम्बियो का अत्यत पवित्र तीर्थ स्थान है। यहा के प्रसिद्ध बौद्ध मदिर मे जिसका निर्माण सोलहवी शताब्दी मे किया गया था,

भगवान बुद्ध का दात प्रतिष्ठित है। उन्नीसवी शताब्दी मे कैन्डी के तत्कालीन शासक ने इस मदिर मे 'पठ्ठीरिपुवा' अर्थात् अष्ट भुजी आंगन का निर्माण कर इसकी शोभा मे चार चाद लगा दिए। इसी सम्राट ने कैन्डी तालाब का निर्माण कर इस तीर्थ स्थान की सुदरता मे चौगुनी अभिवृद्धि कर दी। इस मदिर मे नियमित रूप से हर रोज बुद्ध देव के पवित्र अवशेष का पूजन किया जाता है। यहा सगीत का कार्यक्रम भी चलता रहता है, जो भक्त यहा दर्शनार्थ आते है, उन्हे यह सगीत भक्ति रस से ओत प्रोत कर देता है। हर वर्ष 'एसाला' माह मे अर्थात् जुलाई–अगस्त मे यहा एक विशाल जुलूस का आयोजन भी किया जाता है जो अत्यत दर्शनीय होता है।

कैन्डी मे बौद्धो के दो महत्वपूर्ण मालवदा तथा असगीरिया मठ भी स्थित है। बौद्ध धर्मावलम्बियो के दो शीर्ष भिक्षु इन मठो मे निवास करते है। कैन्डी झील के दक्षिणी छोर पर स्थित मालवट्टा मठ का स्थापत्य अठारहवीं शताब्दी की भवन निर्माण कला का एक उत्तम नमूना है।

नगर के पश्चिम मे स्थित असगीरिया मदिर मे बुद्ध देव की लेटी हुई एक अत्यत सुदर विशाल प्रतिमा है।

कैन्डी से सोलह किलोमीटर की दूरी पर पश्चिम मे काडुगन्नवा पेराडेनिया मार्ग पर गडालाडेनिया, लकातिलक तथा एम्बे नाम के तीन महत्वपूर्ण मदिर है। ये मदिर 'पश्चिमी मदिर समूह' अर्थात् 'वेस्टर्न श्राइन्स' के नाम से भी विख्यात है।

गडालाडेनिया मदिर एक चट्टान पर पत्थर से निर्मित किया हुआ है। इस स्थान की प्राकृतिक दृश्यावली अत्यत सुदर है। इस मदिर मे बुद्ध देव की बैठी हुई प्रतिमा, मदिर की छत तथा दरवाजो पर अंकित मूर्तियां देखने के काबिल है। लकातिलक सफेद रंग का चमकता हुआ मदिर है जो नीलाकाश के नीचे दूर से अत्यत भव्य दिखाई देता है। ईटो से बने हुए इस तीन मजिले मदिर का स्थापत्य अन्य मदिरो के स्थापत्य से बिल्कुल नही मिलता। इसका स्थापत्य अपने ही ढग का अनोखा है। इसके लकडी के दरवाजो का रग आज भी चमकीला है, दीवारो और छत पर बने हुए चित्र आज भी सजीव है, उनके रगो की चमक अभी भी बनी हुई है। इसके निकट ही इस समूह का तीसरा मदिर है एम्बेके मदिर। कटारागामा देवता की मूर्ति से प्रतिष्ठित यह मदिर अपने स्तम्भो के लिए प्रसिद्ध है जो लकडी का है। इन स्तम्भो पर नर्तको, सगीतज्ञो, पहलवानो, पशु पक्षियो की सजीव मूर्तिया गढी हुई है। ये तीनो मदिर चौदहवी शताब्दी मे निर्मित किए गए थे पर इन्हे देखने पर लगता

है जैसे कुछ दिनो पूर्व ही इनका निर्माण सपन्न हुआ है।

अनुराधापुर का श्रीलका के बौद्ध तीर्थो मे विशेष महत्त्व है। इसी नगर मे श्रीलका के बौद्धो का सबसे पवित्र श्रीमहाबोधि वृक्ष मौजूद है। श्रीलका के बौद्धो का विश्वास है कि यह वृक्ष विश्व का सबसे पुराना वृक्ष है। कहते है कि इसकी आयु दो हजार दो सौ वर्ष से अधिक हो गई है। सम्राट अशोक की पुत्री सघमित्रा अपने पिता के आदेश पर बौद्ध धर्म के प्रचारार्थ जब श्रीलका पधारी तो अपने साथ उस वृक्ष की टहनी भी भारत से लाई थी, जिसके नीचे बुद्ध देव को ज्ञान प्राप्त हुआ था। कहा जाता है कि अनुराधापुर का यह श्रीमहाबोधि वृक्ष उसी टहनी की उत्पत्ति है।

अनुराधापुर श्रीलका के इतिहास के अनुसार एक अत्यत प्राचीन नगर है। श्रीलका के प्राचीन इतिहास ग्रथ 'महावश' के अनुसार इसकी स्थापना अनुराधा ने की थी जो राजकुमार विजय के वशज थे। सिहलवासी अपने को राजकुमार विजय की सतान मानते है अर्थात् विजय उनके प्रथम पूर्वज थे। सम्राट पान्डूकभय ने ई पू 380 मे इस नगर को अपनी राजधानी बनाया। इस नगर मे तब अलग–अलग मोहल्ले थे, जिनमे विभिन्न जातियो के लोग रहते थे। विदेशियो के लिए यहा अलग मोहल्ला था। बौद्ध धर्म के आगमन के पश्चात इस नगर की काया पलट गई। अब यह मात्र राजधानी ही नही रहा, बौद्धो के लिए तीर्थ भी बन गया। यह वही क्षेत्र है जहा अशोक के पुत्र महेन्द्र ने बौद्ध भिक्षु के रूप मे वर्षो तक तपस्या की थी। बौद्ध काल मे बने इसके स्तूप, मठ, तालाब, बावडिया आदि इसके महान अतीत के परिचायक है। श्रीलका के बौद्ध इसकी यात्रा करना अपना परम सौभाग्य मानते है।

सम्राट देवानाम प्रिय तिश्य ने अनुराधापुर मे भगवान बुद्ध की हसुली की हड्डी (गर्दन के नीचे की हड्डी) को सुरक्षित रखने के लिए एक शानदार स्तूप की रचना की थी। सिहलवासी इस स्तूप को 'थूपरामा दगाबा' कहते है। इस स्तूप के चारो तरफ गोलाई मे स्तम्भो की कतार खडी है। वास्तुशिल्प के विशेषज्ञो का कहना है कि इन स्तम्भो के ऊपर कभी एक गोलाकार छत थी। सन् 1840 मे बौद्धो के प्रयत्न से स्तूप की मरम्मत की गई, इसलिए इसके आकार मे कुछ परिवर्तन हो गया। अब इसका आकार घटी के समान है। सम्राट देवानाम प्रिय तिश्य ने सम्राट अशोक के पुत्र महेन्द्र को अपना शाही बाग दान मे दे दिया था ताकि वे इस जगह एक बौद्ध मठ स्थापित कर सके। महेन्द्र नगर के निकट मिहिनताले की गुफा मे रहने लगे थे। भिक्षु के रूप मे मिहिनताले मे ही उन्होने तपस्या की थी। बाद मे उनके नाम पर ही

इस गुफा का नाम मिहिनताले हो गया।

सम्राट वलागमबाहु ने प्रथम शताव्दी मे यहा एक अन्य स्तूप तथा मठ की स्थापना की थी। यह स्तूप 'अभयगिरि दगावा' के नाम से प्रसिद्ध है। यह स्तूप आकार मे दूसरे स्थान पर आता है।

वौद्ध काल मे वने स्तूप, तालाव और बावडिया सभी कुछ इस पवित्र तीर्थ स्थान के महान अतीत के परिचायक है। श्रीलका के वौद्ध इस तीर्थ की यात्रा करना अपना परम कर्तव्य मानते है।

श्रीलका ही अब ऐसा देश है जहा भगवान बुद्ध के वडी सख्या मे अवशेष प्रतिष्ठित है और जिनके दर्शन के लिए विभिन्न देशो के बोध धर्मावलम्वी बडी सख्या मे यहा की यात्रा करते है। ❑

अध्याय तेरह

1. प्रजापिता ब्रह्माकुमारी

ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्वविद्यालय माउन्ट आबू मे स्थित है और कई अर्थो मे एक अद्वितीय विश्वविद्यालय है क्योकि ये विश्व स्तर पर स्वीकृत, अतर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त आध्यात्मिक मूल्यो पर आधारित शैक्षणिक सस्थान है।

विश्वव्यापी प्रसार के कारण इसके मान्यता प्राप्त 4500 से भी अधिक सेवा केद्र है जो सभी महाद्वीपो के 70 देशो मे फैले है। इसके विश्व प्रसिद्ध होने मे कुछ अन्य निम्न तथ्य महत्वपूर्ण है।

1. ये गैर सरकारी सस्थान के रूप मे सयुक्त राष्ट्र के जन सूचना विभाग से सबधित है।
2. सयुक्त राष्ट्र के आर्थिक एव सामाजिक परिषद मे इसे परामर्शदाता का पद प्राप्त है।
3. यूनिसेफ मे भी इसे परामर्शदाता का पद प्राप्त है।
4. यू एन बिल्डिग मे इसका ऑफिस रूम न 436, 866 यू एन प्लाजा, न्यूयार्क मे है।
5. सयुक्त राष्ट्र का कोस्टारीका स्थित 'शाति विश्वविद्यालय' की शाति की शिक्षा के लिए आधिकारिक समझौते के अनुसार इसका सहयोग प्राप्त करता है।
6. मॉरीशस सरकार ने इसे एक विश्वविद्यालय के रूप मे ससद की सहमति से मान्यता दी है।
7. ग्याना सरकार ने अपनी ससदीय कार्यवाही तीन मिनट के राजयोग अभ्यास से आरभ करना स्वीकृत किया है जो कि इस विश्वविद्यालय की मुख्य शिक्षा है।
8. इस विश्वविद्यालय को 1981 एव 1986 मे 'सयुक्त राष्ट्र शाति पदक' प्राप्त हो चुके है तथा ब्रह्माकुमारियो की मुख्य प्रशासिका दादी प्रकाशमणि

जी को 'अतर्राष्ट्रीय शाति दूत' पुरस्कार सयुक्त राष्ट्र सघ के महासचिव के द्वारा 1987 मे प्रदान किया गया।

9. मोहनलाल सुखाडिया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राजस्थान) ने दादी प्रकाशमणि जी को, साहित्य के लिए डाक्टरेट की डिग्री से सम्मानित किया है।

10. रशिया के राष्ट्रमण्डल ने इस आध्यात्मिक विश्वविद्यालय को अपने देश मे सरकारी मान्यता प्रदान की है।

निम्नलिखित कारणो से एक विश्वविद्यालय के रूप मे ये विशिष्ट है.

1. इस विश्वविद्यालय की शिक्षाओं में— मानवीय विशेषताओ को प्रोत्साहित करना तथा सत्य ज्ञान के प्रचार एव प्रसार हेतु सहनशीलता एव सतत् उत्साह बनाये रखना है। ये विश्वविद्यालय केवल धन एव व्यवसाय प्रदान करने वाली शिक्षा मे नही वरन् जीवन निर्माण करने वाली शिक्षा मे विश्वास करता है।

2. शान्ति एवं नैतिक मूल्यों के विकास के लिए शिक्षा— इस विश्वविद्यालय का एक अन्य विशिष्ट पक्ष है कि ये चरित्र निर्माण एव शान्ति स्थापना को महत्व देता है। एक प्रसिद्ध कहावत है 'यदि चरित्र गया तो सब कुछ गया... ।'

इसके साथ विश्वविद्यालय विश्वास करता है कि यदि शान्ति खत्म होती है तो प्रत्येक चीज महत्वहीन एव नीरस लगती है। भ्रष्टाचार सामाजिक एव आर्थिक बुराईयो की जड है, जिसका उन्मूलन केवल चरित्र निर्माण से ही किया जा सकता है। नैतिक शिक्षा कोई वैकल्पिक या स्वेच्छिक विषय नही है, वरन् ये हर मानव के लिए अति आवश्यक है। ये न तो विलासिता है और न ही कोई बोझ है। शिक्षा पद्धति मे नैतिक मूल्यो का प्रतिपादन करने से विद्यार्थियो पर, शिक्षको पर या राष्ट्रीय अर्थ विभाग पर अतिरिक्त बोझ नही पडेगा। हमे यह अच्छी तरह समझ लेना चाहिए कि इसके अतिरिक्त कोई दूसरा मार्ग नही है, इसलिए इसे छोडा नही जा सकता है। अगर हम शिक्षा मे नैतिक मूल्यो को नही अपनायेगे तो यह घोर विपत्ति को आमत्रण देना है।

यदि अभी पुरुषार्थ नही किया गया तो समय आयेगा जब पूरा सभ्य समाज फिर से जगली सभ्यता मे बदल जायेगा। यदि राजनीति अपराधो से

भरपूर होगी, सरकारी अधिकारी भ्रष्ट होगे, वातावरण जहरीले पदार्थो के कारण दूषित होता रहेगा, अधिकाधिक विद्यार्थी नशो का शिकार होते जायेगे, लोग अहकार एव हिसात्मक दुष्प्रवृत्तियो से विक्षिप्त होगे तो कौन किसका रक्षक होगा? यदि सभी अपराधी हो जायेगे, जीवन मे सिद्धात नही होगे तो सबधो का औचित्य समाप्त हो जायेगा और समाज मे कोई नियम सयम नही रहेगा।

यदि शिक्षक ही चारित्रिक सामर्थ्य खो देगे तो भावी पीढी का चरित्र निर्माण कौन करेगा? यदि विद्यार्थी अनुशासित नही होगे तो स्व अनुशासित एव स्व नियत्रित देश और समाज कैसे हो सकता है।

अत समय की माग को देखते हुए, ऐसे शैक्षणिक सस्थानो को इस चुनौतीपूर्ण स्थिति का सामना करने का अवसर दिया जाना चाहिए और अन्य सभी को उत्साहपूर्वक इसमे सहयोगी होकर अपने वातावरण एव साथियो को व्यवस्थित करना चाहिये। नैतिक मूल्यो की शिक्षा पहले शिक्षको को दी जानी चाहिये और इसे 'शिक्षक प्रशिक्षण पाठ्यक्रम' मे समावेश करना चाहिये। इतिहास जैसे विषयो मे नैतिक मूल्यो का समावेश करके विद्यार्थियो को पढाने से वे भी अपने जीवन मे गुणवान बनने की प्रेरणा प्राप्त करेगे। विद्यार्थियो को नैतिक शिक्षा देने की कई विधिया हो सकती है। इसके लिए पाठ्यक्रम बनाये जा सकते है। उनका पुन मूल्याकन किया जा सकता है, परतु इन सबसे पहले हम सामूहिक रूप से सकल्प करे कि हम इस विषय को अविलम्ब प्रारभ करेगे एव प्रोत्साहित करेगे।

अत एक विश्वविद्यालय को ऐसी शिक्षा देनी चाहिये जिससे व्यक्ति जीवन की कंठिनाईयो का शाति, धैर्य एव आत्मविश्वास से सामना कर सके तथा परिस्थितियो के भयकर तूफान मे अडिग चट्टान की तरह अविचल रह सके। इस तरह से ही मनुष्य आत्मसतोष का जीवन जी सकते है तथा श्रेष्ठता एव सदाचार के लिए अन्य मे प्रेरणा उत्पन्न कर सकते है।

3. जन कल्याण के लिए शिक्षा— प्रजापिता ब्रह्माकुमारी विश्वविद्यालय अनुभव करता है कि तनाव एव कष्ट का मुख्य कारण सहयोग, नि स्वार्थ वृत्ति, दया एव भातृत्व भाव की कमी है। ये विश्वविद्यालय इन गुणो का विकास करता है, पारिवारिक तथा सामाजिक जीवन, व्यावसायिक तथा औद्योगिक क्षेत्रो मे तनावमुक्त व्यवस्था हेतु यहा पाठ्यक्रम उपलब्ध है।

4. मानव व्यक्तित्व में संतुलन के लिए शिक्षा— इस विश्वविद्यालय का अनुभव है कि वर्तमान शिक्षा प्रणाली मे प्राकृतिक एव जीव विज्ञान, वाणिज्य एव अर्थशास्त्र, कम्प्यूटर विज्ञान, साख्यिकी आदि विषयो को ही अधिक महत्व दिया गया है। सामाजिक एव सभ्यताओ का ज्ञान तथा विशेषकर आध्यात्मिक विषयो को पाठ्यक्रमो मे जानबूझकर विशेष महत्व नही दिया गया है। इसके परिणामस्वरूप समाज एव व्यक्ति के विकास मे बहुत असतुलन उत्पन्न हो गया है। ये विश्वविद्यालय मनुष्य की मुख्य जिज्ञासा जैसे कि मै कौन हूं? मै कहा से आया हू? कहा वापस जाना है? आदि विषयो पर शिक्षा एव मार्गदर्शन देता है।

5. वर्तमान संकटपूर्ण स्थिति के लिए सर्वागीण शिक्षा— इस प्रकार ये विश्वविद्यालय उस अतराल को पूरा करने का प्रयास करता है जो अन्य विश्वविद्यालय नही कर सके। ये विश्वविद्यालय अपने पाठ्यक्रम मे अन्य विश्वविद्यालयो मे पढाये जाने वाले सामान्य विषयो को सम्मिलित नही करता है, क्योकि ये तो केवल उन्हे दोहराना होगा बल्कि ये उन विषयो का ज्ञान देता है, जो समाज की वर्तमान संकटपूर्ण स्थिति मे सहायक है। यद्यपि यहा की शिक्षाये आध्यात्मिक है फिर भी इसमे कई विषय जैसे कि प्रायोगिक मनोविज्ञान, दर्शन, विश्व इतिहास एवं सस्कृति का सार, समाजशास्त्र, राजनीति एव कई अन्य विषयो का विवेकपूर्ण मिश्रण है। ये अपूर्ण ज्ञान नहीं है बल्कि ये सम्पूर्ण ज्ञान है।

यह विश्वविद्यालय इस तरह से भी विशेष विश्वविद्यालय है, क्योकि इसका संचालन महिलाओ द्वारा किया जाता है जो कि समर्पण, त्याग एव तपस्या की भावना और सुहृदय से समाज के उत्थान के लिए सेवा करती है। यहा जाति, धर्म, देश, सम्प्रदाय का भेदभाव नहीं है। नियमित विद्यार्थियो एव सहयोगियो के स्वेच्छिक योगदान से इसका खर्च वहन होता है। ये विश्वविद्यालय कोई डिप्लोमा, डिग्री अथवा सर्टिफिकेट (प्रमाण पत्र) प्रदान नही करता है, क्योकि इनमे से कोई भी व्यक्ति की आध्यात्मिक ऊचाई का आकलन नही करता है, न ही आध्यात्मिक व्यक्ति को इस प्रकार के प्रमाण पत्र एव सस्तुति की आवश्यकता है, क्योकि उसका स्वय का जीवन ही दूसरो के लिए प्रमाण है। ❑

2. मुक्तिनाथ

मुक्तिनाथ को तीर्थो मे महान तीर्थ कहा जाता है। मुक्तिनाथ नेपाल राज्य मे स्थित है। सागर के जलस्तर से इस तीर्थ की ऊँचाई 12460 फुट है। यहा विष्णु शालग्राम के रूप मे, भगवान शकर लिग रूप मे और भगवती अग्निरूप मे प्रत्यक्ष निवास करती है। ऐसा योग सभवत भारत के किसी तीर्थ मे नही है। इसका नाम शालग्राम क्षेत्र भी है। यहा की सारी शिलाये भगवान स्वरूप है। इस क्षेत्र को हरिक्षेत्र, हरिहर क्षेत्र और नारायण क्षेत्र भी कहा जाता है। यहां भगवान विष्णु के प्रत्यक्ष निवास के कारण यह क्षेत्र अष्ट वैकुण्ठो मे एक है। नेपाल के निवासियो मे इस तीर्थ की बडी मान्यता है। उन लोगो का कहना है कि भारत के चार धामो मे उत्तर भारत का धाम यही है।

यहा पहले पुलह तथा पुलस्त्य ऋषियो का आश्रम था। सोमेश्वर लिग तथा रावण द्वारा प्रकट की गई बाणगगा की पवित्र धारा भी यही है। यही नही देविका, गण्डकी और चक्रा नदियो के सगम से यहा त्रिवेणी बन गई है। राजर्षि भरत ने भी राजपाट छोडकर यही तपस्या की थी। दूसरे जन्म मे वे जब कालजर मे मृग हुए उस समय भी अपनी माता तथा मृग यूथ को छोडकर मृग शरीर से यहीं आ गये। बाराह पुराण के अनुसार किसी कल्प मे गज ग्राह का युद्ध भी यही हुआ था। भगवान ने सुदर्शन चक्र से ग्राह का मुख विदीर्ण करके गज राज का उद्धार किया था।

मुक्तिनाथ शालग्राम क्षेत्र है। दान भडार से गण्डकी के पुलिन पर और मार्ग के समीप पर्वत पर शालग्राम शिला का मिलना प्रारभ हो जाता है। गण्डकी नदी का उद्‌गम तो दामोदर कुण्ड है, किन्तु उसके किनारे जहा तक शालग्राम पर्वत का विस्तार है, वह पूरा शालग्राम क्षेत्र है। इस क्षेत्र मे शालग्राम के अनेक रूप पाये जाते है। रग, आकार, चक्र तथा मुखादि भेद से शालग्राम शिला हरि, विष्णु, कृष्ण, राम, नृसिह आदि जानी जाती है।

गण्डकी नदी को नारायणी या शालग्रामी भी कहते है। मुक्तिनाथ के अतर्गत नारायणी नदी मे गर्म पानी के सात झरने है। इनमे से अग्निकुण्ड नामक झरना, एक पर्वत से निकलता है। उसके उद्‌गम के पास पर्वत मे अग्नि ज्वालाये दिखाई पडती है। मुक्तिनाथ 51 शक्तिपीठो मे एक पीठ है। यहा सती का दाहिना गण्डस्थल गिरा था।

मुक्तिनाथ मन्दिर— यह तीन खण्डो का अति प्राचीन मन्दिर है। इसके गर्भ गृह मे स्वय भू शिवलिग का विग्रह है, जिसके ऊपर पीतल की ध्यानमग्न मूर्ति प्रतिष्ठित है। इसके दर्शन पूजन से मुक्ति प्राप्त होती है।

मुक्तिनाथ मन्दिर के पीछे जो पर्वत है, उसमे से 108 जलधाराये गिरती है। इन्हीं मे स्नान किया जाता है। बाराह पुराण मे लिखा है जो मनुष्य त्रिधार मे देविका, गण्डकी और चक्रा के सगम मे स्नान कर देवता और पितरो का तर्पण करता है तथा भगवान शकर की पूजा करता है, उसका पूर्वजन्म नहीं होता।

ज्वालामाई (ज्वालामुखी)— मुक्तिनाथ मन्दिर से लगभग एक सौ मीटर की दूरी पर दो हाथ व्यास का एक कुण्ड है, जिसमे से निरंतर अग्नि ज्वाला प्रज्वलित होती है। यह प्रत्यक्ष देवी मानी जाती है। यहा इस देवी की पूजा पर अधिक ध्यान दिया जाता है।

इसके माहात्म्य मे लिखा है कि दक्ष यज्ञ के अवसर पर हवनकुण्ड के निकट बैठकर सती ने अग्नि आह्वान किया था। तत्काल उनके शरीर से अग्निज्वाला प्रकट हुई और सती के शरीर को भस्म करती हुई यह ज्वाला पर्वत पर जहां गिरी, वह स्थान पूजित होने लगा। यह स्थली सुखदायिनी, सम्पूर्ण कामो के फल देने वाली ज्वालामुखी के नाम से विख्यात हुई। इसी के निकट एक अन्य छिद्र है, उससे भी अग्नि ज्वाला प्रज्वलित होती है। यहां एक जलकुण्ड है, जिसके जल के ऊपर भी अग्निज्वाला निकला करती है।

मुक्तिनाथ की यात्रा का उपयुक्त समय चैत्र और वैशाख मास है। नेपाल के लोग आश्विन तक यहा आते जाते रहते है। यहां श्रावण और आश्विनी मास मे मेला लगता है। उस समय वर्षा और शीत के कारण, भारतीय यात्रियो का जाना कठिन रहता है। मुक्तिनाथ की यात्रा पोखरा नगर से प्रारभ होती है। काठमाडू के बाद पोखरा नेपाल राज्य का दूसरा पर्वतीय नगर है। काठमाडू से पोखरा तक पक्का राज मार्ग बना है। पोखरा से मुक्तिनाथ की दूरी 132 किलोमीटर है। यहा कोई राजमार्ग नही है। अत. यह यात्रा पैदल तय करनी पडती है। पोखरा से जोमसोम तक हवाई जहाज भी जाते है, वहा से 19 किलोमीटर मुक्तिनाथ है। वहा से पैदल अथवा घोडे से जाना पडता है।

पैदल जाने वालो के लिए पोखरा मे घोडा कडी और कुली मिल जाते है

जिसका प्रबध पोखरा स्थित पर्यटन विभाग वाले अथवा होटलो के अधिकारी कर देते है। पर्वतो पर चढाई, उतराई के कारण, कुल लगभग 15 दिनो का समय लगता है। मार्ग मे कही धर्मशाला नही है। प्रत्येक ग्राम के दुकानदारो के यहा ठहरने और भोजन की व्यवस्था हो जाती है। मुक्तिनाथ मे धर्मशाला है। □

3. ऋषभदेव : केशरियाजी

यह स्थान उदयपुर से 65 किलोमीटर है। गाव का नाम धुलेव है, किन्तु पत्र व्यवहार मे स्थान का नाम ऋषभदेव लिखा जाता है। यहा कगूरेदार कोट के भीतर प्राचीन मन्दिर और धर्मशालाये है। मूल नायक प्रतिमा भगवान ऋषभदेव की है। यह श्याम वर्ण पाषाण की एक मीटर ऊँची प्रतिमा है। यह अतिशय युक्त है। श्यामवर्ण होने के कारण भील लोग इसे कालाजी या कारिया बाबा भी कहते है। यहा केश चढाने की परपरा होने के कारण से क्षेत्र केशरियाजी के नाम से भी प्रसिद्ध है।

इस मन्दिर के चारो ओर 52 जिनालय या देव कुलिकाये बनी हुई है। प्रवेशद्वार विशाल है। यहा अद्भुत कला के दर्शन होते है। यहा के चमत्कारो और अतिशयो की कथाओ के कारण लोग दर्शन करने और मनौती मनाने आते है।

यह मन्दिर मूलत दिगम्बर है। वर्तमान मे यहा की व्यवस्था राजकीय है। बहुत काल तक भट्टारक गद्दी भी यहा रही, पर अब नही है। दिगम्बर जैन ही नही, श्वेताम्बर जैन, हिन्दू, भील आदि भी बडी सख्या मे दर्शनार्थ आते है। यहां दिगम्बर जैन, श्वेताम्बर जैन और हिन्दू तीनो रीतियो से पूजा होती है।

यहा पर तीन धर्मशालाये है। जल, बिजली की व्यवस्था है। ओढना, बिछौना, बर्तन आदि भी मिल जाते है।

ऋषभदेव से 50 किलोमीटर दूर नागफणि पार्श्वनाथ अतिशय क्षेत्र है। यह

मैस्वो नदी के तट पर स्थित मन्दिर गाव से कुछ पहले नदी के किनारे बाईं ओर लगभग 200 मीटर चलने पर पहाड़ पर मन्दिर दिखाई पडता है। लगभग 50 सीढी चढकर मन्दिर आता है। सीढिया चढने से पहले जलकुण्ड है। इसका जल अभिषेक और पीने के काम आता है।

इस मन्दिर मे भगवान पार्श्वनाथ की प्रतिमा है, जो काफी प्राचीन है। प्रतिमा के सिर पर सप्त फण मडप बना है, इसमे तीन फण खडित है। यहा के अतिशय की बहुत ही मान्यता है। मन्दिर के दोनो ओर धर्मशालाये है। यहा प्रत्येक पूर्णिमा को मेला लगता है। बडा मेला आषाढी पूर्णिमा का होता है। □

उत्तर प्रदेश

4. विन्ध्यावासिनी

विन्ध्याचल उत्तर प्रदेश के मिर्जापुर जनपद मे गगा के दाहिने तट पर स्थित है। उत्तर रेलवे के अतर्गत मिर्जापुर से केवल पाच छः किलोमीटर की दूरी पर विन्ध्याचल स्टेशन है। स्टेशन से कुछ दूरी पर विन्ध्याचल बाजार है। गगा तट से विन्ध्यवासिनी देवी का मन्दिर केवल दो फर्लांग पर है।

विन्ध्याचल मे देवी के तीन मन्दिर मुख्य है: 1. विन्ध्यवासिनी (कौशिकी देवी), 2. महाकाली और 3. अष्ट भुजा। इन तीनो के दर्शन की यात्रा 'त्रिकोण यात्रा' कही जाती है।

विन्ध्यवासिनी— यह मन्दिर बस्ती के मध्य मे ऊँचे स्थान पर है। मन्दिर मे सिंह पर आरूढ देवी की मूर्ति है। इन कौशिकी देवी को ही विन्ध्यवासिनी देवी कहा जाता है। देवी भागवत के अनुसार ये देवी 108 शक्ति पीठो मे मानी जाती है। इसके दर्शन से सभी मनोरथ पूरे होते है। उत्तर प्रदेश एव सलग्न प्रदेशो के निवासी अपने बच्चो का मुडन सस्कार यही कराते है। चैत्र मास और आश्विन मास की नवरात्रि मे यहा मेला लगता है। उस अवसर पर मन्दिर के परिसर में सैकडो ब्राह्मण दुर्गा सप्तशती का पाठ करते है।

मन्दिर के पश्चिम मे एक आगन है। इस आंगन के पश्चिमी भाग मे बारह भुजा देवी है। दूसरे मण्डप मे खर्परेश्वर शिव है तथा दक्षिण की ओर महाकाली की मूर्ति है। उत्तर की ओर धर्मध्वजा देवी है।

महाकाली— वस्तुत ये चामुण्डा देवी है। यह स्थान काली खोह कहा जाता है जो विन्ध्याचल से तीन किलोमीटर दूर है। इसी स्थान मे महाकाली देवी का मन्दिर है। देवी का शरीर छोटा है, किन्तु मुख विशाल है।

काली खोह के पास ही भैरवजी का स्थान है। इसी स्थान से सीढिया प्रारभ होती है। 125 सीढी ऊपर गेरुआ तालाब है। जिसका जल सदैव गेरुए रग का रहता है। यात्री लोग उसमे अपने कपडे रग लेते है। इसी के निकट श्री कृष्ण मन्दिर है। उससे लगभग 100 सीढिया उतरने पर सीताकुण्ड तथा सीता जी के चरण चिन्ह मिलते है। सीता कुण्ड के पास ही एक झरना है, जिसके दूसरी ओर अष्टभुजा मन्दिर है।

अष्टभुजा देवी— काली खोह से अष्टभुजा मन्दिर लगभग डेढ किलोमीटर है। इन अष्टभुजा देवी को महासरस्वती भी कहते है। विन्ध्यवासिनी को महालक्ष्मी मान लेते है और इस प्रकार त्रिकोण यात्रा को महालक्ष्मी, महाकाली, महासरस्वती यात्रा कहते है।

भागवत मे कथा है कि मथुरा मे कस के कारागार मे भगवान श्रीकृष्ण ने जन्म लिया। उसी समय वासुदेव जी गोकुल आये और वहा यशोदाजी की नवजात कन्या के स्थान पर कृष्ण को सुलाकर उस कन्या को उठा लाये। उस कन्या को कस जब वध करने के लिए पत्थर पर पटकने लगा, तब उसके हाथ से कन्या छूटकर आकाश मे चली गयी। वहा उसने अष्टभुजा रूप प्रकट किया। उन्ही अष्टभुजा देवी का यह मन्दिर है।

अष्टभुजा देवी के मन्दिर के पास एक गुफा मे काली देवी का दूसरा मन्दिर है। वहा से चलने पर भैरव कुण्ड तथा भैरवनाथ जी का मन्दिर मिलता है। पास मे मच्छन्दरा कुण्ड है।

पौराणिक कथा— श्री दुर्गा सप्तशती मे कथा है कि शुम्भ निशुम्भ दैत्यो से पीडित देवता देवी की प्रार्थना कर रहे थे। पार्वती जी उधर से निकली और पूछा आप लोग किसकी स्तुति कर रहे है? उसी समय पार्वती के शरीर मे से एक तेजोमय देवी प्रकट हुई। वे बोली, ये लोग मेरी प्रार्थना कर रहे है। पार्वती के शरीर कोश से निकलने के कारण वे कौशिकी कही गई। उन्होने ही शुम्भ और निशुम्भ का वध किया। उनके प्रकट होने के पश्चात पार्वती का शरीर काला पड गया। वे काली कहलाने लगी।

शुम्भ और निशुम्भ के युद्ध मे जब देवी कुद्ध हुई, तब उनके ललाट से भयानक मुख वाली चामुण्डा देवी प्रकट हुई। उन्होने शुम्भ और निशुम्भ के

श्री शारदापीठ— तुगा नदी के बाये तट पर एक शिला पर खुदे एक श्रीचक्र पर आदि शकर ने श्री शारदा की प्रतिमा की स्थापना की। पीठ की अधिष्ठास्त्री देवी श्री शारदा की अनुकम्पा से ही प्रत्येक गुरु अपने उत्तराधिकारी का मनोनयन करता रहा है और पिछले 1200 वर्षो से उत्तराधिकार की यह परपरा निरतर चली आ रही है।

शारदा परमशक्ति का प्रतीक है। उनके एक हाथ मे अमरत्व के अमृत से भरा एक कलश, दूसरे मे सर्वोच्च ज्ञान की परिचायक पुस्तक, तीसरे मे माला है जिसके मनके उन बीजो का प्रतिनिधित्व करते है जिनसे ब्रह्माण्ड जन्मता है और चौथे हाथ मे चिन्मुद्रा है जो जीव और ब्रह्म की एकात्मकता का ज्ञान दर्शाती है।

स्फटिक लिंग— आदि शकर के समय से लेकर आज तक आचार्य प्रतिदिन भगवान चद्रमौलीश्वर के स्फटिक लिंग और रत्नगर्भा गणपति की मूर्ति की पूजा अर्चना करते है। यह मूर्ति एक छोटे बिल्लौरी धन मे उकेरी गयी है जिसके मध्य मे मानिक जडा है।

स्वच्छ स्फटिक लिग मे अपने ही प्रकाश से आलोकित होने वाला चद्रमा अन्यत्र कही नही देखा गया। ऐसा माना जाता है कि कैलाश का यह लिग भगवान विश्वेश्वर ने काशी मे शकर को दिया था। मठ मे स्फटिक लिग और मूर्ति की पूर्ण भक्तिभाव से भरा एक अनुभव है। आचार्य जहा भी जाते है, पूजा और भक्तो के कल्याण के लिए ये दोनो मूर्तिया उनके साथ रहती है।

यहा दस प्राध्यापक व्याकरण, ज्योतिष, मीमांसा, तर्क, साहित्य, वेदात एव ऋग्वेद, यजुर्वेद आदि का अध्ययन कराते है। इस समय गुरुकुल मे लगभग सौ छात्र है। श्रृगेरी पीठ के समृद्ध पुस्तकालय मे आदि शकर के अनेक अलभ्य ग्रथो के अतिरिक्त भोजपत्रो पर लिखी पाडुलिपिया, वेदो, वेदागो एव शास्त्रो की सभी शाखाओ से सबधित बहुमूल्य पुस्तके है। पीठ और मराठा व विजयनगर के शासको के बीच हुए सदियो के पत्र व्यवहार के रेकार्ड इस ग्रथालय की बहुमूल्य सम्पत्ति है।

महत्व की दृष्टि से श्री शारदा के मन्दिर के बाद श्री विद्याशंकर के मन्दिर का नाम आता है। वास्तुशिल्पीय उत्कृष्टता के लिए प्रसिद्ध द्राविड और होयसला शैली वाला यह मन्दिर 1346 मे बना था। यह श्रृंगेरी पीठ के 10वे आचार्य श्री विद्या तीर्थ महास्वामीजी का अधिष्ठानम् है। इसमे योग शास्त्र, खगोल विज्ञान एव प्रायोगिक रुचि के अन्य विषयो को पत्थरो मे बडे ही कलात्मक ढग से उकेरा गया है।

श्रृंगेरी पहुंचने के लिए— पश्चिमी घाट के पठार मे स्थित श्रृंगेरी एक शात एव मनोहारी तीर्थ है। कर्नाटक के चिकमगलूर जिले मे तुगा नदी के तट पर बसा यह तीर्थ बिरूर या शिमोगा रेलवे स्टेशन से मात्र 16 किलोमीटर की दूरी पर है। पश्चिमी तट पर मगलोर से इसकी दूरी 107 किलोमीटर है। ❑

7. कांचीवरम

तमिलनाडु

दक्षिण भारत मे सबसे पुराने विश्वविद्यालय, मन्दिरो और विहारो के लिए प्रसिद्ध काचीपुरम, जिसे काचीवरम भी कहा जाता है, मद्रास से दक्षिण पश्चिम मे लगभग 75 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। यह नगर अब भी अपने प्राचीन स्मारको पर गर्व करता है।

सप्तपुरियो मे काची का अपना अलग स्थान है। यहा भगवान शकर और भगवान विष्णु दोनो देवताओ के मन्दिर है। अत· इसे हरिहरात्मक पुरी कहा जाता है। काचीवरम नगर के एक ओर शिवकाची तथा दूसरी ओर विष्णुकाची है।

शिवकाची मे सर्वतीर्थ संरोवर, एकाम्रेश्वर शिव मन्दिर, वामन मन्दिर, कैलाशनाथ मन्दिर, श्री बैकुठपेरूमल, विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

सर्वतीर्थ सरोवर मे स्नान करने का विधान है। इस सरोवर की ओर कई मन्दिर है, जिसमे काशी विश्वनाथ का प्रमुख मन्दिर है।

एकाम्रेश्वर शिव मन्दिर, शिवकाची का प्रख्यात मन्दिर है। मुख्य मन्दिर मे बालुका निर्मित शिवलिग है। मन्दिर के परिक्रमा मार्ग मे कई देव विग्रह है। इस मन्दिर का प्रधान गोपुर दस खड का है। इसके एक ओर सुब्रहमण्य और दूसरी ओर गणेशजी के मन्दिर है। शिव मन्दिर के पीछे आम्र का एक वृक्ष है। कहा जाता है कि यह वृक्ष सहस्र वर्ष प्राचीन है। यहा पर पार्वती की एक मूर्ति भी है। बालुका निर्मित शिवलिग की पार्वतीजी आराधना करती थीं, ऐसा कहा जाता है। यही बालुकामय शिवलिग एकाम्रेश्वर शिवलिग के नाम से प्रख्यात है।

एकाम्रेश्वर शिव मन्दिर से लगभग चौथाई किलोमीटर की दूरी पर कामाक्षी देवी का मन्दिर है। इसमे भगवती पार्वती का श्री विग्रह है, जिसको

कामाक्षी देवी अथवा कामकोटि कहते है। भारत के द्वादश प्रधान देवी विग्रहो मे से यह एक है। इस मन्दिर के बगल मे अन्नपूर्णा देवी और शारदा देवी के मन्दिर है।

कामाक्षी मन्दिर के निकट ही वामन मन्दिर है जिसमे भगवान वामन की मूर्ति लगभग पाच फुट ऊँची है। वामन का एक चरण ऊपर उठा हुआ है। दूसरे चरण के नीचे राजा बलि का मस्तक है। पास ही सुब्रहमण्य मन्दिर है जिसमे स्वामी कार्तिक की भव्य मूर्ति प्रतिष्ठित है।

शिवकाची मे ही प्राचीन कैलाशनाथ शिव मन्दिर है। इस मन्दिर का शिवलिग अति ही सुदर और प्रभावोत्पादक है। चारो ओर की भित्तियो पर नाना प्रकार की मूर्तिया उत्कीर्ण है, जिनकी शिल्पकला देखने योग्य है।

श्री बैकुठपेरूमल मन्दिर बस्ती के मध्य मे स्थित है। इस मन्दिर मे भगवान विष्णु का विग्रह है। मन्दिर की शिल्पकला उत्तम है। परिक्रमा मार्ग की भित्तियो पर श्रृगार, युद्ध और नृत्यगान की मूर्तिया विशेष आकर्षक है।

विष्णुकाची मे श्री बरदराज मन्दिर है। यह विष्णु मन्दिर है। काले पाषाण की भगवान विष्णु की भव्य खडी मूर्ति है। गले मे शालग्राम की माला है। मन्दिर की दीवारो पर कई प्रकार के तैल चित्र बने है। घेरे के भीतर स्वर्ण मडित गरुड स्तंभ है तथा लक्ष्मीजी का मन्दिर है। यहां पर लक्ष्मी को पेरूदेवी कहते है।

मन्दिर के बाहरी घेरे मे बल्लभाचार्य की बैठक तथा रामानुजाचार्य का मन्दिर है, जिसमे उनकी मूर्ति स्थापित है। रामानुजाचार्य के आठ प्रधान पीठो मे यह भी एक पीठ है। आद्य शकराचार्य के प्रसिद्ध चार पीठो के अतिरिक्त काची कामकोटि के शकराचार्य का यहा भी एक आश्रम है जिसको शकराचार्य का पाचवा आश्रम माना जाता है। □

8. गंगा सागर

मकर सक्रान्ति के अवसर पर गगा सागर मे स्नान का विशेष महात्म्य है। यहा गगा और सागर का सगम है। इसलिए इसे गगा सागर कहा जाता है। यह भी मान्यता है कि इस समय जहा स्नान का मेला लगता है, पहले वहा गगा जी सागर मे मिलती थी

और वही कपिलमुनि का आश्रम भी था।

गगा सागर तीर्थ, सुदर वन के अतर्गत, एक द्वीप पर स्थित है। गगा सागर पर साधारण छोटी सी बस्ती भी है। वहा के जगल पेडो को काट कर, अब कृषि योग्य भूमि बना दी गई है। इस समय द्वीप पर कई ग्राम बस गये है। गगा सागर मे एक धर्मशाला और मीठे जल का एक सरोवर है।

इस तीर्थ स्नान का विशेष पर्व मकर सक्रान्ति है। इस पर्व के अवसर पर गगा सागर मे तीन दिनो तक स्नान करने का विधान है। मकर सक्रान्ति के अवसर पर यहा बहुत बडा मेला लगता है। सगम के निकट् कपिलमुनि का मदिर है। इसमे लाल पाषाण की एक मूर्ति है। मदिर के बाहर घोडे की मूर्ति है। यह मदिर अयोध्या के एक मठ के अधिकार मे है। इस मठ के पुजारी ही इसकी पूजा करते है।

मेले के अवसर पर विद्युत प्रकाश, पानी और रहने के लिए झोपडियो का सरकार की ओर से अस्थायी प्रबध कर दिया जाता है। इन दिनो प्राय सभी प्रकार की दुकाने भी यहा लगती है। मकर सक्रान्ति के अवसर पर आउट्राम घाट से गगा सागर तक जहाज जाते है।

गगा की कई धाराये बगाल की खाडी मे मिलती है। अतएव यह कहना कठिन है कि किस धारा के सगम पर कपिलमुनि की क्रोधाग्नि से राजा सगर के पुत्र भस्म हुए थे। इसलिए गगा की जितनी भी धाराये है, उनके सगम पर स्नान करने का वही महात्म्य है, जो प्रचलित गगा सागर के तीर्थ के स्नान का माना जाता है। अत डायमड हार्बर के निकट, जहा हुगली नदी, जो गगा की एक धारा है, सागर मे मिलती है उसका भी सागर मे सगम है अर्थात् मीठे और खारे पानी का मिलन है। वहा स्नान करने से भी पुण्य फल प्राप्त होता है जो वर्तमान गगा सागर मे स्नान करने से होता है। □

9. कालड़ी

कालडी आदि शकराचार्य का जन्म स्थान होने के कारण एक महत्वपूर्ण तीर्थ स्थान है। आदि शकराचार्य प्रसिद्ध विद्वान, दार्शनिक सत थे, जिन्होने अद्वैत दर्शन (वेदात) का प्रचार किया।

शकराचार्य ने हिन्दू धर्म को रूढिवाद और अन्धविश्वासो से मुक्त किया। शकराचार्य के समय हिन्दू धर्म अपने पतन की पराकाष्ठा पर पहुच गया था।

आदि शकराचार्य का जन्म पेरियार नदी के दाहिने किनारे पर हरे भरे खेतो से घिरे हुए एक छोटे से गाव कालडी मे हुआ था। वे अपने पिता श्री शिव गुरु और माता श्रीमती आर्यम्बा के इकलौते पुत्र थे। जब वे थोडी उम्र के थे, उनमे असाधारण बुद्धिमत्ता के लक्षण प्रकट होने लगे थे और बाल्यकाल मे ही वेदो का अध्ययन कर लिया था। आदि शकराचार्य ने सोलह साल की उम्र मे सत्य की खोज प्रारभ की और बत्तीस वर्ष की आयु मे उनका देहात हुआ। इन सोलह सालो के अतराल मे और इतनी अल्पायु मे जो कुछ उन्होने किया, यही उनकी महत्ता का सबसे बडा प्रमाण है।

आदि शकराचार्य के बारे मे अनेक चमत्कारिक कथाये प्रचलित है। पेरियार नदी, उनके घर से आधा किलोमीटर दूर बहती थी। उनकी वृद्धा मा को नदी मे स्नान करने के लिए चलने का कष्ट न उठाना पडे, इसलिए उन्होने पेरियार नदी की धारा को ही बदल दिया ताकि नदी उनके घर के पास बहने लगे। आज भी नदी के विचित्र बहाव को श्रृगेरी मठ के पास देखा जा सकता है। जहा श्रृगेरी मठ है वही उनका निवास स्थान था। श्रृगेरी मठ पेरियार नदी के दाहिने तट पर स्थित है, वहा पर नदी तट पर खुला हुआ घाट बना हुआ है।

कालडी मे दो मुख्य तीर्थ-स्थान है, जिसमे एक आदि शकराचार्य को समर्पित है और दूसरा देवी शारदाम्बा को, जो श्रृगेरी की सरक्षिका देवी है। यहा पर आदि शकराचार्य की मा की समाधि है तथा विनायक या गणपति का मदिर भी है, जहा रोज भजन, कीर्तन और प्रार्थना सायकाल आयोजित की जाती है।

सत दार्शनिक शकराचार्य की स्मृति मे एक आठ मजिला गुलाबी इमारत है। इसके प्रवेशद्वार पर हाथियो की दो मूर्तिया है। जब कोई इस इमारत की सीढियो पर चढता है, तो उभरे हुए चित्र आदि शकराचार्य के जीवन वृत्त को वर्णित करते है। गणपति या अन्य देवताओ की बडी मूर्तिया इस जगह पर स्थापित है।

आदि शकराचार्य से सम्बन्धित मदिर जाति और धर्म के भेदभाव के बिना सबके लिए खुला रहता है।

शकराचार्य मदिर के पास ही श्रीकृष्ण का मदिर है, जिसे शकराचार्य ने ही बनवाया था।

नदी की धारा बदलने के कारण पुराना मदिर जलमग्न हो गया। श्रीकृष्ण मदिर से सटा हुआ रामचन्द्र अद्वैत आश्रम है। इस मदिर मे एक बडा सभा कक्ष है और यह मदिर बेलूर मठ के राम कृष्ण मदिर की अनुकृति के अनुसार बना हुआ है। इस मदिर के बाहर सभी प्रकार के साहित्य की पुस्तके बिकती है। आश्रम एक स्कूल, एक धर्मार्थ औषधालय और पुस्तकालय भी सचालित करता है। ❑

10. श्री स्वामिनारायण गादी

गुजरात

अयोध्या के निकट छपैया गाव मे धर्मदेव पिता और माता भक्तिदेवी के घर मे एक दिव्य बाल स्वरूप प्रकट हुआ। यह दिव्य घटना सन् 1781 की है। यह बाल स्वरूप जिनकी गोद मे खेल रहा था वे माता थी भक्तिदेवी। जैसा उनका नाम था वैसे ही उनके गुण भी थे, साथ ही वे बालक मे श्रेष्ठ सस्कारो का सिचन करने वाली भी थी। पिता धर्मदेव विद्वान ब्राह्मण थे। काशी के प्रथम श्रेणी के विद्वानो मे उनकी अनुपम ख्याति थी। ऐसे सुसस्कृत माता–पिता की शीतल छाया तले बालक घनश्याम का जीवन सुमन उत्तम सस्कारो के साथ विकसित हो रहा था। आठवे वर्ष मे बालप्रभु का यज्ञोपवीत सस्कार सपन्न हुआ।

सर्वावतारी बाल स्वरूप घनश्याम ने जिन दिनो अवतार लिया वे दिन भारत के लिए यो तो निराशाजनक ही थे। अग्रेजो ने अपनी शासन की नीव डाल दी थी, पर वे इस समय तक व्यापार से सबधित कोठिया ही स्थापित कर पाए थे और अभी तक राज्य करने की महत्वाकाक्षा का उदय नही हुआ था। अग्रेजो का शासन अभी तक बगाल तक ही सीमित था। मराठी सत्ता का सूर्य अस्त होने को था, फिर भी उसका तेज इतना तो अभी तक प्रचण्ड था कि उससे अग्रेजो की आखे चौधिया रही थी। पर भारत की राजनीति मे क्राति के चिन्ह दिखाई देने लगे थे और छिन्न–विछिन्न प्रजा को कोई एकता के सूत्र मे बाध सके, ऐसे विराट पुरुष की प्रतीक्षा थी।

बालक घनश्याम के गुरु रामानन्द स्वामी थे। उनके स्वधाम पधारने के बाद चौदहवे दिन 'मेरा नाम स्वामिनारायण है' ऐसा उन्होने स्वय अपने मुह से

कहा। फिर तो सर्वत्र व्याप्त स्वामिनारायण, स्वामिनारायण का मत्रोच्चारण प्रारभ हुआ। वह अविचल एव अडिग रूप मे आज भी विद्यमान है।

सभी धर्मो की नीव स्वानुभव पर आधारित है। स्वामिनारायण सप्रदाय के तत्वज्ञान के विषय पर महाराज ने स्वय श्रीमुख से वचनामृत के रूप मे जगह–जगह पर कहा है। वचनामृत महाराज के स्वमुख से प्रकट हुई बाते है– "ये जो वार्तायें है, हमने प्रत्यक्ष देखकर कही है। इसीलिए इनमे सशय नही है। यहा सशय की आवश्यकता भी नही है। स्वामिनारायण सप्रदाय का तत्वज्ञान अनुभवो के निचोड का परिपक्व रूप है। स्वदर्शन मे से स्वमत का जहां निर्माण होता हो वहा अनुभव ही आधार बनता है।" श्रीजी महाराज ने तो स्वय ही कहा है कि हमने यदि प्रत्यक्ष देखकर नही कहा हो,तो हमे सर्व परमहसो की शपथ है। अर्थात् दृश्य अनुभवगम्य ज्ञान ही इस सप्रदाय मे प्रकट हुआ है। स्वामिनारायण सप्रदाय का मत विशिष्टाद्वैत है।

सस्कारिता के प्रतिनिधि इस सप्रदाय ने वर्ण एव धर्म के विरोध को रोका। दलित वर्ग के अधम मानव को भी भक्ति का अधिकार दिया।

सत्सग इस सप्रदाय का मुख्य अग है। परमात्मा के स्वरूप को ब्रह्मनिष्ठ सदगुरु समझाते है। ऐसे किसी ब्रह्मनिष्ठ सदगुरु से मिले बिना स्वय पुरुषार्थ से ब्रह्मनिष्ठ होना असभव है, इसीलिए इस सत्सग की महिमा सर्वाधिक मानी गयी है। सत्सग अर्थात् आत्मा परमात्मा, सत् पुरुष और सत्शास्त्र, इन चारो का समन्वय। इस सप्रदाय मे सत्सग करना प्राथमिक आवश्यकता है और साथ ही अत तक सत्सग में ही रहना आवश्यक है। इस सप्रदाय मे केवल ब्रह्म दशा प्राप्त करना ही मुक्ति नही है, किन्तु ब्रह्मरूप होकर परब्रह्म की सेवा करना भी मुक्ति के अतर्गत है अर्थात् आत्मनिष्ठा को मुक्ति का एक साधन माना है न कि साध्य।

भक्ति के सदर्भ मे वैराग्य को पर्याप्त महत्व दिया गया है। वैराग्य से मतलब यह नही कि उदासीन हो जाना अथवा बाहरी आचार विचारो का त्याग करना किंतु प्रभु के अतिरिक्त दूसरो मे प्रीति रहित होकर अनासक्ति भाव मे रहना। यही वैराग्य का सच्चा स्वरूप है। सप्रदायो मे मदिरो की महत्ता भी पर्याप्त मानी गई है। आचार के एक भाग के रूप मे साझ सबेरे मदिर मे जाना, यह इस सप्रदाय के अनुयायियो के लिए परम आवश्यक है। फलत स्थान–स्थान पर भगवान के शिखर वाले मदिर बनाए गए है। इन मदिरो का कलात्मक शिल्प दर्शनीय है। शिल्प और स्थापत्यकला के उत्तमोत्तम नमूनो के रूप मे ये मदिर हिन्दू सस्कृति, हिन्दू सस्कारो की

धरोहर के रूप मे सदा दर्शनीय होगे। न केवल गुजरात मे किन्तु भारत की सीमाओ को लाघकर विदेशो मे भी ऐसे शिखर वाले मदिर तथा हरि मदिर बने है। आज यह सप्रदाय न केवल गुजरात का सप्रदाय रहा है किन्तु विदेशो मे भी चारो ओर फैल गया है। ❑

अध्याय चौदह

1. श्रीकृष्ण 'इस्कॉन' मन्दिर

यद्यपि एक दीपक से अनेक दीपक जलाये जाते है जिनकी ज्योति समान होती है, परतु फिर भी प्रथम दीपक ज्यो का त्यो बना रहता है। उसी प्रकार से यद्यपि परमेश्वर अपना विस्तार अनेक रूपो मे करते है, फिर भी वे ही समस्त कारणो के मूल कारण बने रहते है। वेदो मे उसी मूल परम कारण को कृष्ण कहा गया है, क्योकि उन भगवान मे असीमित दिव्य गुण है जिनसे सभी जीव आकर्षित हो जाते है।

पाच सौ वर्ष पूर्व वही परम कारण, भगवान श्रीकृष्ण, चैतन्य महाप्रभु के रूप मे प्रकट हुए तथा उन्होने घोषणा की कि उनके नामो – हरे कृष्ण हरे राम का प्रचार भारतवर्ष की सीमा के बाहर सम्पूर्ण विश्व के प्रत्येक नगर तथा गाव मे होगा। सैकडो वर्षो से चैतन्य महाप्रभु के सच्चे अनुयायी उनके सदेश के प्रसार का प्रयास करते रहे। फिर भी वे चकित थे कि भगवान चैतन्य की निर्भीक भविष्यवाणी कैसे सत्य होगी।

और तब अपने उन्हत्तरवे जन्म दिन के कुछ दिनो पूर्व 13 अगस्त, 1965 को ए. सी. भक्तिवेदात स्वामी एक विचारक, विद्वान तथा सत अमेरिका की ओर चल पडे, यह देखने के लिए कि क्या किया जा सकता है। उन्होने एक स्थानीय कपनी से प्रार्थना करके उनके एक छोटे मालवाहक जहाज जलदूत मे उसके एकमात्र यात्री के रूप मे यात्रा की। उस समय उनके पास केवल 40 रु., एक सूटकेस, एक छाता और पुस्तको से भरे हुए कई ट्रक थे।

सैतीस दिनो के बाद जलदूत जब न्यूयार्क मे पहुचा, उस समय भक्तिवेदान्त स्वामी बिल्कुल अकेले थे। वहा अमेरिका मे उनके साथ कोई नही था और न ही जीविका का कोई निश्चित साधन था, सिवाय थोडी सी वस्तुओ के, जिन्हे वे जहाज मे रखकर लाये थे। उनके पास धन नही था, मित्र नही थे, अनुयायी नही थे, युवावस्था भी नही थी और अच्छा स्वास्थ्य भी नही था,

यहा तक कि इतना विशाल कार्य करने की कोई स्पष्ट योजना भी नही थी कि सम्पूर्ण पाश्चात्य जगत मे वेदो का आध्यात्मिक ज्ञान किस प्रकार फैलाया जाये?

सक्षेप मे, वर्ष 1965 तथा 1977 के बीच मे कृष्णकृपा श्रीमूर्ति श्री श्रीमद् ए सी भक्तिवेदान्त स्वामी तथा श्रील प्रभुपाद ने– जैसे उनके अनुयायी उन्हे प्रेम से पुकारने लगे थे, कृष्णभावनामृत की शिक्षाओ का विश्व भर के समस्त महानगरो मे प्रसार कर दिया और एक अतर्राष्ट्रीय सघ की स्थापना कर दी जिसमे हजारो की सख्या मे समर्पित भक्त है। उन्होने विश्व भर मे अत्यत समृद्धशाली 108 मन्दिरो की स्थापना कर दी तथा इस महान आदोलन को मार्गदर्शन देने के लिए विश्व भर मे बारह बार सम्पूर्ण भ्रमण किया।

सितबर 1965 मे न्यूयार्क शहर मे आने के बाद श्रील प्रभुपाद एक वर्ष अकेले ही अपने कृष्णभावनामृत आदोलन को स्थापित करने के लिए सघर्ष करते रहे। वे सरलतापूर्वक रहते, जब भी और जहा भी अवसर मिलता, वे प्रवचन देते और धीरे–धीरे उन्होने अपनी शिक्षाओ के द्वारा लोगो मे कुछ रुचि उत्पन्न कर दी।

1966 की जुलाई मे यद्यपि वे अकेले ही न्यूयार्क शहर के 'लोअर ईस्टसाइड' मे एक उपेक्षित स्टोरफ्रन्ट से कार्य कर रहे थे, फिर भी उन्होने सम्पूर्ण विश्व को व्याप्त करने वाला एक आध्यात्मिक सघ स्थापित किया। उन्होने इसे अतर्राष्ट्रीय कृष्णभावनामृत सघ (इटरनेशनल सोसायटी फॉर कृष्णा कन्सशस) अथवा सक्षेप मे 'इस्कॉन' नाम दिया।

सस्थापना के समय श्रील प्रभुपाद के पास एक भी समर्पित अनुयायी नही था। दृढ निश्चय के साथ उन्होने अपने सायकालीन प्रवचनो मे नियमित रूप से आने वाले सहायको को इस्कॉन के प्रथम अधिकारी बना दिया। यह उस समय की बात है। परतु अभी अतर्राष्ट्रीय कृष्णभावनामृत सघ के विश्व भर मे 300 से भी अधिक मन्दिर, कृषि क्षेत्र, गुरुकुल और विशेष योजनाये है तथा विश्व भर मे समर्थको की सख्या करोडो मे है।

इस्कॉन का उद्देश्य

कृष्णभावनामृत आदोलन किसी भी अन्य पथ से अधिक है। यह आध्यात्मिक जीवन का व्यावहारिक विज्ञान है जिसका पूर्ण वर्णन प्राचीन भारत के वैदिक

साहित्य मे मिलता है। इस कृष्णभावनामृत आदोलन का लक्ष्य यह है कि ससार के सभी लोगो को ईश अनुभूति के ये सार्वजनिक सिद्धात मालूम हो ताकि उन्हे आध्यात्मिक ज्ञान, एकता तथा शाति का सर्वश्रेष्ठ लाभ प्राप्त हो सके।

वेदो की शिक्षा है कि इस कलियुग मे आत्मज्ञान प्राप्त करने की सर्वाधिक प्रभावशाली विधि यही है कि विविध नामो वाले दयामय परमेश्वर के विषय मे सदा श्रवण, कीर्तन तथा स्मरण किया जाय। उन नामो मे से एक 'कृष्ण' है, जिसका अर्थ है 'सर्वाकर्षक'। दूसरा नाम है 'राम' जिसका अर्थ है 'समस्त आनन्द का भडार' और 'हरे' शब्द से भगवान की आह्लादिनी शक्ति का बोध होता है।

वैदिक शिक्षा का पालन करते हुए इस्कॉन के भक्तगण सदैव

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम हरे हरे।।

का कीर्तन करते हुए दिखाई देते है। यह दिव्य कीर्तन हमे भगवान के पवित्र नामो की शब्द ध्वनि के द्वारा साक्षात् भगवान के संपर्क मे लाता है और धीरे–धीरे भगवान के साथ हमारे मूल सबंध को प्रस्थापित करता है।

इस्कॉन का प्रमुख कार्य मानव समाज को भगवान के विषय मे श्रवण तथा कीर्तन की विधि मे अपने समय तथा शक्ति का कम से कम कुछ अश लगाने के लिए प्रोत्साहित करना है। इस प्रकार वे धीरे–धीरे यह समझ सकेगे कि सभी प्राणी आध्यात्मिक स्फुल्लिड है जो परमेश्वर की प्रेममयी सेवा मे नित्य उनसे संबधित है।

.अपने समस्त विभिन्न योगदानो मे श्रील प्रभुपाद ने अपनी पुस्तको को सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण समझा। यह सत्य है कि वे प्राचीन वैदिक वाडमय के अनुवाद तथा तात्पर्य लिखने के अपने कार्य को अपना जीवन तथा आत्मा कहा करते थे। 1970 मे श्रील प्रभुपाद ने भक्तिवेदान्त बुक ट्रस्ट की स्थापना की जो इस समय विश्व भर मे वैदिक साहित्य का सबसे बडा प्रकाशक है। इसके पिछले 25 वर्षो के परिश्रम के परिणामस्वरूप करोडो लोगो ने श्रील प्रभुपाद की पुस्तको मे से कम से कम एक पुस्तक पढी है तथा अपने जीवन मे काफी शुद्धि का अनुभव किया है। उस आध्यात्मिक ज्ञान का यहा पर सक्षिप्त विवरण दिया जा रहा है जिसे आप उनकी पुस्तको मे पायेगे।

श्रील प्रभुपाद की पुस्तको मे वर्णित ज्ञान से हम अपनी वर्तमान धार्मिक, राष्ट्रीय अथवा सास्कृतिक स्थितियो मे बिना परिवर्तन किए ईश्वरीय (भगवद) ज्ञान मे उन्नति कर सकते है। जिस विज्ञान से हम भगवान को समझते है, उनके साथ अपने सबध को समझते है तथा उनके साथ अपना प्रेम विकसित करते है उसका हिन्दू, मुसलमान अथवा ईसाई जैसी उपाधियो से कोई सबध नही है। यही हमारे जीवन का लक्ष्य है जिसे कोई भी धर्म अस्वीकार नही कर सकता। यही धर्म का सार है अर्थात यही सार्वभौमिक लक्षण है जिसके द्वारा सभी धर्मो को समझा जा सकता है।

अलग-अलग धर्मो मे ईश्वर के नाम अलग-अलग हो सकते है। पूजा की विधि अलग-अलग हो सकती है और नियमो तथा सिद्धातो का विवरण भी अलग-अलग हो सकता है परतु प्रश्न यही है कि व्यक्ति कितना अधिक ईश्वर का ज्ञान तथा ईश्वर के प्रति वास्तविक प्रेम विकसित कर सकता है। असली धर्म का अर्थ है ईश्वर के प्रति प्रेम विकसित करना और ईश्वर से कैसे प्रेम करना चाहिए यही श्रील प्रभुपाद की पुस्तको की शिक्षाओ का सर्वस्व है।

जैसा कि पूर्व मे कहा जा चुका है कि इस समय इस्कॉन के विश्व भर मे तीन सौ से भी अधिक मन्दिर, कृषिक्षेत्र, गुरुकुल तथा विशेष योजनाये है। प्रत्येक केद्र मे भक्तगण प्रतिदिन भागवत कक्षा मे बैठते है, कीर्तन करते है और कृष्णभावनामृत के विज्ञान पर व्यक्तिगत शिक्षा देते है। प्रत्येक केद्र मे साप्ताहिक उत्सव तथा प्रसाद भण्डारा होता है। इसके साथ-साथ वार्षिक उत्सवो के कार्यक्रम भी होते है। सभी कार्यक्रम सामान्य जनसमूह के लिए सुलभ है।

2. नागेश्वर मन्दिर

नागेश द्वादश ज्योतिर्लिगो मे एक है, जिसके बारे मे कुछ विवाद है। गुजरात प्रदेश स्थित, द्वारिकाधाम से कुछ दूरी पर एक छोटा और नवीन नागनाथ का मन्दिर है, वहा के निवासी उसी को नागेश ज्योतिर्लिग मानते है। कुछ लोगो के मतानुसार अल्मोडा से पच्चीस छब्बीस किलोमीटर की दूरी पर स्थित योगेश

(जागेश्वर) शिवलिग ही नागेश ज्योतिर्लिंग है। एक नागेश्वर ज्योतिर्लिंग आन्ध्र प्रदेश के अबढानाथ ग्राम मे स्थित है।

शिव पुराण मे नागेश लिग का दारुका वन मे होना वर्णित है। लोग दारुका को ही द्वारिका समझते है परतु यह भ्रम है। द्वारुका नाम की राक्षसी के नाम पर यह वन प्रसिद्ध था। द्वारिका अथवा नागनाथ मन्दिर के पास किसी वन का उल्लेख नही मिलता है, आज भी वहा कोई वन नही है। उसरा अथवा बलुई भूमि ही मिलती है। अत. इस नागनाथ और अवढा नागनाथ को द्वादश ज्योतिर्लिगो मे मानना उचित नही। शिव पुराण मे नागेश ज्योतिर्लिगो की पूरी कथा दी है। उसके आधार पर ये दोनो शिवलिग, नागनाथ के नाम के शिवलिग है।

शिव पुराण में कथा है—

प्राचीन काल मे द्वारुका वन की स्वामिनी द्वारुका नाम की एक राक्षसी थी। उसने पार्वती से यह वरदान प्राप्त कर लिया कि वह अपने निवास स्थान सहित वन को जहा चाहे ले जा सकती है। अत. वह अपने वन को इधर–उधर ले जाकर जनपदो का नाश करने लगी। उसका पति द्वारूक एव उसके सैनिक बडे अत्याचारी थे। उनके अत्याचार से त्रस्त हुए प्राणियो की प्रार्थना पर देवता लोग दानवो से युद्ध करने आये। देवताओ के भय से वह राक्षसी अपने वन को सागर के तीर पर ले गई। वहा भी वे लोग नौका से आने जाने वाले यात्रियो को कष्ट देने लगे। एक बार मनुष्यो से भरी हुई कई नौकाये उस ओर आई। अतैव उस दैत्य ने समस्त मनुष्यो को पकडवाकर एक गुफा मे बद कर दिया। उन नौकाओ का स्वामी सुप्रिय नामक वैश्य परम शिवभक्त था। वह कारागार मे भी शिव की आराधना करता रहा और अपने साथियो को भी शिव पूजा की प्रेरणा देता रहा।

कालातर मे उस वैश्य की शिव भक्ति का समाचार दैत्य दपत्ति को मिला। वैश्य का वध करने के लिए उसने अपने सैनिको को भेजा। भक्तो की रक्षा करने हेतु भगवान शिव ने प्रकट होकर समस्त सैनिको का नाश कर दिया। भक्त की प्रार्थना पर भगवान शकर ने कहा मै यहा नित्य निवास करूगा।

इसी अध्याय मे लिखा है कि देवताओ के भय से राक्षसी अपने वन को भारत के पश्चिम समुद्र की ओर ले गई। उसके नगर का नाम सिन्धु नगर था जो अब पाकिस्तान का एक भाग है।

शिव पुराण की कथा के अनुसार नागेश ज्योतिर्लिंग का पाकिस्तान मे होना निश्चित है। अत यह ज्योतिर्लिंग सिध प्रदेश की राजधानी जिसका आधुनिक नाम कराची है, उसी नगर के सागर तट पर स्थित है। यह ज्योतिर्लिंग एक बहुत बडी गुफा मे स्थित है। गुफा इतनी बडी है कि उसमे सौ पचास व्यक्ति सुगमता से रह सकते है। गुफा मन्दिर का सिहद्वार सागर तट की ओर है। पाकिस्तान बनने के पश्चात यहा के हिन्दू निवासियो ने एक ब्राह्मण पुजारी को वहा रख दिया है जो इस ज्योतिर्लिंग की विधिवत पूजा करता है। उसके रहने के लिए गुफा के ऊपर गृह बना हुआ है। कहा जाता है कि इसी गुफा मे सुप्रिय वैश्य और उसके साथियो को बदी किया गया था।

भारत के कई पौराणिक तीर्थ और मन्दिर विदेशियो के अधिकार मे चले गये है। जैसे कैलाश मानसरोवर चीन मे, सप्त पुण्य नदियो मे सिधु नदी एव कई मन्दिर और तीर्थ पाकिस्तान मे। 51 शक्ति पीठो मे कई शक्ति पीठ मन्दिर बगलादेश मे चले गये है। अत उन तीर्थो की यात्रा कठिन हो गयी है।

इन तीर्थो की यात्रा के लिए भारत सरकार से पार पत्र (पासपोर्ट) और सबधित सरकारो से वीसा लेना पडता है। □

3. मन्दिर वेंकटेश्वर स्वामी

हैदराबाद का वेकटेश्वर मन्दिर श्री बी एम बिरला द्वारा निर्मित किया गया है। मन्दिर को देखकर श्री बिरलाजी की रचनात्मक दृष्टि भलीभाति परिलक्षित होती है। इसके अलावा भारतीय सस्कृति के प्रति उनका असीम स्नेह भी उजागर होता है।

हैदराबाद नगर के मध्य मे स्थित बिरला मन्दिर वास्तुकला का एक अति ही अद्भुत उदाहरण है। सारा मन्दिर सगमरमर पत्थर का बना हुआ है जो 300 फुट के ऊँचे चबूतरे पर स्थित है। मन्दिर से हैदराबाद नगर का सुहावना दृश्य और हुसैन सागर की विस्तृत झील दिखाई पडती है।

सन् 1976 का 13 फरवरी का दिन हैदराबाद के सास्कृतिक इतिहास का एक महत्वूपर्ण दिवस था। इसी दिन स्वामी वेकटेश्वर मन्दिर का उद्घाटन किया गया और इसके दरवाजे साधारण जनता के लिए दर्शनार्थ खोल दिये गये थे।

मन्दिर के प्रवेश स्थल पर भगवान कृष्ण की 15 फुट मूर्ति स्थापित है जो काले पत्थर की है और जिसका छत्र सगमरमर का बना हुआ है। पास ही कुछ दूरी पर शिव और हनुमानजी के मन्दिर है।

मन्दिर प्रवेश द्वार, जिसे सिहद्वार कहा जाता है, के दोनो तरफ सिहो की मूर्तिया है। इससे आगे उडीसा के मन्दिरो की शैली का अनुकरण करते हुए मुख्य मडप है, जिसके प्रारभ मे सगमरमर के एक पटल पर भगवान कृष्ण को गीता का उपदेश देते हुए दिखाया गया है।

इस मन्दिर का निर्माण राजस्थान मे स्थित मकराना के संगमरमर पत्थरो से किया गया है। यह मन्दिर सगमरमर के पत्थरो से बना हुआ अद्भुत मन्दिर है।

यह मन्दिर देश की विभिन्न शैलियो की वास्तुकला का समन्वय है। मुख्य मन्दिर खजुराहो, बोध गया और आलमपुर मन्दिरो की निर्माण कला का समन्वय है। राजगोपुरम तथा गरुडालय, दक्षिणात्य मन्दिरो की अनुकृति के अनुसार निर्मित किए गए है।

इस मन्दिर के मुख्य देवता स्वामी वेकटेश्वर की मूर्ति साढे नौ फुट ऊॅची है जो आन्ध्र प्रदेश के गुन्टूर जिले के फिरगीपुर से लाये गये ग्रेनाइट पत्थर से निर्मित की गई है। मूर्ति का वजन 8 टन है।

मन्दिर की परिक्रमा करते हुए महान सतो के पटलो पर अकित चित्र देखे जा सकते हे, जिनमे स्वामी शकराचार्य, सत तुलसीदास और रामकृष्ण परमहस के चित्र भी है। दीवार के दूसरी तरफ भगवान के अवतारो, भगवान विष्णु, मत्स्य, कूर्म और बाराह के चित्र अकित है। इसके अलावा नृसिह, वामन, परशुराम, राम, कृष्ण और भगवान बुद्ध के चित्र पटल है। चैतन्य महाप्रभु, माधवाचार्य, गुरुनानक, रामानुजाचार्य तथा भगवान महावीर के चित्र पटल भी मन्दिर की दीवार मे सज्जित किए गए है।

मुख्य मन्दिर की दाहिनी तरफ यज्ञशाला तथा ध्यान मडप है। मन्दिर मे भारतीय सस्कृति, धर्म तथा दर्शन से सबधित एक छोटा–सा पुस्तकालय भी है।

मन्दिर के द्वार सभी धर्मो, जातियो और समुदायो के व्यक्तियो के लिए

खुले रहते है। गुरुनानक, गुरु गोविदसिह, ईसा मसीह, भगवान बुद्ध तथा भगवान महावीर के जन्म दिवस बडे उत्साह के साथ आयोजित किए जाते है। इस मन्दिर का सास्कृतिक उद्देश्य ही सभी धर्मो का समन्वय स्थापित करना है। ☐

4. हायसलेश्वर मन्दिर

कर्नाटक

कर्नाटक प्रदेश मे श्री विष्णुवर्धन हायसल के बनवाये हुए कई मदिर है, जो शिल्पकला के लिए विख्यात है। इसमे इस तीर्थ के मदिर, बेलूर का चेन्नकेशव मदिर और कर्नाटक के दक्षिण पूर्व मे स्थित सोमनाथ मदिर है। इस क्षेत्र मे एक विशाल सरोवर है। जिसके कारण इस क्षेत्र का प्राचीन नाम द्वार समुद्र पड गया है।

हालेविद मे स्थित हायसलेश्वर मदिर को प्रतिभाओ की अलकरण की सुदरता तथा प्रचुरता के कारण महानतम उपलब्धि कहा जा सकता है। उसी स्थान पर स्थित कई जैन मदिर भी है जो स्वय सुदर है।

हायसलेश्वर जुडवा मदिर है। एक मे हायसलेश्वर शिवलिग और दूसरे मे सेतलेश्वर शिवलिग है। दोनो मदिरो की इमारते अधिकाश समान आकार की है और वे दोनो अपने समीपवर्ती आडे बाजुओ से जुडी हुई है। यद्यपि उनमे से प्रत्येक कुल मिलाकर 34 1 मीटर लम्बी तथा 30 4 मीटर चौडी इमारत है और सामने नन्दी मडप है, परतु उसमे स्थान बहुत अधिक है। समस्त होयसल मदिरो की भाति यह मदिर भी एक नीचे मच पर बना हुआ है। मदिर के बाहरी हिस्से के चारो ओर उत्कृष्ट मूर्तियो वाली अनत पट्टिया दिखाई देती है जिनमे पौराणिक कथाओ के देवी तथा अर्ध देवी स्वरूपो का चित्रण किया गया है। प्रत्येक पट्टी पर हाथी, शेर, दन्तकथाओ की हस जैसी आकृतिया, रामायण और महाभारत के विषय वस्तुओ के चित्रो का निर्माण किया गया है।

इसी प्रकार, हायसलेश्वर मदिर के चार प्रवेश द्वार मूर्तिकार के कौशल की अद्भुत देन है। दक्षिण तथा पूर्व के प्रवेश द्वारो पर द्वारपालो की आदम कद मूर्तिया है। वे बहुत सारे आभूषणो से लदी है।

अलकरण सम्पदा और अविश्वसनीय जटिल नक्काशी की दृष्टि से होयसल काल की इस उत्कृष्ट कलाकृति के तुल्य भारत मे बहुत कम मदिर है।

हायसलेश्वर मदिर से कुछ दूरी पर शिल्पकला से युक्त एक दूसरा शिव मदिर है, जिसमे केदारेश्वर शिवलिग प्रतिष्ठित है। आधे किलोमीटर की दूरी पर कई जैन मदिर है। इनमे पारसनाथ, आदिनाथ और शान्तिनाथ जैन मुनियो के मदिर अधिक प्रसिद्ध है। इनकी भी शिल्पकला दर्शनीय है।

यहा का निकटस्थ रेलवे स्टेशन हासना है। हासना से यह तीर्थ 31 किलोमीटर दूर है। यहा निवास के लिए एक डाक बगला भी है। हासना से मोटर बसे आती जाती रहती है। ❑

5. श्रीरंगम् मन्दिर

तिरुच्चिरापल्लि तमिलनाडु का प्रसिद्ध नगर है। यह कावेरी नदी के तट पर बसा है। इसका पौराणिक नाम त्रिशर-पल्ली है। कहा जाता है कि इस नगर को रावण के त्रिशिरा नामक भ्राता ने बसाया था। स्थानीय निवासी इस नगर को त्रिची भी कहते है। यह क्षेत्र श्रीरगम, जुबुकेश्वर और पर्वत स्थित गणेश मदिर के लिए प्रसिद्ध है।

नासिक और पचवटी की भाति एक ही महानगर को कावेरी नदी दो भागो मे बाट देती है। मुख्य नगर तिरुच्चिरापल्लि अथवा त्रिचिनापल्ली है और तीर्थ श्रीरगम।

सम्पूर्ण भारत मे विष्णु के ऐसे आठ विग्रह है, जो स्वय प्रकट हुए है। उनमे श्रीरंगम प्रथम माने जाते है। यह क्षेत्र अष्ट बैकुठो मे है। श्रीरगम् मदिर कावेरी नदी की दो धाराओ के मध्य मे स्थित है। कावेरी नदी की दो धाराओ मे श्रीरगम् द्वीप लगभग 25 किलोमीटर लम्बा है।

श्रीरंगम् मदिर का विस्तार 177 एकड के घेरे मे है। श्रीरगम् नगर के बाजार का बडा भाग मदिर के घेरे के भीतर आ जाता है। मदिर मे सात घेरे

है तथा इसके भीतर छोटे—बडे अठारह गोपुर है। पहले घेरे मे दुकाने है। दूसरे और तीसरे घेरे मे पडो एव ब्राह्मणो के आवास गृह है। चौथे घेरे मे सहस्त्र स्तम्भ मडप और एक अन्य मडप है जिसमे अनेक मूर्तिया उत्कीर्ण है। पाचवे घेरे मे गरुण स्तम्भ, एक गोलाकार सरोवर, रग नाम की लक्ष्मी मदिर, राम मदिर, श्री बैकुठनाथ भगवान नारायण का प्राचीन स्थान, कम्ब मडप व सभा मडप और एक कल्प वृक्ष है। तमिल के महाकवि कम्ब ने वही अपनी कम्ब रामायण जनता को सुनाई थी। छठे घेरे के पश्चिम भाग मे एक द्वार तथा दक्षिण भाग मे मडप है। इनके भीतर सातवा घेरा है जिसका द्वार दक्षिण की ओर है। इसके उत्तरी भाग मे श्रीरग जी का मदिर है। इसका शिखर स्वर्ण मडित है।

इस मदिर मे अनतशायी भगवान नारायण रगनाथ की श्यामवर्ण मूर्ति है, जिसके मस्तक पर पाच फणो का छत्र है। बहुमूल्य वस्त्राभूषणो से मडित यह मूर्ति परम भव्य है। भगवान के समीप लक्ष्मीजी बैठी है। श्रीदेवी, भूदेवी आदि की उत्सव मूर्तिया है। भगवान रगनाथ की गिनती पचनाथो मे भी होती है।

भगवान रगजी के मदिर का द्वार दक्षिणाभिमुख है। मुख्य मदिर के पार्श्व मे परिक्रमा मार्ग के एक स्थान पर पीतल का पत्र जडा है। जहा से मदिर के स्वर्ण शिखर का दर्शन होता है। इसी के निकट एक दालान है इसमे एक स्थान पर चिन्ह बना है। इस स्थान से शिखर पर वासुदेव जी के दर्शन होते है।

भगवान रगनाथ के बारे मे पौराणिक कथा है कि एक बार भगवान विष्णु ने अपना श्री विग्रह ब्रह्माजी को प्रदान किया था। ब्रह्माजी श्रीरग जी के नाम से इसी विग्रह की आराधना करते रहे। वैवस्वत मनु के पुत्र इक्ष्वाकु ने अपनी कठोर तपस्या से ब्रह्माजी को प्रसन्न किया और ब्रह्माजी से श्रीरग जी के विग्रह को प्राप्त कर लिया और अयोध्या मे लाकर उसकी स्थापना की। ये भगवान इसी समय से अयोध्या नरेशो के अराध्य हुए। लका विजय के पश्चात जब श्री रामचन्द्र का राज्याभिषेक हुआ तब रामचन्द्र जी सब लोगो को मुहमागी वस्तुए प्रदान करने लगे। श्री रामचन्द्र ने विमान सहित श्रीरग मूर्ति विभीषण को दे दी। श्रीरग मूर्ति को लेकर विभीषण ने लका को प्रस्थान किया। नित्य कर्म करने की इच्छा से इस पवित्र स्थल पर विमान को उतारा। परतु विमान वही स्थिर हो गया। नित्य कर्म से निवृत्त होने के पश्चात विमान उठाने का प्रयत्न किया, परतु असफल रहे। तत्काल श्रीरग

जी प्रकट हुए और विभीषण से कहा, "राजा धर्मवर्मा ने मुझे पाने के लिए घोर तपस्या की थी एव ऋषियो ने राजा को आश्वासन भी दिया। अत मै लका की ओर दक्षिण मुख करके स्थिर रहूगा। तुम यही आकर दर्शन कर जाया करो।" तब से विभीषण नित्य अलक्षित रूप मे आकर श्रीरग जी का दर्शन करते है।

पौष शुक्ला प्रतिपदा से एकादशी तक श्रीरगम मे वहुत वडा महोत्सव होता है। इस एकादशी का नाम बैकुठ एकादशी है। उस दिन श्री रग जी के मदिर का बैकुठ द्वार खुलता है। भगवान की उत्सव मूर्ति उस द्वार के वाहर निकलती है। उस द्वार से पीछे यात्री निकलते है। वैकुठ द्वार से निकलना बहुत महत्वपूर्ण माना जाता है।

यहा शकर गुरुकुलम् नाम का एक प्रसिद्ध प्राचीन पद्धति पर आधारित गुरुकुल तथा वाणीविलास नाम का मुद्रणालय है। जहा से प्रधानतया सस्कृत के प्राचीन शास्त्रीय ग्रन्थ बहुत शुद्ध और सुदर ढग से प्रकाशित होते है।

दक्षिण रेलवे के तिरुच्चिरापल्लि विष्णुपुरम रेल मार्ग पर तिरुच्चिरापल्लि से 11 किलोमीटर की दूरी पर श्रीरगम् स्टेशन है। स्टेशन के निकट ही श्रीरंग जी का मदिर है। यहा कई धर्मशालाये है। ☐

6. गढ़मुक्तेश्वर : गढ़गंगा

उत्तर प्रदेश

गढमुक्तेश्वर प्राचीन काल मे विस्तृत हस्तिनापुर का एक मोहल्ला था। मेरठ से 38–39 किलोमीटर, दक्षिण पूर्व गगा के दाहिने तट पर यह नगर है। मेरठ से यहा तक मोटर बसे जाती है। दिल्ली से भी गढमुक्तेश्वर के लिए बसे आती–जाती रहती है।

यहा का मुख्य मदिर, मुक्तेश्वर शिव मदिर है। यह विशाल मदिर गगातट से डेढ किलोमीटर दूर है। इस मदिर के भीतर हर नृगकूप है, जिसके जल से स्नान का माहात्म्य माना जाता है। मदिर के पास ही झारखण्डेश्वर नामक प्राचीन शिवलिग है।

इनके अतिरिक्त श्री लक्ष्मी नारायण मदिर, श्रीकृष्ण का पचायती मदिर, श्रीराम मदिर, दाऊजी का मदिर, चन्द्रमा, चन्द्रमा के क्षयरोग के निवारण का

स्थान, दुर्गाजी का मदिर, नृसिह मदिर और गौरी शकर मदिर बाजार मे है। हस्तिनापुर की ओर कल्याणेश्वर महादेव का मदिर है, जहा परशुराम द्वारा स्थापित मूर्ति है। इनके अतिरिक्त गगेश्वर, भूतेश्वर एव आशुतोष की प्राचीन मूर्तिया है। लगभग 80 सती स्तम्भ यहा है, जो अब भग्नावशेष रूप मे है। गगाजी का मदिर सबसे प्राचीन है। गगाजी के तीन और मदिर है।

यहा कार्तिकी पूर्णिमा को विशाल मेला लगता है। इस अवसर पर गगा मे स्नान करने हेतु उत्तर भारत के अनेक क्षेत्रो से लाखो श्रद्धालु यहा जमा होकर अन्य लाभार्जित करने की कामना करते है। हजारो दुकानदार हर प्रकार के सामान की बिक्री के लिए अपनी दुकाने यहा लगा कर लाखो करोडो रुपये की बिक्री कर लाभ उठाते है।

गढमुक्तेश्वर से दस–बारह किलोमीटर दूर गगा के दाहिने तट पर पूठ गाव है। इसका प्राचीन नाम पुष्पावती था। हस्तिनापुर नरेशो का यह क्रीडास्थान था। यहा रघुनाथजी, श्री राधाकृष्ण तथा महाकालेश्वर के मदिर गगा तट पर है। पूठ से डेढ किलोमीटर पर शकर टीला है। यहा एक शिव मदिर है।

पूठ से ग्यारह–बारह किलोमीटर की दूरी पर माडू गाव है। कहा जाता है कि यहा माण्डव्य ऋषि का आश्रम था। यहा माण्डव्य ऋषि की मूर्ति तथा माण्केश्वर महादेव का मदिर है।

माडू से सात किलोमीटर की दूरी पर अहार नाम का एक छोटा नगर है। यहा भैरव, गणेश कचना माता, हनुमानजी, भूतेश्वर, नागेश्वर तथा अम्बिकेश्वर के मदिर है। कहा जाता है कि भगवान ने बाराह रूप धारण करके यहा असुरो का दमन किया था। सम्राट परीक्षित के पुत्र जनमेजय ने यही नागयज्ञ किया था। शिवरात्रि और गगा दशहरा पर यहा मेला लगता है।

अहार से दस किलोमीटर की दूरी पर दक्षिण गगा के किनारे पर अनूपशहर है। यहा नगर के प्रारभ मे ही नर्वदेश्वर शिव मदिर है। श्री गिरधारी जी का मदिर, चामुण्डा देवी का मदिर, बिहारीजी का मदिर और हनुमानजी का प्राचीन मदिर है। यहा गगा के किनारे अनेक साधु आश्रम है। यात्रियो के ठहरने के लिए धर्मशालाये है। ☐

7. श्री लक्ष्मीनारायण मन्दिर

यह राजधानी का विशालतम व भव्य मन्दिर है और अधिकतर लोग इसे बिरला मन्दिर के नाम से सबोधित करते है क्योकि इसका निर्माण प्रसिद्ध उद्योगपति बिडला परिवार द्वारा किया गया है। इस परिवार के वरिष्ठ सदस्य सेठ जुगल किशोर बिडला की प्रेरणा से देश के अनेक भागो मे करोडो रुपये की लागत से कई

विशाल मन्दिरो का निर्माण हुआ है और यह मन्दिर भी उनमे से एक है। एक विशाल भूखड मे यह मन्दिर स्थित है और हिन्दुओ के सभी देवी–देवताओ की आकर्षक मूर्तिया यहा स्थापित की गई है।

इस मन्दिर का निर्माण सन् 1933 मे प्रारभ हुआ और पाच वर्ष मे निर्माण कार्य पूरा हुआ था। इस मन्दिर के निर्माण के प्रेरक महात्मा गाधी थे और इसका उद्घाटन भी उन्ही के द्वारा 18 मार्च, 1939 को सपन्न हुआ था। यहा बिना किसी भेदभाव के सभी वर्गो के प्रवेश का स्वागत है। मन्दिर की दीवार पर एक प्रमुख स्थान पर महात्मा गाधी के निम्न विचारो को अकित किया गया है –

"मेरी आशा है कि लक्ष्मीनारायण और बुद्ध दोनो मन्दिर लोगो की धर्म भावना की वृद्धि करने मे विशेष भाग लेगे।

मेरे समीप शुद्ध हिन्दू (आर्य धर्म) मे ऊँच नीच और छुआछूत की भावना है ही नही। वर्णभेद अवश्य है परतु कोई वर्ण दूसरे वर्ण से ऊचा नही। वर्ण मे अधिकार भेद नही है केवल धर्म भावना है।

जिस वर्ण के पास अधिक सम्पत्ति है, भौतिक या आध्यात्मिक उसको अधिक नम्र बनना है।"

प्रसग ऐसा है कि महात्मा गाधी ने हिन्दू धर्म मे छुआछूत की फैली हुई भयकर सामाजिक बुराई के निवारण हेतु सन् 1933 मे व्यापक आदोलन प्रारभ किया और उन्होने सारे देश का दौरा कर जन साधारण को इस सामाजिक दोष को दूर करने के लिए प्रेरित किया और हिन्दुओ के पूजा स्थानो व मन्दिरो आदि को सभी वर्गो और विशेष रूप से अछूत माने जाने वाले लोगो के इन स्थानो मे दर्शनार्थ बेरोक टोक प्रवेश की स्वतत्रता के लिए आग्रह किया, जिसके परिणामस्वरूप अनेक मन्दिरो मे अछूतो को प्रवेश का

अधिकार मिला और अब तो अछूत माने जाने वाले वर्ग का सभी मन्दिरो मे प्रवेश हो गया है। सेठ जुगल किशोर बिडला ने गाधीजी की इस भावना का आदर करते हुए इस मन्दिर का निर्माण कराया था। □

8. जम्मू : तीर्थनगरी

जम्मू नगर मन्दिरो का नगर है। जम्मू नगर के बारे मे एक कथा बहुत मशहूर है। एक बार शिकार के लिए निकले राजा जम्बू लोचन ने एक जगह तवी नदी के किनारे देखा कि आपसी बैरभाव को भूलकर शेर और बकरी एक जगह नदी मे पानी पी रहे है। यह दृश्य देखकर वे बहुत प्रभावित हुए और उन्होने इसी तवी नदी के किनारे जम्मू शहर बसाया।

मन्दिर श्री रघुनाथजी

जम्मू नगर का यह प्रमुख मन्दिर है जो शहर के मध्य मे एक विशाल परिसर मे स्थित है। इस भव्य मन्दिर के निकट और भी अनेक मन्दिर बने हुए है, जिनमें विभिन्न देवी देवताओ की मूर्तिया स्थापित है। इस मन्दिर की छटा निराली ही है। इसकी दीवारो पर सोने का पतरा जडा हुआ है और मन्दिर मे भगवान श्रीरामचन्द्र की विशाल मूर्ति स्थापित है। इस मन्दिर का निर्माण महाराज गुलाबसिह के समय मे सन् 1835 मे प्रारभ हुआ था जो उनके पुत्र महाराज रणवीर सिह के शासनकाल मे सन् 1860 मे बनकर तैयार हुआ था। कहा जाता है कि इतना भव्य और विशाल मन्दिर समस्त उत्तर भारत मे अन्यत्र कही नही है।

बावे वाली माता का प्रसिद्ध मन्दिर बाहु किले मे है। प्रत्येक मगल और शनिवार को इस मन्दिर के परिसर मे दर्शनार्थियो की भारी भीड जुटती है। बाहु किले के सामने थोडी दूर पर स्थित पहाडी की चोटी पर महामाया का मन्दिर है। कहा जाता है कि बावे वाली माता जम्मू नगर की सरक्षिका है।

इसके अलावा पीर बुद्धनशाह की दरगाह, जम्मू नगर के लोगो की दुर्घटनाओ और दुष्ट आत्माओ से रक्षा कर रही है। पीर बुद्धनशाह गुरु गोविदसिह के परम मित्र थे। उन्होने अपना सारा जीवन दुग्धपान करके ही बिताया और लम्बी आयु भोग कर दिवगत हुए। प्रत्येक वृहस्पतिवार को पीर बुद्धनशाह की दरगाह पर भारी भीड जुटती है, जिसमे मुसलमानो की अपेक्षा हिन्दू और सिख ही अधिक होते है। अधिकाश गणमान्य व्यक्ति जो जम्मू आते है, वे पीर बुद्धनशाह की दरगाह पर अवश्य जाते है।

तवी नदी के किनारे पीर खो गुफा का मन्दिर, पच प्रभाकर मन्दिर तथा रणवीरेश्वर मन्दिर भी प्रसिद्ध शिव मन्दिर है। इनमे हरेक मन्दिर की अलग गाथा है। रणवीरेश्वर मन्दिर मे 12 इच से लेकर 18 इच तक स्फटिक के 12 शिवलिग है। इसके अलावा हजारो शालिग्राम पत्थरो की पट्टियो पर जमाये गये है।

जम्मू मे 'पीर मीठा' का बहुत ही पूज्य स्थान है। पीर मीठा, अजायबदेव और गरीबनाथ के समकालीन थे। वे अपनी भविष्यवाणियो और चमत्कारो के लिए प्रसिद्ध थे। मीठा नाम इसलिए पडा, क्योकि वे अपने भक्तो से चुटकी भर शक्कर के अलावा कुछ नही ग्रहण करते थे। जम्मू के गाधीनगर वाले शानदार हिस्से मे लक्ष्मी नारायण मन्दिर तथा पच मन्दिर स्थित है।

जम्मू मे मुस्लिम सम्प्रदाय के पूजा स्थान, जामिया मस्जिद—तालाब खटिकान, जामिया मस्जिद—उस्ताद मोहल्ला, जामिया मस्जिद—गोल मार्केट तथा इब्राहिम मस्जिद, बजारत रोड पर स्थित है।

ईसाइयो के गैरीसन चर्च, सतवारी, सेन्ट पाल चर्च बजारत रोड, सेन्ट पीटर्स चर्च क्रिश्चियन कालोनी मे स्थित है।

सिखो के भी कई गुरुद्वारे है। सुदरसिह गुरुद्वारा– गुरुद्वारा रोड, तालीसाहब गुरुद्वारा, तालाब ढिल्लो, महारानी चाद कौर गुरुद्वारा– गुमट के नीचे, गुरुद्वारा सिह सभा– नानक नगर, कलगीधर गुरुद्वारा – रेहारी तथा सिह सभा गुरुद्वारा रघुनाथ बाजार मे है।

तवी नदी के दूसरी ओर ऊँची पठारी भूमि मे शानदार बाहु किला है। किले के चारो ओर हरे–हरे उद्यान है, प्रपात है और रग–बिरगे फूल है। नागरिको के लिए यह मनोरजन का स्थान है।

जम्मू का अमरसिह का महल भी दर्शनीय है। ढलवा छतों से युक्त यह फ्रासीसी वास्तुकला के आधार पर निर्मित किया गया है। अमरसिह महल मे अब सग्रहालय व पुस्तकालय है। इसके अलावा पुराने चित्र तथा लघु चित्रो

के माध्यम से नल दमयन्ती की गाथा भी दर्शनीय है।

जम्मू नगर के मुख्य बाजार है – वीरमार्ग, रघुनाथ बाजार तथा हरी मार्केट, जो काश्मीरी हस्त निर्मित वस्तुओ, कलाकृतियो, डोगरा आभूषणो तथा अखरोट के लिए मशहूर है।

जम्मू नगर बासमती चावल, राजमा, आम पापड, अनारदाना और बरफी के लिए भी मशहूर है।

वायुयान, ट्रेन, बस और अन्य सभी उपलब्ध साधनो से जम्मू जाया जा सकता है। जम्मू और कश्मीर को देश से जोडने वाले रेलवे का जम्मू तवी एक बडा स्टेशन है। ❑

9. दरगाह हज़रत बल, श्रीनगर

कश्मीर

श्रीनगर शहर मे लगभग दस किलोमीटर की दूरी पर झेलम नदी के किनारे अत्यत ही मोहक स्थान पर यह प्रसिद्ध दरगाह स्थापित है। कश्मीर के निवासियो, विशेष रूप से मुसलमानो का यह आस्था केद्र है। यहा हजरत पैगम्बर मोहम्मद का एक बाल सुरक्षित रखा हुआ है, जिसे विशेष अवसरो पर जन साधारण के दर्शनार्थ (दीदार) के लिए प्रदर्शित किया जाता है। इन अवसरो पर कश्मीर के लोग लाखो की सख्या मे जमा होकर श्रद्धापूर्वक दीदार कर अपने को सौभाग्यशाली मानकर आत्मविभोर हो जाते है। हजरत के इस पवित्र बाल को जन साधारण की भाषा मे 'मुए मुबारिक' कहा जाता है। यह पवित्र बाल अत्यत ही कडी सुरक्षा व्यवस्था के अतर्गत तालो मे बद रहता है और इन तालो की निगरानी के लिए सशस्त्र पहरेदार नियुक्त है।

लगभग चार सौ वर्ष पूर्व यह 'पवित्र बाल' एक व्यापारी द्वारा यहा लाया गया था, तब से यहा सुरक्षित प्रतिष्ठित है। दो दशक पहले यह 'पवित्र बाल' अचानक अविश्वसनीय रूप से गायब हो गया था। जब इसकी खबर कश्मीर के जन साधारण को लगी तब सारे कश्मीर का जन जीवन ठप्प हो गया और लाखो लोग सडको पर निकल आये। भारत सरकार के उच्चाधिकारियो की लगातार कोशिशो और जाच पडताल के उपरात यह 'मुए मुबारिक' अपने पूर्व निर्धारित स्थान पर वापिस पहुचा दिया गया। तब ही जन जीवन शात हुआ

और लोग अपने घरो को वापस लौटे। हजरत के इस पवित्र बाल के गुम हो जाने की गुत्थी को सुलझाने मे दो सप्ताह का समय लगा। इस सारी अवधि मे लोग इस दरगाह को घेरकर सर्दी मे सडको पर ही रहे। इस काड के उपरात इस पवित्र बाल की सुरक्षा का भार अब एक प्रशासन द्वारा नियुक्त कमेटी को सौप दिया गया है, जिसकी सहायता के लिए सशस्त्र सैनिको की व्यवस्था की गई है जो दिन रात ड्यूटी पर तैनात रहते है।

दरगाह चिरारे शरीफ

कश्मीर के निवासियों के लिए यह दरगाह अत्यत महत्वपूर्ण है और सैकडो लोग प्रतिदिन यहा हाजरी देने के लिए श्रद्धापूर्वक आते है। कुछ समय पूर्व इस पवित्र दरगाह को उग्रवादियो द्वारा जला दिया गया था किन्तु अब इसका पुन· निर्माण हो गया है और इसकी सुरक्षा की भी सरकार द्वारा व्यवस्था की गई है। □

10. निरंकारी मिशन

निरकारी मिशन कोई धर्म या सम्प्रदाय नहीं बल्कि एक आध्यात्मिक विचारधारा है, निराकार प्रभु की भक्ति करते करते सदाचारी लौकिक जीवन जीने की पद्धति है। यह मिशन विश्व भर मे सत्य, अहिसा, आध्यात्मिक जागरुकता तथा परमपिता परमात्मा की जानकारी के द्वारा विश्व बन्धुत्व की स्थापना का प्रचार कर रहो है। विभिन्न जातियो, सम्प्रदायो व धर्मो से सबधित लोग इसमे एक परिवार की भाति रहते है। यह मिशन आध्यात्मिक सिद्धातो की इस मौलिकता को मानता है कि इस दृश्यमान जगत को बनाने, चलाने व खत्म करने वाला निराकार परब्रह्म ही है। निराकार प्रभु ही एक से अनेक होकर समग्र सृष्टि को चला रहा है। निरकारी मिशन की मान्यता है कि परब्रह्म निराकार है और जानने योग्य है। ब्रह्मवेत्ता की कृपा से इसे मानव शरीर के रहते जाना जा सकता है। मिशन इस स्थापित मान्यता मे विश्वास रखता

है कि ब्रह्मानुभूति मे ही मनुष्य योनि की सार्थकता है। निराकार परब्रह्म का ज्ञान प्रदान करने वाली विभूति को यह मिशन सद्‌गुरु के नाम से संबोधित करता है।

निरकारी मिशन का यह प्रचार सन् 1929 मे बाबा बूटा सिह जी ने पेशावर से आरभ किया। सन् 1943 मे यह जिम्मेदारी बाबा अवतार सिह जी को सौपी गई और सन् 1962 मे इस सच्चाई के प्रचार की बागडोर बाबा गुरबचन सिह जी के हाथो मे आई। सन् 1980 से बाबा गुरबचन सिह जी के बलिदान के बाद सद्‌गुरु बाबा हरदेव जी इस दैवी जिम्मेदारी का निर्वाह कर रहे है।

आध्यात्मिक पक्ष

निरकारी मिशन इस मान्यता मे विश्वास रखता है कि निराकार परब्रह्म सृष्टि के कण–कण मे व्याप्त होने के बावजूद सम्पूर्ण दृश्यमान जगत से न्यारा है। सम्पूर्ण दृश्यमान सृष्टि माया है, जो परिवर्तनशील है, समाप्त हो जाने वाली है। इस पच भौतिक सृष्टि के समाप्त होने पर भी जो समाप्त नही होता, वही निराकार परब्रह्म है। मिशन का इस स्थापित सिद्धात मे विश्वास है कि परमात्मा निराकार होते हुए भी अनुभूतिगम्य है, जानने योग्य है। वास्तव मे निराकार परमात्मा को जानना ही मानव जीवन का उद्देश्य है।

सद्‌गुरु

निराकार परमात्मा की जानकारी उस ब्रह्मवेत्ता महात्मा (सद्‌गुरु) की कृपा से हो सकती है जो स्वय इसे जानता है। सशरीर सद्‌गुरु की साक्षात् कृपा के बिना ब्रह्मानुभूति सभव नही। इसीलिए निरकारी प्राचीन गुरुओ, पीरो, पैगम्बरो, अवतारी पुरुषो की शिक्षाओ को प्रेरणा स्रोत अवश्य मानते है। उन्हे यथायोग्य सम्मान भी प्रदान करते है, लेकिन ज्ञान प्रदाता और सेव्य केवल वर्तमान सद्‌गुरु को ही स्वीकार करते है।

सद्‌गुरु वस्तुत निर्गुण ब्रह्म की सगुण सत्ता है जो एक शरीर के माध्यम से कार्य करती है। जिस प्रकार मनुष्य की वास्तविकता हाथ, पाव, मुह आदि यानी शरीर नही है बल्कि इस शरीर का सचालन करने वाली चेतन सत्ता है जो उस शरीर द्वारा काम करती है। इसी प्रकार सद्‌गुरु शरीर नही बल्कि वह ज्ञान है जो उस शरीर के माध्यम से प्रवाहित होता है।

मिशन का यह दृढ विश्वास है कि आदिकाल से सद्‌गुरु इस धरती पर लगातार अवतरित होकर निराकार ब्रह्म के ज्ञान का प्रचार करता रहा है। सद्‌गुरु ने अपने आपको कभी किसी जाति विशेष या धर्म विशेष के साथ नही जोडा। वास्तविकता तो यह है कि सद्‌गुरु मानवमात्र के लिए अवतरित होता है और ब्रह्मज्ञान के द्वारा मानवमात्र का उद्धार करता है।

एकता

मिशन का विश्वास है कि धर्म विभिन्न सभ्यताओ, सस्कृतियो, मान्यताओ को एक सूत्र मे बाधकर मानवता का एक गुलदस्ता सजाता है, अर्थात् धर्म जोडता है, तोडता नही। यदि मानव धर्म की इस वास्तविकता को समझ ले और मूल तत्त्व परब्रह्म को जानकर उसकी भक्ति करे, एक परमात्मा के साथ जुडे तो एकता स्वत ही आ जायेगी। परमपिता परमात्मा की जानकारी हमे सहज ही आपस मे भाई–भाई बना देती है, हमारे मतभेद अपने आप समाप्त हो जाते है, नफरत खत्म हो जाती है, द्वेष की जगह प्यार ले लेता है। जिस प्रकार विभिन्न स्वभावो के बच्चे एक पिता के कारण परिवार मे एकजुट होकर रहते है, इसी प्रकार परमपिता परमात्मा को जानने वाले लोग सहज ही एक परिवार (मानव परिवार) का रूप धारण कर लेते है। मिशन की मान्यता है कि एक पिता परमात्मा की जानकारी के बिना विश्व बन्धुत्व का अन्य कोई साधन नही। निरकारी मिशन आज इसी सिद्धात के द्वारा एकता तथा विश्व बन्धुत्व स्थापित करने मे प्रयत्नशील है। □

11. कोणार्क मन्दिर

उडीसा के चार प्रधान तीर्थो मे कोणार्क की गणना की जाती है। यहा रथ आकार का विशाल सूर्य मन्दिर है, जिसमे बारह जोडे पहिये और घोडे जुते हुए है। पूरा मन्दिर ही एक रथ के आकार मे निर्मित हुआ है, ऐसा आभास होता है कि अश्व इस रथ को खीच रहे है।

कोणार्क का यह सूर्य मन्दिर अपनी कलात्मकता, स्थापना शैली तथा

सुदरता के लिए विश्व भर मे प्रसिद्ध है। इस मन्दिर मे अब कोई देव मूर्ति नही है। यहा की सूर्य प्रतिमा पुरी के जगन्नाथ मन्दिर मे सुरक्षित है।

पौराणिक आख्यान के अनुसार 5000 वर्ष पूर्व श्रीकृष्ण के शाप से ग्रस्त शाम्ब ने चन्द्रभागा नदी के तट पर अतीत के मैत्रेयारण्य अर्थात् वर्तमान कोणार्क मे आकर सूर्य की आराधना शुरू की थी। उनकी 12 वर्षो की आराधना से प्रसन्न होकर सूर्य ने शाम्ब को वरदान दिया। शाम्ब रोगमुक्त हो गये। रोग मुक्ति के बाद इस मन्दिर का निर्माण कराकर सूर्यदेव की प्रतिमा स्थापित की। यह मूर्ति अब पुरी मे है।

मन्दिर मे रथ के पहिये तथा सात घोडे, सारथी का स्थान आदि सब बना हुआ है। अश्वो की सात की सख्या सप्ताह के सात दिनो के प्रतीक है। दोनो ओर बारह और बारह कुल चौबीस चक्के है। ये हमारे बारह महीनो और चौबीस पखवाडो के प्रतीक है। चक्के मे आठ–आठ आरे है जो हर दिन के अष्ट पहर के प्रतीक है। मन्दिर के साथ–साथ नौ फुट व्यास के ये चक्के आज अपने अस्तित्व की लडाई लड रहे है।

किसी समय यह स्थान सौर सम्प्रदाय का प्रधान केद्र था। पास मे चन्द्रभागा नदी है। यहा माघ शुक्ला, सप्तमी को स्नान महापुण्यप्रद माना जाता है।

इस मन्दिर की कलात्मकता अति ही उत्कृष्ट है। इसे देखकर आश्चर्यचकित रह जाना पडता है। मन्दिर की दीवारो पर विभिन्न देव मूर्तियो, नृत्य, गीत गाते लोग, सुदरियो की कलात्मकता मे निखरी प्रतिमाये, मिथुन मूर्तिया दर्शको को विभोर कर देती है। मिथुन मूर्तियो की भरमार है।

अतीत काल मे मन्दिर के ऊपर कृष्ण पत्थर नामक एक विशाल चुम्बक था। चुम्बक की आकर्षण क्षमता काफी व्यापक थी। समुद्र मार्ग मे जलयान इसकी आकर्षण शक्ति से अपनी दिशा भूल जाते थे। कहा जाता है कि ऐसे ही विपदग्रस्त जलयान के नाविको ने आकर इस चुम्बक को चकनाचूर कर दिया।

ह्वेनसाग ने अपने यात्रा विवरण मे लिखा है कि यहा एक बदरगाह था, जिसका नाम चेलितला था। इसके चारो ओर अति विकसित गाव थे। इतिहास के अनुसार गगावश के राजा नरसिह देव इस मंदिर के निर्माता थे। मन्दिर के निर्माण मे 12 वर्षो के राजस्व की लागत आई थी। काला पहाड नामक आततायी ने इस मन्दिर का विध्वस कर दिया था जिससे यह मन्दिर खडित अवस्था मे है। यहा का निकटस्थ रेलवे स्टेशन भुवनेश्वर और पुरी

है। दोनो नगरो से मोटर बसो का यातायात है। यहा विश्राम के लिए एक टूरिस्ट बगला है। यहा से सागर तीन किलोमीटर दूर है। वहा तक पक्का राज मार्ग बना है। ❑

12. महर्षि रमण आश्रम

तमिलनाडु

रमण महर्षि का यह विश्व प्रसिद्ध आश्रम तमिलनाडू के तिरूवणमिल्लै तीर्थ के निकट स्वन्द पर्वत पर और उनकी समाधि पहाड की तलहटी मे पालि तीर्थ के पास स्थित है। रमण महर्षि की लीला स्थली होने के कारण हर वर्ष लाखो की संख्या मे देश–देशान्तरो से तीर्थ यात्री वहा पहुॅचते है और महर्षि को अपने श्रद्धा सुमन अर्पित करते है। रमण महर्षि भारत की उन चन्द विभूतियो मे से एक है जिनके विषय मे कहा जाता है कि अपने जीवन काल मे ही उनका भगवान से साक्षात्कार हो गया था। बचपन मे ही उनके अन्दर वैराग्य की भावना जाग उठी थी और वे गृह त्यागकर यहा चले आए, यहीं उन्होने कठिन तपस्या की थी।

महर्षि का जन्म 30 दिसम्बर 1879 को तमिलनाडू मे हुआ, उनके पिता श्री सुन्दरम अय्यर वकील थे। महर्षि की ख्याति उनके जीवन काल मे ही देश–देशान्तरो तक फैल गई थी। उनके जीवन काल में ही उनके वचनामृतो और जीवनियो का अनेक भाषाओ मे प्रकाशन हो गया था।

समय को देखते हुए महर्षि के विचार वहुत क्रान्तिकारी थे। उनकी मान्यता थी कि आत्म ज्ञान को प्राप्त करने मे किसी को भी रुकावट नहीं होनी चाहिए। कोई भी स्त्री या पुरूष, वह किसी भी जाति का हो, उसे आत्म ज्ञान प्राप्त करने का पूरा अधिकार है। उन्होने कहा था, "स्त्री और शूद्र, दोनो वेदाध्ययन के अधिकारी है। यदि तुम आत्म शांति चाहते हो तो आपको लोक सेवा और श्रम करना होगा।" उनका कहना था, "कर्म और ज्ञान मे कोई सघर्ष, कोई विरोध नही है। सन्यास का अर्थ है, अह का त्याग। सच्चा सन्यासी चाहे एकान्त मे रहे, चाहे गृहस्थ मे, दोनो अवस्थाए, उसके लिए समान है।

आध्यात्मिकता और गृहस्थ, दोनो साथ साथ चल सकते है। क्या भगवान् रामचन्द्र गृहस्थ मे रहते हुए आध्यात्मिकता के मार्ग मे आगे नही बढे? क्या वे ग्रहस्थ्य जीवन के परम आदर्श नही थे? उन से बढ कर परम ज्ञानी और कौन हो सकता है?"

"यदि तुम विचारो कि मै कौन हू और इसी विचार की अविनाशी रट लगाते रहो तो पहचान जाओगे कि "मै" सचमुच न शरीर है, न बुद्धि है, न कामना है। जिज्ञासा की यह पद्धति, यह विचार, तुम्हारे अन्त स्थल से इस प्रश्न का उत्तर अपने आप गुजा देगा, सदुत्तर से स्वय तत्वानुभूति या आत्म ज्ञान के रूप मे प्रकट हो जाएगा।

"सच्चे सद आत्मा को जान लो, तुम्हारा मन सत्य सूर्य के सच्चे प्रकाश से आलोकित हो जाएगा। इससे मन की सारी अशान्ति दूर हो जाएगी। वास्तविक आनन्द का समुद्र उभर उठेगा, क्योकि सत् आनन्द और आत्मा, दोनो अभिन्न है, अदवैय है।"

"ससार इसी लिए दुखी है क्योकि वह आत्मा को नही पहचानता। मानव की सहज स्थिति, सहज प्रकृति आनन्द है, वह आनन्द है आत्मा। इसी आत्मा मे आनन्द की उत्पत्ति है। सद आत्मा अव्यय है, अजर–अमर है, अविनाशी है। उसको पहचानने पर मानव अमर हो जाता है, चिरन्तन आनन्द का भागीदार बन जाता है।"

आज जब हम "वनो को बचाओ" "वन्य प्रणियो को जीने दो" जैसे नारे सुनते है तो हमे महर्षि का यह वचन सार्थक लगता है, "सारी पृथ्वी का स्वरूप एक है।" महर्षि सदा कहा करते थे, "हमे जीव जन्तुओ की शान्ति मे खलल पहुचाने का कोई अधिकार नही है, ये सब तो हमारे मित्र है।"

अरूणाचल मे बन्दरो की भरमार है। उन्हे देख कर महर्षि कहा करते थे, "इनसे हमे द्वेष नही करना चाहिए, यह घर भी तो उन्ही का है।" महर्षि के जीवन काल मे आश्रम मे "करूप्पन" नाम का एक पालतू कुत्ता था। जब कभी वह बीमार पड़ता, महर्षि उसकी देखभाल स्वय करते थे।

वे सारी प्रकृति को ब्रहमभय देखते थे, इस लिए उसे विछिन्न करना वे ठीक नही समझते थे। आश्रम मे रहने वाले सभी कुत्ते, बिल्ली, गाय, गिलहरी आदि की चर्चा करते समय वे कहते, "ये सारे प्राणी बाहर के नहीं है, ये हमारे बच्चे है, इनसे बच्चो के जैसा व्यवहार करना चाहिए।"

प्रख्यात लेखक पाल ब्रन्टन ने महर्षि की चर्चा करते हुए लिखा है कि,

"महर्षि का अपने भक्तो की सहायता करने का तरीका बहुत निराला है, जब वे यह चाहते है तो कोई अव्यक्त, मूक, स्थिर, निर्वाणप्रद और शान्तिप्रद स्पन्द लहरिया उनसे उडकर सन्तप्त हृदयो को प्लावित कर देती है।"

"यह असभव है कि हम उनके सानिध्य मे हो और हमारा अन्तरग आलोक से न भर जाय। उनके आध्यात्मिक ज्योतिचक्र की कौधने वाली किरण से मानसिक जगत चमक न उठे।"

"समझने पर उनका दृष्टिकोण और उनकी आचरण योग्य पद्धतिया एक दम वैज्ञानिक लगती है। वे किसी भी प्रकार के अन्ध धार्मिक विश्वास की जरूरत नही बताते।

"महर्षि की आखे दिव्य ज्योति से दो दिव्य तारो के जैसी जगमगाती रहती है। जहा तक मुझे याद है, अब तक कही भी भारत वर्ष के आर्य ऋषियो की इस अन्तिम सन्तान की आखो के जैसा तेज और किसी ने नही पाया है। मानव नेत्र यदि दैवी शक्ति की किसी भी मात्रा मे दिखा सके, तो सच है, इनके नेत्रो मे वह भरपूर है।"

महर्षि मौन को बहुत महत्व देते थे। उसकी महिमा के विषय मे समय–समय पर लोगो को समझाते थे और कहते थे "मौन का अर्थ कर्म का अभाव नही है। मौन जड अकर्मण्यता और आलस भाव भी नही है, और न यह विचार या वितर्क से खाली रहना है। यह निषेधात्मक भी नही है, यह अभाव पदार्थ भी नही है, यह विधेयात्मक भाव पदार्थ है, परा शान्ति है। सभी कर्मो के, सभी गतियो के मूल मे रहने वाली शक्ति है। सब को पुष्टि पहुचाने वाली, अपरिवर्तन शील, पर्वतवत् अचल ध्रुवशाति है।"

"आत्म ज्ञानी पत्थर की नाई जड होकर नही पडा रहता है। यदि वह ऐसा करे तो उसकी दशा और कुभकर्णा की निद्रावस्था मे कोई भेद नही है।"

"महापुरूष, मुक्त जीवन, सिद्ध पुरूष कर्मण्यता के मूर्तिमान अवतार कहे गये है वे ऐसे ही होते है।"

14 अप्रैल 1950 की साय को श्री रमण महर्षि का महा निर्वाण हुआ। उस दिन आश्रम मे बहुत भीड थी। महान आत्माए अमर होती है, वे अपने पीछे एक प्रकाश पुज छोड जाती है जो उनके महा निर्वाण के पश्चात भी ससार को आलोकित करता रहता है।

ओम सर्वे श्री रमणार्पण मस्तु।

13. निर्मल हृदय

कलकत्ता

निर्मल हृदय या 'मिशनरीज ऑफ चैरिटी' शब्द सुनते ही मदबुद्धि अनाथ व बेसहारा लोगो के लिए दुनियाभर मे 500 से अधिक स्थापित उन आश्रमो की तस्वीर स्वत उभर आती है जिसमे मदर टेरेसा द्वारा तराशी गई हजारो 'नन्स' (सेविकाए) जी–जान से सेवा करती है।

दया, ममता, करुणा की प्रतिमूर्ति मदर टेरेसा के नाम को थोडे हिदीकरण के साथ देखे तो 'मा तेर–सा' प्रतीत होता है। तात्पर्य कि उसमे मा के समान महान सद्‌गुणो की छाया प्रतिबिबित होती है। मदर टेरेसा ने एक मा के निर्मल हृदय के अनुरूप ही स्वय को और अपने आश्रम 'निर्मल छाया' को ढाल लिया था। पीडित मानव की सेवा ही उनके जीवन का व्रत बन गया था।

27 अगस्त, 1910 को यूगोस्लाविया मे जन्मी मदर टेरेसा एक रोमन कैथोलिक चर्च की सक्रिय सदस्या थी। बचपन से ही उनका हृदय करुणा से सराबोर था। उन्नीस वर्ष की आयु मे सेवा का व्रत लेकर वह भारत आई और अपने जीवन के अतिम समय तक वह इस व्रत का निष्ठापूर्वक पालन करती रही। फुटपाथ पर पडे लावारिस और रोते–सिसकते एव मरणासन्न व्यक्तियो को अपने सेवा केद्रो मे लाकर उनकी सेवा–सुश्रूषा को ही उन्होने अपने जीवन का लक्ष्य और सिद्धात बना लिया था।

उनके विश्वविख्यात आश्रम 'निर्मल छाया' के अलावा इसके समीप दूसरे आश्रम 'प्रेमदान' और 'शातिदान' भी है। 'शातिदान' मे टी बी (क्षयरोग) से ग्रस्त असहाय लोगो का उपचार किया जाता है तथा जीविकोपार्जन से सबधित कार्यो का प्रशिक्षण भी दिया जाता है। 'प्रेमदान' आश्रम इससे लगभग 24 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है जहा कुष्ठ रोगियो के उपचार की व्यवस्था है।

मदर मानती थी कि मनुष्य का सबसे बडा शत्रु उसकी निर्धनता है। निर्धनता के कारण बहुत से लोग समाज से बहिष्कृत और तिरस्कृत जीवन जीने को विवश होते है। ऐसे ही लोगो के जीवन को सवारने का प्रयास ही उनके अपने जीवन का ध्येय बन गया था। मदर यह मानती थी कि गरीबी का कारण वास्तव मे हमारा प्रेमविहीन होना है। प्यार के अभाव मे मनुष्य

दीवालिया हो जाता है। वह प्यार को देखभाल का ही स्वरूप मानती थीं।

इसी सिद्धांत को जीवन मे अपनाकर वह पीड़ितों की सेवा मे लगी रहीं। नवजात शिशुओ से लेकर वृद्धों तक को उनका स्नेह समान रूप से मिलता था जो उनके जीवन के लिए एक अमूल्य वरदान बन गया था।

सादगी उनके जीवन का मूलमंत्र था। उनका मानना था कि एक नीले बार्डर की साडी, प्रार्थना की किताब और एक बाल्टी मात्र से एक 'नन' का गुजारा चल जाता है। सेवा के इच्छुक व्यक्तियो को चार बातो की शपथ लेनी पडती है। सादा जीवन, पवित्रता, गरीबो की सेवा और भगवान की इच्छा को सर्वोपरि मानकर चलना। ये चारो बाते मदर के जीवन के ऐसे मार्गदर्शन तत्व थे जो संसार के सभी व्यक्तियो के लिए प्रकाशपुंज बन गए थे।

पांच सितबर, 1997 की रात 9.30 बजे अनाथों की ममतामयी मा मदर टेरेसा ने इस संसार से विदा ले ली। उन्होने अपनी सासारिक करुणा की लता को समस्त ब्रह्माण्ड के लिए सौप दिया।

आज उनके आश्रम 'निर्मल छाया' की पवित्र छाया मे उनके जीवन के पवित्र आदर्श मानव सेवा के उच्च अनुकरणीय आदर्शो का पवित्र उदाहरण प्रस्तुत कर रहे है। हम उनके बताये गए मार्ग पर चलकर जीवन को मानव सेवा में समर्पित कर स्वयं के जीवन को सफल बना सकते हैं। इसके लिए अनिवार्य नहीं है 'नन' बनना। बल्कि हममे से कोई भी सादा जीवन, पवित्रता, गरीबो की सेवा तथा भगवान की इच्छा को सब कुछ मानकर अपने जीवन को अमृतमय बना सकता है और मदर टेरेसा की 'निर्मल छाया' को अपने हृदय मे अनुभव कर सकता है।

भारत सरकार ने मदर टेरेसा को 'भारत रत्न' से सम्मानित किया। वे विश्व प्रसिद्ध 'नोबेल पुरस्कार' की भी विजेता रही है। विश्व के सभी देशो की सरकारो ने इनके कार्य से प्रभावित होकर 'मदर' को श्रेष्ठतम सम्मान दिया था।

❑ प्रेमनाथ

प्रदेशानुसार आस्था स्थलों की सूची